भोजपुरी के कवि और काव्य

लेखक

श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह

सम्पादक

डॉ० विश्वनाथ प्रसाद

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

पटना

प्रकाशक
बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना—३

प्रथम संस्करण, विक्रमाब्द २०१५, शकाब्द १८७९, खृष्टाब्द १९५८

मूल्य सजिल्द

मुद्रक
कालिका प्रेस, पटना—४
(पृ० १–१४४ तक अशोक प्रेस,
पटना—६ में मुद्रित)

वक्तव्य

बिहार-सरकार के शिक्षा-विभाग के संरक्षण में बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के कार्यकलाप का श्रीगणेश सन् १९५० ई० के मध्य में हुआ था। उसी समय प्रस्तुत पुस्तक (भोजपुरी के कवि और काव्य) की पाण्डुलिपि प्रकाशनार्थ प्राप्त हुई थी। इसका विशाल पोथा देखकर आरम्भ में ही आशंका हुई थी कि इसके प्रकाशन में काफी समय लगेगा। वह आशंका ठीक निकली।

सचमुच इसके सम्पादन और प्रकाशन में आठ वर्षों का बहुत लम्बा समय लग गया। इसके साथ ही आई हुई दूसरी पुस्तक (विश्वधर्म-दर्शन) दो साल बाद ही (सन् १९५२ ई० में) प्रकाशित हो गई; क्योंकि उसका सम्पादन-कार्य शीघ्र ही सम्पन्न हो गया और इसके सम्पादन में अनेक विघ्न-बाधाओं के कारण आशातीत समय लग गया।

जिस समय परिषद् के संचालक-मंडल ने इसके सम्पादन का भार परिषद्-सदस्य डॉक्टर विश्वनाथ प्रसाद को सौंपा, उस समय वे पटना-विश्वविद्यालय में हिन्दी-विभागाध्यक्ष थे। कुछ ही दिनों बाद पूना-विश्वविद्यालय में भाषा-शास्त्र के अध्यापन के लिए शिक्षण-शिविर आयोजित हुआ, जिसमें उन्हें कई बार कुछ महीनों के लिए जाना पड़ा। बीच-बीच में उनके स्वास्थ्य की चिन्ताजनक स्थिति भी बाधा डालती रही। अन्त में वे आगरा-विश्वविद्यालय में हिन्दी-विद्यापीठ के अध्यक्ष और उसके त्रैमासिक मुखपत्र 'भारतीय साहित्य' के प्रधान सम्पादक होकर पटना से बाहर चले गये। इन्हीं अड़चनों से इसके सम्पादन का काम प्रायः रुक-रुककर चलता रहा।

यद्यपि इसकी पाण्डुलिपि का बृहदाकार पोथा अपने सम्पादक के धैर्य की अग्नि-परीक्षा लेनेवाला था, तथापि अपनी अनिवार्य कठिनाइयों के बीच भी सम्पादक ने उसका आद्यन्त निरीक्षण-परीक्षण करके आवश्यक काट-छाँट और संशोधन-सम्पादन का काम स्तुत्य अध्यवसाय के साथ पूरा कर दिया। उन्होंने पोथे का आकार छोटा करने में जितनी सावधानता से काम लिया, उतनी ही सहृदयता से लेखक के कठिन परिश्रम को भी सार्थक करने का प्रयत्न किया।

फलतः लगभग डेढ़ हजार पृष्ठों की पाण्डुलिपि संशोधित होकर यद्यपि कई सौ पृष्ठों की ही रह गई, तथापि संग्रही लेखक के शोध-संधान का मूल्य-महत्त्व कम न होने पाया।

जिस समय डॉक्टर विश्वनाथ प्रसाद इसका सम्पादन कर रहे थे, उस समय इसके लेखक बिहार-सरकार के जन-सम्पर्क-विभाग में एक पदाधिकारी थे। उन्होंने एक आवेदन-पत्र द्वारा, परिषद् की सेवा में कुछ दिन रहकर, भोजपुरी-सम्बन्धी विशेष अनुसन्धान करने की इच्छा प्रकट की। परिषद् के संचालक-मंडल ने आवश्यकता समझकर यथोचित कार्यवाही करने का आदेश दे दिया। सरकार से लिखा-पढ़ी करने पर लेखक की सेवाएँ नव महीनों के लिए परिषद् को सुलभ हुईं। उस अवधि में लेखक ने सम्पादक के निर्देशानुसार बड़ी तत्परता से गवेषणात्मक कार्य किया। सम्पादक के तत्त्वावधान में लेखक को नई खोज के काम का जो सुअवसर मिला, उसका उपयोग उन्होंने अपनी भूमिका तैयार करने और बहुत-से नये कवियों का पता लगाने में ही किया।

जब सम्पादित पाण्डुलिपि परिषद्-कार्यालय में आ गई तब उसी के आधार पर प्रेस-कॉपी तैयार करने में परिषद् के सहकारी प्रकाशनाधिकारी श्रीहवलदार त्रिपाठी 'सहृदय' ने बड़े मनोयोग से काम किया। यदि वे सम्पादक के संशोधनों और सुझावों के अनुसार लंझाड़ पोथे को सुव्यवस्थित करके साफ प्रेस-कॉपी न तैयार करते तो यह पुस्तक वर्त्तमान रूप में किसी प्रकार छप नहीं सकती थी।

किन्तु इसकी छपाई शुरू होने पर जो संकट सामने आये, उनका उल्लेख अनावश्यक है। अठारह फार्म (१४४ पृष्ठ तक) छप जाने के बाद दूसरे प्रेस में मुद्रण की व्यवस्था करनी पड़ी। ईश्वर की असीम कृपा से आज बरसों बाद परिषद् की यह श्रीगणेशी पुस्तक हिन्दी-जगत् के समक्ष उपस्थित हो रही है। खेद है कि लेखक की उत्कण्ठा को बहुत दिनों तक कुण्ठित रहना पड़ा; परन्तु आशा है कि अपनी पुस्तक को प्रस्तुत रूप में प्रकाशित देखकर वे सन्तुष्ट ही होंगे; क्योंकि परिषद् के अतिरिक्त शायद ही कोई प्रकाशन-संस्था उनके पाण्डुलिपि-पयोधि का मन्थन करके सार-सुधा निकालने का साहस कर पाती।

इसमें सन्देह नहीं कि लेखक ने इसकी सामग्री का शोध एवं संग्रह करने में सच्ची लगन से बहुवर्षव्यापी अक्लान्त परिश्रम किया है।

भोजपुरी के लिए उनकी निष्ठा और सतत साधना वास्तव में अभिनन्दनीय है। हमारी समझ में तो विद्वान् सम्पादक की श्रमशीलता भी अभ्यर्थना की अधिकारिणी है। हम उन्हें भी हार्दिक बधाई देते हैं।

लेखक ने अपनी भूमिका में जिन पुरानी सनदों और पुराने दस्तावेजों के चित्रों की चर्चा की है, उन सबकी लिपि कैथी है। अतः हिन्दी-पाठकों की सुविधा और सुगमता के लिए देवनागरी-लिपि में उनका स्पष्टीकरण कर दिया गया है। नागराक्षर में रूपान्तर करते समय उनके आवश्यक अंश का अविकल रूप ही प्रकट किया गया है। पुस्तक के अंत में, आवश्यक संकेत के साथ, वे सब संलग्न हैं। उन सबके सहारे पाठकों को भोजपुरी के पुराने रूप का परिचय मिलेगा। परिषद् को लेखक से उनकी मूल प्रतियों के बदले केवल उनकी प्रतिलिपियाँ ही प्राप्त हुई हैं। चित्रों की मूल प्रतियाँ भी लेखक के ही पास हैं। अतः जिज्ञासु पाठक यदि आवश्यकता समझें तो उनके विषय में लेखक से ही पत्राचार करें। उनकी प्रामाणिकता का सारा उत्तरदायित्व केवल लेखक पर ही है, परिषद् पर नहीं।

कई अपरिहार्य कारणों से इस पुस्तक में कुछ मार्जनीय भूलें रह गई हैं। दो भोजपुरी-कवियों—केसोदासजी और रामाजी—के नाम दुबारा छप गये हैं। पृष्ठ-संख्या १२५, २१४, २१५ और २२५ के देखने स भ्रम मिट जायगा। फिर प्रथम पृष्ठ के प्रारम्भ में ही जो शीर्षक (आठवीं सदी से ग्यारहवीं सदी तक) है, वह लगातार ७१ पृष्ठ तक, प्रत्येक पृष्ठ के सिरे पर, छपता चला गया है। वस्तुतः उस शीर्षक का क्रम २० वें पृष्ठ से पूर्व ही समाप्त हो जाना चाहिए था। किन्तु अब इन भूलों का सुधार आगामी संस्करण में ही हो सकेगा। संभव है कि अगले संस्करण में और भी कई तरह के परिवर्त्तन-परिवर्द्धन हों। कारण, लेखक के पास बची हुई पुरानी सामग्री के सिवा बहुत-सी नई सामग्री भी इकट्ठी हो गई है।

यह एक प्रकार का सुयोग ही है कि लेखक और सम्पादक दोनों ही भोजपुरी-भाषी हैं। प्रेस-कॉपी तैयार करनेवाले 'सहृदय' जी भी उसी क्षेत्र के हैं। सम्पादक जी तो भोजपुरी के ध्वन्यात्मक तत्त्व का वैज्ञानिक अध्ययन उपस्थित करके लन्दन-विश्वविद्यालय से 'डॉक्टर' की उपाधि भी पा चुके हैं। उस थीसिस का हिन्दी-अनुवाद वे परिषद्

के लिए तैयार कर रहे हैं। वह कबतक प्रकाशनार्थ प्राप्त होगा, यह कहना अभी संभव नहीं; पर भाषा-विज्ञान-विषयक शोध के हित में उसका प्रकाशन अविलम्ब होना चाहिए—इस बात का हम उन्हें स्मरण कराना चाहते हैं।

परिषद् के प्रकाशनों में भोजपुरी-सम्बन्धी यह दूसरी पुस्तक है। पहली पुस्तक (भोजपुरी भाषा और साहित्य) यशस्वी भोजपुरी-विशेषज्ञ डॉक्टर उदयनारायण तिवारी की है, जो विक्रमाब्द २०११ (सन् १६५४ ई०) में प्रकाशित हुई थी। न जाने इस पुस्तक के साथ आरम्भ से ही कौन-सा दुष्ट ग्रह लग गया था कि परिषद् की बुनियादी पुस्तक होने पर भी यह पैंतीस पुस्तकों के प्रकाशित हो जाने के बाद अब प्रकाशित हो रही है। संभवतः उसी कुग्रह के फेर से इसमें कुछ अवांछनीय भूलें भी रह गईं, किन्तु आशा है कि इसमें संकलित भोजपुरी-काव्य के सौन्दर्य-माधुर्य का रसास्वादन करने से इसके दोष नगण्य प्रतीत होंगे।

साहित्यानुरागियों से अब यह बात छिपी नहीं रही कि लोक-भाषाओं में भी भावपूर्ण और सरस कविताएँ काफी हैं। आज भी जो कविताएँ जनपदीय भाषाओं में रची जा रही हैं, वे बहुत लोकप्रिय हो रही हैं। क्षेत्रीय भाषाओं के असंख्य कवि आजकल अपनी प्रतिभा का चमत्कार दिखा रहे हैं। हिन्दी के लोक-साहित्य की समृद्धि दिन-दिन वृद्धि पाती जा रही है। अभी तो जनकण्ठ में बसे हुए पुराने लोक-साहित्य से ही भाण्डार भरता जा रहा है, इधर नया भी रोज तैयार होता चलता है। कहाँ तक कोई संग्रह और प्रकाशन करेगा। तब भी बानगी देखकर, साहित्य का खजाना भरने के लिए और भाषा-तत्त्व के अनुशीलनार्थ भी, उसके संग्रहणीय अंश का प्रकाशन नियमित रूप से होना चाहिए।

भोजपुरी के पुराने और नये कवियों की रचनाएँ देखने से यह बात सहसा ध्यान में आती है कि अनेक अशिक्षितों में भी चमत्कृत करनेवाली प्रतिभा विद्यमान है। इसके प्रमाण इस पुस्तक में भी कहीं-कहीं मिलेंगे। बहुत-से स्थल ऐसे दृष्टिगोचर होंगे जैसे केवल उन्नत भाषाओं की कविताओं में ही देखे जाते हैं। कितने ही नये शब्द और मुहावरे भी सामने आकर मन पर यह प्रभाव डालेंगे कि उनका प्रयोग शिष्ट समाज की भाषा में होना चाहिए। केवल भोजपुरी

से ही नहीं, अन्यान्य लोक-भाषाओं से भी अनेक टकसाली शब्द हिन्दी में लिये जा सकते हैं। हिन्दी में खपने योग्य ऐसे क्षेत्रज शब्दों का एक अलग कोष ही बने तो अच्छा होगा।

भोजपुरी की कविताओं के रचयिता और गायक देहाती इलाके में भरे पड़े हैं। कितने तो अज्ञात ही दुनिया से उठ गये। जब से लोकभाषा की ओर साहित्य-जगत् का ध्यान गया है तब से उनमें से कुछ तो प्रकाश में आने लगे हैं और सरकार के दरबार में भी उनमें से कुछ की पूछ होने लगी है। पर अब भी अनेक जनों का हमें पता नहीं है। लेखक महोदय का संग्रह देखकर तो बड़े विस्मय के साथ अनुमान हुआ कि भोजपुरी-क्षेत्र में जितने हिन्दी-कवि हैं, उससे कम भोजपुरी-कवि नहीं हैं।

यहाँ एक बहुत पुरानी बात का उल्लेख मनोरंजक होगा। सन् १६०८ ई० की घटना है। आरा नगर में महादेव नामक एक अधेड़ हलवाई रोज मिठाइयों की प्रभात-फेरी करता था। हम विद्यार्थियों का वह मिठाई का मोदी था। वह अपनी बोली में स्वयं भजन बनाकर गाता था। उसके पास अपनी बिक्री बढ़ाने का यही एक आकर्षक साधन था। उसका बनाया और लिखवाया हुआ एक भजन हमारे पुराने संग्रह में मिला है। वह अविकल रूप में यहाँ उद्धृत है—

सिव जोगी होके बइठे जँगलवा में।
भसम बघम्बर साँप लपेटे, बइठे बरफ के बँगलवा में॥ सिव०
अपने त ओढ़ेले हाथी के छलवा, जगदम्मा सोहेली दुसलवा में॥ सिव०
आगे गजानन खड़ानन खेलसु, गौरी बिराजसु बगलवा में॥ सिव०
माता के नेह बाटे सिंघवा खातिर, बाबा मन बसेला बएलवा में॥ सिव०
लड्डू आ पेड़ा से थार भरल बा, भाँग भरल बा गँगलवा में॥ सिव०
जे सुमिरे नित भोला बबा के, मगन रहे ऊ मँगलवा में॥ सिव०
जे केहु रोज चढ़ाई बेलपतिया, गिनती ना होई कँगलवा में॥ सिव०
सिवजी के छोह बड़ा बरियारा, पाप के पछारे दँगलवा में॥ सिव०

ऐसे-ऐसे बहुतेरे भजन उसने बनाये थे। उस समय हमें देशी बोली की कविता के महत्त्व का कुछ ज्ञान नहीं था। यह भजन तो शिव-भक्ति की प्रेरणा से लिख लिया था। यदि उस समय हम लोकभाषा का थोड़ा भी महत्त्व जानते होते तो अपने गाँव के स्वर्गीय

अम्बिका अहीर के बनाये हुए जोशीले बिरहों को भी लिख लेते, जिन्हें वह डुग्गी बजाकर अपनी जवानी के ओजस्वी कण्ठ से गाता था। उन बिरहों में 'लंका-दहन' और 'मेघनाद की लड़ाई' का ऐसा सजीव वर्णन था कि सुनकर शरीर कंटकित हो उठता था।

आज भी देहातों में कहीं-कहीं ऐसे लोग मौजूद हैं, जो होली में स्वयं 'कबीर' और 'जोगीड़ा' बनाकर गाते हैं। किन्तु विशेष पढ़े-लिखे न होने पर भी वे अपनी अनगढ़ तुकबन्दियों में सामाजिक कुप्रथाओं और आधुनिक सभ्यता के अभिशापों पर जो चुटीले व्यंग्य कसते हैं, उन्हें सुनकर विस्मयानन्द हुए विना नहीं रहता। भले ही उनकी मनगढ़न्त रचनाओं में व्याकरण और पिङ्गल के नियमों का लेश भी न हो, पर उनके भाव तो अनूठे होते ही हैं। ऊपर दिये गये शिव-भजन में भी यतिभंग आदि कई तरह के दोष निकाले जा सकते हैं; पर गुणग्राही पाठक तो एक अपढ़ की सूझबूझ पर निश्चय ही दाद देंगे। पदान्त के शब्दों का तुक मिलाने में उसकी कला का कुछ परिचय मिलता है।

अन्त में, पाठकों की जानकारी के लिए, लेखक की हिन्दी-सेवा के सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त है कि वे बीसवीं सदी के दूसरे चरण के प्रवेश-काल से ही बराबर साहित्याराधन में लगे हुए हैं। उनकी दस हिन्दी-पुस्तकें प्रकाशित हैं—'ज्वालामुखी' (गद्यकाव्य), 'हृदय की ओर' (उपन्यास), 'वह शिल्पी था' और 'तुम राजा मैं रंक' (कहानियाँ), 'भूख की ज्वाला' (राजनीतिक निबन्ध), 'गद्य-संग्रह,' 'भोजपुरी-लोकगीत में करुण रस', 'नारी-जीवन-साहित्य', 'फरार की डायरी', 'कुँअर सिंह—एक अध्ययन'। लगभग एक दर्जन हिन्दी-रचनाएँ अप्रकाशित भी हैं। भोजपुरी-रचनाओं का उल्लेख इस पुस्तक में छपे उनके परिचय में मिलेगा। यों तो यह पुस्तक स्वयं उनका परिचय दे रही है।

विश्वास है कि हिन्दी के लोक-साहित्य में इस पुस्तक का यथोचित आदर होगा और इससे उसकी श्रीवृद्धि भी होगी।

चैत्र, शकाब्द १८७९
मार्च, १९५८ ई०

शिवपूजन सहाय
(संचालक)

सम्पादक का मन्तव्य

यह ग्रन्थ उन थोड़ी सी इनी गिनी महत्त्वपूर्ण पुस्तकों में है, जिनको बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् ने अपने जन्म के प्रथम वर्ष में ही प्रकाशनार्थ स्वीकृत किया था। इसकी भूमिका के रूप में भोजपुरी भाषा और साहित्य का एक परिचयात्मक विवरण शोध करके लिखने के लिए परिषद् ने इसके विद्वान् संकलयिता श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद-सिंह को, जो उस समय जिला-जनसम्पर्क-अधिकारी के रूप में काम कर रहे थे, उस विभाग से कार्यमुक्त कराके १९५१-५२ ई० में मेरे निरीक्षण और तत्त्वावधान में काम करने को नियुक्त किया। आपने बड़े परिश्रम और लगन के साथ अनेक दुर्लभ और बहुमूल्य सामग्रियों की खोज की और उनके आधार पर कोई दो सौ पृष्ठों की एक विद्वत्तापूर्ण भूमिका प्रस्तुत की। मूल ग्रन्थ को लेखक ने पहले विषय-क्रम से तीन खंडों में तैयार किया था, परन्तु बाद में, मेरे निर्देश से उन्होंने इसे कालक्रमानुसार केवल दो खंडों में सँजोया। प्रथम खंड में आदिकाल से लेकर १९ वीं सदी तक के कवि और काव्य रखे गये तथा दूसरे खंड में २० वीं सदी के कवि। प्रथम खंड में कुल मिलाकर लगभग ५०० मुद्रित पृष्ठों की सामग्री थी और दूसरे खंड में लगभग ७०० पृष्ठों की। इस प्रकार संपूर्ण ग्रन्थ का आकार कोई बारह-तेरह सौ पृष्ठों का था। परन्तु अब अपने मूल आकार के प्रायः चतुर्थांश—लगभग तीन सौ पृष्ठों—के जिस लघु रूप में इसे प्रकाशित किया जा रहा है, उससे आप संभवतः इस बात का ठीक-ठीक अन्दाज नहीं लगा सकेंगे कि इसे तैयार करने में अध्यवसायी लेखक ने वस्तुतः कितना प्रयास, परिश्रम और समय लगाया था। इसकी भूमिका लिखने के समय तो वे बराबर मेरे साथ थे ही और मेरे निर्देशन में असाधारण तत्परता के साथ काम करते रहे, परन्तु उसके बाद, इसके सम्पादन-काल में भी, उनके सतत सम्पर्क, परामर्श और सहयोग का लाभ मुझे प्राप्त होता रहा। मेरी ओर से तनिक संकेत पाते ही वे किसी भी अंश में अविलम्ब आवश्यक परिवर्त्तन, संशोधन और परिवर्धन कर डालते थे। इसके लिए स्थान-स्थान के पुस्तकालयों में जाकर जहाँ भी जो ग्रन्थ या निबन्ध मिल पाते थे, उनका वे अध्ययन करते थे और लाभ उठाते थे। इस क्रम से मेरे निरीक्षण और सम्पादन-काल में भी उन्होंने इस ग्रन्थ के लगभग दो-तीन सौ पन्ने बदले होंगे और कुछ नये जोड़े भी होंगे।

इस प्रकार बाबू साहब-द्वारा लिखित और टंकित कुल मिलाकर लगभग डेढ़ हजार पृष्ठ मेरी नजर से गुजरे होंगे। बड़े ध्यान से मैंने उन्हें निरखा और परखा था। पहले यह विचार था कि इस पुस्तक को दो भागों में प्रकाशित किया जाय और तदनुसार इसकी छपाई आज से दो वर्ष पूर्व प्रारम्भ की गई थी। प्रथम खंड के दस-बारह फार्म छप भी चुके थे; परन्तु एक वर्ष बीत जाने पर भी जब प्रेस की कठिनाई के कारण छपाई का कार्य आगे नहीं बढ़ सका, तब यह निश्चय हुआ कि दोनों भागों को संक्षिप्त करके एक जिल्द में ही प्रकाशित कर दिया जाय। मेरे लिए

यह एक विकट समस्या थी कि इस बृहत्काय सागर को गागर में कैसे भरा जाय ? फिर भी, साधन और समय की सीमाओं तथा कई परिस्थितियों के प्रतिबन्धों के कारण यथासामर्थ्य ऐसा करना पड़ा। इसके लाघवीकरण में परिषद् के संचालक आदरणीय श्रीशिवपूजनसहायजी तथा प्रकाशन-विभाग के पदाधिकारी पं० हवलदार त्रिपाठी ने भी पर्याप्त योग-दान किया है। आप दोनों तो परिषद् के अभिन्न अंग हैं, फिर भी आपके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना हमारा कर्त्तव्य है। परन्तु इस लाघवीकरण के प्रयत्नों की प्रशंसा करते हुए भी मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि बाबू साहब ने अपने अथक परिश्रम और खोज के द्वारा जो विशाल और ठोस सामग्री प्रस्तुत की थी, उसका यथार्थ महत्त्व, ग्रन्थ के इस संक्षिप्त रूप से नहीं आँका जा सकता। मेरे विचार से उसका सुव्यवस्थित, सुसंघटित और समुचित उपयोग करके पृथक्-पृथक् दृष्टियों से डॉक्टरेट के दो प्रबन्ध प्रस्तुत किये जा सकते हैं। आशा है कि इसकी छाँटी हुई अप्रयुक्त सामग्री का भी सार्थक उपयोग किसी-न-किसी रूप में बाबू साहब स्वयं या कोई अन्य विद्वान् यथारुचि करेंगे।

इस ग्रन्थ के प्रणयन और प्रकाशन में लगभग दस वर्षों का समय लगा है; परन्तु यह भी ठीक है कि इस अवधि में ज्यों-ज्यों समय बीतता गया है, त्यों-त्यों इस ग्रन्थ की परिपक्वता भी बढ़ती गई है। इस बीच भोजपुरी भाषा और साहित्य के सम्बन्ध में जो भी नई सामग्री सामने आती गई, उसका उपयोग बाबू साहब करते गये। मैं समझता हूँ कि बँगला, मराठी, गुजराती आदि कुछ लिखित साहित्यिक परम्परावाली क्षेत्रीय भाषाओं को छोड़कर जितना काम भोजपुरी के संबंध में हुआ है, उतना और किसी जनपदीय भाषा या बोली के संबंध में नहीं। डा० ग्रियर्सन, डा० हार्नले, बीम्स, डा० उदयनारायण तिवारी, डा० कृष्णदेव उपाध्याय, श्री डब्ल्यू० सी० आर्चर, रेव्हरेंड शान्ति पीटर 'नवरंगी', डा० सत्यव्रत सिन्हा और पं० गणेश चौबे के तथा मेरे भी भोजपुरी-विषयक अनुसन्धानों का यथावत् निरीक्षण करके तथा अपनी स्वतंत्र मौलिक खोजों का आधार ग्रहण करके विद्वान् लेखक ने अपनी इस कृति को समृद्ध किया है। भोजपुरी के संबंध में कई विवेचनीय प्रश्नों पर उन्होंने नया प्रकाश डाला है। राजा भोज के वंश से भोजपुर-प्रदेश का लगभग डेढ़ सौ वर्षों का संबंध तथा उस काल में भोजपुरी पर संस्कृत का प्रभाव; भोजपुरी के 'सोरठी बृजभार', सोभानायक बनजारा', 'लोरिक-गीत', 'भरथरी-चरित्र', 'मैनावती', 'कुँवर विजयी' आदि प्रसिद्ध गाथा-गीतों का काल-निर्णय आदि विषयों की मीमांसा लेखक ने बड़े सुन्दर और विचारपूर्ण ढंग से की है। चम्पारन के 'सरभंग-सम्प्रदाय' तथा उसके सन्त कवियों की जीवनी और रचनाओं को किसी ग्रन्थ के अन्तर्गत सर्वप्रथम प्रस्तुत करने का श्रेय भी बाबू साहब को ही है। परिषद् ने सरभंग-सम्प्रदाय के सम्बन्ध में जो एक स्वतंत्र ग्रन्थ प्रकाशित किया है, उसकी रचना के बहुत पहले ही बाबू साहब ने अपने ग्रन्थ 'भोजपुरी के कवि और काव्य' के अन्तर्गत इस सम्प्रदाय की रचनाओं को समाविष्ट किया था। इसके अतिरिक्त राजाज्ञाओं, सनदों, पत्रों, दान-पत्रों, दस्तावेजों तथा मामले-मुकदमे के अन्य कागजों के आधार पर सन् १६२० ई० से आधुनिक काल तक के भोजपुरी-गद्य के भी कई प्रामाणिक नमूने दिये गये हैं और उनके मूल रूपों के कुछ फोटो भी यथास्थान मुद्रित किये गये हैं।

परिषद् के प्रकाशन-विभाग ने पुस्तक की छपाई में यथेष्ट सावधानी बरती है; फिर भी जहाँ-तहाँ छपाई की कुछ भूलें और त्रुटियाँ रह गई हैं। उनके लिए मैं सबकी ओर से क्षमा-प्रार्थना करता हूँ। आठवीं सदी से ग्यारहवीं सदी तक का विवरण ३२वें पृष्ठ में समाप्त हो जाने के बाद भी यही शीर्षक पृष्ठ ७१ तक छपता चला गया है, यद्यपि इन बाद के पृष्ठों में इस अवधि के नहीं, बल्कि महात्मा कबीरदास, कमालदास आदि सन्त कवियों के वर्णन हैं। इसी प्रकार छपरे के प्रसिद्ध सन्त रामाजी के संबंध में पहले कहा गया है कि उनकी कविता का कोई उदाहरण नहीं मिलता, परन्तु बाद के विवरण (पृ० २२५-२६) में एक उदाहरण दिया गया है। इस प्रमाद का कारण स्पष्टतः यही है कि बाद में एक उदाहरण प्राप्त हो गया और इसलिए उसे देना उचित प्रतीत हुआ। यह बात भी संभवतः कुछ खटकेगी कि पुस्तक के अन्दर भर्तृहरि (११ वीं सदी) के बाद भोजपुरी के किसी अन्य कवि और काव्य की चर्चा नहीं की गई है। उसके बाद एकाएक सीधे कबीरदास (१४वीं-१५वीं सदी) की चर्चा की गई है। इससे शंका हो सकती है कि क्या ११वीं से १४वीं या १५वीं शताब्दी के मध्य के समय को भोजपुरी-साहित्य के विकास में एक सर्वथा शून्यकाल माना जाय। इस रिक्त स्थान की पूर्त्ति के लिए मैं इस ग्रन्थ की भूमिका के पृ० ३३ से ३८ तक के विवरण की ओर आपका ध्यान आकर्षित करता हूँ। इस अंश में लेखक ने गोरखनाथ, नाथपंथी-साहित्य तथा भोजपुर-गाथा गीतों का संकेत किया है। इसमें संदेह नहीं कि गोरखनाथ के नाम से प्रचलित अनेक बानियों में भोजपुरी के बहुतेरे प्रयोग मिलते हैं। १२वीं शताब्दी में पंडितवर दामोदर द्वारा लिखित 'उक्ति-व्यक्ति प्रकरण' में उस समय वाराणसी में प्रचलित भाषा का जो नमूना मिलता है, उससे भोजपुरी के विकास का पता चलता है[१]। उसमें व्यवहृत 'छात्र', 'प्रज्ञा', 'स्मृति', 'धर्म' आदि जैसे तत्सम शब्द उसके परिनिष्ठित विकसित रूप के प्रमाण हैं। उससे हमें इस महत्त्वपूर्ण बात का भी ज्ञान होता है कि इस भाषा में उस समय तक कथा-कहानी का साहित्य भी रचा जाने लगा था। भोजपुरी में जो कई प्रसिद्ध गाथा-गीत प्रचलित हैं[२], उनकी रचना इसी ११ वीं से १४ वीं ई० सदी के बीच हुई जान पड़ती है। इनमें से अनेक गाथाएँ गद्य-पद्य-मय हैं। यह ठीक है कि मौखिक रूप में रहने के कारण इनमें भाषा का जो स्वरूप मिलता है, वह प्रायः आधुनिक ही है, पर उनमें जो सामाजिक चित्रण, धार्मिक प्रथाएँ और विश्वास तथा ऐतिहासिक विवरण मिलते हैं, उनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि लोक-समाज में उनकी रचना और प्रचार गोरखनाथ के बाद ११वीं से १४वीं-१५वीं सदी के बीच में ही हुआ होगा। 'सोरठी बृजभार', 'सोभानायक बनजारा', 'लोरिकी' आदि गाथा-गीतों के रचना-काल के संबंध में लेखक के निष्कर्ष का आधार यही है।

१. 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' की भाषा को डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने 'कोसली' का प्राचीन रूप बताया है; परन्तु उसके बहुतेरे प्रयोग ऐसे हैं, जो आज भी भोजपुरी में ज्यों-के-त्यों पाये जाते हैं, जैसे— का करें, काहे, काहाँ, ईहाँ, लाजें (लाज से), लौंड़ी, टूक, कापास, बाबा आदि। संभव है, प्राचीन काल में कोसली और भोजपुरी में और भी अधिक समरूपता हो। इस दृष्टि से, मेरी समझ से, उसमें भोजपुरी के विकास के प्रमाण प्राप्त करना अनुचित नहीं है। 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' के लेखक पंडित दामोदर ने स्वयं अपनी भाषा को केवल अपभ्रंश बताया है, कोसली नहीं।

२. देखिए—डा० सत्यव्रत सिनहा, 'भोजपुरी लोक-गाथा', हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद।

उन्होंने मुल्ला दाऊद के प्रसिद्ध प्रेमगाथा-काव्य 'लोरिकायन' (१३७० ई०) की भी चर्चा की है (भूमिका—पृ० ३५)। इसकी भाषा यों तो अवधी है, पर उसमें अन्यान्य भाषाओं के मिश्रण के साथ भोजपुरी के भी अनेक रूप सम्मिलित हैं और कुछ ऐसे रूप भी हैं, जो भोजपुरी और अवधी—दोनों में समान हैं [1]।

भोजपुरी के काव्य-साहित्य के इतिहास को लेखक ने पाँच कालों में विभक्त किया है। प्रारंभिक अविकसित काल (७०० से ११०० ई०) में उन्होंने सिद्ध-साहित्य को को रखा है। महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री ने १९१६ ई० में सिद्ध-कवियों की कुछ रचनाओं का एक संग्रह 'बौद्धगान ओ दोहा' नाम से प्रकाशित किया था। तब से उनकी भाषा के संबंध में विभिन्न मत प्रकट किये गये हैं। कुछ लोगों ने उनमें बँगला, कुछ ने उड़िया, कुछ ने मगही, कुछ ने मैथिली और कुछ ने हिन्दी के प्रारंभिक रूप का पता पाया है। इसी प्रकार इस ग्रन्थ के लेखक ने उनमें भोजपुरी का दर्शन किया है। सच बात तो यह है कि इन पूर्वी भाषाओं का उद्गम मागधी या अर्ध-मागधी था। उनके स्थानीय रूपों में उस समय बहुत अधिक भेद नहीं था। अतः इन भाषाओं के आधुनिक रूपों में भी घनिष्ठ साम्य दिखाई देता है। ऐसी दशा में उनके बहुतेरे समान रूपों में, इनमें से किसी के भी आदिम विकास के रूप ढूँढ़े जा सकते हैं। कई सिद्ध-कवि नालन्दा और विक्रमशिला के निवासी थे, जहाँ की भाषा मगही है। मगही और भोजपुरी की सीमाएँ एक-दूसरे से दूर नहीं, सटी-सटी हैं। अतएव यह अनुमान किया गया है कि इन लोगों ने मगही के ही प्राचीन रूप का व्यवहार किया होगा। यह भी सर्वथा सम्भव है कि इन कवियों की रचनाओं में मगही के साथ भोजपुरी के भी रूपों का मिश्रण हुआ हो। प्रारंभिक काल के बाद क्रम-क्रम से लेखक ने आदिकाल (११०० से १३२५ ई०), पूर्व-मध्यकाल (१३२५ से १६५०), उत्तरमध्यकाल (१६५० से १९०० ई०), आधुनिक काल (१९०० से १९५० ई०) का परिचय दिया है। इस काल-विभाजन में उन्होंने मुख्यतः पं० रामचन्द्र शुक्ल के 'हिन्दी-साहित्य के इतिहास' के काल-विभाजन का आधार स्वीकार किया है। प्रत्येक काल के मुख्य कवि और काव्य का उन्होंने बहुत ही सरस परिचय प्रस्तुत किया है। भूमिका में उन्होंने भोजपुर-प्रदेश, उसके इतिहास, भोजपुरी जनता और भोजपुरी भाषा तथा साहित्य का सामान्य और संक्षिप्त वर्णन दिया है।

वस्तुतः किसी भी भाषा अथवा साहित्य का सहानुभूतिपूर्ण अध्ययन तबतक असंभव है, जबतक उस विशेष भाषा-भाषी जन-समुदाय के आचार-विचार तथा भावनाओं से हम कुछ परिचय न प्राप्त कर लें। भोजपुरी भाषा-भाषी जन-समुदाय की कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं, जिनकी ओर ध्यान आकर्षित किया जाना आवश्यक और उचित ही है। इस भाषा के बोलनेवाले सदियों से अपनी वीरता और पराक्रम के लिए प्रसिद्ध हैं। प्रसिद्ध वीर आल्हा और ऊदल का जन्म-स्थान यही प्रदेश है। सन् १८५७

१. अल् बदायूनी के 'मुतखबुत्तवारीख', में इस ग्रन्थ का उल्लेख है और वहाँ इसका समय ७७२ हिजरी (=१३७० ई०) बताया गया है। इस विषय में देखिए—

सैयद हसन अस्करी, 'रेयर फ्रैग्मेंट्स ऑफ चन्दायन ऐंड मृगावती', करेंट स्टडीज, पटना कॉलेज-मैगजिन, १९५५, पृ० ६२—९ तथा विश्वनाथ प्रसाद, 'चन्दायन (टिप्पणी)', 'भारतीय साहित्य', जनवरी, १९५९ ई०, पृ० १८९—९१।

के विद्रोह के पहले तक हिन्दुस्तानी पल्टन में भोजपुरी भाषा-भाषियों की संख्या बहुत अधिक थी। भोजपुरी जनता की युद्धप्रियता और उग्रता के संबंध में अनेक कहावतें प्रचलित हैं—

शाहाबाद जिले में होली का पहला ताल इसी गान से ठोंका जाता है—

बाबू कुँवर सिंह तोहरे राज बिनु हम ना रँगइबो केसरिया।

कृष्ण की शृंगारिक लीलाओं की अपेक्षा भोजपुरी जनता को उनका वीर चरित्र ही आकर्षित करता है—

लरिका हो गोपाल कूदि पड़े जमुना में।

यह होली भोजपुर में बहुत प्रचलित है। उक्ति प्रसिद्ध है कि—

भागलपुर के भगोलिया, कहलगाँव के ठग।
पटना के देवालिया तीनों नामजद॥
सुनि पावे भोजपुरिया तो तीनों के तूरे रग।[1]

डा० ग्रियर्सन ने ठीक ही कहा है कि हिन्दुस्तान में नवजागरण का श्रेय मुख्यतः बंगालियों और भोजपुरियों को ही प्राप्त है। बंगालियों ने जो काम अपनी कलम से किया, वही काम भोजपुरियों ने अपनी लाठी से किया। इसीलिए लाठी की प्रशंसा में गिरधर की जो प्रसिद्ध कुंडलिया भोजपुरी-प्रदेश में प्रचलित है—'सब हथियारन छोड़ि हाथ में रखिहऽ लाठी'—उसीसे उन्होंने अपने 'लिंगुइस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया' में भोजपुरी के अध्याय का श्रीगणेश किया है।

भोजपुरी-भाषा-भाषियों की वीर प्रकृति के अनुरूप ही उनकी भाषा भी एक चलती टकसाली भाषा है, जो व्याकरण की अनावश्यक उलझनों से बहुत कुछ उन्मुक्त है। इस ओजस्वी और प्रभावशाली भाषा का भोजपुरी जनता को स्वभावतः अभिमान है। दो या दो से अधिक भोजपुरी भाषा-भाषी, चाहे वे कितने ही ऊँचे या नीचे ओहदे पर हों, कहीं भी, कभी भी, जब आपस में मिलते हैं तब अपनी मातृभाषा भोजपुरी को छोड़कर अन्य किसी भाषा में बातचीत नहीं करते।

वस्तुतः पूर्वी भाषावर्ग में भोजपुरी का एक विशिष्ट स्थान है। ग्रियर्सन साहब ने भोजपुरी को मैथिली और मगही के साथ रखकर उन्हें एक सामान्य नाम 'बिहारी' के द्वारा सूचित किया है और बंगाली, उड़िया, आसामी तथा अन्य बिहारी भाषाओं के समान भोजपुरी को भी मागधी-अपभ्रंश से व्युत्पन्न माना है। किन्तु साथ ही उन्हें यह भी स्वीकार करना पड़ा है कि मैथिली और मगही का पारस्परिक संबंध जितना घनिष्ठ है उतना उनमें से किसी का भी भोजपुरी के साथ नहीं है। एक ओर मैथिली-मगही और दूसरी ओर भोजपुरी के धातु-रूपों में जो स्पष्ट भेद है, उसको ध्यान में रखते हुए डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी[2] ने भोजपुरी को मैथिली-मगही से भिन्न एक

१. ऐसा प्रतीत होता है कि जिस समय यह कहावत प्रचलित हुई, उस समय इन स्थानों में ऐसे लोगों की अधिकता हो गई होगी।

२. Dr. S. K. Chatterji, O. D. B. L., p. 92.

पृथक् वर्ग—'पश्चिमी मागधन' के अंतर्गत रखा है। इसके विपरीत डॉ० श्यामसुन्दर-दास[१], डॉ० धीरेन्द्र वर्मा[२] आदि हिन्दी के भाषाशास्त्री विद्वान् अवधी आदि के समान भोजपुरी को भी हिन्दी से संबद्ध उप-भाषाओं की श्रेणी में रखने के पक्ष में हैं। मेरी समझ में भोजपुरी का बहुत-कुछ संबंध अर्धमागधी से जान पड़ता है। प्राकृत के वैयाकरणों ने मागधी में दन्त्य, मूर्धन्य और तालव्य 'श' के स्थान में केवल तालव्य 'श' तथा 'र' के स्थान में 'ल' के प्रयोग का जो एक मुख्य लक्षण बताया है, वह भोजपुरी में नहीं पाया जाता। भोजपुरी के उच्चारणों में अवधी के समान तालव्य 'श' के स्थान में भी दन्त्य 'स' का ही प्रयोग होता है और ऐसे रूपों की प्रचुरता है, जिनमें पश्चिमी हिन्दी में भी जहाँ 'ल' है, वहाँ भोजपुरी में 'र' का ही प्रयोग होता है। जैसे—

हिन्दी	भोजपुरी
थाली (सं० स्थाली)	थारी
केला	केरा
काजल	काजर
तलवार	तरवार
फल	फर

भोजपुरी के अस् प्रत्ययान्त देखस, देखलस, देखतस-जैसे क्रियापदों में अर्धमागधी से व्युत्पन्न अवधी से बहुत-कुछ समानता है। यह ठीक है कि भाषा-विज्ञान की दृष्टि से भोजपुरी में बहुत-से ऐसे लक्षण हैं, जो उसकी बहनों—मगही, मैथिली और बँगला भाषाओं—से मिलते हैं; पर साथ ही शब्दकोश, विभक्ति, सर्वनाम और उच्चारण, इन कई विषयों में उसका अवधी तथा पूर्वी हिन्दी की अन्य उप-भाषाओं से अधिक साम्य है। तुलसीदास के 'रामचरितमानस' की कई पंक्तियाँ उतने ही अंश में भोजपुरी की रचनाएँ कही जा सकती हैं, जितने अंश में अवधी या बैसवारी की। इसी प्रकार कबीर आदि सन्तों की रचनाएँ, जो मुख्यतः भोजपुरी में थीं, अवधी की रचनाएँ समझी गईं।

सच पूछें तो आज भारतवर्ष की किसी भी आधुनिक भाषा को, किसी भी विशेष प्राकृत या अपभ्रंश के साथ, हम निश्चयात्मक रूप से सम्बद्ध नहीं कर सकते; क्योंकि, जैसा टर्नर[३] या ब्लाक[४] महोदय ने कहा है—"प्राचीन प्राकृत या अपभ्रंश-काल में किसी विशेष जनवर्ग द्वारा वास्तविक रूप में बोली जानेवाली भाषा का कोई प्रामाणिक लिखित उदाहरण आज हमें उपलब्ध नहीं है और दूसरी ओर वर्त्तमान देशी भाषाओं में तीर्थयात्रा, सांस्कृतिक एकता, शादी-ब्याह के सम्बन्ध, देश-प्रदेश के यातायात तथा भाषागत समान परिवर्त्तनों के कारण परस्पर बहुत-कुछ मिश्रण हो चुका है।"

---

१. श्यामसुन्दर दास, हिन्दी-भाषा और साहित्य।

२. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, 'हिन्दी-भाषा का इतिहास,' पृ० ३१-३२ और ग्रामीण हिन्दी, पृ० २५-२६

३. R. L. Turner, Gujarati Phonology (J. R. A. S. 1925, पृ० ५२९)

४. Bloch, La Formation de Langue Marathe, पृ० १—३७।

प्राकृत-वैयाकरणों की शब्दावली का आश्रय ग्रहण करके हम निश्चयात्मक रूप से अधिक-से-अधिक यही कह सकते हैं कि भोजपुरी प्राच्य भाषावर्ग के अंतर्गत आती है, जिसके पश्चिमी रूप अर्ध-मागधी और पूर्वी रूप मागधी—इन दोनों के बीच के प्रदेश से सम्बद्ध होने के कारण, उसमें कुछ-कुछ अंशों में दोनों के लक्षण पाये जाते हैं।

भोजपुरी-भाषा-भाषियों का हिन्दी-प्रदेश से इतना अधिक ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक संबंध रहता आया है कि उसमें कभी हिन्दी से पृथक् स्वतंत्र साहित्य की परंपरा विकसित करने की आवश्यकता का बोध ही नहीं हुआ। शिक्षित भोजपुरी-भाषा-भाषी अबतक मध्यदेश की भाषा को ही साहित्य तथा संस्कृति की भाषा मानते आये हैं और उसी को उन्होंने अपनी प्रतिभा की भेंट चढ़ाई है। खड़ी बोली के प्रसिद्ध गद्यकार सदल मिश्र, आधुनिक गद्यशैली के जन्मदाता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासकार प्रेमचंद और इस युग के श्रेष्ठ कवि 'प्रसाद' भोजपुरी-प्रदेश के ही थे और अपने घरों में भोजपुरी का ही प्रयोग करते थे। इसके अतिरिक्त भोजपुरी में स्वतंत्र साहित्य-परम्परा के अभाव का एक दूसरा कारण यह भी है कि मध्यकालीन भक्तों और संतों ने साहित्य-सृष्टि के लिए किसी एक भाषा का आश्रय लेते हुए भी उसमें 'समान मिश्रित भाषा' के आदर्श को ही अपनाना उचित समझा था, जिससे उनकी भाषा में सबका प्रतिबिम्ब उतर आवे और वह सबके लिए समान रूप से ग्राह्य हो सके। मैं तो समझता हूँ कि कृष्णभक्ति-शाखा की मुख्य भाषा जैसे ब्रजभाषा थी, रामभक्ति शाखा तथा प्रेममार्गी भक्तिशाखा की मुख्य भाषा जैसे अवधी थी, वैसे ही कबीर आदि संतों की ज्ञानमार्गी भक्ति-शाखा की मुख्य भाषा भोजपुरी थी। उसी में उन्होंने स्वयं या उनके बाद उनके अनुयायियों ने दूसरी भाषाओं के रूपों का मिश्रण किया। अपनी भाषा के संबंध में तो कबीर ने स्पष्ट कहा है कि —

"बोली हमरी पूरबी, हमको लखे न कोय।
हमको तो सोई लखे, जो पूरब का होय।"

अनेक मिश्रणों के रहते हुए भी कबीर की रचनाओं में भोजपुरी के ठेठ अविकृत रूप भरे पड़े हैं। कबीर के अतिरिक्त धर्मदास, धरनीदास, शाहाबाद के दरिया साहब तथा चम्पारन के सरभंग सम्प्रदाय के अनेक ग्रंथ भोजपुरी में ही हैं। इन सबका परिचय लेखक ने यथास्थान इस ग्रंथ में दिया है।

इनके अतिरिक्त उन्होंने अपने इस संकलन के लिए कुछ ऐसे प्रसिद्ध कवियों की रचनाओं के भी चुने हुए नमूने इकट्ठे किये थे, जो मैथिली, ब्रजभाषा, अवधी आदि के सर्वोच्च साहित्यकारों में गिने जाते हैं। निस्सन्देह यह कहना विलक्षण और आश्चर्यप्रद होगा कि विद्यापति ठाकुर, गोविन्ददास, सूरदास, तुलसीदास, रैदास तथा मीराबाई ने भी भोजपुरी में रचनाएँ की थीं। श्री दुर्गाशंकर बाबू ने इन कवियों के नाम से प्रचलित कई भोजपुरी गीत और पद एकत्र किये हैं। इसका मूल रहस्य यह है कि इन समर्थ कवियों की वाणी जिस प्रदेश के साधारण जनवर्ग की जिह्वा पर आसीन हुई, उसी की क्षेत्रीय बोली या भाषा के रंग में रँग गई। भारती के इन अमर पुजारियों की नैवेद्य-रूप रचनाओं ने विभिन्न प्रदेशों के लोक-मानस और लोक-वाणी का अनुरञ्जन करने के लिए उनकी सहज रुचि के अनुसार भिन्न-भिन्न रूपों में अपना वेश

बदला और तदनुसार अभिव्यक्ति पाई। इस प्रक्रिया की गति में इस बात से भी विशेष बल आया कि हमारी भारतीय भाषाएँ एक-दूसरे से बहुत अधिक सन्निकट हैं और कई अंशों में समरूप हैं। हमने ऊपर इस बात का भी संकेत किया है कि हमारे मध्यकालीन भक्त और सन्त कवियों ने किसी एक भाषा के सर्वथा विशुद्ध रूप में ही रचना करने की शपथ नहीं ली थी, वरन् अपनी वाणी के लिए समन्वित भाषा के आदर्श को अपनाया था।[1] इसी कारण एक ही कवि की रचना में हमें बहुधा अन्य जनपदीय प्रयोगों के भी रूप मिलते हैं। ऐसे मिश्रित रूपों की उपेक्षा करना भाषा और साहित्य के विकास के इतिहास की दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता। फिर भी विस्तार-भय से लेखक के चुने हुए ऐसे नमूनों को ग्रन्थ में सम्मिलित नहीं किया जा सका। परन्तु लोक-वाणी और लोक-मानस के रागात्मक प्रभाव को समझने के लिए वे बड़े मजेदार और महत्त्वपूर्ण हैं। ऐसे कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किये जाते हैं—

विद्यापति—

लेखक ने अपनी विधवा चाची से निम्नलिखित गीत को आधी रात में गा-गाकर रोते हुए सुना था—

बसहर घरवा के नीच दुअरिया ए ऊधो रामा झिलमिल बाती।
पिया ले में सुतलों ए ऊधो, रामा अँचरा डसाई।
जो हम जनितों ए ऊधो, रामा पिया जइहें चोरी।
रेसम के डोरिया ए ऊधो, खींची बँधवा बँधितों।
रेसम के डोरिया ए ऊधो, टूटि-फाटि जइहें।
बचन के बान्हल पियवा, रामा से हो कहाँ जइहें।

डा० ग्रियर्सन ने भी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल के नये सिरीज (पृष्ठ १८८) में इस गीत को यह प्रमाणित करने के लिए उद्धृत किया था कि विद्यापति ने भोजपुरी में भी गीत लिखे थे। इस गीत का एक दूसरा पाठ लेखक को अपनी चाचीजी से ही प्राप्त हुआ था, जिसे नीचे उद्धृत किया जा रहा है—

प्रेम के बन्हलका पियवा जीवे सगें जइहें ॥४॥
जवनि डगरिया ए ऊधो, रामा पिया गइलें चोरी।
तवनि डगरिया ए ऊधो, रामा बगिया लगइबों।
बगिया के ओते-ओते रामा केरा नरियर लगाई ॥५॥
अँगना ससुरवा ए ऊधो, रामा दुअरा भसुरवा।
कइसे बाहर होखबि रामा बाजेला नूपुरवा ॥६॥
गोड़ के नूपुरवा रामा, फाड़े बाँधि लइबों
अलप जोबनवा ए ऊधो, हिरदा लगइबों ॥७॥
पात मधे पनवा ए ऊधो, फर मधे नरियर,
तिवई मधे राधा ए ऊधो, पुरुष मधे कन्हाई ॥८॥

---

१. इस सम्बन्ध में देखिए—

विश्वनाथ प्रसाद, 'व्रजभाषा-हेतु व्रजबास ही न अनुमानों', 'व्रज-भारती' (अखिलभारतीय व्रज-साहित्य-मंडल के १९५६ ई० के मैनपुरी-अधिवेशन में अध्यक्ष-पद से दिया हुआ भाषण)।

कतलो पहिरो ए ऊधो, कतलें समुझों गुनवा,
सोने के सिंघोरवा ए रामा, लागि गइले घुनवा ॥९॥
मोरा लेखे आहो ए ऊधो, दिनवा भइले रतिया,
मोरा लेखे आहो ए ऊधो, जमुना भइली भयावनि ॥१०॥
भनहिं विद्यापति रामा, सुनहुँ ब्रजनारी
धिरजा धरहु ए राधा, मिलिहें मुरारी ॥११॥

लेखक ने भोजपुरी-प्रदेश में विद्यापति के नाम से प्रचलित 'बिदापत'-राग का भी उल्लेख किया है।

मैथिली और भोजपुरी की कई विभक्तियाँ और क्रिया-पद समान हैं। इसलिए थोड़े अन्तर के साथ एक गीत का रूपान्तर दूसरी भाषा में सहज ही संभव है।

पं० रामनरेश त्रिपाठी ने भी अपनी 'कविता-कौमुदी', भाग—१ में विद्यापति की एक व्यंग्योक्ति तथा एक बारहमासा उद्धृत किया है, जिसकी भाषा बहुत-कुछ अंशों में भोजपुरी है। त्रिपाठीजी ने स्वयं उसे हिन्दी-मिश्रित भाषा कहा है। उनके बारहमासे की कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत की जा रही हैं—

कुआर मास बन बोलेला मोर,
आउ आउ गोरिया बलमुआ तोर,
अइले बलमुआ पुजली आस,
पूरल 'विद्यापति' बारह मास।
मों ना भूलबि हो।

सूरदास—

इस संबंध में मुझे अपने बचपन की एक बात याद आती है। सन्ध्या-काल में खेल-कूद के बाद बाहर से घर आने में हमलोगों को जब देर हो जाती थी, तब अक्सर आँगन में मेरे पितामह की बूढ़ी माता सूरदासजी का यह भजन गाने लगती थीं—

साँझ भइल घरे ना अइलें कन्हइया।

यह सूरदासजी के भजन का भोजपुरी-रूप है। इसमें नाममात्र का परिवर्त्तन कर देने से इसका ब्रजभाषा-रूप प्रस्तुत हो जायगा।

लेखक ने भोजपुरी-प्रदेश के चमारों, मुसहरों आदि पिछड़ी जातियों में प्रचलित सूर के कई गीत प्राप्त किये हैं, जिनकी भाषा आद्योपान्त भोजपुरी है। उदाहरण—

काहे ना प्रभुता करीं ए हरी जी काहें ना प्रभुता करीं,
जइसे पतंग दीपक में हुलसे पाछे के पगु ना धरे,
ओइसे के सूरमा रन में हुलसे, पाछे के पगु ना धरे॥
ए नाथ जी काहे ना०
कृष्ण के पाती लिखत रुकुमिनी, बिप्र के हाथ धरे
अब जनि बिलँम करीं ए प्रभु जी, गडुर चढ़ि रउरा धाईं॥
ए नाथ जी काहे ना०

साजि बरात सिसुपाल चढ़ि अइले, घेरि लिहले चहु ओरी
अब जनि बिलँम करीं ए प्रभुजी, गडुर त्यागि रउरा धाईं ॥
ए नाथ जी काहे ना०
(Hugh Fraser, C. S.)

ह्यू फ्रेजर ने रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, १८८३ में 'फ़ोक-लोर फ्रॉम ईस्टर्न गोरखपुर'-शीर्षक के अन्तर्गत सूरदास का एक बारहमासा प्रकाशित किया था। इसका सम्पादन किया था स्वयं डॉ० ग्रियर्सन ने। उसका कुछ अंश यहाँ उद्धृत किया जाता है—

कौन उपाइ करों मोरि आली
स्याम भैल कुबरी बस जाई।
चढ़त असाढ़ घन घेरि अइले बदरा
सावन मास बहे पुरवाई।
× × ×
पूस मास परत तुखारी माघ पिया बिनु जाड़ो न जाई।
फागुन का सँग रँग हम खेलब सूरस्याम बिना जदुराई।

भोजपुरी-प्रदेश में सूरदास के नाम से प्रचलित एक झूमर और एक सोहर के नमूने देखिए—

झूमर

कल ना परेला बिनु देखले हो नाहीं अइले गोपाल।
कुबरी बसेले ओही देसवा हो जाँहाँ मदन गोपाल।
चन्दन रगरि के भोरवली हो जसुदाजी के लाल।
मोतियन बुँदवा बरसि गइले हो मुसरन के धार।
अब सून लागेला भवनवाँ हो नाहीं अइलें गोपाल।
सूरदास बलिहारी हो चरनन के आस।

सोहर

भादों रयनि भयावनि बिजुरी चमकइ हो,
ललना, तेहि छिन प्रगटे गोपाल देवकी मुदित भैली हो।
चन्दन लकड़ी कटाइब पसँघी जराइब हो,
ललना, जीरवहिं बोरसी भराइब मंगल गवाइब हो ॥
× × ×
जे यह मंगल गावे गाइ के सुनावेले हो,
ललना, सूरदास बलिहारी परम पद पावेले हो।

खा जा माखन रोटी गोपाल पियारे ॥
अपना गोपालजी के कुलहई सिया देबों,
एक पीली एक लाली, गोपाल पियारे ॥ खा जा माखन०
अपना गोपालजी के रोटिया पोआ देबों,
एक छोटी एक मोटी, गोपाल पियारे। खा जा माखन०

अपना गोपालजी के बिआह करा देबों,
बड़ भूप के बेटी, गोपाल पियारे । खा जा माखन०
सूरदास प्रभु आस चरन के,
हरि के चरन चित लाई, गोपाल पियारे । खा जा माखन०

यशोदा अपने खेलते और मचलते गोपाल को प्यार से दुलार-दुलार कर, लालच दिखा-दिखाकर खाने के लिए बुला रही हैं और गोपाल बात ही नहीं सुनते, खेलने में मस्त हैं। सुनते भी हैं, तो मचलकर पुनः भाग जाते हैं। इसी मनोहर प्रसंग का यहाँ वर्णन है।

तुलसी—

सोहर भोजपुरी का बड़ा प्रिय छन्द है। इसमें रचना करने के लोभ का स्वयं तुलसीदासजी भी संवरण नहीं कर सके और अपने 'रामलला-नहछू' में उन्होंने इसी छन्द का प्रयोग किया। तुलसीदास जी की भाषा में भी भोजपुरी शब्दों, मुहावरों, क्रियाओं और कहावतों के प्रयोग मिलते हैं। रामचरितमानस में ऐसी अनेक पंक्तियाँ हैं, जो एक ओर अवधी की, तो दूसरी ओर शुद्ध भोजपुरी की प्रतीत होती हैं। अवधी और भोजपुरी में कई अंशों में साम्य है, जो ऐसे उभयान्वयी उदाहरणों के मुख्य आधार हैं। इनके अतिरिक्त तुलसी ने 'राउर', 'रउरे' आदि-जैसे भोजपुरी के कई व्याकरणिक रूपों का भी व्यवहार किया है। दुर्गाशंकर बाबू को तुलसी के नाम से प्रचलित कई ऐसे गीत मिले हैं, जिनकी भाषा मुख्यतः भोजपुरी है और जो मुसहरों के नाच में आज भी गाये जाते हैं। इसके प्रमाण में उन्होंने एक बारहमासा उद्धृत किया है, जो कई वर्ष हुए मुद्रित भी हुआ था (बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद, १६२६ ई०)। उदाहरण—

भजन कर भगवान के मन, आ गइल बइसाख रे।
घटत छिन-छिन अवधि तोरी, जाइ मिलिबो खाक रे।
कठिन काल कराल सिर पर, करी अचानक घात रे।
नाम बिनु जग तपत भासत, केउ न देइहें सात रे।

अयोध्या में राम-भरत-मिलाप के अवसर पर हनुमान का परिचय देते हुए रामचन्द्रजी कहते हैं—

सुनीं सुनीं ए भरतजी भाई, कपि से उरिन हम नाहीं।
सत जोजन परमान सिंधु के, लाँघ गइले छन माँहीं।
× × ×
आज्ञा भंग होन नहिं पावे, जहाँ भेजीं तहाँ जाई।
तुलसीदास धनि कपि के महिमा, श्रीमुख अपने गाई॥

जन-कंठ से लेखक ने तुलसीदास का एक बड़ा सुन्दर गीत प्राप्त किया है, जिसमें कैकेयी के आन्तरिक अनुताप का बड़ा सुन्दर चित्रण हुआ है। वनवास के बाद राम के अयोध्या-गमन का प्रसंग है। वे एक-एक करके सबसे मिलते जा रहे हैं—सबसे पहले भरत से, फिर माता कौशल्या से, उसके बाद समागत देवताओं से और तदुपरान्त कैकेयी से।

गीत

घरे आ गइले लछुमन राम अवधपुर आनँद भए॥ घरे आ गइले॥
आवते मिलले भाई भरत से, पाछे कोसिला माई।
सभवा बइठल देवता मिलले, तब धनि केकई माई॥
घरे आ गइले लछुमन राम अवधपुर आनँद भए।
अवधपुर आनँद भए॥
सीता सहिते सिंहासन बइठले, हलिवँत चँवर डुलाई।
मातु कोसिला आरती उतरली, सब सखि मंगल गाई॥
अवधपुर आनँद भए॥
कर जोरि बोलताड़ी केकई हो माई, सुनीं बाबू राम रघुराई।
इहो अकलंकवा कईसू के छुटिहें, हमरा कोखी जनम तोहार होइ जाई॥
अवधपुर आनँद भए॥
कर जोरि बोलले राम रघुराई, सुनताड़ू केकई हो माई।
तोहरा परतापे हम जगत भरमली, तू काहे बइठलू लजाई॥
अवधपुर आनँद भए॥
दुआपर में माता देवकी कहइह हम होइब कृस्न यदुराई।
तुलसी दास प्रभु आस चरन के, तोहार दुधवा ना पिअबि रे माई॥
अवधपुर आनँद भए॥

इस गीत की कल्पना ठेठ देहाती है, फिर भी कैकेयी का वर माँगना और राम का वर देकर भी दूध-पान न करने की बात कह देना मानव-हृदय के ठेस लगे दिल के सहज स्वभाव को बहुत कवित्वपूर्ण रूप से दिखाया गया है।

लक्ष्मण और राम घर चले आये। आज अयोध्या में आनन्द छा गया। दरबार में सीता के साथ राम सिंहासन पर बैठे और हनुमान चँवर डुलाने लगे। माता कौसल्या ने आरती उतारी और सब सखियों ने मिलकर मंगल-गान किया। तब माता कैकेयी भरी सभा में हाथ जोड़कर बोलीं—हे राम रघुराई! सुनिए, बताइए, मेरा यह कलंक अब कैसे कटेगा? हमारी कोख (पेट) से तुम्हारा जन्म हो जाता, तो मेरा यह कलंक कट जाता। राम ने हाथ जोड़कर भरी सभा में कैकेयी से कहा—हे कैकेयी माँ, तुम सुनो। मैंने तुम्हारे प्रताप से जगत् का भ्रमण किया (इतना ज्ञान, अनुभव और विजय प्राप्त की)। तुम लज्जा क्यों कर रही हो? हे माता, द्वापर में तुम देवकी कहाना और मैं यदुकुल का कृष्ण कहाऊँगा। परन्तु हे माँ, (जन्म लेते ही मैं तुमसे बिछुड़ जाऊँगा) मैं तुम्हारा दुग्ध-पान नहीं करूँगा। तुलसीदास कहते हैं कि मुझे प्रभु के चरणों की आशा है।

दुग्ध-पान न करने की बात कितनी कसक पैदा करनेवाली तथा ठेस लगे दिल की भावना को प्रकट करनेवाली है।

इसी प्रकार रैदास तथा मीरा आदि के नाम से भी अनेक भजन भोजपुरी में प्रचलित हैं। स्पष्ट है कि ऐसे गीतों की रूप-सृष्टि में इन विश्रुत कवियों की कवित्व-शक्ति का ही नहीं, वरन् लोकवाणी का भी सक्रिय सर्जनात्मक योगदान है।

भूमिका में लेखक ने भोजपुरी की कथा-कहावतों की ओर भी ध्यान आकर्षित किया है। योरोपीय भाषाओं में स्पैनिश भाषा जैसे कहावतों के लिए प्रसिद्ध है, वैसे ही भोजपुरी भाषा में भी कहावतों की अद्वितीय सम्पत्ति है। भोजपुरी का शब्दकोश भी बहुत ही समृद्ध है। उसके कई शब्द तो इतने अर्थपूर्ण हैं कि उन्हें ग्रहण करके हिन्दी के आधुनिक साहित्यिक स्वरूप की भी श्रीवृद्धि की जा सकती है।

भोजपुरी की विशेषताओं में उसकी ध्वनियों के रागात्मक तत्त्व भी उल्लेखनीय हैं। कई ध्वनि-राग तो ऐसे हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ हैं। इनका विस्तृत विश्लेषण मैंने लन्दन-विश्वविद्यालय के अपने शोध-प्रबन्ध में किया है। उच्चारण तथा भोजपुरी-गीतों के यथावत् आस्वादन के लिए इनका थोड़ा परिचय अपेक्षित है। उदाहरणार्थ एक लिखित रूप लीजिए—'देखल'।

भोजपुरी में यह तीन विभिन्न रागों में उच्चरित होकर तीन विभिन्न अर्थों का द्योतक होगा —

'देख्' लऽ	देख लो।
'देख' लऽ	तुमने देखा।
'देखल्'	देखा हुआ।

अन्तिम 'अ' का उच्चारण भोजपुरी के कई रूपों में होता है। उसे समझाने के लिए ग्रियर्सन ने बहुत प्रयत्न किया है।[1] पर ध्वनि-विज्ञान की प्रणाली के बिना उसका ठीक-ठीक वर्णन कठिन है। इस ध्वनि के संकेत के लिए प्रायः 'ऽ' इस चिह्न का प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ स्व० पं० मन्नन द्विवेदी 'गजपुरी' की ये पंक्तियाँ ले लीजिए —

जाये के कइसे कहीं परदेशी रहऽ भर फागुन चइत में जइहऽ।
चीठी लिखा के तुरन्त पठइहऽ तिलाक हऽ जो हमके भुलवइहऽ॥

('भोजपुरी के कवि और काव्य'—पृ० २२८)

भोजपुरी वाक्यों तथा शब्दों के संघटन में बलाघात, स्वराघात तथा मात्राओं की बड़ी रोचक और विशिष्ट व्यवस्था है। मात्रा-व्यवस्था के संबंध में एक महत्त्वपूर्ण नियम यह है कि कुछ खुले हुए दीर्घाक्षरों की धातुओं—जैसे, खा, जा आदि—के रूपों को छोड़कर किसी शब्द या पद के अन्तिम स्थान से दो स्थान पूर्व का कोई अक्षर दीर्घ रूप में नहीं टिक सकता, उसका ह्रस्वीकरण अवश्यम्भावी है। जैसे—

बाहर	बाहरी
पत्थल	पथली
बोली	बोलिया
देखल	देखली

१. देखिए—'लिंगुइस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया,' जिल्द १, भाग १, १९२७ ई० तथा जिल्द ५, भाग २, १९०३ ई०।

इनमें दाहिनी ओर के रूपों में प्रथमाक्षर के स्वरों का उच्चारण ह्रस्व होता है। ग्रियर्सन ने इस रागात्मक प्रवृत्ति का उल्लेख 'ह्रस्व उपधापूर्व का नियम' इस नाम से किया है।

हमें इस बात का सन्तोष है कि बाबू दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह ने अपनी इस पुस्तक में विशेष लिपि-चिह्नों का प्रयोग न करते हुए भी शब्द-संस्थान तथा गीतों के उद्धृत पाठों में भोजपुरी के रागात्मक तत्त्वों का यथासंभव ध्यान रखा है। यह इसीलिए संभव हो सका है कि आप स्वयं भी एक अच्छे कवि और साहित्यकार हैं। हिन्दी की प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में आपके निबन्ध बराबर निकलते रहते हैं। ३०-३२ वर्षों से आप हिन्दी की सेवा करते आ रहे हैं। आपने अबतक कई उपन्यास, गद्य-काव्य, कहानियाँ, नाटक तथा काव्य-ग्रन्थ लिखे हैं। आपकी 'फरार की डायरी' प्रगतिशील साहित्य का उल्लेखनीय उदाहरण है। उसकी प्रशंसा स्वयं जयप्रकाश बाबू ने की थी और उसके प्रकाशन का मैंने स्वयं भी सहर्ष अभिनन्दन किया था। अभी हाल में आपने १८५७ की क्रान्ति के प्रमुख नायक तथा प्रसिद्ध राष्ट्रीय बाबू कुँवर सिंह की एक प्रामाणिक जीवनी लिखी है, जो प्रकाशित भी हो चुकी है। आप उन्हीं के वंशजों में हैं। आपके पितामह महाराजकुमार श्री नर्मदेश्वरप्रसाद सिंह भी बड़े विद्वान् तथा कवि थे। दुर्गाशंकर बाबू ने भोजपुरी के क्षेत्र में बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। भोजपुरी-लोकगीतों के तीन संकलन आपने रस के क्रम से तैयार किये हैं, जिनमें से 'भोजपुरी-लोकगीत में करुण रस'-नामक ग्रन्थ हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से लगभग चौदह वर्ष पहले प्रकाशित हो चुका है। भोजपुरी के अलिखित तथा इधर-उधर बिखरे हुए साहित्य को संगृहीत तथा लिपिबद्ध करने में आपकी सेवाओं की जितनी भी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। यह ग्रन्थ इस दिशा में आपकी सफलता का प्रबल प्रमाण है।

बिहार और उत्तर प्रदेश—इन दो-दो प्रान्तों का कुल मिलाकर लगभग ५० हजार वर्गमील भू-भाग भोजपुरी की परिधि के अन्तर्गत है और उसके बोलनेवालों की संख्या तीन-चार करोड़ के बीच में है। पर इतने विस्तीर्ण क्षेत्र और विशाल जनसमुदाय की भाषा होते हुए भी उसके बोलनेवाले साधारण जनसमूह का मनोरंजन अबतक बहुधा कलकत्ता और बनारस की कचौड़ी गली की छपी हुई उन सस्ती पुस्तकों से होता रहा है, जो जहाँ-तहाँ सड़कों पर बिका करती हैं। हर्ष की बात है कि इधर उसमें नये और सुन्दर साहित्य की सृष्टि होने लगी है। स्व० श्री रघुवीर नारायण, महेन्दर मिसिर, भिखारी ठाकुर, मनोरंजनजी, डा० रामविचार पाण्डेय, राहुल सांकृत्यायन, हरेन्द्रदेव नारायण आदि की भोजपुरी रचनाएँ—नाट्यगीत तथा अन्यान्य कृतियाँ—किसी भी साहित्य में सम्मान का स्थान प्राप्त कर सकती हैं। इस नवीन काव्य के नमूने भी आपको इस संकलन में मिलेंगे। उनकी काव्य-समृद्धि तथा ललित-कलित पदावली से आप निश्चय ही प्रभावित होंगे। लोकपथ की इस अभिनव सरस्वती की जय हो!

लोक-साहित्य का कार्य वस्तुतः साधना और शोध का कार्य है। इसकी अक्षय निधि नगर-नगर और गाँव-गाँव में बिखरी हुई है। सहानुभूति के साथ जन-मानस

की गहराई में डुबकी लगाने पर ही उसके अमूल्य रत्न हमें उपलब्ध हो सकते हैं। हमारी सांस्कृतिक, राष्ट्रीय तथा भाषाई एकता की अनुपम मणियाँ हमें वहीं से प्राप्त हो सकती हैं। इस दृष्टि से लोक-साहित्य के ऐसे किसी भी कार्य को मैं राष्ट्रीय साधना का पुनीत कार्य समझता हूँ! अतः इस क्षेत्र में 'भोजपुरी के कवि और काव्य' के वयोवृद्ध लेखक के इस सफल प्रयत्न के लिए उन्हें मेरी हार्दिक बधाइयाँ हैं! मुझे पूर्ण विश्वास है कि लोक-भाषा तथा लोक-साहित्य के अनुरागियों द्वारा इस महत्त्वपूर्ण कृति का समुचित स्वागत और समादर होगा।

क० मु० इन्स्टिट्यूट ऑफ हिन्दी स्टडीज
एंड लिंगुइस्टिक्स,
आगरा-विश्वविद्यालय, आगरा।
१८-१-१६५८ ई०

विश्वनाथप्रसाद
सम्पादक

लेखक की अपनी बात

ईश्वर की असीम कृपा है कि प्रस्तुत ग्रन्थ प्रकाशित हो सका। मेरी अबतक की भोजपुरी की सभी सेवाओं में इसका विशेष महत्त्व है; क्योंकि इसमें भोजपुरी काव्य का सन् ८०० ई० से आजतक का क्रमबद्ध इतिहास और उदाहरण प्राप्य है। इससे यह अपवाद मिट जाता है कि भोजपुरी में प्राचीन साहित्य का अभाव है। मेरे साहित्यिक जीवन का बहुत लम्बा समय इसकी सामग्री के शोध में लगा है। सन् १९२४ ई० से १९५० ई० तक की अवधि में अपने अवकाश के अधिकांश समय को मैंने इस ग्रन्थ की तैयारी में लगाया है।

सन् १९४८ ई० के लगभग यह ग्रन्थ सम्पूर्ण हुआ। मैंने इसकी पाण्डुलिपि टंकित कराई। आचार्य श्री बदरीनाथ वर्मा (भूतपूर्व शिक्षा और सूचना-मन्त्री, बिहार) को पाण्डुलिपि दिखलाई। उस समय के शिक्षा-सचिव श्री जगदीशचन्द्र माथुर, आई० सी० एस्० ने भी इस ग्रन्थ को देखा। दोनों सज्जनों ने इसे पसन्द किया। फलतः सन् १९५० ई० में जब बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का जन्म हुआ, तब इसकी पाण्डुलिपि प्रकाशनार्थ स्वीकृत हुई। अतः मैं दोनों महानुभावों का आभारी हूँ और हृदय से उनको धन्यवाद देता हूँ। स्वीकृत होने के बाद यह ग्रन्थ पटना-विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभागाध्यक्ष डाक्टर विश्वनाथ प्रसाद के सुझाव के अनुसार, समय-क्रम से, दो खण्डों में सजाया गया। प्रथम खण्ड में १९ वीं सदी तक के कवि रखे गये और दूसरे खण्ड में १९ वीं सदी के बाद के। दोनों खण्ड की पाण्डुलिपि एक हजार पन्नों की थी। भूमिका-भाग भी तीन सौ पृष्ठों में टंकित था। इस प्रकार तेरह सौ पृष्ठों का बड़ा पोथा, परिषद् की ओर से, डाक्टर विश्वनाथ प्रसाद को, संशोधन-सम्पादन करने के लिए, दिया गया, किन्तु समय-समय पर अस्वस्थ होते रहने से वे सम्पादन का काम शीघ्रता के साथ पूरा न कर सके। फलतः प्रकाशन का काम बहुत दिनों तक रुका रहा। अन्त में जब ग्रन्थ छपने लगा तब बृहदाकार होने से बहुत अधिक मूल्य बढ़ जाने की संभावना देखकर दो खण्डों के ग्रन्थ को एक ही खण्ड में प्रकाशित करना उचित समझा गया। अतः सम्पूर्ण ग्रन्थ के आकार-प्रकार में इस तरह कमी कर दी जाने के कारण गागर में सागर भरने की कहावत चरितार्थ हुई और इस प्रकार के संक्षिप्तीकरण से मुझे भी सन्तोष इसलिए है कि इसमें सूत्र-रूप में प्रायः सभी आवश्यक बातों को रखने की चेष्टा की गई है, जिससे पुस्तक की सुन्दरता में कमी नहीं होने पाई है।

इस ग्रन्थ की भूमिका की सामग्री के शोध और उसकी सजावट में डा० विश्वनाथ प्रसाद ने मुझको सुन्दर-से-सुन्दर निर्देश दिये हैं। भूमिका में भोजपुरी के इतिहास के रूप में जो भी विषय प्रतिपादित हुए हैं, सबकी स्वीकृति डाक्टर साहब से ले ली गई है। अतः उनकी प्रामाणिकता एक महान् विद्वान-द्वारा स्वीकृत होने के कारण असंदिग्ध है। डा० साहब ने ग्रन्थ की शोध-सामग्री के प्रतिपादन में ही मुझे सहायता नहीं की है, बल्कि उन्होंने प्रसिद्ध साहित्यसेवी और मेरे आदरणीय मित्र

राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह से भी परामर्श करके इसे अधिकाधिक सुन्दर बनाने की कृपा की है। मैं इन दोनों महानुभावों का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। डा० साहब के सौजन्य और सुझाव तो कभी नहीं भुलाये जा सकते।

खेद है कि बहुत-सी मूल्यवान् सामग्री, साधन और अर्थ के अभाव के कारण, जानकारी रहने पर भी लभ्य नहीं हो सकी। कुछ तो लभ्य होकर भी प्रस्तुत ग्रन्थ में नहीं रखी जा सकी। बहुत-से कवियों के परिचय और उनकी रचनाएँ, जो बाद को प्राप्त हुईं, इसमें नहीं दी जा सकीं। स्वयं मेरे पूज्यपाद पितामह स्वर्गीय बाबू नर्मदेश्वर प्रसाद सिंह 'ईश' की भोजपुरी रचनाएँ भी मूल-ग्रन्थ में सम्मिलित नहीं हो सकीं; क्योंकि ग्रन्थ के छप जाने पर वे पुराने कागजों में अचानक उपलब्ध हुईं। अतः उनका संक्षिप्त परिचय और उनकी भोजपुरी रचनाओं के कुछ नमूने अपने इस वक्तव्य में दे देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

कविवर 'ईश' के पिता का नाम बाबू तुलसीप्रसाद सिंह था। आपके प्रपितामह बाबू रणबहादुर सिंह और सन् १८५७ ई० के इतिहास-प्रसिद्ध क्रान्तिकारी वीर बाबू कुँवर सिंह के पितामह बाबू उमराव सिंह परस्पर सगे भाई थे। आपका जन्म विक्रमाब्द १८९६ और शकाब्द १७६१ में आश्विन-पूर्णिमा को जगदीशपुर (शाहाबाद) में हुआ था। आपकी मृत्यु फसली सन् १३२२ (सन् १९१५ ई०) में, लगभग पचहत्तर वर्ष की आयु में, दिलीपपुर (शाहाबाद) में हुई थी। आप संस्कृत, अरबी, फारसी, हिन्दी, उर्दू आदि भाषाओं के विद्वान् थे। हिन्दी में आपकी चार पुस्तकें पद्य और गद्य में बहुत उच्चकोटि की हैं।

वसन्त-वर्णन (कवित्त)

प्रेम प्रगटाइल रंग-राग लहराइल,
मैन बान बगराइल नैन रूप में लोभाइल बा।
जाड़ा बिलाइल चाँद चाँदनी तनाइल,
मान मानिनी मिटाइल पीत बसन सोहाइल बा।
'ईस' रस-राज मनमानी सरसाइल,
बन-बगिया लहलहाइल सुख देत मधुआइल बा।
बिरही दुखाइल मन मनमथ जगाइल,
संजोगी उमगाइल ई बसन्त सरसाइल बा ॥१॥

शपथ और प्रतिज्ञा

देसी ओ बिदेसी के फरक कहू राखल नाहीं,
लड़ि-लड़ि अपने में बिदेसी के जितौले बा।
गोरा सिक्ख सेना ले निडर जो चढ़ल आवे,
घर के बिभीखन भेद ध्रवे नू बतौले बा॥

तबो ना चिन्ता इचिको[1] देस-प्रेम जागल बा,
हिन्दू मुसलमान संग भारत मिलौले बा।
हिम्मत सिवा के बा प्रताप के प्रतिग्या 'ईस',
प्रन बा आजादी किरिया[2] खङ्ग के खिऔले बा* ॥

× × × ×

आगे बढ़ीं आगे बढ़ीं देखीं ना एने-ओने[3],
एके लच्छ एके टेक एके मन राखीं ख्याल।
हाथ में दुधारी धारीं लम्बा लम्बा डेग डालीं,
हर-हर बम्म बोलीं घूसि चलीं जइसे ब्याल ॥
पैंतरा पर दौड़े लागीं खेदि खेदि[4] सत्रु काटीं,
सत्रु-तोप-नाल पैठि गोला काढ़ि लाईं ज्वाल ॥
रवि-रथ रोकि लीहीं जमराज डाँटि, हाँकीं
डाकिनी के खप्पर में 'ईस' भरीं रकत लाल* ॥

इस ग्रन्थ के आरम्भ में जो मेरी ४३ पृष्ठों की भूमिका है, उसके पृष्ठ ५ पर राजा भोज की भोजपुर-विजय का उल्लेख है, जिसको आधुनिक इतिहासकार संदिग्ध मानते हैं। उनकी धारणा है कि भोजदेव पूर्वी प्रान्तों में आये ही नहीं। किन्तु मैंने अनेक पुष्ट प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध † किया था कि धार के प्रमार राजा भोजदेव (१००५-१०५५ ई०) और उनके वंशजों ने इन भोजपुरी-भाषी पूर्वी प्रदेशों को, जो उस समय 'स्थली-प्रान्त' के नाम से प्रख्यात थे, जीतकर 'भोजपुर' को अपनी राजधानी बनाई थी। उनका राज्य १२२३ ई० तक कायम रहा। इसी बीच उन्होंने पालवंशी राजाओं की सेनाओं को भागलपुर के पास रणक्षेत्र में पराजित किया तथा अपने पौरुष एवं पराक्रम का सिक्का बंगाल से काशी तक के प्रदेशों पर जमाया। शासन की इस लम्बी अवधि में भोजदेव की राजभाषा संस्कृत और उनकी गौरव-शालिनी भारतीय संस्कृति की गहरी छाप यहाँ की जनता पर पड़ी। यहाँ के लोगों की बलाढ्य प्रकृति के कारण भी मालवा के वीर प्रमार शासकों का प्रभाव यहाँ खूब बढ़ा।

तेरहवीं सदी में जब धार के प्रमार-नरेशों की सत्ता क्षीण हो गई तब भोजपुरी-क्षेत्र के मूल-निवासियों ने पुनः छोटे-छोटे राज्यों को कायम करके अपना प्रभुत्व स्थापित किया। इसके लिए जो लड़ाइयाँ हुईं, उनमें जो वीरता उनलोगों ने दिखलाई, उसी के

१. रंच-मात्र भी। २. शपथ। ३. इधर-उधर। ४. खदेड़-खदेड़कर।

* इन दोनों रचनाओं में सन् सत्तावन के ऐतिहासिक वीर बाबू कुँवर सिंह के मुख से क्रान्तिकारी सेना के सामने शपथ-ग्रहण के रूप में कहवाया गया है। उसी सेना से देशभक्ति की प्रतिज्ञा भी कराई गई है। —ले०

† इस तथ्य को प्रमाणित करने के लिए मैंने डेढ़ सौ पृष्ठों का ऐतिहासिक विवरण बहुत खोज करके लिखा था, पर भाषा के इतिहास में शासन-विषयक इतिहास का समावेश विषयान्तर समझकर नहीं किया गया और संक्षिप्तीकरण के समय वह अंश निकाल दिया गया। —ले०

आधार पर भोजपुरी-भाषा में बहुत-से पँवारे, वीर-गाथा-गीतों के रूप में, रचे गये। सोरठी, लोरकी, विजयमल, नयकवा, आल्हा आदि उन्हीं गाथा-गीतों के नाम हैं। वे इतने सुन्दर और ओजस्वी हैं कि आठ सौ वर्षों के बाद भी आज जन-कंठों में बसे हुए हैं। यद्यपि कालक्रम से उनका रूप विकृत हो गया है तथापि मूल-कथानक आज भी सजीव है। उनकी लोकप्रियता यहाँ तक बढ़ी कि अन्यान्य भगिनी भाषाओं में भी वे रूप-भेद से प्रचलित हो गये।

सरभंग-सम्प्रदाय के सन्त-साहित्य की खोज मैंने सन् १९५० ई० में की थी। उसके पहले उक्त सम्प्रदाय के साहित्य से हिन्दी-संसार परिचित नहीं था। सन्तोष का विषय है कि मेरी खोज के बाद कुछ विद्वानों का ध्यान इधर-उधर आकृष्ट हुआ और उस दिशा में शोध भी होने लगा। इस ग्रन्थ में भी उक्त सम्प्रदाय के कई सन्त कवियों के परिचय मिलेंगे।

इस ग्रन्थ के आरम्भ में छपी मेरी भूमिका के पृष्ठ ३३ से ३६ तक गोरखनाथ के बाद के भोजपुरी-गाथा-गीतों—लोरकी, कुँवर विजयमल सोरठी, नयकवा, आल्हा आदि—का उल्लेख है; परन्तु मूल ग्रन्थ में यथास्थान उनके उदाहरणों का समावेश नहीं है। इसलिए गोरखनाथ से कबीरदास तक के भोजपुरी-कवियों और काव्यों की भाषा एवं शैली का यथार्थ परिचय पाठकों को नहीं मिलेगा। इसी कारण यहाँ उपर्युक्त गाथा-गीतों में से कुछ के उदाहरण[1] दिये जाते हैं—

'सोभानायक बनजारा' या 'बनजरवा' या 'नयकवा'[2]

हे राम जिनकर नइयाँ ले ले साँझ बिहनवा हो ना।
हे राम हेठवा सुमिरिला माता धरती हो ना।
हे राम उपरा सुमिरिला अकास के देवतवा हो ना।
हे राम तब सिुमरीं ब्रह्माजी के चरनवाँ हो ना।
हे राम जिन ब्रह्मा लिखेले लिलरवा हो ना।
हे राम जिनिकर लिखल का होला भुगतनवा हो ना।
हे राम तब सुमिरीं देबी दुरुगवा हो ना।
हे राम तब सुमिरीं माता सरोसतिया हो ना।
हे राम जिन्ह बैठल बाड़ी कण्ठ के उपरवा हो ना।
हे राम तोहरे भरोसवे छानिला पँवरवा हो ना।

१. इन उदाहरणों की भाषा तो उस समय की नहीं मानी जा सकती; क्योंकि इन गीतों का मूल रूप कहीं प्राचीन हस्तलिखित पोथी में नहीं मिलता। अतः अँगरेज विद्वानों द्वारा पुरानी अँगरेजी पत्रिकाओं में प्रकाशित रूप ही प्रामाणिक माने जा सकते हैं। —ले०

२. 'सोरठी ब्रजभान' के बाद दूसरा बृहद् गाथा-गीत 'नयकवा' अथवा 'बनजरवा' विख्यात है। इसके पात्र वैश्य और शूद्र हैं। ग्रियर्सन साहब ने इसे 'जेड० डी० एम० जी०' (जर्मन-पत्रिका) के भाग २६ में पृष्ठ ६१७ पर प्रकाशित कराया था। पुनः उसी पत्रिका के भाग ४३ (सन् १८८६ ई०) में पृष्ठ ४६८ पर 'नयकवा बनजरवा' नाम से छपवाया था। —ले०

हे राम जहाँ-जहाँ टूटल बाड़ो लबजिया हो ना।
हे माता तहाँ-तहाँ देत बाड़ जोड़ाई हो ना[१]।

कुँवर विजयमल[२]

रामा उहाँ सूबा साजेले फउदिया हो ना
रामा धुरिया लागेला असमनवा हो ना
रामा बजवा बाजे जुझरवा हो ना
रामा बोलि उठे देबी दुरगवा हो ना
कुँअर इहे हवे मानिक पलटनिया हो ना
रामा घोड़वा नचावे कुँअर मैदनवा हो ना
रामा सनमुख भइले जवनवा हो ना
रामा घेरि लिहले सभ फउदिया हो ना
रामा बाजि गइले लोहवा जुझरवा हो ना
रामा मारे लागल कुँअर बिजइया हो ना
रामा देबी दुरुगा कइलीं छुतरछहिया हो ना
रामा बाचि गइले राजा मानिकचन्दवा हो ना
रामा उनहके नाक काटि घलले हो ना
रामा उन्हके बहिया काटि घलले हो ना
रामा बाँधि देले घोड़ा के पिछड़िया हो ना
रामा चलि गइले राजा मानिकचन्दवा हो ना

गोपीचन्द[३]

फाड़ के पिताम्बर राजा गोपीचन्द गुदड़ी बनावत बाड़े
बोले लागे हीरा लाल मोती
बनि गइल गुदड़िया अनमोल
पहिर के गुदड़ि राजा रमि चलत हैं
माता उन्हके गुदड़ ध के ठाढ़

१. हरदी (बलिया, उत्तरप्रदेश) की मुखना देवी नाम की वृद्धा महिला को भी इसका पुराना पाठ याद है।

२. 'कुँवर विजयमल' भी बहुत प्रसिद्ध गाथा-काव्य है। इसका समय भी 'सोरठी व्रजभान' के बाद का है। ग्रियर्सन साहब ने इसको ११३८ पंक्तियों में, 'जर्नल ऑफ द एसियाटिक सोसाइटी अफ बंगाल' (भाग १, संख्या १, सन् १८८४ ई०) के ६४-९३ पृष्ठों पर छपवाया है। वह शाहाबाद (बिहार) से प्राप्त पाठ था।

३. 'गोपीचन्द' नामक गाथा-गीत बारहवीं सदी का जान पड़ता है। ग्रियर्सन साहब ने इसके कुछ गीतों को, पाठ-भेद के साथ, 'जर्नल ऑफ द एसियाटिक सोसाइटी, बंगाल' (भाग ५४, सन् १८८५ ई०, पृष्ठ ३५-३८) में, छपवाया था

तोहि देख बेटा बाँधीं धिरजवा
तू तो निकल बेटा होत बाटे जोगी
नौवे महीना बेटा ओदर में रखलीं
रहे हे बिपतिया काल मोरे का
सात सोत के दुधवा पिआएऊँ
तवना के दमवा मोहि देके जाहू

इसी प्रकार तेरहवीं सदी के मध्य में रचे गये 'लोरिकी या लोरिकायन'—गाथा-गीत का पुराना पाठ भी जहाँ-तहाँ देहाती गायकों[१] से मिलता है। 'कुँवर विजय-मल' के बाद रचा गया प्रसिद्ध गाथा गीत 'आल्हा'[२] तो पुस्तकाकार में प्रकाशित हो चुका है। पूर्वोक्त गाथा-गीतों का अध्ययन भाषा विज्ञान की दृष्टि से तो होना ही चाहिए, ऐतिहासिक गवेषणा की दृष्टि से भी उनका अध्ययन अत्यावश्यक है। अतः इन पुराने गाथा-गीतों पर पृथक्-पृथक् सुसम्पादित और शोधपूर्ण ग्रन्थों का प्रकाशन लोक-साहित्य की श्रीवृद्धि के लिए अत्यन्त मूल्यवान् सिद्ध होगा।

कुछ सुप्रसिद्ध महाकवियों के नाम से प्रचलित, जन-कण्ठ में बसे हुए, गीतों के नमूने, अँगरेज विद्वानों द्वारा लोक-कण्ठ से ही संकलित होकर, अँगरेजी पत्रिकाओं में प्रकाशित[३] हुए थे। उन उदाहरणों से भोजपुरी लोक-गीतों की प्राचीनता स्वभावतः सिद्ध होती है। मेरे निजी संग्रह में विद्यापति, सूरदास[४], तुलसीदास[५], मीराबाई,

१. मेरे गाँव (दिलीपपुर, शाहाबाद) के सद्जित अहीर को 'लोरिकी' का और शिवनन्दन तेली को 'सोरठी' का पुराना पाठ याद है। दोनों वृद्धों से सुना हुआ पाठ विस्तार-भय से यहाँ नहीं दिया जा सका। —ले०

२. ग्रियर्सन साहब ने 'इण्डियन एण्टीक्विटी' (भाग १४, सन् १८८५ ई०, पृष्ठ २०६) में इसे प्रकाशित कराया था।

३. डा० ग्रियर्सन ने 'जर्नल ऑफ द रायल एसियाटिक सोसाइटी' (भाग १८ सन् १८८६ ई०, पृष्ठ २३७) में विद्यापति का वह गीत भोजपुरी में छपवाया था, जो 'सम्पादकीय मन्तव्य' में अन्यत्र (पृष्ठ ८ पर) छपा है। गीत उद्धृत करते हुए ग्रियर्सन साहब ने अपनी ओर से यह टिप्पणी भी दी है—

The following song purports to be by the celebrated Maithili poet Vidyapati Thakur. I would draw attention as contradicting a theory put forth by Babu Shyamacharan Ganguly with some confidence in the Calcutta Review to the effect that the songs of this poet are not known in the Bhojpuri. This song was written for me by a lady whose house is in the heart of Bhojpuri......"
G. A. Grierson :—Journal of Royal Asiatic Society, Great Britain & Ireland. New Series Volume No. 18.

४. डाक्टर ग्रियर्सन ने 'जर्नल ऑफ द रायल एसियाटिक सोसाइटी' (न्यू सीरिज, भाग १६, सन् १८८४ ई०) के पृष्ठ २०१ और उसके आगे के पृष्ठों पर 'सम बिहारी फोक-सौंग्स' शीर्षक से भोजपुरी गीत छपवाये हैं। उक्त जर्नल के पृष्ठ २०५ पर सूर का बारहमासा और पृष्ठ २२१ पर सूर का ही भजन भोजपुरी में छपा है।

५. 'जर्नल ऑफ द रायल एसियाटिक सोसाइटी' (न्यू सीरीज, भाग १६, सन् १८८४ ई०) में पृष्ठ २०६ और आगे भी तुलसीदास के बारहमासे तथा चतुरमासे प्रकाशित हैं।

रविदास आदि प्रसिद्ध कवियों के अनेक भोजपुरी पद हैं, जिनमें से इस ग्रन्थ के सम्पादक ने अपने मन्तव्य में कई पदों का समावेश कर दिया है। अनावश्यक विस्तार के भय से यहाँ पुनः अधिक पद उद्धृत नहीं किये जा रहे हैं। जिन जिज्ञासु पाठकों को उन्हें देखने की उत्कण्ठा हो, उन्हें संकेतित अँगरेजी पत्रिकाओं को देख लेना चाहिए।

इस ग्रन्थ में मेरी बहुत-सी संगृहीत सामग्री का यथेष्ट समावेश नहीं हो सका है, पर यदि पाठकों ने इस ग्रन्थ को उदारता एवं सहृदयता से अपनाकर मुझे उत्साहित करने की कृपा की, तो आशा है कि आगामी संस्करण में यह ग्रन्थ सर्वाङ्गपूर्ण हो सकेगा।

अन्त में मैं यह कह देना चाहता हूँ कि भोजपुरी के सम्बन्ध में आजतक जो कुछ भी शोध किया है, उससे इसी निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि भोजपुरी का साहित्य-भाण्डार जनकण्ठों में ही नहीं, बल्कि छपी और हस्तलिखित पुस्तकों में भी इतनी प्रचुर मात्रा में है कि भावी पीढ़ी यदि पचास वर्षों तक भी शोध करती रहेगी तोभी उस अपार भाण्डार का संचय नहीं हो सकेगा। भोजपुरी के दुर्लभ साहित्य का उद्धार करना देश के उत्साही युवकों का काम है। इससे केवल भोजपुरी-क्षेत्र का ही नहीं, वरन् सम्पूर्ण देश के साहित्य की श्रीवृद्धि होगी। तथास्तु।

दिलीपपुर (शाहाबाद)
होली, सं० २०१४ वि०
(सन् १९५८)

दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह

विषय-सूची

(१) भूमिका

(२) आठवीं सदी से ग्यारहवीं सदी तक

(३) चौदहवीं सदी से १६ वीं सदी तक

(४) बीसवीं सदी और आधुनिक काल

[बारहवीं और तेरहवीं सदी के भोजपुरी-कवि और उनके काव्य के संबंध में 'सम्पादक का मन्तव्य' और 'लेखक की अपनी बात' देखने की कृपा करें ।]



श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह
(लेखक)

भूमिका

[१]

भोजपुरीभाषी प्रदेश

भोजपुरीभाषी प्रदेश के सम्बन्ध में सर जी० ए० ग्रियर्सन ने[1] लिखा है—

"भोजपुर परगने के नाम पर भोजपुरी भाषा का नाम पड़ा है। यह भोजपुर की सीमा से आगे बहुत दूर तक बोली जाती है। उत्तर में यह गंगा को पार करके नेपाल की सीमा के ऊपर हिमालय की निचली पहाड़ियों तक चम्पारन जिले से लेकर बस्ती तक फैली हुई है। दक्षिण में सोन पार करके यह छोटानागपुर के विस्तृत राँची के पठार पर फैलती है। मानभूम जिले के छोर पर यह बंगाली और सिंहभूम जिले के छोर पर ओड़िया के संसर्ग में आती है।

"बिहार की मैथिली, मगही और भोजपुरी—इन तीन बोलियों में भोजपुरी अति पश्चिमी बोली है। गंगा के उत्तर मुजफ्फरपुर जिले के मैथिलीभाषी प्रदेश के पश्चिम में इसका ही क्षेत्र है और गंगा के दक्षिण गया और हजारीबाग जिले के पश्चिम में भी इसका अस्तित्व है। यहाँ यह हजारीबाग के मगहीभाषी क्षेत्र के पास से दक्षिण-पूर्व की ओर घूमती है और सम्पूर्ण राँची पठार को ढाँप लेती है, जिसमें राँची और पलामू जिलों के अधिकांश क्षेत्र शामिल हो जाते हैं। यहाँ इसकी सीमा पूर्व में राँची के पठार के परगने में बोली जानेवाली मगही और मानभूम में बोली जानेवाली बँगला से निर्धारित होती है और इसकी दक्षिणी सीमा सिंहभूम जिले और गंगापुर की रियासत में बोली जानेवाली ओड़िया से आबद्ध है। इसके बाद इसकी सीमा-रेखा जसपुर-रियासत के बीच से उत्तर की ओर घूमती है और पलामू जिले के पच्छिमी किनारे तक पहुँचती है। इसी लाईन में वह सुरगुजा-रियासत और पश्चिमी जसपुर-राज्य में बोली जानेवाली छत्तीसगढ़ी के रूप के साथ-साथ आगे की ओर बढ़ती जाती है।

१. देखिए—सर जी० ए० ग्रियर्सन-लिखित 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ् इण्डिया', भाग ५, पृष्ठ ४०। प्र०—गवर्नमेन्ट प्रेस, इण्डिया, कलकत्ता, सन् १९०२ ई०।

"पलामू के पश्चिमी भाग से गुजरने के बाद इसकी सीमा मिर्जापुर के दक्षिणी छोर पर पहुँचती है। यहाँ मिर्जापुर जिले के दक्षिणी और पश्चिमी किनारों से चलकर गंगा तक पहुँच जाती है। यहाँ यह पूर्व की ओर गंगा के प्रवाह के साथ-साथ घूमती है और बनारस के पास पहुँचकर गंगा को इस तरह पार कर जाती है कि इसकी सीमा के अन्दर मिर्जापुर जिले के उत्तरी गांगेय क्षेत्र का अल्प भाग आ जाता है। मिर्जापुर के दक्षिण में छत्तीसगढ़ी प्रचलित है। परन्तु, उस जिले के पश्चिमी भागों के साथ-साथ उत्तर की ओर बढ़ने पर पश्चिम में पहले यह बघेलखंड की बघेली से और तब अवधी से परिसीमित होती है। गंगा को पार करने के बाद इसकी सीमा करीब-करीब ठीक उत्तर की ओर फैजाबाद जिले में 'घाघरा' नदी पर 'टाँडा' तक जाती है। इस तरह बनारस जिले की पश्चिमी सीमा के साथ-साथ चलकर जौनपुर के आर-पार आजमगढ़ के पश्चिम और फैजाबाद के पार इसकी सीमा फैल जाती है। टाँडा से इसकी सीमा घाघरा नदी के साथ-साथ पश्चिम की ओर घूमती है और तब उत्तर की ओर घूमकर हिमालय के नीचेवाले पर्वतों तक पहुँच जाती है। इस प्रकार बस्ती जिले का पूरा भाग इसकी सीमा के भीतर आ जाता है। इस क्षेत्र के अतिरिक्त, भोजपुरी गोंडा और बहराइच जिलों में बसनेवाले थारू-जाति के जंगली मनुष्यों द्वारा भी बोली जाती है।"

फिर, इसी पुस्तक में आगे ग्रियर्सन ने लिखा है—"इस तरह उस भू-भाग का, जिसमें केवल भोजपुरी भाषा ही बोली जाती है, क्षेत्रफल निकालने पर पचास हजार वर्गमील होता है। इस भू-भाग के निवासियों की जन-संख्या, जिनकी मातृभाषा भोजपुरी है, दो करोड़ है। पर मगही और मैथिली बोलनेवालों की संख्या क्रम से ६२३५७८२ और १०००००००० है। और अवधी, बघेली बुन्देलखण्डी तथा छत्तीसगढ़ी बोलनेवालों की संख्या क्रम से १४१७०७५०, १६००००००, ४६१२७५६ और ३३०१७८० है।"

उक्त संख्याएँ उस समय की हैं, जब 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ् इण्डिया'-नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थीं, अर्थात् सन् १६०१ ई० की। सन् १६०१ ई० की जन गणना के आधार पर ही ग्रियर्सन साहब ने आँकड़े लिये हैं। सन् १६०१ ई० की गणना में भारत की कुल आबादी २६४३६०००० के लगभग थी। परन्तु सन् १६४१ ई० की जन-गणना के अनुसार जन-संख्या लगभग ३८८०००००० है। तो, इस हिसाब से वर्त्तमान भोजपुरी-भाषियों की कुल संख्या २६४००००० आती है—यानी भारतवर्ष की कुल जन-संख्या का १४.५ प्रतिशत भोजपुरीभाषा-भाषियों की संख्या है।

फिर, इन भाषा-भाषियों की संख्याओं के अलावा मराठी और व्रजभाषा बोलनेवालों की संख्या सन् १६२१ ई० की जन गणना के अनुसार क्रम से १८७६७८३१ और ७८३४२७४ है। इन संख्याओं का मिलान करने से हम देखते हैं कि भोजपुरी में लिखित साहित्य की कोई प्राचीन परम्परा न होने पर भी, उसके बोलनेवालों की संख्या अपनी हमजोली निकटवर्त्ती भाषाओं के बोलनेवालों की संख्या से कम नहीं है।

अक्टूबर सन् १६४३ ई० के 'विशाल भारत' में श्री राहुल सांकृत्यायन ने ग्रियर्सन साहब के उक्त सीमा-विस्तार पर शंका करते हुए लिखा था कि ग्रियर्सन का प्रयत्न प्रारंभिक था। इसलिए उनका भाषा विभाजन भी प्रारंभिक था। उन्होंने भोजपुरी के भीतर ही काशिका और मल्लिका दोनों को गिन लिया है, जो व्यवहारतः बिलकुल गलत है।

इसका उत्तर विस्तृत रूप से किसी भोजपुरी विद्वान् ने फरवरी, सन् १६४४ के 'विशाल भारत' में देकर यह सिद्ध किया है कि राहुल जी का यह कहना ठीक नहीं है। उन्होंने श्री जयचन्द्र विद्यालंकार का मत, जो इस विषय के प्रारंभिक लेख नहीं कहे जा सकते, उद्धृत करके लिखा है कि राहुल जी का भोजपुरी का मल्लिका नामकरण करना और ग्रियर्सन को न मानना अनुचित है।

श्री जयचन्द्र विद्यालंकार जी का मत मैं उनकी पुस्तक 'भारतीय इतिहास की रूपरेखा' से उद्धृत करता हूँ—

'भोजपुरी गंगा के उत्तर दक्षिण दोनों तरफ है। बस्ती, गोरखपुर, चम्पारन, सारन, बनारस, बलिया, आजमगढ़, मिर्जापुर अथवा प्राचीन मल्ल और काशी राष्ट्र उसके अन्तर्गत हैं। * अपनी एक शाखा नागपुरिया बोली द्वारा उसने शाहाबाद से पलामू होते हुए छोटानागपुर के दो पठारों में से दक्षिणी पठार, अर्थात् राँची के पठार पर कब्जा कर लिया है।

जयचन्द्र जी के इस मत का समर्थन काशी-विश्वविद्यालय के हिन्दी-अध्यापक श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र की 'वाङ्मय विमर्ष'-नामक पुस्तक से भी होता है। उसमें उन्होंने लिखा है—

"बिहारी के वस्तुतः दो वर्ग हैं—मैथिली और भोजपुरिया। भोजपुरिया पश्चिमी वर्ग है और मैथिली पूर्वी में। भोजपुरिया मैथिली से बहुत भिन्न है। भोजपुरिया संयुक्त प्रदेश के पूर्वी भाग गोरखपुर, बनारस कमिश्नरी और बिहार

---

* इसमें गाजीपुर शायद भूल से छूट गया है। इसलिए मैं भी उसे रख ले सकता हूँ। —लेखक

के पश्चिमी भाग, चम्पारण, सारन, शाहाबाद जिलों की बोली है। इसके अन्तर्गत भोजपुरी पूर्वी और नागपुरिया बोली है।"

डॉ० उदयनारायण तिवारी ने भी अपने भोजपुरी-सम्बन्धी थीसिस में ग्रियर्सन के मत का ही समर्थन किया है। इन सभी मतों के अनुसार ग्रियर्सन का विचार ही अधिक उपयुक्त जान पड़ता है।

उपर्युक्त विवरणों के पढ़ने के बाद पाठकों के सामने सहसा प्रश्न उठता है कि जब भोजपुरीभाषी प्रदेश ५० हजार वर्गमीलों में फैला हुआ है और इसके बोलनेवालों की संख्या ढाई करोड़ से अधिक है, तब इस प्रदेश के काशी, गोरखपुर, छपरा, आरा आदि बड़े नगरों को छोड़कर भाषा का नामकरण एक अतिसाधारण ग्राम 'भोजपुर' के नाम पर करना लोगों ने क्यों स्वीकार किया और ढाई करोड़ नर नारी आज भी अपने को उसी ग्राम के नाम पर भोजपुरिया कहने में क्यों गर्व मानते हैं? साथ ही, इस प्रश्न का सांगोपांग उत्तर दिये बिना भोजपुरी भाषा पर पूर्ण रूप से विचार करना भी बहुत जटिल और दुस्साध्य है। आगे इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न किया जायगा।

[२]

भोजपुर और उससे भोजपुरी का सम्बन्ध

अँगरेज-इतिहासकारों और पुरातत्त्वज्ञों तथा भाषा-विशेषज्ञों ने भोजपुरी भाषा के नाम की उत्पत्ति भोजपुर-ग्राम अथवा भोजपुर परगने से मानी है। बिहार प्रान्त के शाहाबाद जिले में बक्सर के पास भोजपुर परगने में 'पुराना भोजपुर' नाम का एक ग्राम है। उस ग्राम के नाम पर भोजपुर परगने का नाम कभी रखा गया था। यह 'पुराना भोजपुर' डुमराँव स्टेशन (पूर्वीय रेलपथ) से दो मील उत्तर, बक्सर से दस मील पूरब तथा पटना से साठ मील पश्चिम, आरा-बक्सर सड़क के दोनों ओर, बसा है[१]।

अब यह भोजपुर नाम 'नया भोजपुर' और 'पुराना भोजपुर'-नामक पास-पास बसे ग्रामों के लिए व्यवहृत होता है।

यद्यपि आज गंगा भोजपुर ग्राम से आठ-नौ मील उत्तर हट गई हैं, तथापि उनका

१. देखिए—'दी जोग्रफिकल डिक्शनरी ऑफ् ईस्टर्न इण्डिया एण्ड मेडिवल इण्डिया'; लेखक—नन्दूलाल डे, एम्० ए०, बी० एल्०; द्वितीय संस्करण, भाग २; प्रकाशक—लूजक एण्ड कम्पनी, ४१, ग्रेट रसेल स्ट्रीट, लण्डन, डब्लू० सी० आर० १६२७, पृष्ठ २२४ और उसके आगे भोजपुर के सम्बन्ध में विवरण।

पुराना प्रवाह-क्षेत्र भोजपुर-दह के नाम से आज भी गंगा तक फैला हुआ है। इस नगर के सम्बन्ध में कहा जाता है कि किसी समय यह १४ कोस में विस्तृत और बहुत समृद्ध था। 'बावन गली, तिरपन बजार, दिया जले छप्पन हजार' की लोकोक्ति यहाँ के लोगों में आज भी प्रचलित है। इसके अनुसार इस नगर में तिरपन बड़ी सड़कें थीं, जिनपर बाजार लगा रहता—और बावन गलियाँ थीं तथा इसकी आबादी ५६ हजार परिवारों की थी। इसके अनुसार यदि प्रत्येक परिवार में ५ व्यक्तियों का भी औसत माना जाय, तो दो लाख अस्सी हजार जन-संख्या होती है। यहाँ भोजदेव के बनवाये मंदिर, महल, रंगस्थल, सरोवर, महाराज विक्रमादित्य का महल, 'सिंहासनबत्तीसी'-सम्बन्धी सिंहासन के गड़े रहने का स्थान, विक्रमादित्य के नवरत्नों के सभा-भवन आदि के सांकेतिक स्थान, बड़े-बूढ़ों द्वारा बताये जाते हैं। देखने में गाँव के उत्तर, पूर्व और पश्चिम दिशा में दूर तक बहुत से टीले, सरोवर के समान-गड्ढे आदि के चिह्न दिखाई पड़ते हैं। उन्हीं टीलों के नीचे आज 'भोजपुर-दह' का स्रोत बहता है। पुराने भोजपुर का दूसरा इतिहास यह है कि इसको मालवा के धारेश्वर राजा भोजदेव (१००५ से १०५५ ई०) ने अपने पूर्वीय देशों की विजय के उपलक्ष्य में बसाया था। इस प्रान्त का नाम उस समय स्थली-प्रान्त था। इसमें वत्तमान बलिया, गाजीपुर, पूर्वी आजमगढ़, सारन, गोरखपुर और वर्त्तमान शाहाबाद का भोजपुर परगना शामिल थे। यह नगर गंगा के तट पर बसाया गया था। यह भोजपुर, मालवा के धार के परमारों के राज्य के पूर्वी प्रदेशों की राजधानी, भोजदेव के वंशज राजा अर्जुन वर्मा के समय (सन् १२२३ ई०) तक, बना रहा।

जॉन बीम्स ने रायल ऐशियाटिक सोसाइटी के जर्नल भाग ३, सन् १८६८ ई० के पृ० ४८३-४८५ पर लिखा है—"**भोजपुरी का नाम प्राचीन भोजपुर-नामक नगर से लिया गया है। यह नगर शाहाबाद जिले में गंगा के दक्षिण कुछ मील पर ही बसा था, जिसकी दूरी पटना से ६० मील थी। आज तो यह छोटा-सा गाँव है, किन्तु किसी समय में शक्तिशाली राजपूतों की राजधानी था, जिनके अगुआ इस समय डुमराँव के महाराज हैं, और सन् १८५७ ई० में विद्रोही सिपाहियों के क्रान्तिकारी नेता बाबू कुँवर सिंह इनके अगुआ थे। 'सहरुल अखतरीन' के पढ़नेवाले जानते हैं कि औरंगजेब के सूबेदारों को भी भोजपुर के राजाओं को दबाने का प्रयत्न करना पड़ा था। भोजपुर के क्षेत्र में प्राचीन हिन्दूधर्म की भावना आज भी प्रबल है और हिन्दू-जनसंख्या के सामने मुसलमानों की संख्या बहुत कम है। राजपूतों के साथ-साथ ब्राह्मणों और कहीं-कहीं भूमिहारों की सत्ता प्रबल है।**"

जी० ए० ग्रियर्सन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ् इण्डिया' (भाग ५, पृ० ३–४) में लिखा है कि 'भोजपुरी, भोजपुर की बोली है, जो शाहाबाद जिले के पश्चिमोत्तर भाग में बसा है। भारत के आधुनिक इतिहास में यह महत्त्व का स्थान है। यह डुमरांव की राजधानी के निकट है और इसके समीप ही बक्सर की लड़ाई हुई थी।

'नागरी प्रचारिणी-पत्रिका', काशी (वर्ष ५३, अंक ३-४, संवत् २००५, कार्त्तिक-चैत्र) के पृ० १६३-६६ पर डॉ० उदयनारायण तिवारी का एक लेख 'भोजपुरी का नामकरण'-शीर्षक से छपा था, जिसमें तिवारीजी ने लिखा है—"**भोजपुरी बोली का नामकरण शाहाबाद जिले के 'भोजपुरी' परगने के नाम पर हुआ है।**"

शाहाबाद गजेटियर (गवर्नमेण्ट प्रेस, पटना, १९२४ ई०, पृष्ठ-१५८) में भोजपुर के सम्बन्ध में लिखा है—"**भोजपुर एक गाँव है, जो बक्सर सबडिवीजन में, डुमराँव से दो मील उत्तर, बसा है। इसकी जन-संख्या (सन् १९२१ ई० में) ३६०५ थी। इस गाँव का नाम मालवा के राजा भोज के नाम पर पड़ा है। कहा जाता है कि राजा भोज ने राजपूतों के एक गिरोह के साथ इस जिले पर आक्रमण किया और यहाँ के आदिवासी 'चेरों' को हराकर अपने अधीन किया। यहाँ राजा भोज के प्राचीन महलों के भग्नावशेष आज भी वर्त्तमान हैं। यदि उनकी खुदाई की जायगी, तो परिश्रम बेकार नहीं जायगा। सोलहवीं शताब्दी से सन् १७४५ ई० तक यह गाँव डुमराँव राज्यवंश का मुख्य निवास-स्थान (राजधानी) था। इसी गाँव के नाम से भोजपुर परगने का नामकरण भी हुआ है। आज शाहाबाद का सम्पूर्ण उत्तरी भाग भोजपुर नाम से जाना जाता है। इसके निवासी भोजपुरी कहे जाते हैं।**"

उक्त गजेटियर के पृष्ठ ४० में इस जिले की भाषा के सम्बन्ध में लिखा है—"**इस जिले के सम्पूर्ण भाग में जो भाषा वर्त्तमान समय में बोली जाती है, वह बिहारी हिन्दी का एक रूप है, जो भोजपुरी कही जाती है। यह भोजपुरी नाम भोजपुर परगने के नाम पर पड़ा। यह परगना पूर्व-काल में उस वंश की शक्ति का केन्द्र-स्थान था, जिसके राजा आज डुमराँव में रहते हैं।**"

आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा से सन् १९१० ई० में प्रकाशित 'आरा पुरातत्त्व'-नामक पुस्तक में पृष्ठ ३२ पर भोजपुर के सम्बन्ध में लिखा है—"**धारापुरी के राजा भोज एक प्रसिद्ध पुरुष थे। संस्कृत-भाषा के प्रेमी होने के कारण 'भोज प्रबंध' आदि के द्वारा उनका नाम अजर-अमर है। कहते हैं, उन्होंने चेरो-राजा को जीतकर अपनी विजय के स्मारक में भोजपुर गाँव बसाया, जिसे अब 'पुराना भोजपुर' कहते हैं।**"

नया भोजपुर, मुसलमानी काल में, धार (मालवा) से दूसरी बार (सन् १३०५ ई०) आये हुए परमार-राजा भोजदेव के वंशज शान्तनशाह के वंशज राजा रुद्रप्रतापनारायण द्वारा ही सम्भवतः बसाया गया था, जो डुमराँव के परमार (उज्जैन) राजपूतों के वर्त्तमान राजा कमलनारायण सिंह के पितामह महाराज केशोप्रसाद सिंह से १३ पीढ़ी पूर्व डुमराँव-गद्दी के महाराज थे। इन तेरह पीढ़ियों में एक महारानी भी शामिल हैं, जो वर्षों तक गद्दी पर रहीं। यहाँ मुसलमानी काल का बना हुआ और मुसलमानी कला का प्रतीक 'नवरत्न'-नामक किला या महल, भग्नावशेष रूप में, आज भी 'भोजपुर-दह' नामक झील के दक्षिणी तट पर, खड़ा है।

डॉ० उदयनारायण तिवारी ने अपने एक लेख में लिखा है—"**शाहाबाद जिले में भ्रमण करते हुए डॉ० बुकनन सन् १८१२ ई० में भोजपुर आये थे। उन्होंने मालवा के भोजवंशी 'उज्जैन' राजपूतों के 'चेरो'-जाति को पराजित करने के सम्बन्ध में उल्लेख किया है।**" बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी के १८७१ के जर्नल में छोटानागपुर, पचेल तथा पालामऊ (पलामू) के संबंध में मुसलमान इतिहास-लेखकों के विवरणों की चर्चा करते हुए 'ब्लॉकमैन' ने भोजपुर का भी उल्लेख किया है। वे लिखते हैं—"**बंगाल के पश्चिमी प्रान्त तथा दक्षिणी बिहार के राजा दिल्ली के सम्राट् के लिए अत्यन्त दुःखदायी थे। अकबर के राजत्व काल में बक्सर के समीप भोजपुर के राजा दलपत, सम्राट् से पराजित होकर बंदी किये गये और अंत में जब बहुत आर्थिक दंड के पश्चात् वे बंधन-मुक्त हुए तब उन्होंने पुनः सम्राट के विरुद्ध सशस्त्र क्रांति की। जहाँगीर के राजत्व काल में भी उनकी क्रान्ति चलती रही, जिसके परिणाम-स्वरूप भोजपुर लूटा गया तथा उनके उत्तराधिकारी प्रताप को शाहजहाँ ने फाँसी का दंड दिया।**" इसी वंश के राजा दुल्लह और प्रताप मुगल बादशाहों के समय में दिल्ली से लोहा लेते रहे, जिनका जिक्र मुसलमानी इतिहासों में आया है।

तिवारी जी ने उसी लेख में पुनः लिखा है—"**ब्लॉकमैन ने ही अपने 'आईने अकबरी' के अनुवाद (भाग १) में, अकबर के दरबारी नं० ३२९ के संबंध में चर्चा करते हुए निम्नलिखित तथ्यों का उल्लेख किया है—'इस दरबारी का नाम बरखुर्दार मिर्जा खानआलम था। इस तथ्य की पुष्टि अन्य स्रोतों से भी हो जाती है। बात इस प्रकार है—बरखुर्दार का पिता युद्ध में दलपत द्वारा मारा गया था। बिहार का यह जमींदार बाद में पकड़ा गया तथा ४४ वर्ष की उम्र तक जेल में रखा गया, किन्तु इसके पश्चात् बहुत अधिक आर्थिक दंड लेकर उसे छोड़ दिया गया। बरखुर्दार अपने पिता के वध का बदला लेने तथा दलपत के वध की टोह में छिपा था,**

किन्तु वह उसके हाथ न आया। जब अकबर को इस बात की सूचना मिली, तब वह बरखुर्दार के इस कार्य से इतना रुष्ट हुआ कि उसने उसे दलपत को सौंप देने की आज्ञा दी; किंतु कई दरबारियों के हस्तक्षेप करने पर सम्राट् ने उसे कैद कर लिया। पुनः उसी पृष्ठ की पाद टिप्पणी १ में दलपत के संबंध में विद्वान् लेखक लिखता है—'दलपत को अकबरनामा में उज्जनिह में (उज्जैनिया) लिखा है। हस्तलिखित प्रतियों में इसके उज्जैनिह या ओजैनिह आदि रूप मिलते हैं। शाहजहाँ के राजत्व-काल में दलपत का उतराधिकारी राजा प्रताब हुआ, जिसे प्रथम वर्ष में १५०० तथा बाद में १००० घोड़ों का मनसब मिला (पादशाह नामा—१२२१)।"

महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने 'भोजपुरी लोक-गीत में करुण रस' नामक पुस्तक* की भूमिका (के पृष्ठ ४—६) में अपना मत यों दिया है—

"शाहाबाद के उज्जैन राजपूत मूल-स्थान के कारण उज्जैन और पीछे की राजधानी धार के कारण धार मे भी आये कहे जाते हैं। 'सरस्वती-कण्ठाभरण' धारेश्वर महाराज भोज के वंश के शान्तनशाह, १४ वीं सदी में, धार-राजधानी के मुसलमानों के हाथ में चले जाने के कारण जहाँ तहाँ होते हुए बिहार के इस भाग में पहुँचे। यहाँ के पुराने शासकों को पराजित करके महाराज शान्तनशाह ने पहले दाँवा (बिहिया स्टेशन के पास छोटा-सा गाँव) को अपनी राजधानी बनाया। उनके वंशजों ने जगदीशपुर, मठिला और अन्त में डुमराँव में अपनी राजधानी स्थापित की। पुराना भोजपुर गङ्गा में बह चुका है। नया भोजपुर डुमराँव स्टेशन से दो मील के करीब है।

"मालवा के परमार राजाओं की वंशावली इस प्रकार है—(१) कृष्णराज, (२) वैरि सिंह, (३) सीयक, (४) वाक्पतिराज, (५) वैरि सिंह, (६) श्रीहर्ष (सीयक ९४९-७२ ई०), (७) मुंज (९७४-९९७), (८) सिंधुराज (नवसाहसांक)–१००९?, (९) भोज (त्रिभुवन नारायण १००९-४२), (१०) जय सिंह (१०५५-५९), (११) उदयादित्य (१०८०-८६), (१२) लक्ष्मदेव, (१३) नर वर्मा (११०४-११३३), (१४) यशोवर्मा (११३४-११३५), (१५) जय वर्मा, (१६) अजय वर्मा (११९९), (१७) विंध्य वर्मा (१२१५), (१८) सुभट वर्मा, (१९) अर्जुन वर्मा (—१२२३), (२०) देवपाल (—१२३५), (२१) जयार्जुन देव [जेत्रम (पा?) ल १२५५-५७], (२२) जय वर्मा—२ (१२५७-६०),

* प्रकाशक—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (प्रयाग), विक्रम-संवत् २००१।

(२३) जयसिंह—३ (१२८८), (२४) अर्जुन वर्मा—२ (१३५२), (२५) भोज—२, (२६) जयसिंह—४ (१३०६ ?), (१३१० ?)।

"जयसिंह चतुर्थ को पराजित करके अलाउद्दीन ने मालवा ले लिया। यद्यपि उज्जैन-राजवंशावली में शांतन के पिता का नाम जयदेव कहा जाता है, तथापि पुराने राजवंशों में देव और सिंह बहुधा पर्यायवाची होते हैं। इसलिए शांतनशाह के पिता धारा के अंतिम परमार राजा जयसिंह ही मालूम होते हैं। मुसलमानी काल और कम्पनी के राज के आरम्भ तक आरा जिले के बहुत बड़े भाग का नाम भोजपुर सरकार (जिला) था। आज भी बक्सर सबडिवीजन के एक परगने का नाम भोजपुर है। जान पड़ता है, शांतनशाह के दादा द्वितीय भोज या भारत के प्रतापी नरपति महाराज भोज प्रथम के नाम पर यह बस्ती बसाई गई।"

इन दोनों भोजपुर गाँवों को बसानेवाले डुमराँव राजवंश के पूर्वज परमार राजा थे, जो मालवा से दो विभिन्न समय में इस प्रदेश में आये थे। प्रथम बार तो धार (मालवा) के विद्वान् राजा भोजदेव (१००५–१०५५ ई०) ने इस प्रदेश पर अपना राज्य कायम करके पुराने भोजपुर को बसाया और इसे इधर के प्रदेशों की राजधानी बनाया। यह उनके धार निवासी वंशजों के अधीन लगभग १६५ वर्षों तक रहा। इसके बाद मालवा के धार-राज्य की शक्ति का ह्रास होने पर यह प्रदेश यहाँ के आदिवासियों के हाथ में चला गया। उन लोगों ने छोटे-छोटे टुकड़ों में अपना राज्य कायम किया और सन् १३०५ ई० के लगभग तक अपने प्रभुत्व को यहाँ कायम रखा। परन्तु, सन् १३०५ ई० में अलाउद्दीन खिलजी द्वारा मालवा तथा धार-राज्य के ले लिये जाने पर, और यहाँ अलाउद्दीन के प्रतिनिधि (वायसराय) 'अइनउलमुल्क' का राज्य कायम हो जाने पर, धार के परमार राजवंश का वहाँ रहना मुश्किल हो गया। बहुत दिनों तक वे मुसलमान शासकों के प्रतिकूल होकर राज्य नहीं कायम रख सके। अतः सन् १३०५ ई० में उस राजवंश के तत्कालीन राजा जयदेव अथवा जयसिंह चतुर्थ के पुत्र शांतनशाह, अपने तीन पुत्रों (हुंकारशाह, विम्भार-शाह और ईश्वरशाह) के साथ, अपने पूर्वजों की राजधानी भोजपुर की ओर, गया-श्राद्ध करने के बहाने चल पड़े। उन्होंने पहले शाहाबाद जिले के बिहिया स्टेशन (पूर्वीय रेल-पथ) के निकट 'कांश'-ग्राम में वहाँ के चेरो राजा को जीतकर गढ़ बनाया। बाद को उनके वंशज राजा रुद्रप्रताप नारायण नया भोजपुर बसाकर वहाँ जा बसे।

सन् १७४५ ई० में भोजपुर का तत्कालीन राजवंश भोजपुर छोड़कर तीन जगहों में जा बसा। भाइयों में बड़े 'होरिलशाह' 'मठिला'-ग्राम में और बाद में 'डुमराँव' में बसे।

यह डुमराँव उस समय 'होरिल नगर' के नाम से प्रसिद्ध था। सुजान शाह और उनके पुत्र उदवन्त सिंह 'जगदीशपुर' (शाहाबाद) में जा बसे। उदवन्त सिंह के और भी दो भाई थे—बुद्धसिंह और शुभसिंह। इनमें बुद्धसिंह तो बक्सर में बसे और शुभसिंह ने बक्सर सबडिवीजन के 'आथर'-ग्राम में अपना निवास बनाया। उदवन्त सिंह के वंशजों में बाबू कुँअर सिंह और अमर सिंह थे, जो सन् १८५७ के विद्रोह के नेता थे। बुधसिंह और शुभसिंह के वंशज अब नहीं रहे। होरिल सिंह के वंशज आज भी डुमराँव में हैं और इसी वंश के राजा बाबू कमलनारायण सिंह हैं।

[३]

भोजपुरी

इस प्रकार उपर्युक्त प्रमाणों से सिद्ध है कि भोजपुर एक प्रांत था। 'शाहाबाद गजेटियर' में लिखा है—"धीरे-धीरे, भोजपुर का विशेषण भोजपुरी, इस प्रांत के निवासियों तथा उनकी बोली के लिए भी प्रयुक्त होने लगा। चूँकि इस प्रान्त की बोली ही इसके उत्तर, दक्षिण तथा पश्चिम में भी बोली जाती थी, अतएव भौगोलिक दृष्टि से भोजपुर प्रांत से बाहर होने पर भी इधर की जनता तथा उसकी भाषा के लिए भी भोजपुरी शब्द ही प्रचलित हो चला।

"यह एक विशेष बात है कि भोजपुर के चारों ओर की ढाई करोड़ से अधिक जनता की बोली का नाम भोजपुरी हो गया। प्राचीन काल में भोजपुरी का यह क्षेत्र—'काशी', 'मल्ल' तथा 'पश्चिमी मगध' एवं 'झारखण्ड' (वर्त्तमान छोटानागपुर) के अंतर्गत था। मुगलों के राजत्व-काल में जब भोजपुर के राजपूतों ने अपनी वीरता तथा सामरिक शक्ति का विशेष परिचय दिया, तब एक ओर जहाँ भोजपुरी शब्द जनता तथा भाषा दोनों का वाचक बनकर गौरव का द्योतन करने लगा, वहाँ दूसरी ओर वह एक भाषा के नाम पर, प्राचीन काल के तीन प्रांतों को, एक प्रांत में गूँथने में भी समर्थ हुआ।"

'आरा-पुरातत्व'-नामक पुस्तक के ३२ वें पृष्ठ में लिखा है—'इस प्रांत के नाम से ही भोजपुरी बोली प्रसिद्ध है, जिसे दो करोड़ मनुष्य बोलते हैं। इस बोली का प्रधान चिह्न यह है कि इसमें 'ने' विभक्ति होती ही नहीं। जैसे—"रवाँ खइलीं आदि।'

फिर इसी बात को ग्रियर्सन साहब ने अपनी 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ् इण्डिया' पुस्तक में व्यक्त करते हुए कहा है—"भोजपुरी उस शक्तिशाली, स्फूर्तिपूर्ण और

उत्साही जाति की व्यावहारिक भाषा है, जो परिस्थिति और समय के अनुकूल अपने को बनाने के लिए सदा प्रस्तुत रहती है और जिसका प्रभाव हिन्दुस्तान के हर भाग पर पड़ा है। हिन्दुस्तान में सभ्यता फैलाने का श्रेय बंगालियों और भोजपुरियों को ही प्राप्त है। इस काम में बंगालियों ने अपनी कलम से काम लिया और भोजपुरियों ने अपनी लाठी से।"

सारन जिले के भी पूर्वकथित गजेटियर में वहाँ के निवासियों के सम्बन्ध में ग्रियर्सन साहब की पूर्वकथित बातें पृ० ४१ पर अंकित हैं।

भोजपुरियों के स्वभाव के संबंध में हमारी पुस्तक 'भोजपुरी लोकगीत में करुण रस'[1] की भूमिका में पृ० ६६,७०,७१ और ७२ में पढ़ना चाहिए।

भोजपुरी नाम क्यों पड़ा, इसका उल्लेख किया जा चुका है। यहाँ भोजपुरी के इतिहास का वर्णन करते हुए हमने यह भी दिखाया है कि भोजदेव (सन् १००५—१०५५ ई०) के समय में भोजपुरी की प्रधानता बढ़ी और १२३७ वि० सं० यानी ११८० ई० तक भोजदेव के वंशज 'धार' के परमार-राजाओं का शासन इस भोजपुर प्रान्त पर सबल रूप से कायम रहा।

'हिस्ट्री ऑफ् दी परमार डाइनेस्टी'[2] में लिखा है—"लक्ष्मणदेव (भोजदेव के प्रपौत्र) के सम्बन्ध में कहा जाता है कि उसने अंग और कलिंग की सेनाओं के साथ संग्राम किया था। नागपुर के शिलालेख का तीसरा लेख बताता है कि अंग और कलिंग के उन हाथियों को भी—जो विश्व के संहार-हेतु चलायमान पर्वतों की तरह विशाल थे तथा जो वर्षा-मेघों के समान गर्जन करनेवाले और पालतू शूकर-समूह की तरह काले थे—लक्ष्मणदेव की सेना के सम्मुख उस समय दया की भिक्षा माँगनी पड़ी थी, जब वे देव के सेनाधिपतियों के शक्तिशाली हाथियों के आक्रमण-रूपी भीषण तूफान द्वारा त्रस्त और अस्त व्यस्त कर दिये गये थे। बिहार के वर्त्तमान भागलपुर और मुँगेर जिले को उस समय अंग कहते थे, और ये रामपाल (बंगाल के राजा) के राज्य के उपभाग थे।[3] कलिंग वर्त्तमान उत्तरीय भारत का वह भाग था, जो उड़ीसा और द्रविड़ देश के बीच समुद्र से सीमाबद्ध होता है। श्री कनिंघम के अनुसार यह प्रदेश दक्षिण-पश्चिम में गोदावरी नदी के इस पार तक और उत्तर-पश्चिम में इरावती नदी की गुवली-नामक शाखा तक फैला हुआ था। सम्भव है कि लक्ष्मणदेव ने बंगाल पर

१. प्रकाशक—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग। प्रकाशन-काल वि० २००१ सं०।
२. प्रकाशक—ढाका-विश्वविद्यालय, लेखक—श्री डी० सी० गांगुली, पृष्ठ १४६।
३. देखिए—मेमायर्स ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल, जिल्द ५, नं० ३, पृ० ६३-६४।

आक्रमण करते समय ही अंग की सेना से संग्राम किया हो अथवा यह भी हो सकता है कि लक्ष्मणदेव ने रामपाल के अधीनस्थ अंग की सेना को आगे बढ़ने में रुकावट डालने पर विनाश करके भगा दिया हो।"

इस उद्धरण से दो बातें सिद्ध होती हैं—प्रथम यह कि इसी पराजय के कारण अंग के इस प्रदेश के निवासियों का नाम 'भगोलिया' (भागनेवाला) पड़ा हो और बाद में 'भगोलियों' के बसने के कारण नगर का नाम 'भागलपुर' पड़ गया हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। स्थानों का नामकरण वहाँवालों के स्वभाव तथा विशेष घटना आदि के आधार पर रखना कोई नई बात नहीं है। 'भागलपुर के भगोलिया' लोकोक्ति की संगति भी उक्त व्याख्या से ठीक बैठ जाती है।

दूसरी बात नागपुर के शिला-लेख से तथा भोजपुर के इतिहास के आधार पर यह निश्चित होती है कि लक्ष्मणदेव की सेना में उनके भोजपुर प्रांत की भोजपुरी सेनाएँ भी सम्मिलित थीं अथवा वे सेनाओं के साथ मालवा से पहले भोजपुर आये और यहाँ से उन्होंने भोजपुरी सेना के साथ वंग पर अंग और कलिंग के मार्ग से चढ़ाई की। इस तरह उक्त लोकोक्ति का रचना-काल, वंग के राजा 'रामपाल' या उससे दो-चार वर्ष बाद का कहा जायगा। रामपाल का समय श्री डी० सी० गांगुली ने उक्त पुस्तक में सन् १०७७—११२० ई० तक का दिया है। इस लम्बी अवधि के बीच लक्ष्मणदेव का आक्रमण हुआ था। अतः १२वीं सदी के आरम्भ-काल में इसकी रचना हुई होगी। भाषा के अर्थ में भोजपुरी का सर्वप्रथम प्रयोग एक दूसरी लोकोक्ति में हमें मिलता है, जिसमें भाषा के अर्थ में एक साथ भोजपुरिया, मगहिया और तिरहुतिया इन तीनों भगिनी भाषाओं के नाम आये हैं।

"कस कस कसमर किना मगहिया
का भोजपुरिया की तिरहुतिया[१]"

इस लोकोक्ति को ग्रियर्सन ने अपने 'बिहारी भाषाओं के व्याकरण' के मुखपृष्ठ पर उद्धृत किया है। इस लोकोक्ति का निर्माण-काल मैथिल-कोकिल विद्यापति के समय के बाद का ही ज्ञात होता है; क्योंकि इसमें मिथिला की भाषा का 'तिरहुतिया' शब्द आया है। विद्यापति के समय (१४ वीं शताब्दी) में मैथिली भाषा के लिए कोई नाम निश्चित नहीं था, तभी विद्यापति को इसके लिए 'देसिलबयना' कहना पड़ा था। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि भोजपुरिया या भोजपुरी का प्रयोग भाषा के अर्थ में 'मगही' या 'तिरहुतिया' नामकरण की तरह ही हुआ होगा।

१. भावार्थ—'क्या' सर्वनाम के लिए 'कसमर' (सारन जिले के) स्थान में 'कस', मगही में 'किना', भोजपुरी में 'का' और तिरहुतिया में 'की' होता है (—नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका, वर्ष ५३, अंक ३-४)

भोजपुरी-भाषा के विशेषज्ञ एवं मर्मज्ञ डॉ० उदयनारायण तिवारी ने काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा की पत्रिका (वर्ष ५३, अङ्क ३-४, विक्रम-सं० २००५; पृ० १६३-१६६) में 'भोजपुरी का नामकरण' शीर्षक अपने निबन्ध में लिखा है—

"लिखित रूप में भोजपुरी-भाषा का सर्वप्रथम प्रामाणिक प्रयोग हमें सन् १७८९ में मिलता है। ग्रियर्सन साहब ने अपने 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ् इण्डिया' के प्रथम भाग के पूरक अंश के पृ० २२ में एक उद्धरण दिया है। उन्होंने यह उद्धरण रेमंड-कृत 'शेर मुतारीन के अनुवाद' (द्वितीय संस्करण) में दी हुई अनुवाद की भूमिका, पृ० ८ से लिया है। वह इस प्रकार है—'१७८९, दो दिन बाद, सिपाहियों का एक रेजिमेण्ट जब दिन निकलने पर शहर से होता हुआ चुनारगढ़ की ओर जा रहा था, तब मैं वहाँ गया और उन्हें जाते हुए देखने के लिए खड़ा हो गया। इतने में रेजिमेण्ट के सिपाही रुके और उनके बीच से कुछ लोग अंधी गली की ओर दौड़ पड़े। उन्होंने एक मुर्गी पकड़ ली और तब सिपाहियों में से एक ने अपनी भोजपुरिया बोली में कहा—इतना अधिक शोर मत मचाओ। आज हम फिरंगियों के साथ जा रहे हैं, किन्तु हम सभी चेतसिंह की प्रजा हैं और कल उनके साथ भी जा सकते हैं और तब तो मूली-गाजर का ही प्रश्न नहीं रहेगा, बल्कि प्रश्न हमारी बहू-बेटियों का होगा।

"इसके बाद निश्चित रूप से भाषा के अर्थ में भोजपुरी शब्द का प्रयोग सन् १८६८ में जॉन बीम्स ने 'रायल एशियाटिक सोसाइटी' के जर्नल, (जिल्द ३, पृष्ठ ४८५–५०८) में प्रकाशित अपने भोजपुरी-सम्बन्धी लेख में किया है। वस्तुतः बीम्स साहब ने प्रचलित अर्थ में ही इस शब्द का प्रयोग किया है। यह लेख प्रकाशित होने से एक वर्ष पूर्व (१७ फरवरी, सन् १८६७ ई० को) एशियाटिक सोसाइटी में पढ़ा गया था।

"फिर विलियम इरविंग-लिखित 'दि आर्मी ऑफ् दि इंडियन मुगल' (लंदन, १९०३, पृष्ठ १६८–१६९) से ज्ञात होता है कि भोजपुरी जनता तथा उनकी भाषा के अन्य नाम भी थे। मुगलों के शासन के समय दिल्ली तथा पश्चिम में भोजपुरियों—विशेषकर भोजपुरी क्षेत्र के सिपाहियों—को बक्सरिया कहा जाता था। १७ वीं और १८ वीं शताब्दी में भोजपुर तथा उसके पास के ही बक्सर—दोनों फौजी भर्ती के लिए मुख्य केन्द्र थे। फिर १८ वीं सदी में जब अँगरेजी-राज्य स्थापित हुआ, तब अँगरेजों ने भी मुगलों की परम्परा जारी रखी और वे भी भोजपुर और बक्सर से तिलंगों की भर्ती करते रहे। बंगाल और

कलकत्ता में, जहाँ भोजपुरियों का जमघट रहता है, बंगाली इन्हें 'पश्चिमी' तथा 'देशवाली' अथवा 'खोट्टा' कहते हैं। 'खोट्टा' शब्द में द्वेष के कारण घृणा की भावना है; क्योंकि भोजपुरी उनसे बल में मजबूत होने के कारण हर जीविकोपार्जन में आगे रहते हैं, जिससे वे उनकी घृणा के पात्र बनते हैं। 'देशवाली' शब्द इसलिए प्रचलित हुआ कि जब कलकत्ता या बंगाल में दो भोजपुरिया मिलते हैं, तो वे अपनेको आपस में 'देशवाली' अथवा 'मुल्की' कहकर संबोधित करते हैं। उत्तरी भारत में भोजपुरियों को 'पूर्बिहा' और उनकी बोली को 'पूर्वी बोली' कहा जाता है; किन्तु 'पूरब' और 'पूर्बिहा' सापेक्षिक शब्द हैं और इनका प्रयोग भी किसी स्थान विशेष या बोली-विशेष के लिए नहीं ही होता। यद्यपि 'पूरब' और 'पूर्बिया' के सम्बन्ध में 'हाब्सन–जाब्सन डिक्शनरी' (पृष्ठ ७२४) में निम्नलिखित अर्थ लिखा गया है, जिससे जिलाविशेष का बोध होता है; पर वास्तव में बात ऐसी नहीं है। यह डिक्शनरी कर्नल हेनरी यूल तथा ए० सी० बर्नेल की बनाई ऐंग्लो-इण्डियन लोगों में प्रचलित शब्दों तथा वाक्यों की तालिका से सम्पन्न है। यह सन् १६०३ ई० का संस्करण है। इसमें 'पूरब' और 'पूर्बिहा' शब्द के विवरण यों हैं—

"उत्तरी भारत में 'पूरब' से अवध, बनारस तथा बिहार से तात्पर्य है। अतः पूर्बिया इन्हीं प्रान्तों के निवासियों को कहते हैं। बंगाल की पुरानी फौज के सिपाहियों के लिए भी इस शब्द का प्रयोग होता था; क्योंकि उनमें से अधिकांश इन्हीं प्रान्तों के निवासी थे।

"आज क्यों अवध के लोग बिहार के निवासियों को पूर्बिया कहते हैं तथा ब्रज और दिल्लीवाले अवध के रहनेवालों को पूर्बिया कहते हैं? दिल्ली के उर्दू-कवियों ने भी ऐसा ही प्रयोग किया है। 'मीर साहब' जब दिल्ली से रुखसत होकर लखनऊ आये और पहले-पहल मुशायरे में शरीक हुए, तब पहली गजल जो उन्होंने अपने परिचय में पढ़ी, उसमें लखनऊवालों को 'पूरब के साकिनों' कहके सम्बोधन किया था। 'कबीर' ने भी सन् १५०० ई० में अपनी भाषा को पूरबी कहा है। यथा—'बोली हमरी पूरब की हमें लखे नहिं कोय; हमके तो सोई लखे धुर पूरब के होय।' परन्तु इस छोटे दोहे में 'पूरबी' शब्द केवल भोजपुरी के लिए ही नहीं व्यक्त किया गया है। इस 'पूर्वी' में लखनऊ के पूरब की बोलियाँ भी शामिल हो सकती हैं। यद्यपि इनमें प्रधान तो भोजपुरी ही मानी जायगी; क्योंकि इसका विस्तार 'अवध' के जिलों तक है।"

भोजपुरीभाषी प्रदेश के भीतर भी, स्थान-भेद से, विभिन्न स्थानों की बोलियों का नाम उन स्थानों के नाम पर कहा जाता है; जैसे, बनारस की बोली को बनारसी, छपरा की बोली को छपरहिया। बस्ती जिले की भोजपुरी का दूसरा नाम सरवरिया भी है। आजमगढ़ के पूर्वी तथा बलिया के पश्चिमी क्षेत्र में बोली जानेवाली बोली को 'बँगरही' कहते हैं। बाँगर-क्षेत्र से उसका तात्पर्य है, जहाँ गंगा की बाढ़ नहीं जाती। परन्तु इन नामों का भाषा-भेद से कोई सम्बन्ध नहीं। इन नामों का सीमित क्षेत्र से ही सम्बन्ध रहता है।

श्री राहुल सांकृत्यायन जी ने बलिया के तेरहवें वार्षिकोत्सव के अपने भाषण में भोजपुरी-भाषा के स्थान पर 'मल्ली' नाम का प्रयोग किया था। एक लेख भी 'विशाल भारत' (कलकत्ता)[1] में इसी आशय का निकाला था। इसका आधार उन्होंने बौद्धकालीन १६ जनपदों में से 'मल्ल-जनपद' को माना था। इसकी ठीक सीमा क्या थी, यह आज निश्चित रूप से नहीं बतलाया जा सकता। जैन कल्पसूत्रों में नव मल्लों की चर्चा है; किन्तु बौद्ध ग्रन्थों में केवल तीन स्थानों—'कुशिनारा', 'पावा' तथा 'अनूपिया' के मल्लों का उल्लेख है। इनके कई प्रसिद्ध नगरों के भी नाम मिलते हैं; जैसे—'भोजनगर', 'अनूपिया' तथा 'उरुबेलकप्प'। 'कुशिनारा' तथा 'पावा' विद्वानों के मतानुसार युक्तप्रांत के गोरखपुर जिले में स्थित वर्त्तमान 'कसया' तथा 'पडरौना' ही हैं। मल्ल की भाँति काशी का भी उल्लेख प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है। काशी में भी भोजपुरी बोली जाती है, अतएव मल्ल के साथ-साथ काशी का होना भी आवश्यक है। राहुल जी ने इस क्षेत्र की भोजपुरी को काशिका नाम दिया है; किन्तु भोजपुरी को ऐसे छोटे-छोटे टुकड़ों में विभक्त करना अनावश्यक तथा अनुपयुक्त है। आज भोजपुरी एक विस्तृत क्षेत्र की भाषा है। इसलिए प्राचीन जनपदों को पुनः प्रचलित करने की अपेक्षा आधुनिक नाम भोजपुरी ही अधिक वांछनीय है। इस नाम के साथ भी कम-से-कम तीन सौ वर्षों की परम्परा है।

[४]

भोजपुरी : भाषा या बोली ?

भाषा-विज्ञान के विद्वानों के मतानुसार भाषा उसे कहते हैं, जिसके द्वारा मनुष्य-समाज के प्राणी परस्पर भावों और विचारों का आदान-प्रदान लिखकर या बोलकर करते हैं।

भोजपुरी किसी छोटे-से स्थान-विशेष या जिला विशेष की बोली नहीं; बल्कि दो प्रान्तों में बँटे हुए चौदह जिलों की और लगभग चार करोड़ जनता द्वारा बोली जानेवाली

१. अक्टूबर, १९४१ ई०।

भाषा है। उसमें समृद्ध लोक-साहित्य के साथ-ही-साथ सांस्कृतिक साहित्य भी है। उसमें भी व्याकरण के स्वाभाविक नियम हैं। यद्यपि लिखित रूप में वर्त्तमान नहीं हैं। उसका वर्षों का अपना साहित्यिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक इतिहास है। उसकी लोकोक्तियाँ, शब्द-वैभव, मुहावरे, आदरसूचक और पारिभाषिक शब्द, अभिव्यक्तियों के तरीके आदि ऐसे अनोखे और बलवान् हैं कि उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती है। इस दिशा में वह अपनी अन्य भगिनी-भाषाओं से अनूठी है। उसके बोलनेवालों की सांस्कृतिक एकता, पौरुष, वीर-प्रकृति, आयुधजीवी स्वभाव की विशेषता आदि, आज के ही नहीं, २५ सौ वर्षों के ऐतिहासिक प्रमाणों द्वारा सिद्ध हैं। ऐसी स्थिति में भोजपुरी के गुणों को न जानने के कारण यदि उसको कोई केवल बोली कहे, तो यह सर्वथा अनुचित है। भोजपुरी में आज वेग से नवीन साहित्य का सर्जन हो रहा है। उसके बोलनेवालों का उसके प्रति प्रेम और उत्साह इतना प्रबल है कि उसके साहित्यिक विकास में किसी प्रकार सन्देह नहीं किया जा सकता। भोजपुरी का क्षेत्र ५०,००० वर्गमीलों में फैला हुआ है। उसकी विशेषताओं के कारण आचार्य श्री श्यामसुन्दर दास ने अपनी 'भाषा-रहस्य' पुस्तक (पृष्ठ २०६) में बिहारी भाषा का उल्लेख करते हुए डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या का हवाला देकर लिखा है—"**भोजपुरी अपने वर्ग की ही मैथिली-मगही से इतनी भिन्न होती है कि चटर्जी इसे एक पृथक् वर्ग में ही रखना उचित समझते हैं।**"*

भोजपुरी को साहित्यिक भाषा मानने के विपक्ष में सर्वप्रथम दलील यही दी जाती है कि उसमें साहित्य का अभाव है। दूसरी यह कि उसका व्याकरण नहीं है। यह कहना असंगत है कि भोजपुरी में साहित्य का अभाव है। भोजपुरी का साहित्य आज से ही नहीं, सिद्ध-काल से निर्मित होता आ रहा है। सिद्ध-साहित्य की भाषा में भी भोजपुरी का अंश स्पष्ट है। हाँ, इसके कण्ठनिहित साहित्य को लिखित रूप देकर विद्वानों के समक्ष लाने का प्रयत्न पहले नहीं किया गया था। आज ही नहीं, बहुत पहले से भोजपुरी में अनेक छोटी-बड़ी पुस्तकों की रचना होती आई है और वे पुस्तकें प्रकाशित होकर बाजारों में बिकती भी रही हैं। कलकत्ता और बनारस के कितने ऐसे प्रेस हैं, जो ऐसी ही पुस्तकें छापकर समृद्ध हुए हैं। व्याकरण के अभाव के कारण भाषा की सत्ता पर सन्देह नहीं करना चाहिए। वस्तुतः भाषा पहले है, व्याकरण पीछे। व्याकरण के होने न होने से किसी भाषा के व्यापक अस्तित्व में अन्तर नहीं आता।

भोजपुरियों का हिन्दी-भाषा के प्रति हार्दिक अनुराग है। उसको राष्ट्रभाषा

* देखिए—'ओरिजिन एण्ड डेवलपमेन्ट ऑफ् दि बंगाली लैंग्वेज',—पृष्ठ ५२।

मानने के लिए वे बहुत पहले से ही तैयार हैं। उसके विकास के लिए वे तन-मन-धन से कार्यतत्पर रहते हैं। किन्तु अन्य जनपदीय भाषाभाषियों की तरह वे राष्ट्रभाषा हिन्दी के उन्नति-पथ पर काँटे बिछाना नहीं चाहते। वे हृदय से भारतीयता और राष्ट्रीयता के समर्थक हैं। किसी दूसरी भगिनी भाषा से उनको किसी प्रकार का द्वेष या विरोध नहीं है।

[५]

भेदोपभेद

अपने भाषा सर्वे में ग्रियर्सन ने भिन्न-भिन्न भाषाओं के उच्चारण तथा व्याकरण का विचार करके भारतीय आर्यभाषाओं को तीन उपशाखाओं में विभक्त किया है—(१) अन्तरङ्ग, (२) बहिरङ्ग और (३) मध्यवर्त्ती। ग्रियर्सन ने भोजपुरी, मैथिली और मगही को बहिरंग उपशाखा के अन्तर्गत निम्नलिखित क्रम से रखा है—

(क)—बाहरग सन् १८९१ इ० म बालनवाला का

(१)—पश्चिमोत्तरी वर्ग	**करोड़**	**लाख**
लहँदा	०	५७
सिन्धी	०	३४
(२)—दक्षिणी वर्ग		
मराठी	०	८८
(३)—पूर्वी वर्ग		
आसामी	०	१७
बंगाली	०	६३
ओड़िया	१	०
बिहारी	३	४३*
भोजपुरी	मैथिली	मगही
२००००००००	१००००००००	६२००००००

(ख)—मध्यवर्त्ती उपशाखा

(४)—मध्यवर्त्ती वर्ग	**करोड़**	**लाख**
पूर्वी हिन्दी	२	२६

* यह संख्या ४३ लाख नहीं, ६२ लाख है। यहाँ शायद छापे की गलती है। —लेखक

(ग)—अंतरंग उपशाखा

(५)—केन्द्र वर्ग

पश्चिमी हिन्दी	४	१२
पंजाबी	१	६२
गुजराती	०	६६
भीली	०	१६
खानदेशी	०	२
राजस्थानी	१	२७

(६)—पहाड़ी वर्ग

पूर्वी पहाड़ी अथवा		
नेपाली	०	३
केन्द्रवर्त्ती पहाड़ी[1]	०	०
पश्चिमी पहाड़ी	०	१७[2]

इस प्रकार उपर्युक्त १७ भाषाओं के ६ वर्ग और ३ उपशाखाएं मानी गई हैं, पर कुछ लोगों को यह अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग का भेद ठीक नहीं प्रतीत होता है। डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी ने लिखा है कि सुदूर पश्चिम और पूर्व की भाषाएँ एक साथ नहीं रखी जा सकतीं। उन्होंने इसके अच्छे प्रमाण भी दिये हैं[3] और भाषाओं का वर्गीकरण नीचे लिखे ढंग पर किया है—

(क) उदीच्य (उत्तरी वर्ग)

(१)—सिंधी, (२)—लहँदा, (३)—पंजाबी

(ख) प्रतीच्य (पश्चिमी वर्ग)

(४)—गुजराती, (५)—राजस्थानी

(ग) मध्यदेशीय वर्ग

(६)—पश्चिमी हिन्दी

(घ) प्राच्य (पूर्वी) वर्ग

(७)—पूर्वी हिन्दी (८)—बिहारी, (९)—ओड़िया, (१०)— बँगला, (११)—आसामी

---

१. सन् १९२१ ई० की जनगणना में केन्द्रवर्त्ती पहाड़ी के बोलनेवाले लोग हिन्दी-भाषियों में गिन लिये गये हैं। अतः केवल २८५३ मनुष्य इसके बोलनेवाले माने जाते हैं। अर्थात्, लाख में उनकी गणना नहीं है।—ले०

२. देखिए—ग्रियर्सन-सम्पादित 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ् इण्डिया' का इण्ट्रोडक्शन, पृष्ठ११७–२०।—ले०

३. देखिए—एस्० के० चटर्जी-लिखित 'ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट ऑफ् बंगाली लैंग्वेज', पृष्ठ २९–३१ और पृष्ठ ७६—७९।—लेखक

(ङ) दाक्षिणात्य (दक्षिणी) वर्ग

(१२) मराठी[1]।

इस प्रकार ग्रियर्सन और चटर्जी दोनों विद्वानों के वर्गीकरण को उद्धृत करके बाबू श्यामसुन्दर दास जी ने डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी के मत से सहमत होते हुए लिखा है[2]—

"बिहारी केवल बिहार में ही नहीं, संयुक्त प्रान्त के पूर्वी भाग, अर्थात् गोरखपुर, बनारस कमिश्नरियों से लेकर पूरे बिहार प्रान्त में तथा छोटानागपुर में भी बोली जाती है। यह पूर्वी हिन्दी के समान हिन्दी की चचेरी बहन मानी जाती है।"

भौगोलिक आधार पर ग्रियर्सन ने भोजपुरी के पाँच उपभेद बताये हैं। बिहार के अन्दर मुख्यतः शाहाबाद, सारन, चम्पारन और पलामू जिले में भोजपुरी बोली जाती है। छोटानागपुर के अन्दर भी भोजपुरी बोलनेवाले कुछ लोग हैं, मगर यहाँ की भोजपुरी का रूप बहुत विकृत है। भोजपुरी के मुख्य पाँच रूप बताये गये हैं। (१) शुद्ध भोजपुरी, (२) पश्चिमी भोजपुरी, (३) नागपुरिया, (४) मधेसी और (५) थारू। शुद्ध भोजपुरी बिहार प्रान्त के अन्दर केवल शाहाबाद और सारन जिले में तथा पलामू जिले के कुछ हिस्सों में और युक्तप्रांत के अन्दर बलिया, गाजीपुर (पूर्वी आधा) तथा गोरखपुर (सरयू और गण्डक के बीच) में बोली जाती है। पलामू और दक्षिण शाहाबाद के खरवार जाति के लोगों द्वारा बोली जानेवाली भोजपुरी को 'खरवारी' कहा जाता है। पश्चिमी भोजपुरी बिहार में नहीं बोली जाती। यह फैजाबाद, आजमगढ़, जौनपुर, बनारस, गाजीपुर (पश्चिमी भाग) और मिरजापुर (दक्षिणी भाग) में बोली जाती है। नागपुरिया छोटानागपुर की, खासकर राँची की, भोजपुरी को कहते हैं। इस पर विशेषकर मगही का और कुछ पश्चिम की छत्तीसगढ़ी का प्रभाव है। इसमें अनार्य भाषाओं के शब्द भी आये हैं। इसे सदान या सदरी भी कहा जाता है। मुण्डा लोग इसे 'दिक्कु-काजी' कहते हैं, अर्थात् दिक्कुओं यानी आर्यों की भाषा कहते हैं। रेवरेण्ड ई० एच्० हिटली ने 'नोट्स ऑन नागपुरिया हिन्दी' नामक किताब में लिखा है—**"चम्पारन की भोजपुरी को 'मधेसी' कहा जाता है। मैथिली और भोजपुरी-भाषा-भाषी प्रान्तों के बीच पड़ने के कारण इस बोली का नाम 'मध्यदेशीय' या**

१. पहाड़ी बोलियों को डॉ० चटर्जी ने भी राजस्थानी का रूपान्तर माना है, पर उनको निश्चित रूप से किसी वर्ग में रखना बाबू श्यामसुन्दर दास ने नहीं मानकर, उनको एक अलग वर्ग में रखना ही उचित समझा है।

२. देखिए—'भाषा-रहस्य', पृष्ठ २०५–२०६, द्वितीय संस्करण, वि० सं० २००७।

'मधेसी' पड़ा। 'थारू' बिहार प्रांत के अन्दर चम्पारन जिले के उत्तर-पश्चिम कोने पर और उसके बाहर यहाँ से लेकर बहराइच तक की नैपाल की तराई में बोली जाती है। थारू एक जाति का नाम है, जो द्राविड़ श्रेणी की है। यह जाति हिमालय की तराई में रहती है। इसकी अपनी कोई भाषा नहीं है। इस जाति के लोग जिस स्थान में रहते है, उस स्थान के पास की आर्य-भाषा से विकसित बोली ही बोलते हैं। चम्पारन के थारू लोगों की बोली एक तरह की भोजपुरी ही है।"

भोजपुरी के उपर्युक्त उपभेदों का वास्तव में कोई व्यावहारिक महत्त्व नहीं है। ये उपभेद भोजपुरी के उच्चारण, बलाघात आदि कारणों तथा क्रियाओं और शब्दों में थोड़े नगण्य भेदों के आधार पर ही निर्भर हैं।

उक्त पाँचों भेदों के व्याकरण, नियम, मुहावरे सभी एक हैं। लोकोक्तियाँ, गीत, साहित्य, पहेली तथा उनकी भाषा सब एक हैं। कहीं-कहीं उच्चारण-भेद पर ही एक भाषा को पाँच भेदों में बाँटना ध्येय हो, तो केवल शाहाबाद में ही तीन भेदों का उल्लेख किया जा सकता है। भभुआ सबडिवीजन और सदर सबडिवीजन के स्थानों की बोली के उच्चारण में आपस में भेद है। वैसे ही बक्सर और दक्षिणी ससराम के निवासियों के उच्चारण में भी भेद सुनाई पड़ता है। तो, इस तरह देखने से तो हर ५० मील पर की बोली के उच्चारण में थोड़ा-बहुत अन्तर आ ही जाता है। इस आधार पर चलने से तो किसी भाषा का रूप ही नहीं निर्धारित हो सकता। सुलतानपुर और प्रतापगढ़ की अवधी एवं लखीमपुर और सीतापुर की अवधी को दोनों जगहोंवाले एक ही अवधी मानते हैं; हालाँकि दोनों में काफी अंतर है। ग्रियर्सन साहब भी रामायण की भाषा को अवधी मानते हैं। पर रामायण की भाषा पर भोजपुरी की भी प्रचुर छाप है। लखीमपुर की अवधी से उसमें पर्याप्त अंतर है। भाषा के विभेद का ऐसा आधार किसी को मान्य नहीं हो सकता। भाषा के रूप के स्थिरीकरण में इस तरह के भेद बिलकुल नगण्य हैं।

[६]

भोजपुरी के शब्द, मुहावरे, कहावतें और पहेलियाँ

(शब्द)

भोजपुरी के शब्द-भांडार की विशालता और व्यापकता का अनुमान इसी से किया जा सकता है कि भोजपुरीभाषी को दिनानुदिन के किसी भी व्यावहारिक विषय पर

अपना मत प्रकट करते समय शब्द की कमी का अनुभव नहीं होता। भोजपुरी में आवश्यकतानुसार संस्कृत या दूसरी भाषाओं से भी जो शब्द उधार लिये जाते हैं, उनका उच्चारण भोजपुरी ध्वनियों के अनुरूप ही होता है। शिकार, लड़ाई, कुश्ती, अस्त्र शस्त्र, कला कौशल, व्यवसाय, यात्रा, गृहस्थी अथवा पशु-पक्षी आदि के जीवन से सम्बन्ध रखनेवाले विभिन्न विषयों के शब्दों से भोजपुरी का कोष भरा पड़ा है। पक्षियों और जानवरों के नाम, उनकी हर एक अदा, उनके उड़ने का एक-एक ढंग, उनके फँसाने तथा शिकार के साधन आदि वस्तु विशेष के अनेक नाम भोजपुरी में मौजूद हैं। यदि भोजपुरी का शब्द-कोष तैयार किया जाय, तो उससे हिन्दी के कोष की भी पर्याप्त वृद्धि होने की सम्भावना है। भोजपुरी में शब्दों की बहुलता देखनी हो, तो बिहार के सन्त-कवि बाबा धरनीदास की एक कविता में आये हुए शब्दों में भिन्न-भिन्न अवस्था और रूप की गायों के लिए अलग अलग नामों को देखना चाहिए। जैसे—गाय के विभिन्न रंग-रूप के लिए उनकी कविता में निम्नलिखित शब्द मिलते हैं—'बहिला', 'गाभिन', 'बाछी', 'लेरू', 'बछरू', 'लाली', 'गोली', 'धबरी', 'पिअरी', 'कजरी', 'सँवरी', 'कबरी', 'टिकरी', 'सिंगहरी' आदि। इसके अलावा अवस्थाविशेष के अनुसार भी गाय के अनेक नाम हैं—यथा, विना ब्याई गाय जो साँड़ के पास जाने योग्य हो गई है, उसे 'कलोर' कहते हैं; गर्भाधान के तुरत बाद की गाय 'बरदाई' कहलाती है; जो समय पर बच्चा देने के पूर्व ही बच्चा गिरा देती है, उसे 'लड़ाइल' कहते हैं; जो दूध देती रहती है, उसे 'धेनु' कहते हैं; जो बहुत दिन की ब्याई होती है और अपने बच्चे के बड़े होने तक दूध देती रहती है, उसे 'बकेन' कहते हैं। जो गाय दूध देना बन्द कर देती है, उसे 'नाठा' या 'बिसुखी' कहते हैं; इसी तरह पहले बियान की गाय को 'अँकरे' या 'आँकर' कहते हैं। दूहने के समय लतारनेवाली या चरने के समय चरवाहे को हैरान करनेवाली गाय 'हरहीं' कहलाती है।

इसी प्रकार संज्ञा के लिए थोड़े-थोड़े भेदों के साथ कई शब्द हैं। जैसे—एक लाठी के विविध प्रकार होते हैं और उनके लिए भी अनेक शब्द व्यवहृत होते हैं। उदाहरण के तौर पर—'लऊर', 'लऊरि', 'पटकन', 'बोंग', 'गोजी', 'बासमती', 'लोहबाना' आदि। आकार में कुछ छोटी, किन्तु मोटी लाठी के लिए—'डंटा', 'सोंटा', 'ठेंगा', 'दुखहरन', 'दुखभंजन' आदि।

एक क्रियापद के लिए भी भोजपुरी में अनेक शब्द हैं। जैसे कपड़े धोने के लिए—'फींचना', 'कचारना', 'खँघारना', 'धोना', 'मिचकारना' आदि। इसी तरह बर्तनों को साफ करने के लिए भी—'माँजना', 'खँघारना', 'अमनिया करना', 'धोना' आदि। अन्न साफ करने के लिए—'फटकना', 'पँइचना', 'हलोरना', 'अमनिया करना', 'अँइटना',

'झटकारना' आदि। पशु-पक्षियों की बोली, भोजन, चाल, रहन-सहन, मैथुन-कर्म आदि के लिए भी अलग-अलग अनेक शब्द हैं। इनके शब्दकोष जब तैयार होंगे, तब हिन्दी और भी गौरवान्वित एवं धनी हो जायगी। भोजपुरी में प्राचीन और आधुनिक पारिभाषिक शब्द बने हैं तथा बनते जा रहे हैं। उनका संग्रह होने से भी हिन्दी के पारिभाषिक शब्दकोषों के लिए अनेक बने-बनाये तथा प्रचलित नये शब्द मिल जायेंगे।

(मुहावरा)

मुहावरों के निर्माण और प्रयोग में भी भोजपुरी की क्षमता विलक्षण है। डॉ० उदयनारायण तिवारी द्वारा संगृहीत पाँच हजार भोजपुरी मुहावरों का प्रकाशन हो चुका है*। आज भी भोजपुरीभाषियों के कंठ में अगणित ऐसे मुहावरे हैं, जिनका संग्रह और प्रकाशन शेष है। प्रस्तुत पुस्तक में प्रकाशित बहुत-सी कविताओं में अनेक भोजपुरी मुहावरे प्रयुक्त हुए हैं, जिनकी व्याख्या और पादटिप्पणी यथास्थान कर दी गई है। ऐसे भी बहुत-से मुहावरे हैं, जिनके जोड़ के मुहावरे हिन्दी में नहीं पाये जाते हैं। भोजपुरी मुहावरों में दो-टूक बात व्यक्त करने की अद्भुत शक्ति है। भोजपुरियों के अक्खड़ स्वभाव के कारण उनके बहुत-से मुहावरे कुछ अश्लील भी होते हैं; पर वे इतने ठेठ और ठोस होते हैं कि उनकी टक्कर का शिष्ट मुहावरा खोज निकालना कठिन है। उनमें व्यंग्य की चुभन बड़ी तीखी होती है और दिल पर गहरी चोट करती है। यदि भोजपुरी के शब्दकोष की तरह 'मुहावरा-कोष' भी तैयार हो, तो हिन्दी को बहुत-से नये मुहावरे मिल जायेंगे।

(कहावत)

भोजपुरी में कहावतों की निधि बहुत समृद्ध है। हिन्दी के प्रायः सभी लोकोक्तियों के भोजपुरी रूप भी मिलते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य निकटवर्त्ती भाषाओं में कई लोकोक्तियों के भोजपुरी रूप भी पाये जाते हैं। भोजपुरी की एक खूबी यह भी है कि वह अपनी इन पुरानी निधियों के अतिरिक्त युगधर्म, परिस्थिति तथा सामयिक घटनाओं के आधार पर भी नित्य नई नई लोकोक्तियों का निर्माण करती जाती है, जिनका व्यापक प्रयोग भोजपुरी भाषा-क्षेत्र में सामूहिक रूप से होने लगता है।

भोजपुरी लोकोक्तियों के संग्रह की ओर अभी उचित प्रयत्न नहीं हुआ है। सन् १८८६ ई० में, 'हिन्दुस्तानी लोकोक्ति-कोष' नामक पुस्तक में, जिसे बनारस से लाला

* देखिए—प्रयाग की हिन्दुस्तानी एकाडमी से प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी' (सन् १९४० ई०, भाग १०, अंक २, ४ ; और सन् १९४१ ई०, भाग ११, अंक १) के अंक।

फकीरचन्द आदि ने निकाला था, पृष्ठ २७४ से आगे भोजपुरी लोकोक्तियों का संग्रह है। डॉ० उदयनारायण जी ने भी २००० भोजपुरी-लोकोक्तियों को हिन्दुस्तानी एकाडमी की 'हिन्दुस्तानी' नामक पत्रिका में छपवाया था[1]। भोजपुरी प्रदेश में ऐसे अनेक व्यक्ति मिलते हैं, जो प्रत्येक वाक्य में एक-न-एक लोकोक्ति कहने की पटुता रखते हैं। खेती, आनन्द, उत्सव, शोक, व्यवसाय, दवा-दारू, जानवरों की पहचान, लड़ाई, अध्यात्म, प्रेम, नीति आदि जितने लौकिक-पारलौकिक व्यावहारिक विषय हैं, सबके सम्बन्ध में भोजपुरी-लोकोक्तियाँ प्रचुर मात्रा में वर्त्तमान हैं।

(१) **'कइल के दाम गइल'**

(पीत रंगमिश्रित धवल रंग के बैल शिथिल और आलसी होते हैं, इसलिए खरीदने में खर्च की गई रकम बेकार जाती है।)

(२) **'गहि के धरीं हर, ना तऽ आरी बइठीं"**

(खुद खेत जोतो, नहीं तो मेड़ पर भी बैठकर जोतवाओ, तभी अच्छी खेती होगी।)

(३) **'जो ना दे सोना, से दे खेत के कोना।**

(जो धन सोने से भी नहीं मिलता है, वह खेत के एक कोने से मिलता है।)

(४) **'सइ पूरा चरन नु एक हूरा चरन'**

(सौ बार निहोरा-बिनती करने से जो काम होता है या नहीं भी हो सकता है, वह एक ही बार के लाठी के प्रभाव से हो जाता है।)

[लाठी के जमीन पर रखे जानेवाले हिस्से को भोजपुरी में 'हूरा' कहते हैं।]

(पहेली)

पहेलियों के लिए भी कहावतों के समान ही भोजपुरी भाषा धनाढ्य है। भोजपुरी में पहेलियों को 'बुझौवल' कहते हैं। संस्कृत-भाषा में पहेली का जो भेद-निरूपण आचार्यों[2] ने किया है, उसके अनुसार यदि भोजपुरी बुझौवलों की परीक्षा की जाय, तो सभी भेदों के उदाहरण उनमें मिल जायँगे। यही नहीं, भोजपुरी में अध्यात्म-विषयक भी पहेलियाँ हैं। आज से प्रायः तीन सौ वर्ष पूर्व के बिहार के सन्तकवि 'धरनीदास' के 'शब्दप्रकाश' में भी 'पेहानी-प्रसंग' शीर्षक के अन्तर्गत अध्यात्म-पक्ष-सम्बन्धी भोजपुरी पहेलियाँ मिलती हैं। 'कबीर' और 'धरमदास' ने भी गीतों

१. देखिए—अप्रैल-जुलाई, १६३६ ई० का अंक।

२. "रसस्य परिपन्थित्वान्नालङ्कारः प्रहेलिका।
उक्तिवैचित्र्यमात्रं सा च्युतदत्ताक्षरादिका।।" (—साहित्यदर्पण)
"क्रीडागोष्ठीविनोदेषु तज्ज्ञैराकीर्णमन्त्रणे।
परव्यामोहने चापि सोपयोगा प्रहेलिका।।" (—काव्यादर्श)

के रूप में बुझौवल और दृष्टकूट कहे हैं। डॉ० उदयनारायण तिवारी ने अक्टूबर, दिसम्बर, १९४२ ई० की 'हिन्दुस्तानी'-पत्रिका (अङ्क ४, भाग १२) में प्रचुर संख्या में भोजपुरी-पहेलियों का संग्रह प्रकाशित कराया था। क्या ही अच्छा होता, यदि कोई धुन का पक्का भोजपुरी अपनी मातृभाषा की इन छिपी निधियों को खोज कर प्रकाश में लाता।

उदाहरण देखिए—

एक ब्राह्मण राही कुँए के पास बैठकर सत्तू खा रहा था। गाँव की एक पनिहारिन पानी भर कर घड़ा उठाने लगी। इतने में ब्राह्मण ने कहा—

(क) जेकर सोरि पताले खीले, आसमान में पारे अंडा।
ई बुझौलिया बूझि के तऽ, गोरी उठावऽ हंडा॥

अर्थात्—जिसकी जड़ पाताल में पैठी हुई है और जो आसमान में अंडे देता है, वह क्या है? हे गोरी! इस बुझौवल का उत्तर देकर तो घड़ा उठाओ।

इस पर पनिहारिन ने प्रश्न के रूप में इस पहेली का उत्तर देते हुए इसी आशय की दूसरी पहेली कह सुनाई—

(ख) बाप के नाँव से पूत के नाँव, नाती के नाँव किछु अवर।
ई बुझौवल बूझि के तऽ, पाँड़े उठावऽ कवर॥

अर्थात्—जो बाप का नाम है, वही बेटा का भी है; मगर पोते का नाम कुछ और ही है। ऐ पाँड़े जी, इस बुझौवल का अर्थ बताकर तो कवल (कौर) उठाइए। (पनिहारिन ने ब्राह्मण की पहेली का उत्तर अपनी पहेली में दे दिया और ब्राह्मण के सामने एक नई पहेली भी खड़ी कर दी)।

पास खड़ा तीसरा व्यक्ति एक नई पहेली कह कर दोनों पहेलियों का उत्तर देता है—

(ग) जे के खाइ के हाथी माते, तेली लगावे घानी।
ऐ पाँड़े तूँ कवर उठावऽ गोरी उठावसु पानी॥

अर्थात्—जिसको खाकर हाथी भी मतवाला हो जाता है और जिसको तेली कोल्हू में घानी डालकर पेरता है, वही दोनों पहेलियों का उत्तर है। इसलिए हे ब्राह्मण, तुम अपना कवल उठाओ और हे गोरी! तुम अपना घड़ा उठाओ।

इन तीनों पहेलियों का अर्थ 'महुआ' (मधूक वृक्ष) है। पेड़ और फूल का नाम एक ही है, किन्तु फल का नाम भोजपुरी में 'कोइन' है, जिसको पेर कर तेली तेल निकालता है और फूल को खाकर हाथी भी मतवाला हो जाता है। महुए के फूल से शराब भी बनती है। अब पाठकों को उपर्युक्त भोजपुरी-पहेली की खूबी और बारीकी स्पष्ट मालूम हो गई होगी।

भोजपुरी की कई पहेलियों में छन्द, लय और अनुप्रास की भी बहार देखने को मिलती है। जैसे—

(२) एक चिरइयाँ लट, जेकर पाँख बाजे चट।
ओकर खलरी ओदार, ओकर माँस मजेदार॥

अर्थात्—लट के समान लम्बी और पतली या लसदार एक चिड़िया है, जिसके पंख 'चट-चट' बजते हैं और उसकी खाल उधेड़ने पर मांस स्वादिष्ठ होता है।

इस पहेली का अर्थ है—ईख। अर्थ से सभी बातों का मिलान करके समझ लीजिए।

[७]

कहानी-साहित्य

भोजपुरी के कहानी-साहित्य को हम दो कोटियों में बाँट सकते हैं—(१) लोक-कहानी और (२) सांस्कृतिक कहानी। लोक-कहानियों में भी सांस्कृतिक कहानियों का समावेश हुआ है और जन-कण्ठों में बसकर वे आज इस तरह घुल-मिल गई हैं कि वे अपने मूल रूप के ढाँचे को बनाये रखने पर भी शैली में बहुत-कुछ बदल गई हैं। जो सांस्कृतिक कहानियाँ धर्म-ग्रन्थों, संस्कृत के कथा-ग्रन्थों और पाली के जातकों पर आधारित होकर जन-कण्ठों में व्याप्त हो गई हैं, उनका वर्गीकरण करना और इतिहास ढूँढना यद्यपि बड़ा कठिन कार्य है, तथापि यदि प्रयत्न किया जाय, तो बहुत-कुछ सफलता इस दिशा में मिल सकती है। जन-कण्ठों में बसी कुछ कहानियाँ इतनी प्राचीन हैं कि उनकी किसी अन्य भाषा की कहानियों से तुलना करने पर उनमें केन्द्रीय एकता मिलती है, जिसके कारण स्पष्टतः उन्हें दो नहीं, बल्कि किसी एक ही मूल कहानी के रूपान्तर-मात्र कहना उचित होगा।

'मित्रलाभ' की 'काक, शृगाल और मृग' नामक कहानी मुझे बचपन में एक बूढ़े से सुनने को मिली थी, जो भोजपुरी भाषा में थी तथा जिनके अन्त में भोजपुरी का यह पद्य था—

सिअरा सिवराति करे, काटे ना पारही[१]।
इअरन[२] में छल करे, बाजे[३] कुलहारी॥

पाली भाषा की 'सिद्ध जातक' की कहानी भोजपुरी में 'ठठपाल' की कहानी के नाम से मिलती है। उस भोजपुरी कहानी के अन्त में यह पद्य है—

१. दाँत। २. दोस्तों। ३. (कुल्हाड़ी की) चोट लगी।

बिनिया करत लछिमिनियाँ के देखलीं
हर जोतत धनपाल।
खटिया चढ़ल हम अम्मर के देखलीं
सभसे नीमन ठठपाल॥

कहानी का सारांश यह है कि 'ठठपाल' ने अपने गुरु से अपना नाम बदलने को कहा था। गुरु ने कहा कि केवल सुन्दर नाम से कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। वास्तव में गुण और भाग्य अच्छा होना चाहिए। ठठपाल के हठ करने पर गुरु ने कहा— जाओ, कुछ लोगों का नाम पूछ आओ। ठठपाल आगे बढ़ा, तो गोबर के कंडे बिननेवाली का नाम 'लछिमिनिया' और हल जोतनेवाले का नाम 'धनपाल' तथा मरे हुए आदमी का नाम 'अमर' सुना। इसी पर ठठपाल ने आग्रह छोड़ कर गुरु से जाकर उपर्युक्त पद्य कहा।

एक कहानी मुझे भोजपुरी में ऐसी मिली, जो मथुरा जिले के व्रजभाषा-क्षेत्र में भी प्रचलित है। वह है—मैना पक्षी की कहानी। वह कहानी भोजपुरी में भी पद्य-बद्ध है, जिसका एक पद्य इस प्रकार है—

"राजा-राजा बढ़ई दंडऽ, बढ़ई न खूँटा चीरे।
खूँटा में मोर दाल बा, का खाओं का पिओं का लेके परदेस जाओं॥"

इस तरह की गद्य-पद्यमय भोजपुरी में अनेक कहानियाँ हैं। सबसे बड़ी विशेषता भोजपुरी कहानियों की यह है कि गद्य के साथ-साथ वे पद्य-बद्ध भी होती हैं। प्रेम, करुणा, वाणिज्य-व्यापार, युद्ध, बुद्धि-चातुर्य, साहस, देश-विदेश-यात्रा और बहादुरी की की कहानियाँ भोजपुरी में बहुत अधिक हैं। किन्तु खेद है कि आज तक वह अपार लोक-कथा-साहित्य केवल जन-कंठ में ही बसा हुआ है। यदि वह आज लिखित अथवा मुद्रित रूप में होता, तो किसी भी भाषा के कथा-साहित्य से कम रोचक, आकर्षक और विशाल न होता।

[८]

व्याकरण की विशेषता

भोजपुरी व्याकरण की सबसे बड़ी खूबी यह है कि इसके नियम जटिल नहीं हैं। इसमें सामयिक प्रयोग बराबर आते रहते हैं। ग्रियर्सन साहब ने इन विशेषताओं को स्वीकार कर भोजपुरी व्याकरण की प्रशंसा की है। उनका कहना है[१]—"इसके विशेषणों के

१. ग्रियर्सन-कृत 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ् इण्डिया' (पाँचवीं जिल्द)

प्रयोग में लिंग का विचार बँगला-भाषा की तरह बहुत कम रखा जाता है। इसकी सहायक क्रियाएँ तीन हैं, जिनमें दो का तो प्रयोग बँगला में पाया जाता है; पर हिन्दी में उनका प्रयोग नहीं मिलता। मोटे तौर पर व्याकरण के स्वरूपों को मापदण्ड मानकर बिहारी भाषाएँ (भोजपुरी, मैथिली और मगही) पश्चिमी हिन्दी और बँगला—दोनों के बीच का स्थान रखती हैं। उच्चारण में इनका रुझान हिन्दी से अधिक मिलता-जुलता है। कारक के अनुसार संज्ञा के रूप-भेद में ये कुछ अंशों में बँगला का अनुकरण करती हैं और कुछ अंशों में हिन्दी का। परन्तु सबसे बड़ी बात बिहारी भाषाओं की यह है कि इनके उच्चारण में जो विलम्बित स्वर-ध्वनि है, उसमें ये एकमात्र बँगला का अनुकरण करती हैं, हिन्दी का नहीं।"

भोजपुरी व्याकरण की मगही और मैथिली के साथ तुलना करके ग्रियर्सन साहब ने लिखा है[१]—**"क्रिया का काल के अनुसार रूप-परिवर्त्तन का नियम मगही और और मैथिली में जटिल है, पर भोजपुरी में यह उतना ही सादा और सीधा है, जितना कि बँगला और हिन्दी में है।"**

भोजपुरी व्याकरण लिखने की ओर सबसे पहला प्रयत्न मिस्टर जॉन बिम्स ने किया था। वह सन् १८६८ ई० में 'रॉयल एशियाटिक सोसाइटी' के जर्नल (पृष्ठ ४८३–५०८) में प्रकाशित हुआ था। इसके बाद मिस्टर जे० आर० रेड ने आजमगढ़ के १८७७ ई० के सेट्लमेंट रिपोर्ट के अपेंडिक्स, नं० २ में भोजपुरी भाषा और उसके व्याकरण की रूप-रेखा देने का प्रयत्न किया था। फिर सन् १८८० ई० में मि० हॉर्नले ने अपना 'कम्परेटिव ग्रामर ऑफ् दि गार्जियन लैंग्वेजेज़' नामक निबन्ध प्रकाशित कराया। इसके बाद डॉ० जी० ए० ग्रियर्सन' ने भोजपुरी व्याकरण का वैज्ञानिक ढंग से अनुसंधान किया। इनकी 'भोजपुरी ग्रामर' नाम की एक अलग पुस्तक ही छपी है। फिर 'बिहार-उड़ीसा की रिसर्च सोसाइटी' की पत्रिका (सं० ४१ और २१, भाग ३) में 'ए डायलेक्ट ऑफ् भोजपुरी' नाम से भोजपुरी व्याकरण पर पं० उदयनारायण तिवारी का बृहत् लेख छपा। उसके बाद से आज तक और भी अधिक प्रयत्न तथा अनुसंधान करके उन्होंने 'भोजपुरी भाषा और साहित्य' पर डॉक्टरेट के लिए महा-निबन्ध लिखा, जिसमें वैज्ञानिक और पाण्डित्यपूर्ण रीति से विषय का प्रतिपादन किया है।

पटना-विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष डॉ० विश्वनाथ प्रसाद ने भी विदेश जाकर भोजपुरी के ध्वनि-विज्ञान (फोनिटिक्स) पर बृहत् थीसिस लिखकर

१. ग्रियर्सन-कृत 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ् इण्डिया' (पाँचवीं जिल्द)

डॉक्टर की उपाधि ली है। इस दिशा में उनका यह परिश्रम बहुत ही महत्त्वपूर्ण और नूतन है। साथ ही, इस ओर कदम उठानेवाले वे ही प्रथम व्यक्ति हैं। वे बिहारी भाषाओं के विषय में अन्यान्य प्रकार की खोज भी 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्' के तत्त्वावधान में करा रहे हैं।

भोजपुरी में छोटे बड़े लोगों के लिए स्नेह और आदर के अनेक सम्बोधन हैं। इसके सिवा संज्ञा और विशेषण के शब्दों को क्रिया के रूप में परिवर्त्तित करने की पूर्ण सुगमता है। 'ही' और 'भी' का संकेत भी केवल मात्रा से हो जाता है। कहीं-कहीं कारक के चिह्नों के लिए भी मात्रा के संकेत से ही काम लिया जाता है। ये विशेषताएँ हिन्दी में नहीं पाई जातीं।

[६]

भोजपुरी गद्य का इतिहास

भोजपुरी गद्य के सम्बन्ध में लोगों की यह गलत धारणा है कि इसका प्रचार कम है अथवा था। भोजपुरी के पद्य का इतिहास जितना पुराना है, उससे भी पुराना भोजपुरी गद्य का अस्तित्व है। भाषा में पहले गद्य का जन्म होता है। जब गद्य प्रौढ़ हो जाता है, तब पद्य चलता है। यह बात दूसरी है कि गद्य में साहित्य लिखने की प्रथा पहले कम थी। इसीलिए उसका सांस्कृतिक विकास वैसा नजर नहीं आता, जैसा पद्य का। इसी से गद्य का इतिहास, पद्य के इतिहास की तुलना में, प्रारंभिक काल में विकसित नहीं पाया जाता।

वज्रयान सम्प्रदाय के सिद्धों के ग्रन्थों को देखने से पता लगता है कि भोजपुरी का आदि रूप कैसा था। डॉक्टर हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का मत है कि सिद्धों की कविता की भाषा वह भाषा है, जिसमें आज के सभी पूर्वी भाषाओं का आदि रूप पाया जाता है और उन सभी भाषाओं के विद्वानों को उन भाषाओं के साहित्यिक विकास के इतिहास का प्रारम्भ इन्हीं सिद्ध कवियों से मानना पड़ता है।[१]

भोजपुरी गद्य का सबसे पुराना और अकाट्य प्रमाणवाला लिखित रूप 'भारतीय विद्या-मन्दिर' (बम्बई) के सञ्चालक श्रीजिनविजयजी के यहाँ प्राप्त १२वीं सदी के लिखे हुए व्याकरण-ग्रन्थ 'युक्ति व्यक्ति-प्रकरण' में मिलता है। डॉ० मोतीचंद्रजी ने 'सम्पूर्णानन्द-अभिनन्दन-ग्रन्थ'[२] के अपने 'काशी की प्राचीन शिक्षा-पद्धति और पण्डित' नामक लेख (पृ० ३९) में इस पुस्तक का उल्लेख करते हुए पुस्तक के

१. देखिए—'नाथ-सम्प्रदाय', पृ० १९६ (प्रकाशक—हिन्दुस्तानी एकाडमी, प्रयाग)
२. प्रकाशक—नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी।

लेखक श्रीदामोदर शर्मा का बारहवीं सदी (सन् ११३४ ई०) में वर्त्तमान होना सिद्ध किया है। उन्होंने कई प्रमाण देते हुए लिखा है—"ग्रन्थ में आये प्रकरणों से पता चलता है कि ग्रन्थ के लेखक पंडित दामोदर 'गोविन्दचन्द्र' के समकालीन थे।"

'युक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' के अनुसार गहड़वाल के युग में बनारस की शिक्षा का उद्देश्य था—"वेद पढ़ब, स्मृति अभ्यासिब, पुराण देखबि, धर्म करब।" (१५/१६-१७)। उक्त वाक्य में भोजपुरी का रूप स्पष्ट है। उद्धरण में डॉक्टर मोतीचन्द्र ने युक्तप्रान्त के पूर्वी जिलों की भाषा के लिए 'अवधी' नाम दिया है। उन्होंने बनारस तथा उसके आस पास की भाषा का 'युक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' से उदाहरण दिया है। पर बनारस की भाषा अवधी नहीं, बल्कि पश्चिमी भोजपुरी है और जो रूप भाषा का उक्त ग्रन्थ से उद्धृत है, वह भी पश्चिमी भोजपुरी का ही शुद्ध रूप है। अतः उक्त पुस्तक के उपर्युक्त उदाहरणों को हमें बारहवीं सदी में प्रचलित भोजपुरी का रूप मानना होगा। डॉ० ग्रियर्सन, डॉ० श्यामसुन्दर दास तथा अन्य विद्वानों ने भी बनारस तथा उसके आस-पास की बोली को भोजपुरी ही माना है।

ईसा के बारहवीं सदी के बाद से सन् १६२० ई० तक की अवधि में भोजपुरी गद्य का लिखित उदाहरण मुझे अबतक प्राप्त नहीं हो सका। किन्तु सन् १६२० ई० से वर्त्तमान काल तक के भोजपुरी गद्य के लिखित रूप के उदाहरण हमारे पास मौजूद हैं। शाहाबाद के 'परमार उज्जैन' राजाओं द्वारा विभिन्न अवसरों पर निकाली गई राजाज्ञाओं, सनदों, पत्रों और दस्तावेजों में सदा भोजपुरी व्यवहृत हुई है। इन सबके वैज्ञानिक अध्ययन से भोजपुरी गद्य का इतिहास, उसके विविध समय के प्रयोगों और भेदों के साथ, बहुत सुन्दर रूप से लिखा जा सकता है। उक्त अवधि का कोई भी राजकीय कागज ऐसा अबतक नहीं प्राप्त हुआ है, जिसमें विशुद्ध भोजपुरी का प्रयोग न किया गया हो। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से भी इन पुराने कागजों का अध्ययन, जिनकी प्रामाणिकता सिद्ध है, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होगा। उनमें से कुछ के फोटो यहाँ हम दे रहे हैं।

लिपि—कई लोगों की धारणा है कि भोजपुरी की अपनी कोई लिपि नहीं है। यह गलत बात है। इसकी भी अपनी लिपि है, जिसे 'कैथी' कहते हैं। ग्रियर्सन साहब ने कैथी लिपि के नमूनों को अपने 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ् इण्डिया' (भाग ५) में उद्धृत किया है। कैथी लिपि बहुत प्राचीन काल से मध्यप्रदेश में व्यवहृत होती है। केवल भोजपुरी के लिए ही नहीं, बल्कि हिन्दी की पुरानी पोथियों की भी, प्रतिलिपि करने के लिए, कैथी लिपि का ही प्रयोग प्रायः होता था।

कैथी को इस प्रदेश के प्रायः सभी प्रमुख राजघरानों में प्रथम स्थान प्राप्त था और उनके सभी राजकीय कार्य कैथी में होते थे। सरकारी कागज तथा मामले-मुकदमों के कागजों में भी कैथी के व्यवहार का स्थान आज भी प्रथम है। सनद, दान-पत्र, दस्तावेज इत्यादि भी कैथी लिपि और भोजपुरी गद्य में लिखे जाते थे। शिला-लेख तथा बड़े-बड़े खजानों के ताम्र-पत्र पर अङ्कित होनेवाले बीजक भी देवनागरी लिपि में न लिखे जाकर भोजपुरी गद्य और कैथी लिपि में ही लिखे जाते थे।

झारखंड के राँची आदि भोजपुरी-भाषी जगहों में आदिवासियों की समाधि पर के शिला लेख भोजपुरी भाषा और कैथी लिपि में कहीं-कहीं पाये जाते हैं। प्रयाग में भी जो उज्जैन-क्षत्रियों के पण्डे हैं, उनके यहाँ शाहाबाद जिले के 'भोजपुर' 'जगदीशपुर', 'नोखा' आदि जगहों के उज्जैन राजाओं की लिखी हुई कई सनदें देखने को मुझे मिली हैं। वे सनदें भी भोजपुरी भाषा और कैथी लिपि में है। इन सबकी कैथी वर्त्तमान कैथी से कुछ भिन्न है।

[१०]

भोजपुरी का काव्य-साहित्य

भोजपुरी-काव्य-साहित्य का भाण्डार कम विशाल नहीं है। जिस भाषा को साढ़े तीन करोड़ नर-नारी, तेरह-चौदह सौ वर्षों से भी अधिक समय से, अपनी मातृभाषा के रूप में बोलते आते हों, उस भाषा का अपना साहित्य न हो, यह कल्पना करना ही भ्रान्तिमूलक है। भोजपुरी साहित्य का जैसे-जैसे अन्वेषण होता जाता है, वैसे-वैसे उसकी निधियाँ सामने आती जा रही हैं। सर्वप्रथम अँगरेज-विद्वानों का ध्यान भोजपुरी भाषा और उसकी साहित्यिक खोज की ओर गया। उन्होंने लोकगीत तथा वीरगाथा गीतों का संक्षिप्त सङ्कलन यदा-कदा पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित किया और अन्त में ग्रियर्सन साहब ने अपनी गहरी खोज के फलस्वरूप भोजपुरी साहित्य का विवरण प्रकाशित किया। किन्तु वह उतना ही पर्याप्त नहीं था। इसके पश्चात् कतिपय भारतीय अन्वेषकों की रुचि इधर हुई। उन्होंने अँगरेजों की दिखाई राह पर, कुछ थोड़ी विशेषताओं के साथ, ग्राम-गीतों का पुस्तकाकार सङ्कलन आरम्भ किया। इस दिशा में दो प्रामाणिक पुस्तकें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से सन् १६४४ ई० में 'भोजपुरी लोकगीत में करुण-रस'[१] तथा उसके बाद 'भोजपुरी ग्राम-गीत'[२] (भाग १ और २)

१. संकलनकर्त्ता — श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह।
२. " " — डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय।

नाम से प्रकाशित हुईं। पण्डित रामनरेश त्रिपाठी ने भी भोजपुरी ग्राम-गीतों का संग्रह और प्रकाशन करने में अभिनन्दनीय प्रयत्न किया है। भोजपुरी लोक-साहित्य पर उनकी दो पुस्तकें हिन्दी संसार में पूर्ण प्रसिद्ध हो चुकी हैं।

भोजपुरी लोक-साहित्य की खोज अभी एक तरह से प्रारम्भ ही हुई है। जब यह पूरी होगी, तब इसका भी विशाल भाण्डार पाठकों के सामने उसी मात्रा में उपस्थित हो सकेगा, जिस मात्रा में हम हिन्दी तथा इसकी भगिनी भाषाओं के भाण्डार को भरा-पूरा पाते हैं।

इतिहास—जिस तरह हिन्दी-साहित्य का इतिहास मुख्यतः हिन्दी काव्य का इतिहास है, उसी तरह भोजपुरी-साहित्य का इतिहास भी मुख्यतः भोजपुरी काव्य का इतिहास है। चूँकि भोजपुरी-साहित्य के जन्म तथा विकास का समय हिन्दी-साहित्य के काव्य के इतिहास से मिलता-जुलता है तथा भोजपुरीभाषी भी उसी प्रदेश में बसते हैं, जिससे हिन्दी का इतिहास सम्बन्ध रखता है, इसलिए भोजपुरी काव्य-साहित्य का काल-विभाजन भी यदि उसी तरह किया जाय, तो विशेष सुविधा होगी। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने 'हिन्दी-साहित्य के इतिहास' में, प्रथम पृष्ठ पर ही, हिन्दी-साहित्य का काल-विभाग करते हुए लिखा है—

"जब कि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्त्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्त्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परम्परा को रखते हुए साहित्य-परम्परा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही साहित्य का इतिहास कहलाता है। जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है। अतः कारणस्वरूप इन परिस्थितियों का किंचित् दिग्दर्शन भी साथ-ही-साथ आवश्यक होता है। इस दृष्टि से हिन्दी-साहित्य का विवेचन करने में यह बात ध्यान में रखनी होगी कि किसी विशेष समय में लोगों में रुचि-विशेष का संचार और पोषण किधर से किस प्रकार हुआ।"

अपनी इस व्यवस्था के अनुसार उन्होंने हिन्दी का काल-विभाग चार खंडों में इस प्रकार किया है—

१.	आदिकाल (वीरगाथा-काल)	—	विक्रम संवत्	१०५०–१३७५
२.	पूर्वमध्यकाल (भक्ति-काल)	—	" "	१३७५–१७००
३.	उत्तरमध्यकाल (रीति-काल)	—	" "	१७००–१९००
४.	आधुनिक काल (गद्य-काल)	—	" "	१९००

अतः भोजपुरी-साहित्य का काल-विभाजन भी हम इन्हीं चार खंडों में करना उचित मानते हैं। परन्तु इस विभाजन के अनुसार, भोजपुरी-साहित्य के इतिहास का विभाजन करके भी, भोजपुरी-साहित्य की अभी तक पूर्ण खोज न हो सकने के कारण, हम प्रत्येक काल-खंड के सभी कवियों का उल्लेख करने में असमर्थ हैं। अतः उसकी रुचि-विशेष की प्रधानता के अनुसार उसके काल-विभाग का नामकरण करने में भूल की संभावना हो सकती है। इसके अतिरिक्त भोजपुरी-साहित्य के इतिहास के काल-विभाजन में हिन्दी के मुख्य चार काल विभागों को मानने के बाद भी एक और काल-विभाग मानना उचित प्रतीत होता है और वह आदिकाल के पूर्व सन् ७०० से ११ वीं सदी तक का प्रारंभिक अविकसित काल है। इस तरह भोजपुरी-साहित्य के इतिहास को हम मोटे तौर पर निम्नलिखित पाँच काल-विभागों में रख सकते हैं—

१. **प्रारम्भिक अविकसित काल (सिद्ध-काल) सन् ७०० ई० से ११०० ई०**
२. **आदिकाल (ज्ञान-प्रचार-काल तथा वीर-काल) सन् ११०० ई० १३२५ ई०**
३. **पूर्वमध्यकाल (भक्ति-काल) सन् १३२५ ई० से सन् १६५० ई०**
४. **उत्तरमध्यकाल (रीति-काल)—सन् १६५० ई० सन् १९०० ई०**
५. **आधुनिक काल (राष्ट्रीय काल और विकास-काल) सन् १९०० से १९५० ई०**

प्रारम्भिक अविकसित काल (सन् ७०० ई० से ११०० ई०)

प्रारम्भिक अविकसित काल को मैंने सिद्धों का काल कहा है। सिद्धों ने प्राकृत भाषा को छोड़कर उसके स्थान पर देश-भाषाओं को अपनी रचनाओं का माध्यम बनाना शुरू किया। यही वह समय है, जब भोजपुरी अन्य भगिनी भाषाओं की तरह साहित्य में अपनाई जाने लगी थी। श्रीराहुल सांकृत्यायन का मत है कि सिद्धों ने तत्कालीन प्राचीन मान्य साहित्यिक भाषाओं को त्यागकर देशभाषाओं के माध्यम से अपने विचारों को जनता तक पहुँचाना शुरू करके हर प्रकार से देश में क्रान्ति का आन्दोलन जारी किया।[१] यही विचार डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी आदि अन्य विद्वानों का भी है। इस पुस्तक के आरंभ में इन उपर्युक्त कालों के इन बौद्ध सिद्ध कवियों के सम्बन्ध में काफी चर्चा की गई है, जिससे प्रस्तुत विषय पर थोड़ा प्रकाश पड़ा है। वह विद्वानों के लिए द्रष्टव्य और विचारणीय है।

१. देखिए—पुरातत्त्व-निबन्धावली (पृ० १६०), प्रकाशक—इंडियन प्रेस, प्रयाग, सन् १९३७ ई०।

आदिकाल (सन् ११०० ई० से १३२५ ई०)

भोजपुरी का अपभ्रंश के साथ थोड़ा-बहुत मिला हुआ रूप हम गोरखनाथ की रचनाओं में पाते हैं। उनका समय विवादग्रस्त होने हुए भी वह अब ११ वीं सदी का पूर्वार्द्ध माना जाता है। उन्होंने तथा उनके शिष्यों ने भी भोजपुरी को अपनी क्रान्तिकारी विचार-धारा के प्रचार के समय साहित्य की भाषा बनाया। ऐसे महान् नेता और धर्म-प्रवर्त्तक तथा चामत्कारिक योगी के आश्रय में भोजपुरी-साहित्य बहुत आगे बढा और जो जनता अब तक संस्कृतिक विचारों को सुनने तथा कहने के लिए अपभ्रंश का सहारा लेती थी, उसने अब भोजपुरी में ही अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करना शुरू किया। इसी काल में गोरखनाथ के चमत्कारों की तथा राजपूतों की वीरता की कहानी, अन्य साधकों के तंत्र-मंत्र एवं सिद्धियों को लेकर गाथा-गीत आदि रचनाएँ भोजपुरी में आरंभ हुईं। इस काल में राजा भोज की वीरता, दानशीलता, पराक्रम, विद्वत्ता आदि का सिक्का भोजपुरी प्रदेश पर जमा हुआ था और जब राजपूती बहादुरी और आनबान जन-जीवन का आदर्श बन रही थी, तब बलाढ्य प्रकृति-भावनाप्रधान भोजपुरीभाषी प्रदेश की जनता अनेकानेक वीर रस की कविताओं तथा वीर-गाथाकाव्यों की रचना की ओर बढ़ी। उसने अपने जीवन के दैनिक कार्यक्रमों में इनका ऐसा समावेश किया, जिससे उसे जीवन के लिए मनोविनोद के साथ-साथ आदर्श भी प्राप्त हुआ।

सोरठी बृजभार—इसी समय भोजपुरी के प्रसिद्ध वीरगाथा-काव्य 'सोरठी बृजभार' की रचना हुई। अब केवल क्षेपकों के साथ इसका मूल कथानक ही 'पँवारा' के नाम से मिलता है। फिर भी इसमें 'सोरठी' और 'बृजभार' के तीन जन्म की जीवन-गाथा इतनी मार्मिकता से गाई गई है कि चित्त अत्यन्त द्रवीभूत हो जाता है। इसमें रस संचार का ऐसा असाधारण सामर्थ्य है कि भोजपुरीभाषी लगभग चार करोड़ जनसमुदाय आठ नौ सौ वर्षों से इसे गाता-सुनता आ रहा है, फिर भी थका नहीं है। इसमें काव्य की कृत्रिम रूढ़ियाँ भले ही नहीं हों, काव्यशास्त्र द्वारा निर्दिष्ट कौशलों का भी अभाव हो; किन्तु निश्छल हृदय की सरल तरल भावनाओं का उद्दाम प्राण-वेग अवश्य है। इस गाथा-काव्य में समग्र भारत के विभिन्न स्थानों के पात्रों और देशों का समावेश है। गोरखनाथ और उनके यौगिक चमत्कारों, बल पौरुष, ब्रह्मचर्य आदि की बातें आद्योपान्त भरी हैं। जादू टोने की भी बातें खूब हैं। सर्वत्र गोरखनाथ के समय में समाज का चित्र और तत्कालीन मान्यताएँ हैं। वज्रयान-मत की कामुकतापूर्ण सामाजिक एवं साम्प्रदायिक अवस्था का दिग्दर्शन और उस पर गोरखनाथ के ज्ञान-मार्ग की चामत्कारिक घटनाओं की

विजय सर्वत्र दिखाई गई है। एक तरह से इसका प्रधान नायक बृजभार आद्योपान्त गोरखनाथ की छत्रच्छाया में ही अपना कार्य-सम्पादन करता है और कितनी नायिकाओं का उद्धार करके भी अपने ब्रह्मचर्य को बचाये रखता है। इस बृहत् काव्य की मुझे अब तक केवल एक ही मुद्रित प्रति[१] मिल सकी है। इसके अतिरिक्त एक और भी पुरानी छपी प्रति मिली थी, जिसकी भाषा पुरानी और काव्य प्रौढ़ था। पर उसके लेखक, प्रकाशक और उस पुस्तक का अब पता नहीं मिलता।

नयकवा गाथा काव्य—'सोरठी बृजभार' के बाद दूसरा बृहत् गाथा-काव्य वैश्य-समुदाय के पात्रों को लेकर रचा गया है। इसका नाम 'सोभानायक बनजारा' अथवा 'नयकवा' चाहे सिर्फ 'बनजारवा' है। तीनों नामों से यह गाथा-काव्य प्रचलित है। यह काव्य 'गौरा-गुजरात' नामक स्थान के सोभानायक व्यापारी और बलिया जिले के 'बाँसडीह' ग्राम की उसकी पत्नी का आश्रय लेकर लिखा गया है। विवाह करके नायक व्यापार करने चला जाता है, किन्तु नायक की पत्नी स्वयं पत्र लिखकर अपना गौना (द्विरागमन) कराती है। बनजारा जब गौना कराकर पत्नी को घर ले आता है, तब थोड़े दिनों के बाद ही फिर व्यापार करने मोरंग (नेपाल की तराई) देश चला जाता है। वहाँ बंगालिन जादूगरनी उसे रोक लेती है; पर उसकी पत्नी सतीत्व-बल से बहुत तूल-कलाम के बाद उसे छुड़ाकर घर ले जाती है। कथोपकथन और घटनाओं का वर्णन अत्यन्त मनोमोहक है।

इस काव्य में 'सोभानायक' की बहन 'रुपिया' और नाउनि 'चेल्हिया' का पार्ट भी विलक्षण है। नायक बहुत बड़ा व्यापारी था। वह १६०० बर्धा (लादे हुए बैलों) पर ६० लाख का माल लादता था। बारह वर्षों की यात्रा करता था। इस काव्य का भी मूल रूप 'सोरठी बृजभार' की तरह अप्राप्त है। जनता द्वारा गाये जाने के कारण इसके कथानक में हेर-फेर और इसके आकार का छोटा-बड़ा होना स्वाभाविक ही है। इसका जो रूप मिलता है, उसमें अनेकानेक अन्तर हैं। काव्य की अच्छाई-बुराई गायक की प्रतिभा तथा गेय-कुशलता पर निर्भर है। इस काव्य में शृंगार, विरह, वीर आदि रसों की प्रधानता; त्याग, सत्यासत्य की परिभाषा आदि विषयों का सुन्दर वर्णन है। इसके कथानक से इसके रचयिता की प्रतिभा प्रकट होती है। इसमें जादू, टोना, कामुकता और सती के सत के विवरण आद्योपान्त भरे-पड़े हैं। सामाजिक चित्रण से साफ प्रकट हो जाता है कि इसमें वर्णित समाज सन् ११००—

---

१. लेखक—बाबू महादेव सिंह 'घनश्याम' (नाचाप, शाहाबाद); प्रकाशक—ठाकुरप्रसाद बुकसेलर, कचौड़ीगली, बनारस।

१३०० ई० के बीच के समय का है। किन्तु इसमें गोरखनाथ आदि सिद्धों के नाम नहीं आने के कारण इस काव्य को 'सोरठी बृजभार' की परवर्त्ती रचना—यानी १२वीं सदी के अन्त में—माना जा सकता है। इस गीत का प्रचलन विरह और शृंगार-रस की प्रधानता के कारण बहुत अधिक वणिक्-वर्ग में है। इसका प्रकाशन ग्रियर्सन साहब ने जर्मन पत्रिका 'जेड्० टी० एम्० जी०' [XLIII (१८८६ ई०), पृ० ४६८] 'गीत नयकवा' और 'गीत नयकवा बनजारा' नाम से किया था। इसका दूसरा प्रकाशन ठाकुरप्रसाद बुकसेलर (कचौड़ीगली, बनारस) ने 'सोभानायक बनजारा' नाम से किया है। इसके लेखक भी 'सोरठी बृजभार' के ही लेखक महादेव सिंह 'घनश्याम' ही हैं।

यह काव्य बहुत बड़ा है। 'हरदी' (बलिया) ग्राम की 'मुखना देवी' नाम की एक बुढ़िया का कहना है कि रात भर गाने पर भी यह गीत-काव्य पन्द्रह दिनों में पूरा होता है। बुढ़िया के मौखिक गीत काव्य और महादेव सिंह द्वारा छपी पुस्तक में पाठ-भेद है।

लोरिक गाथा-गीत—उपर्युक्त गाथा-काव्य के बाद जो सबसे बड़ा गाथा-गीत लिखा गया है, उसका नाम 'लोरिकी' अथवा 'लोरिकायन' है।[१] यह सबसे अधिक वीर-रस-पूर्ण है। यह एक तरह से अहीर, दुसाध, धोबी आदि जातियों के उस काल का इतिहास रखता है, जिस काल में भोजपुरीभाषी प्रान्त के छोटे-छोटे राज्यों पर उन्हीं का अधिकार था। यह समय १२वीं सदी के बाद से सन् १४०४ ई० तक का है। धार-राज्य के प्रभुत्व के क्षीण हो जाने के बाद इस प्रदेश पर यहाँ के आदिवासियों का प्राबल्य हुआ और वे अपना राज्य पुनः स्थापित करने में समर्थ हुए।

लोरिक गाथा-गीत काव्य का रूपान्तर मगही, मैथिली, और अवधी भाषा में पाया जाता है। इसी 'लोरिकायन' का अवधी-रूपान्तर 'चंदायन' या 'चंदयनी'[२] नामक गाथा काव्य है, जिसके रचयिता उर्दू के कवि मौलाना दाऊद थे। 'चंदयनी' अवधीभाषी प्रदेश के पूर्वी जिलों में बड़े प्रेम से गाया जाता है। पटना-विश्वविद्यालय के विद्वान् प्रोफेसर श्री एस्० एच्० अस्करी का 'रेअर फ्रैगमेंट्स ऑफ्

१. 'लोरिकायन' गाथा-काव्य का संग्रह 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्' (पटना) के 'लोकभाषा-अनुसंधान-विभाग' की ओर से किया जा रहा है। भोजपुरी, मैथिली और मगही में प्रचलित इस कथानक का संग्रह पूर्ण हो जाने के बाद तुलनात्मक अध्ययन करके इसका प्रामाणिक रूप सम्पादित होकर प्रकाशित होगा।—सम्पादक

२. डॉ० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित होकर 'चंदायन' शीघ्र आगरा-विश्वविद्यालय के हिन्दी-विद्यापीठ से प्रकाशित होनेवाला है। इसी संस्था की मुख-पत्रिका 'भारतीय साहित्य' के प्रथम अंक में डॉ० विश्वनाथ प्रसाद द्वारा लिखित इस सम्बन्ध की सम्पादकीय टिप्पणी भी देखिए।—सम्पादक

चन्दायन एगड मृगावती' शीर्षक एक लेख से स्पष्ट हो गया है कि मौलाना दाऊद ने १५वीं सदी में 'मलिकनाथमू' के आग्रह से उस समय के जनप्रिय गाथा-गीत 'लोरिकी' का अवधी-रूपान्तर 'चन्दायन' नाम से दोहा और चौपाई छन्दों में किया था। अस्करी साहब ने मनेर (पटना) ग्राम से प्राप्त उर्दू पाण्डुलिपि से उद्धरण देकर बतलाया है कि यह गीत-काव्य आधुनिक 'लोरिकी' गीत के कथानक का रूपान्तर है। स्वयं मौलाना दाऊद ने 'मलिकनाथमू' से कहा था कि आपके कहने के अनुसार प्रचलित लोकप्रिय गाथा-काव्य को लेकर मैंने 'चन्दायन' तैयार किया है। अस्करी साहब ने अपने लेख में यह भी लिखा है कि इस लोरिकी गाथा-गीत की लोकप्रियता बहुत पुरानी है। चौदहवीं सदी में होनेवाले विख्यात मुसलमान फकीर 'मखदूम शेख तकीउद्दीन रब्बानी'[१] इस लोरिकी गीत को गाया करते थे। एक समय उनके मुख से इस जन-भाषा काव्य को सुनकर लोगों ने जब उनसे पूछा कि जनगाथा काव्य को इतनी तल्लीनता और प्रसन्नता से आप क्यों गा रहे थे, तब रब्बानी साहब ने उत्तर दिया—"**इस मसनवी में आद्योपान्त ईश्वरीय सत्य और माहात्म्य भरा है, जिससे अलौकिक आनन्द मिलता है। इसकी कितनी बातें कुरान की आयतों से मिलती-जुलती हैं।**"

अस्करी साहब ने लोरिकी की प्राचीनता के प्रमाण में दूसरा उदाहरण भी पेश किया है। उन्होंने लिखा है कि मैथिली के प्रसिद्ध कवि ज्योतिरीश्वर ठाकुर[२] अपनी 'वर्णरत्नाकर' नामक पुस्तक के प्रथम अध्याय के प्रथम पारा के अन्त में, नागर-वर्णन के सिलसिले में, बिरहा और लोरिक नाच का उल्लेख किया है। पहले लोरिकी के गायक गाते समय, वीर-नृत्य के रूप में, नाचते भी थे और आज भी ऐसी परिपाटी है।

उपर्युक्त सारी बातों से सिद्ध होता है कि लोरिकी गाथा-गीत का निर्माण यदि ज्यादा-से ज्यादा पीछे की ओर माना जायगा, तो १३वीं सदी के प्रथम चरण के बाद नहीं हो सकता।

'लोरिकी' एक बहुत बड़ा गाथा-काव्य है। यह पँवारा के रूप में गाया जाता है। इसके पीछे ऐतिहासिक घटना की एक सुदृढ़ पृष्ठ-भूमि है। कथानक इतना सुन्दर और आकर्षक है कि सभी रसों का समावेश इसमें हो जाता है। वीर-रस

१. इनकी तपोभूमि बिहिया (शाहाबाद) के पास थी, जहाँ आज भी 'मखदूम साहब' का मेला लगता है। इसी फकीर ने उज्जैनों के प्रथम राजा शान्तनशाह को शाहाबाद की भूमि जीतकर राज्य-स्थापन करने का वरदान दिया था।—लेखक

२. इनका काल १४वीं सदी का अन्तिम चरण है।

इसका मुख्य रस है, जो आद्योपान्त है। स्त्री-पात्र वीरता और सतीत्व की प्रतिमूर्त्ति हैं। यह अहीर जाति का एक मात्र वीर काव्य है। इसकी मूल प्रति कितनी सुन्दर होगी, नहीं कहा जा सकता। उसका कौन रचयिता था और ऐसा ओजपूर्ण सुन्दर काव्य क्यों और कैसे नष्ट हो गया, कहना कठिन है। इसकी श्रेष्ठता और कला का अनुमान इसके वर्त्तमान कथानक से किया जा सकता है। अच्छे गायक जब इसे गाने लगते हैं, तब जगह-जगह रसों के संचार तथा भोजपुर की नई नई क्षेत्रीय उपमाओं की छटा से चित्त तन्मय हो जाता है। इसका भी प्रकाशन ठाकुरप्रसाद बुकसेलर (बनारस) से प्राप्त है, जिसका मूल्य तीन रुपये है।

गोपीचन्द—लोरिक गाथा-गीत-काव्य के बाद अथवा पूर्व भी गोपीचन्द गाथा गीत का नम्बर आता है। इस गाथा-गीत में ज्ञान-पक्ष ही अधिक है। इसकी भाषा देखने से इसका रचना-काल १२वीं सदी मालूम पड़ता है। इस गीत-काव्य के अनेकानेक संस्करण निकल चुके हैं। ग्रियर्सन साहब ने 'जर्नल ऑफ् दि एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल' के (१८८५ ई०) भाग ५४ के पृ० ३५-३८ पर इसके कुछ गीतों को पाठ भेद के साथ प्रकाशित किया था।

भरथरी-चरित्र और मैनावती—भरथरी-चरित्र का गीत भी प्रचलित है। 'मैनावती' का गीत भी खूब गाया जाता है। भरथरी गीत में गोरखनाथ के किसी भरथरी नामक शिष्य के संन्यास लेने आदि के कथानक हैं। यह गाथा काव्य भी १२वीं सदी का रचा हुआ प्रतीत होता है। इसके भी अनेक प्रकाशन हो चुके हैं; किन्तु मूल काव्य का सर्वथा अभाव ही है। गायकों के कण्ठों से निकले पाठों का ही अबतक प्रकाशन हुआ है।

भरथरी-गीत के गानेवाले गोरखनाथ सम्प्रदाय के गृहस्थ योगी आज भी शाहाबाद, बलिया, गाजीपुर, सारन आदि जिलों में गोरखपुर की ओर से आते हैं और सारङ्गी बजाकर भरथरी-गीत गाते हैं। उनके लिए हर घर से सालाना अन्न, गुदड़ी, पैसा आदि मिला करता है। यह गीत गृहस्थों द्वारा कम गाया जाता है। इसमें साधारण कथानक का वर्णनमात्र है।

मैनावती के गीत की भी रचना अनुमानतः १२ वीं सदी के लगभग योगियों द्वारा हुई होगी।

कुँवर विजयमल—'कुँवर विजयमल' या 'कुँवर विजयी' भी बहुत प्रसिद्ध गाथा-काव्य है। इसका समय 'सोरठी बृजभार' के समय के बाद का अनुमान किया जा सकता है; क्योंकि इसमें बौद्धकालीन मान्यताओं का ह्रास दृष्टिगोचर होता है तथा राजपूत-

काल की मान्यताएँ प्रधान दीख पड़ती हैं। इसमें मुसलमान सेनापति मुराद खाँ पठान के नामोल्लेख से इसका निर्माण-काल पठान-काल जान पड़ता है। इस गीत काव्य का भी मूल रूप तथा रचयिता का नाम अप्राप्त है। इसको भी जनता ने अपनी स्मृति के सहारे ही, केवल मूल कथानक के साथ, जीवित रखा है। इसकी प्रकाशित प्रतियाँ वैसी हैं, जैसी 'सोरठी बृजभार' आदि की हैं, जिनमें मूल कथानक के अस्तित्व के साथ उसके मूल काव्य एवं कला को भुला दिया गया। इस गीत काव्य को डॉ० जी० ए० ग्रियर्सन ने 'जर्नल ऑफ् दि एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बङ्गाल' (भाग १, अङ्क १, सन् १८८४ ई०) के पृष्ठ ६४–६५ पर ११२८ पंक्तियों में प्रकाशित किया था। इसके कथानक के सम्बन्ध में उनकी टिप्पणी इस प्रकार है—"इसके साथ उद्धृत कविता शाहाबाद जिले में बोली जानेवाली विशुद्ध पूर्वी भोजपुरी का का श्रेष्ठ उदाहरण है। इसका व्याकरण बङ्गाल सरकार द्वारा प्रकाशित मेरे 'बिहारी बोलियों के व्याकरण' (भाग २) ग्रन्थ में पूर्ण रूप से वर्णित है। ये इसलिए भी अधिक दिलचस्प हैं कि इसमें उस जिले के मनुष्यों के रीति-रस्म और रहन-सहन के सम्बन्ध में वर्णन है जो अपने वीर-स्वभाव के योद्धाओं के लिए प्रसिद्ध है ······। इसके कथानक की सारी बनावट एक राजपूत पिता की उन दिक्कतों पर आधारित है, जिन्हें उसने अपनी कन्या की शादी करने और बड़ी रकम तिलक के रूप में देने के समय अनुभव किया था। गीत गाया जाता है जिससे लय और स्वर की पूर्त्ति तो हो ही जाती है; पर छन्द की मात्राओं में त्रुटियाँ रह ही जाती हैं।"

इसकी मुद्रित प्रति ठाकुरप्रसाद गुप्त बुकसेलर, (राजादरवाजा, कचौड़ीगली, बनारस) द्वारा प्रकाशित है, जो प्राप्य है। इसके भी लेखक बाबू 'महादेव सिंह 'घनश्याम' ही हैं। इस मुद्रित प्रति में और ग्रियर्सन द्वारा पूर्वोक्त प्रकाशन में बहुत पाठ-भेद है।

आल्हा—'कुँवर विजयी' के बाद अन्तिम वीर-गाथा-काव्य जो मिलता है, वह 'आल्हा' का भोजपुरी संस्करण है। इसका प्रकाशन भी श्रीग्रियर्सन ने इण्डियन एंटिक्विटी (भाग १४, सन् १८८५ ई०) के पृष्ठ २०६ में किया था। ग्रियर्सन साहब ने इसके प्राक्कथन में लिखा है—"मशहूर बुन्देलखण्ड के इतिहास के चतुर्दिक् 'आल्हा' और ऊदल' को केन्द्र बनाकर ग्रामीण-गाथा-काव्य अत्यधिक रूप में संगृहीत हुए हैं। सम्भवतः यह आल्हा-काव्य प्रारम्भ में बुन्देलखण्डी बोली में, जो बिहारी भाषा का एक अङ्ग है, लिखा गया था। किन्तु आल्हा-ऊदल की

करामात का वर्णन इतना जन-प्रिय है कि हिन्दुस्तान की हर प्रचलित बोली में यह पाया जाता है। इसके विभिन्न वर्णनों को दो भागों में बाँटा जा सकता है। प्रथम हिन्दी (या पश्चिमी) और दूसरा बिहारी (या पूर्वी) पाठान्तर। जो सबसे बड़ा और ध्यानाकर्षक नमूना हिन्दी-पाठान्तर का है, वह चन्दबरदाई-कृत कहा जाता है। किन्तु यह धारणा गलत है, दूसरा पाठान्तर जो आधुनिक हिन्दी में है, वह अभी 'महीपुर' के चौधरी धनीराम द्वारा सम्पादित होकर 'मेरठ' के 'ज्ञानसागर प्रेस' से पण्डित हरदेव सहाय द्वारा छपाया गया है। इसके वर्णन में दूसरे वर्णनों की तरह ही नायक आल्हा और ऊदल है। इस गाथा-काव्य का एक तीसरा पाठान्तर कन्नौजी में भी है जिसका 'वाटरफिल्ड' ने 'कलकत्ता रिव्यू' के भाग ६१, ६२ और ६३ में अँगरेजी बैलेड-छन्द में अनुवाद किया है।

इस गाथा-काव्य का पूर्वी पाठान्तर केवल भ्रमण करनेवाले गायकों के कण्ठों में ही आज वर्त्तमान है और प्रायः बिहार की बोली में गाया जाता है। कभी-कभी इस भोजपुरी पाठान्तर में बैसवाड़ी बोली का भी सम्मिश्रण रहता है। वैसा तब होता है जब गायक समझता है कि सुननेवाले शिक्षित हैं।"

ग्रियर्सन साहब के अनुमान के अनुसार मूल आल्हा सर्वप्रथम भोजपुरी में ही निर्मित हुआ था।

अन्यान्य गीत-काव्य—इन वीरगाथा-काव्यों के अतिरिक्त 'बिहुला' के गीत, राजा 'ढोलन' के गीत, 'सारङ्गा-सदाबृज' के गीत आदि भी हैं, जिनकी छपी पुस्तकें बाजार में मिलती हैं। उनके कथानक भी बहुत रोचक और प्राचीन हैं; पर अन्त की दोनों पुस्तकों की कथाएँ गद्य-पद्यमिश्रित हैं।

इनके अतिरिक्त भोजपुरी में और भी गाथा-काव्य निश्चित रूप से निर्मित हुए होंगे; पर उनका प्रकाशन प्राप्त नहीं है। इस तरह वीरगाथा-काव्य का इतिहास 'आल्हा' की रचना के साथ अन्त होता दीख पड़ता है।

पूर्वमध्यकाल (सन् १३२५ से १६५० ई०)

इस काल को मैंने भक्ति-काल भी कहा है। भक्ति-काल के अन्तर्गत भोजपुरी में रचना करनेवालों में 'कबीर' का सर्वप्रथम स्थान है। इन्होंने अपने निर्गुणों में भोजपुरी को प्रमुख स्थान दिया। इनकी भोजपुरी रचनाएँ प्रचुर संख्या में प्रस्तुत पुस्तक में उद्धृत हैं। उन उद्धरणों में भोजपुरी शब्दों के प्रचुर प्रयोग देखे जा सकते हैं।

इनके बाद इनकी शिष्य-परम्परा में भी जो अनेक कवि तथा संत आते हैं, वे भी भोजपुरी में ही रचना करते थे। इन सबका उल्लेख उद्धरणों के साथ पुस्तक में किया गया है।

इस काल तथा इसके पूर्व के काल के कवियों की रचनाओं की भाषा को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि गोरखनाथ के शिष्य 'भरथरी' के समय से ही भोजपुरी ने प्राकृत अथवा अपभ्रंश का साथ पूर्ण रूप से छोड़ दिया था। वह उस समय तक स्वतन्त्र रूप से अपनी अलग सत्ता के साथ खड़ी ही नहीं हो गई; बल्कि उसने अपने को अपनी अभिव्यञ्जना-शक्ति एवं शब्द-कोष, मुहावरे आदि से इतना सबल बना लिया कि बाद के कवि तुलसीदास और कबीरदास की कविताओं पर भी उसकी छाप पड़े बिना नहीं रह सकी।

उत्तरमध्यकाल (सन् १६५० ई० से १६०० ई०)

रीति-काल के नाम से इस काल को अभिव्यक्त किया गया है। इस काल में भक्ति की प्रधानता के साथ-साथ रीतिकालीन शैली की प्रधानता रही है। इस समय के कवियों में शंकरदास, बाबा रामेश्वर दास, शिवनारायण आदि भक्त कवियों के नाम आते हैं, जिनके सम्बन्ध में पुस्तक में काफी चर्चा है। सरभंग-सम्प्रदाय के आदि कवि 'छत्तर बाबा' को छोड़ कर शेष कवि टेकमन राम, भीखम राम, स्वामी भिनक राम आदि संभवतः इसी शाखा के संत हैं। जहाँ ये कवि भक्ति-पक्ष की रचनाएँ करते थे, वहाँ जन-साधारण के गृहस्थ कवि प्रचुर संख्या में शृङ्गार रस और देश-प्रेम की भावनाओं से पूर्ण रचना करने में व्यस्त थे। इन अगणित अज्ञात कवियों की पूरी नामावली और रचनाएँ प्राप्त करने के लिए विशेष खोज की आवश्यकता है। इस समय के ऐसे अज्ञात कवियों की रचनाएँ यदा-कदा टूटी हुई पंक्तियों में अवश्य मिली हैं और मिलती जाती हैं; पर उनसे कोई मतलब की बात सिद्ध नहीं होती। इस प्रकार के तीन ही कवियों के नाम मुझे अबतक ज्ञात हो चुके हैं, जिनमें एक तो बाबू कुँवर सिंह के दरबारी कवि रामा थे और दूसरे कवि तोफाराय थे। तोफाराय के तो कई पूर्वज भी इस दरबार में कवि थे। ये सारन जिले के निवासी थे और भाँट घराने के थे। ये लोग हथुआ राज के भी दरबारी कवि थे। तोफाराय का लिखा 'कुँवर पचासा' मुझे प्राप्त हुआ है, जिसका एक अंश पुस्तक में उद्धृत है। एक 'अलिराज' नामक कवि की भोजपुरी रचना पं० गणेश चौबे (मु० पो० बँगरी, चम्पारन) को प्राप्त हुई है, जो मुझे अबतक नहीं मिली है। अलिराज की कुछ रचनाएँ कुँवर सिंह पर भी हैं। उस समय प्रा०

हर राजदरबार में ऐसे कवि थे, जो श्रृङ्गार और वीररस की रचनाएँ करते थे। ऐसे कवियों की कविताओं में हिन्दी, ब्रजभाषा और भोजपुरी भाषाओं का मिश्रण रहता था।

इस काल में रीतिपरक श्रृङ्गाररसप्रधान शैली की भोजपुरी रचनाएँ भी कजरी, झूमर, जँतसार तथा अन्य प्रचलित रागों और घनाक्षरी, सवैया, दोहा, बरवै, छप्पय आदि छन्दों में मिलती हैं। किन्तु उनका कोई ऐसा संग्रह अबतक मुझे प्राप्त नहीं हो सका है, जिससे ऐसे कवियों के नामों का पता चल सके। फिर भी मेरा अनुमान है कि इसकाल में श्रृङ्गारी कवि कम नहीं थे। वे मनोविनोदार्थ श्रृङ्गाररस की रचनाएँ करते थे, जो लिखाकर रखने की परिपाटी भोजपुरी समाज में प्रचलित न होने के कारण जन-कण्ठों में ही निहित रहीं और कालान्तर में विस्मृत हो गईं। काशी के श्रृङ्गारी कवियों में 'भारतजीवन प्रेस' के बाबू रामकृष्ण वर्मा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। बनारस के ही 'तेग अली शायर' भी हैं। इन दोनों की क्रमशः 'विरहा नायिकाभेद' और 'बदमाश-दर्पण' नामक कविता-पुस्तकें सन् १९वीं सदी के अन्त में लिखी गईं और प्रकाशित हुईं। वे रीतिकालीन कविता के सर्वोत्कृष्ट नमूने हैं। इनके अतिरिक्त महाराज खड्गबहादुर मल्ल, महाराजकुमार हरिहरप्रसाद सिंह रामदास, राम मदारी, शिवनन्दन मिश्र, पं० बेनीराम, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, कवयित्री सुन्दर, बाबू अम्बिकाप्रसाद आदि की रचनाएँ भी अवलोकनीय हैं। इन कवियों के उदाहरणों से इस काल की रचना-शैली, अभिव्यञ्जना और छन्दोयोजना का अनुमान सहज ही किया जा सकता है। यहाँ केवल भारतेन्दु की कविताओं के कुछ उदाहरण दे रहे हैं। ये उदाहरण मूल पुस्तक में नहीं आ सके हैं।

भारतेन्दु जी ने एक पुस्तक 'हिन्दी-भाषा' के नाम से लिखी थी जो 'खड्गविलास प्रेस' (पटना) से १९ वीं सदी के अन्त में कभी छपी थी। उसमें उन्होंने उदार और निष्पक्ष रूप से भाषा के प्रश्न पर विचार किया है और उन भाषाओं के उदाहरण गद्य-पद्य—दोनों में दिये हैं। भोजपुरी-भाषा में भी आपने कविता रची है। उक्त पुस्तक में कई रचनाओं को उद्धृत करके बताया है कि बँगला तथा मैथिली के पुराने कवि भी ब्रजभाषा में कविता करते थे। किन्तु ऐसे कवियों की रचनाओं के जो उदाहरण उन्होंने उद्धृत किये हैं, उनमें से कुछ में भोजपुरी की छाप भी हम देखते हैं। उसी पुस्तक में भारतेन्दु ने स्वरचित भोजपुरी रचना के भी कुछ उदाहरण दिये हैं।

कलक्टर राबर्ट साहब के प्रति

जैसन हमनीं के जिला के कलक्टर, 'राबरट' साहब के कदम[१] देखाइल हा[२]।
ऐसन हाकिम दुआबा[३] देस हित केहू, हमनी के होस में तऽ आजुले ना[४] आ इल हा।
केकरा बखत[५] खानापुरी[६] के मोकदिमा में, ऐसन सरब सुख सबका भेंटाइल हा।
कब 'सोनबरसा' में जलसा के साथ भला, ऐसे दवाखाना खोलि औषधी बँटाइल हा॥

सुनिला जे हमनी से अतना परेम कइ,
लगले[७] इहाँ का[८] अब एजनी[९] से जाइबि।
इहे एगो[१०] हमनी के बड़ दुख लागऽ ता जे,
इहाँ का सरीखे अँगरेज कहाँ पाइबि॥
इहाँका तऽ अपना मुलुक[११] अब जाइ[१२] भले,
अपने बिलायती में मिलि-जुलि जाइबि।
हमनी का हाथ जोरि-जोरि के मनाइले जे,
बलिया दुआबा के बिसर जनि[१३] जाइबि॥

❀

नये कलक्टर मिस्टर रोज साहेब के प्रति

हमनी[१४] का बलिया दुआबा के रहनिहार,
रैयत हजूर के कदम तर बानींजा।
हमनीं का सोझे-सोझे[१५] बात बतिआई[१६], न तो,
हिन्दुई, न फारसी, न अँगरेजी जानींजा॥
जइसे सरकार उपकार करे हमनीं का,
तैसने हजूर के हमनियो का[१७] मानींजा।
हमनीं के मामला में ऐसन निसाफ[१८] होखे,
जौना[१९] से साहबो के नेकिये[२०] बखानींजा॥
जब सरकार सब उपकार करते बा[२१],
तब अब हमनी के कवन[२२] हरज बा[२३]।

१. पदार्पण। २. दीख पड़ा है। ३. गंगा और सरयू के बीच की जमीन, जो दोनों नदियों के पानी से सिक्त होती रहती है। ४. आज तक। ५. वक्त। ६. खेतों के खाता और खतियान तथा नक्शों से सम्बन्ध रखनेवाला मोकदमा। ७. शीघ्र। ८. आप। ९. इस जगह। १०. एक ही। ११. मुल्क, देश। १२. जाकर। १३. नहीं। १४. हमलोग। १५. सीधा-सादा। १६. बात करते हैं। १७. हमलोग भी। १८. इंसाफ, न्याय। १९. जिससे। २०. नेकी ही, भलाई ही। २१. करती ही है। २२. क्या। २३. हर्ज है।

हमनी का साहेब से उतिरिन[1] ना होइबि,
हमनी का माथे सरकार के करज बा ॥
आगा[2] अब अवरू[3] कहाँ ले कहीं मालिक से[4],
अइसे त साहेबे से सगर[5] गरज[6] बा।
उरदू बदलि देवनागरी अछर चले,
इहे एगो साहेब ले ए घरी[7] अरजबा ॥

❀

आधुनिक काल (सन् १९०० ई० १९५० ई०)

इस काल के जीवित और मृत कवियों की केवल उद्धृत रचनाओं से ही यह स्पष्ट हो जायगा कि भोजपुरी का वर्त्तमान काव्य साहित्य कितना प्रौढ है और वह अन्य भाषाओं की तरह प्रगतिशील तथा समुन्नत भी है। इस काल के जिन कवियों की जीवनी और रचनाएँ बहुत खोज करने के बाद मिल सकी हैं, वे प्रामाणिक विवरण और उद्धरण के साथ इस पुस्तक में संगृहीत हैं। उन्हें देखने से प्रतीत होगा कि इस काल के कवि वर्त्तमान युग की सभी विचारधाराओं से सम्पर्क रखते हैं।

१ ऋण से उद्धार। २. आगे। ३. और। ४. मालिक से ही। ५. सब तरह के। ६. मतलब, स्वार्थ। ७. इस समय।

भोजपुरी के कवि और काव्य

आठवीं सदी से ग्यारहवीं सदी तक

प्रारम्भिक काल

प्रस्तुत पुस्तक की भूमिका में भोजपुरी के इतिहास का वर्णन करते समय बताया गया है कि आठवीं सदी से केवल भोजपुरी ही नहीं; बल्कि अन्य वर्तमान भाषाओं ने भी प्राकृत भाषा से अपना-अपना अलग रूप निर्धारित करना शुरू किया और ग्यारहवीं सदी के आते-आते मगही, बंगला, भोजपुरी, मैथिली, उड़िया भाषाओं ने अपना-अपना अलग रूप, सहायक भाषा के रूप में भी, स्थिर कर लिया। किन्तु उस समय तक जो कवि हुए हैं, उनकी रचनाओं की भाषा में उपर्युक्त पाँच भगिनी भाषाओं के ही रूप, जो अर्द्धमागधी समुदाय की प्राकृत से व्युत्पन्न हैं, नहीं पाये जाते; बल्कि उनमें शौरसेनी, हिन्दी आदि के भी रूप देखने को मिलते हैं। इससे यह निर्विवाद रूप से निश्चित हो जाता है कि इन ४०० वर्षों में 'नाथ' और 'सिद्ध' सन्तों ने प्राकृत भाषा को त्याग कर जिस भाषा का प्रयोग अपनी कविता में किया, उस भाषा से वर्तमान बँगला, भोजपुरी, मगही, मैथिली, उड़िया आदि भाषाएँ अपना-अपना सम्बन्ध स्थापित कर सकती हैं। इन सन्तों की प्राप्त रचनाओं में भी उपर्युक्त भाषाओं के आदि रूप जगह-जगह पर वर्तमान हैं।

महामहोपाध्याय प० हरप्रसाद शास्त्री ने इस समय के कई कवियों की भाषा को बंगला भाषा तथा उन्हें बंगाली कवि माना है और महापंडित श्री राहुल सांकृत्यायन ने इनमें से अधिकांश कवियों की भाषा मगही मानी है। वैसे ही डॉ० बलभद्र झा आदि विद्वानों ने इनको मैथिली तथा उड़िया का कवि माना है। परन्तु वास्तविक बात यह है कि इन सिद्धों और नाथों ने ही, जैसा ऊपर कह चुके हैं, इन पाँचों भगिनी भाषाओं को जन्म दिया और उनकी भाषा में जगह-जगह पर इन पाँचों का आदि रूप वर्तमान है। इस बात को प० रामचन्द्र शुक्ल ने भी अपने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' के पृष्ठ ५३ में लिखा है।

डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपने 'नाथ-सम्प्रदाय' नामक ग्रन्थ के पृष्ठ १३६ में 'दाड़िपा' की कविता की भाषा की विवेचना करते हुए स्वीकार किया है और लिखा है—"इनके लोक-भाषा में लिखित कई पद प्राप्त हुए हैं। भाषा इनकी निस्सन्देह पूर्वी प्रदेशों की है; लेकिन वह उस अवस्था में है जिसे आज की सभी पूर्वी भाषाओं का पूर्व रूप कहा जा सकता है।"

'राजा भोज[1]' नामक पुस्तक में डॉ० विश्वेश्वरनाथ रेउ ने भी इसी बात को ऐतिहासिक दृष्टिकोण से विवेचना करके सिद्ध किया है—

---

१. प्रकाशक--हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग, १६३२ ई०

"श्री सी० बी० वैद्य का अनुमान है कि विक्रम-संवत् १०५७ तक प्राकृत से उत्पन्न हुई महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी और पैशाची भाषाओं का स्थान मराठी, हिन्दी, बंगला और पांचाली भाषाएँ[1] लेने लगी थीं। इसी प्रकार दक्षिण की तामिल, मलयालम्, तेलगु, कनारी[2] आदि भाषाएँ भी अस्तित्व में आ गई थीं।"

इस समय के सिद्ध और नाथ-सम्प्रदाय के कवियों की रचनाओं को देखने से यह स्पष्ट हो जायगा कि इन ४०० वर्षों में यानी ६०० ई० से ग्यारहवीं सदी के बाद तक, सिद्ध-सन्तों ने जिस भाषा को अपनाया, उसमें भोजपुरी की सभी भगिनी भाषाओं का पूर्व रूप वर्तमान है और इसी समय इन पाँचों लोक-भाषाओं के साहित्य की भाषा प्राकृत के रूप में व्यवहृत होने लगी।

उनकी बोलचाल की भाषा के रूपों में उनका पारस्परिक अन्तर अवश्य आठवीं सदी में काफी रहा होगा और इसका पूर्ण अस्तित्व आठवीं सदी के पूर्व से ही हमको मानना पड़ेगा। क्योंकि, जनता में उनके पूर्ण रूप से प्रचलित हुए विना सिद्ध-सन्तों का ध्यान उनकी अपनी साहित्यिक भाषा में स्थान देने की ओर जाना सम्भव नहीं। अतः सिद्धों ने जिन-जिन भाषाओं को अपने साहित्य की भाषा में शामिल किया है, उनका उस समय बोल-चाल में पूर्ण अस्तित्व था और जन-कण्ठों ने उनको सिद्धों के समय के बहुत पहले से ही प्राकृत से अलग कर लिया था।

तो इन चार सौ वर्षों की अवधि में भोजपुरी ने किस अंश में और किस तरह साहित्य की भाषा में स्थान पाया है तथा उसका विकास कैसे हुआ है, यह निम्नलिखित सिद्धों की रचनाओं से जाना जा सकता है। भोजपुरी के आदि रूप का कुछ आभास इन कविताओं में देखने को मिलता है—

चौरंगीनाथ

चौरंगीनाथ नाथ-सम्प्रदाय के सिद्ध हो गये हैं। श्रीहजारीप्रसाद द्विवेदी ने 'नाथ-सम्प्रदाय' नामक पुस्तक के पृ० १३७ में गोरखनाथ के पूर्ववर्ती सिद्धों के जो नाम दिये हैं, उनमें सर्वप्रथम इन्हीं का नाम है।

चौरंगीनाथ तिब्बती परंपरा में गोरखनाथ के गुरु भाई माने गये हैं[3]। इनकी लिखी कही जानेवाली—'प्राण-संकली' पिण्डी के जैन-ग्रन्थ-भण्डार में सुरक्षित है। इसमें इन्होंने अपनेको राजा 'सालबाहन' का बेटा, मच्छेन्द्रनाथ का शिष्य और गोरखनाथ का गुरु भाई बताया है। इस छोटी-सी पुस्तक से यह भी पता चलता है कि इनकी विमाता ने इनके हाथ-पैर कटवा दिये थे। ये ही पंजाब की

१. लाट (दक्षिण गुजरात) की भाषा से ही आधुनिक गुजराती का जन्म है।

२. अलमसूदी ने (वि० सं० १००१=ईस्वी ९४४) अपनी 'मुरुजुल जहब' पुस्तक में मानकीर (मान्यखेट) के राष्ट्रकूटों के यहाँ की भाषा का नाम 'कोरिया' लिखा है।—इलियट्स हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, भा० १, पृ० २४।

३. मासिक 'गंगा' का पुरातत्त्वांक, पृ० २६०।

कथाओं के 'पूरन भगत' हैं। फिर 'पूरन भगत' की कथा का उल्लेख पृष्ठ १६१ में डॉ० द्विवेदी जी ने इस प्रकार किया है–"सारे पंजाब में और सुदूर अफगानिस्तान तक पूरन भगत (चौरंगीनाथ) और राजा रसालू की कहानियाँ प्रसिद्ध हैं। ये दोनों ही सियालकोट के राजा सालबाहन के पुत्र बताये जाते हैं। कहते हैं कि 'पूरन भगत' अन्त में बहुत बड़े योगी हो गये थे और 'चौरंगीनाथ' के नाम से मशहूर हुए थे। मिया कादरयार की लिखी एक पंजाबी कहानी 'परसंता पूरन भगत' गुरुमुखी अक्षरों में छपी है। कहानी का सारांश इस प्रकार है:—

"पूरन भगत उज्जैनी के राजा विक्रमादित्य के वंशज थे। उनके बाप-दादों ने सियालकोट के थाने पर अधिकार कर लिया था। इनके पिता का नाम 'सलवान' (सालबाहन-शालिवाहन) था। जन्म के बाद ज्योतिषी के आदेशानुसार बारह वर्ष तक एकान्त में रखे गये थे। इस बीच राजा ने 'लूण' नामक एक चमार युवती से शादी कर ली। एकान्त वास के बाद पूरन अपने माँ-बाप से मिले। उन्होंने सहज भाव से विमाता को माँ कह कर पुकारा। इसपर गर्विणी नई रानी का यौवन-भाव आहत हुआ। उसने अपप्रस्ताव किया; किंतु पूरन ने अस्वीकार कर दिया। ईर्ष्या से अन्धी रानी ने राजा से उल्टी-सीधी लगाकर, पूरन के हाथ-पैर कटवा दिये और आँखें फोड़वा कर उन्हें कुएँ में डलवा दिया। इस कुएँ से गुरु गोरखनाथ ने उनका उद्धार किया। गुरु के आशीर्वाद से उनके हाथ-पैर और आँखें पुनः मिलीं। जब वे नगर लौटकर गये और उनके पिता को इस छल का पता चला, तब उसने रानी को कठोर दण्ड देना चाहा; पर पूरन ने निषेध किया। पूरन की माँ रो-रोकर अंधी हो गई थी। पूरन की कृपा से उसे पुनः आँखें मिलीं और उन्हीं के वरदान से पुनः पुत्र भी हुआ। पिता ने आग्रहपूर्वक उन्हें सिंहासन देना चाहा; पर पूरन ने अस्वीकार कर दिया। अन्त में वे गुरु के पास लौट गये और महान् सिद्ध हुए। हाथ-पैर कट जाने के कारण वे चौरंगी हो गये थे। इसीलिए उनका नाम 'चौरंगीनाथ' हुआ। स्यालकोट में अब भी वह कुआँ दिखाया जाता है, जहाँ पूरन भगत को फेंका गया था।"

पूरन भगत की यह कहानी 'योग सम्प्रदायाविष्कृति'[1] में पृ० ३७० में भी दी हुई है। वहाँ स्यालकोट का नाम 'शालीपुर' दिया हुआ है। सम्भवतः ग्रन्थकार ने स्याल का शुद्ध संस्कृत नाम 'शालि' समझा है।

इसके बाद प० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने पृ० १६२ में विभिन्न विद्वानों के मत, राजा रसालू के समय के सम्बन्ध में, उद्धृत कर लिखा है —

"राजा 'रसालू' पूरन भगत के वैमात्रीय भाई थे। इनके समय को लेकर पंडितों ने अनेक अनुमान भिड़ाये हैं। सन् १८८४ ई० में टेम्पुल ने खोजकर के देखा कि राजा 'रसालू' का समय आठवीं शताब्दी हो सकता है। उनके अनुमान का आधार यह था कि पंजाब की दो जाट जातियाँ—सिद्ध और संसी—अपनेको इनके वंशज बताती हैं।"

सिद्ध लोग अपना सम्बन्ध जैसलमेर के 'जैसल' नामक राजपूत राजा से बताते हैं। इस राजा की मृत्यु सन् ११६८ ई० में हुई थी और इसने जैसलमेर की स्थापना सन् ११५६ में की थी। संसी लोग और भी पुराने काल से अपना सम्बन्ध बताते हैं। वे अपनेको

---

१. चन्द्रनाथ योगी, अहमदाबाद, सन् १९२४।

'सालवाहन' के पिता राजा 'गज' का वंशधर मानते हैं। टॉड ने लिखा है कि राजा 'गज' से गजनी के सुलतान की लड़ाई हुई थी। अन्त में गज हार गया था और पूरब की ओर हटने को वाध्य हुआ था। उसी ने स्यालकोट की स्थापना की थी। बाद में उसने गजनी को भी अपने अधिकार में कर लिया था। यह सातवीं शताब्दी के अन्त की घटना है और इस प्रकार राजा 'रसालू' का समय आठवीं सदी होता है। अरबी के इतिहास-लेखकों ने आठवीं शताब्दी के प्रतापी हिन्दू राजा की बहुत चर्चा की है। एक दूसरा प्रमाण भी इस विषय में संग्रह किया जा सका है। 'रिसल' नामक एक हिन्दू राजा के साथ 'मुहम्मद कासिम' ने सिंध में संधि की थी। संधि का समय आठवीं शताब्दी का प्रारम्भिक भाग है। इस प्रकार टेम्पुल ने अनुमान किया है कि 'रिसल' असल में 'रसालू' ही होगा[१]। कुछ पंडितों ने तो राजा शालिवाहन को शक संवत् का प्रवर्तक माना है। डा० इर्विसन ने इन्हें पँवार राजपूत माना है। ये इनके मत से यदुवंशी राजपूत थे और रावलपिण्डी, जिसका पुराना नाम गजपुरी है, इनकी राजधानी थी। बाद को इन्हें सीथियनों से घोर युद्ध के बाद पूरब की ओर हटना पड़ा। इस तरह डॉ० द्विवेदी ने रसालू का—यानी उसके सौतेले-भाई 'पूरन भगत' का—समय आठवीं सदी निश्चय किया है और कहा है—"परम्पराएँ और ऐतिहासिक प्रमाण स्पष्ट रूप से पूरन भगत और राजा रसालू को आठवीं सदी में, गोरखनाथ के पूर्व, ले जाते हैं।"

तब प्रश्न उठता है कि गोरखनाथ उस अवस्था में पूरन भगत के गुरु कैसे हुए? इसका समाधान डॉ० द्विवेदी ने इस तरह किया है—"इसका एक मात्र समाधान यही हो सकता है कि वस्तुतः ये दोनों गोरखनाथ के पूर्ववर्ती हैं। उनके द्वारा प्रवर्तित या समर्थित शैव साधकों में कुछ योगाचार रहा होगा; जिसे गोरखनाथ ने नये सिरे से अपने मत में शामिल कर लिया होगा। गोरखनाथ का शिष्य बताने वाली उनकी कहानियाँ परवर्ती हैं। गोरखनाथ अपने काल के इतने प्रसिद्ध महापुरुष हुए थे कि उनका नाम अपने पंथ के पुरोभाग में रखे बिना उन दिनों किसी को गौरव मिलना संभव नहीं था। जो लोग वेद-विमुखता और ब्राह्मण-विरोधिता के कारण समाज में अगृहीत रह जाते, वे उनकी कृपा से ही प्रतिष्ठा पा सकते थे।" फिर उन्होंने ऐसी कई घटनाओं का उल्लेख करके बताया है कि पूर्ववर्ती सन्तों की भेंट या वार्ता परवर्ती महात्माओं से धर्म-ग्रन्थों में खूब कराई गई है। उन्होंने चौरंगीनाथ (पूरन भगत) कृत 'प्राणसंकली' नामक हस्तलिखित पुस्तक की एक कविता की भाषा को पूर्वी भाषा कहा है। यह उद्धरण प्राचीनतम भोजपुरी में है। परन्तु इसी आधार पर डॉ० द्विवेदी ने पृ० १३८ में शंका की है—"ऐसा जान पड़ता है कि 'चौरंगी नाथ' नामक किसी पूर्व देशीय सिद्ध की कथा से पूरन भगत की कथा का साम्य देखकर दोनों को एक मान लिया गया है।"

डॉ० द्विवेदी की यह शंका इसलिए निराधार है कि गोरखनाथ की कविता में भी, जो बड़थ्वाल जी ने 'गोरखबानी' में प्रकाशित की है, भोजपुरी कविताएँ उद्धृत हैं। अन्य सिद्धों की वाणियों में भी भोजपुरी भाषा की कविताएँ मानी जाती हैं। फिर भोजपुरी तथा

---

१. देखिए—ब्रिड्स, पृ० २३६-२४१।

उसके साथ की अन्य अद्धर्मागधी समुदाय की भाषाओं का विकास तथा जन्म भी इन्हीं सिद्धों के ग्रन्थों से विद्वानों ने माना है। यह कहना कि पंजाब का कवि पूरब की भोजपुरी भाषा का प्रयोग नहीं कर सकता, नितान्त निराधार बात है। सन्त या सिद्ध भ्रमणशील होते थे। यह स्वयं द्विवेदी जी ने स्वीकार किया है। फिर, अपने जीवन-काल में उन्होंने देशीय भाषाओं में कविता की है, यह बात भी डा० द्विवेदी ने स्वीकार की है[1]। योगी लोगों का नियम था कि शिष्य को असम्प्रज्ञात में निष्णात कर उसे मुमुक्षुओं के हितार्थ स्वतंत्र घूमने की अनुज्ञा दे देते थे। एक स्थान पर बिना विशेष कारण के ये लोग नहीं ठहरते थे। इनका जो भी साहित्य आज प्राप्त है, उसे देखने से प्रत्यक्ष हो जाता है कि इनकी वाणी में अनेक भाषाओं का समन्वय है। कबीर, गोरखनाथ, चर्पटनाथ इत्यादि सन्तों की भाषा 'सधुक्कड़ी' है। 'सधुक्कड़ी' भाषान्तरगत साहित्य की प्रवृत्ति सदैव जनता के अधिकाधिक निकट-रहने की रही है। संस्कृत को छोड़ हिन्दी भाषा को अपनाना इसी कारण इन लोगों ने अच्छा समझा कि वह विशाल जन-समुदाय तक पहुँच सकती है। इसके पूर्व योग के ग्रन्थ संस्कृत में रहे[2]। 'सधुक्कड़ी भाषा' और पूरबी भाषा का प्रयोग इन सिद्धों की वाणी में शुक्ल जी ने तथा डॉ० बड़थ्वाल ने भी स्वीकार किया है। फिर इसी पुस्तक में 'धरनीदास' तथा 'विद्यापति' जी की जीवनी में दिखाया गया है कि किस तरह एक सन्त कवि ने अन्य सुदूर प्रान्तों की देशीय भाषाओं को अपनाया है और उनमें रचनाएँ की हैं। अतः 'प्राण-संकली' में जो भोजपुरी की कविता चौरंगीनाथ जी ने लिखी है, उसको उनकी कविता नहीं मानना, न्यायसंगत नहीं कहा जायगा। अतः वह कविता नीचे दी जाती है। इसकी भाषा देखने से सिद्ध होता है कि आठवीं सदी में भोजपुरी ने अपना रूप अपना लिया था। न मालूम क्यों, शुक्ल जी, रामनरेश त्रिपाठी, डा० द्विवेदी आदि विद्वानों ने भोजपुरी शब्द का प्रयोग करने से अपनेको बचाया है। इसके स्थान पर उनलोगों ने अनिवार्य अवस्था में पूरबी भाषा या पूरबी हिन्दी का प्रयोग किया है। यह भावना ठीक वैसी ही जान पड़ती है, जैसे कभी संस्कृत के विद्वान् हिन्दी में बोलना हेय समझते थे या अंग्रेजी के विद्वान् हिन्दी में लिखना अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध समझते थे। जब भोजपुरी तीन करोड़ मनुष्यों द्वारा बोली जाती है और अपना अलग संस्कार तथा शैली और साहित्य रखती है, तब उसको यह विद्वद्मंडली कबतक अछूत बनाये रख सकती है? आज उसकी दो-चार पुस्तकों के प्रकाशन से ही उसके साहित्य की प्रौढ़ता ने विद्वानों का ध्यान आकर्षित कर लिया है। जिस दिन उसका सम्पूर्ण साहित्य उनके सामने आयगा, उस दिन उनके लाख न चाहने पर भी उसे उच्च स्थान प्रदान करना ही पड़ेगा।

चौरंगीनाथ की 'प्राणसंकली' की कविता की भाषा पर यदि विचार किया जाय तो यह भोजपुरी गोरखनाथ की भोजपुरी से पूर्व की भोजपुरी मालूम पड़ती है। भोजपुरी भाषा के प्राप्त नमूनों में इसको प्राचीनतम भोजपुरी का नमूना समझना चाहिए। इस आधार पर भी चौरंगीनाथ का समय आठवीं सदी में माना जा सकता है—

१. देखिए—नाथसम्प्रदाय, पृ० ६८।

२. देखिए—सन् १६४६ की फरवरी मास की 'सरस्वती' पृ० १०४।

सत्य वदंत चौरंगीनाथ आदि अन्तरि सुनौ ब्रितांत सालवाहन घरे
हमारा जनम उतपति सतिमा झुट बोलीला ॥१॥
ह अम्हारा भइला सासत पाप कलपना नहीं हमारे मने हाथ पावकटाय
रलायला निरंजन बने सोष सन्ताप मने परमेव सनमुष देषीला
श्री मछंद्रनाथ गुरु देव नमसकार करीला नमाइला माथा ॥२॥
आसीरबाद पाइला अम्हे मने भइला हरषित होठ कंठ तालुका रे
सुकाईला धर्मना रूप मछंद्रनाथ स्वामी ॥३॥
मन जानै पुन्य पाप मुष बचन न आवै मुषै बोलय्या कैसा हाथ रे
दीला फल मुझे पीलीला ऐसा गुसाई बोलीला ॥४॥
जीवन उपदेस भाषिला फल आदम्हे विसाला दोष बुध्या त्रिषा बिसारला ॥५॥
नहीं मानै सोक धर धरन सुमिरला अम्हे भइला सचेत के तम्ह कहारे बोले पुछीला ॥६॥

अर्थ—चौरंगीनाथ सत्य कहता है। आदि अन्त का वृत्तान्त सुनो। साल-वाहन के घर मेरा जन्म और उत्पत्ति सत्य में हुई। मैं झूठ नहीं बोलता हूँ ॥१॥ हमारी सासत (दुःख दिया जाना) बेकार निराधार थी। मेरे मन में कोई भी पाप कल्पना नहीं थी। तब भी मेरे हाथ-पाँव काट लिये गये। निरंजन वन में अपने शोक-सन्ताप पूर्ण मन में मैंने प्रभु देवता को सम्मुख देखा। मैंने श्री मच्छेन्द्र नाथ गुरु देव को नमस्कार किया और माथा नमाया ॥२॥ मुझे आशीर्वाद प्राप्त हुआ। मैं मन में हर्षित हुआ। हमारे होठ, कंठ और तालु को धर्म रूप मच्छेन्द्र नाथ स्वामी ने सुखा दिया ॥३॥ मन जानता है मेरे मुख से पाप या पुण्य का कोई वचन नहीं निकला। गोसाईं (स्वामी) ने कहा—अरे! यह तेरा हाथ कैसा हुआ? अच्छा मैं फल (आशीर्वाद) देता हूँ। तू इसे पी लो (प्राप्त कर लो) ॥४॥ उन्होंने जीवन का उपदेश कहा ॥

उन्होंने जी के लिए (जीवन सुधार के लिए) उपदेश दिया। विशाल (गुरु) आशीर्वाद से मेरे दोष और बुद्धि की प्यास समाप्त हो गई। मैंने शोक नहीं माना। धर्मधारण करके सुमिरन किया। मैं सचेत हो गया। तुम क्या बोलते हो, यही मैं तुमसे पूछता हूँ[1]।

सरहपा

(१) **सरहपा (सिद्ध ६)**—इनके दूसरे नाम राहुलभद्र और सरोजवज्र भी हैं[2]। पूर्वदिशा में राज्ञी नामक नगर में एक ब्राह्मण वंश में इनका जन्म हुआ था। भिक्षु होकर यह एक अच्छे पण्डित हुए। नालन्दा में कितने ही वर्षों तक इन्होंने वास किया। पीछे इनका ध्यान मन्त्र-तन्त्र की ओर आकृष्ट हुआ और आप एक बाण (शर) बनानेवाले की कन्या को महामुद्रा[3] बना कर किसी अरण्य में वास करने लगे। वहाँ यह भी शर (वाण)

---

१. इस पंक्ति का अर्थ संदिग्ध है।

२. देखिए—'पुरातत्त्व-निबन्धावली' नामक पुस्तक, पृ० १६७ से १७१; इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग।

३. वज्रयानीय योग की सहचरी योगिनी अथवा हेप्नाटिज्म का माध्यम।

बनाया करते थे, इसीलिए इनका नाम 'सरह' पड़ गया। श्रीपर्वत[1] में ही यह बहुधा रहा करते थे। सम्भव है, मन्त्रों की ओर इनकी प्रथम प्रवृत्ति वहीं हुई हो। शबरपाद (५) इनके प्रधान शिष्य थे। कोई तान्त्रिक नागार्जुन भी इनका शिष्य था। भोटिया 'तन्-जूर' में इनके बत्तीस ग्रन्थों का अनुवाद मिलता है। ये सभी वज्रयान पर हैं। इनमें एक 'बुद्ध कपाल तन्त्र' की पंजिका 'ज्ञानवती' भी है। इनके निम्नलिखित काव्य-ग्रन्थ 'मगही' से 'भोटिया' में अनूदित हुए हैं :—

१. क–ख दोहा (त०[2] ४७-७)।
२. क-ख दोहा टिप्पण (त० ४७-८)।
३. कायकोष-अमृतवज्रगीति (त० ४७-६)।
४. चित्तकोष-अजवज्रगीति (त० १७-११)।
५. डाकिनी-वज्रगुह्यगीति (त० ४८-१०६)।
६. दोहा-कोष उपदेश गीति (त० ४७-५)
७. दोहा कोषगीति (त० ४६-६)।
८. दोहाकोषगीति। तत्त्वपदेशशिखर (त० ४७-१७)।
९. दोहा-कोष-गीतिका। भावनादृष्टि—चर्याफल (त० ४८-५)।
१०. दोहाकोष। वसन्ततिलक (त० ४८-११)
११. दोहाकोष-चर्यागीति (४७-४)।
१२. दोहाकोष-महामुद्रोपदेश (त० ४७-१३)।
१३. द्वादशोपदेश-गाथा (त० ४७-१५)
१४. महामुद्रोपदेशवज्रगुह्यगीति (त० ४८-१००)।
१५. वाक्-कोषरुचिरस्वरवज्रगीति (त० ४७-१०)
१६. सरहगीतिका (त० ४८-१४, १५)

इनकी कुछ कविताओं को देखिए—

"जह मन पवन न संचरइ, रवि शशि नाह पवेश[3]।
तहि वट चित्त बिसाम करु, सरहे कहिअ उवेश॥"
पण्डिअ सअल सत्थ बक्खाणइ
देहहि बुद्ध बसन्त न जाणइ
अमणागमण ण तेन बिखण्डिअ।
तोवि णिलज्ज भणइ हउँ पण्डिअ
जो भवु सो निवा (? ब्वाण) खलु
भेवु न मण्णहु पण्ण।
एक सभावे बिरहिअ, णिम्मलमइ पबिवण्ण।

१. नहरहक-बडू—नागार्जुनी कोंडा, जिला गुंटूर (आंध्र)।
२. त० के मानी यहाँ 'तन्-जूर' का तंत्र है।
३. 'बौद्धगान-ओ-दोहा'—बंगीयसाहित्य-परिषद्, कलकत्ता, 'सरोजवज्रेर दोहाकोष'।

घोरे न्धरें चन्दमणि, जिमि उज्जोअ करेइ।
परम महासुह एखुकणे, दुहिअ अशेष हरेइ।
जीवन्तह जो नउ जरइ, सो अजरामर होइ।
गुरु उपएसें विमलमइ, सो पर धण्णा कोइ।"

शबरपा

'शबरपा' (सिद्ध ५)--यह 'सरहपाद' के शिष्य थे। गौडेश्वर महाराज धर्मपाल (सन् ७६६-८०६ ई०) के कायस्थ (लेखक) 'लूइपा' इन्हीं के शिष्य थे। नागार्जुन को भी इनका गुरु कहा गया है; किन्तु यह शून्यवाद के आचार्य नागार्जुन नहीं हो सकते। यह अक्सर श्रीपर्वत में रहा करते थे। जान पड़ता है, शबरों या कोल-भीलों की भाँति रहन-सहन रखने के कारण इन्हें 'शबर-पाद' कहा जाने लगा। 'तन्-जूर' में इनके अनूदित ग्रन्थों की संख्या छब्बीस है, जो सभी छोटे ग्रन्थ हैं। पीछे दसवीं शताब्दी में भी एक 'शबरपा' हुए थे जो 'मैत्रीपा' या 'अवधूतीपा' के गुरु थे। इनकी भी पुस्तकें इनमें शामिल हैं। इनकी हिन्दी-कविताएँ हैं :—

१. चित्तगुह्मगम्भीरार्थ—गीति (त० ४८-१०८)।
२. महामुद्रावज्रगीति (त० ४७-२६)।
३. शून्यतादृष्टि (त० ४८–३६)।
४. षडंगयोग[1] (त० ४–२२)।
५. सहजशंवरस्वाधिष्ठान (त० १३-५)।
६. सहजोपदेश स्वाधिष्ठान (त० १३-४)।

चर्या-गीतों में इनके भी गीत मिलते हैं—

राग वलाड्डि

ऊँच ऊँच पावत तिहिं बसइ सबरी बाली।
मोरंगि पीच्छ परहिण सबरी गिवत गुंजरी माली ॥ध्रु०॥
उमत सबरो पागल शबरो मा कर गुली गुहाडा
तोहौरि णिअ घरिणी णामे सहज सुन्दारी ॥
णाणा तरुवर मोलिल रे गअणत लागेली डाली।
एकेली सबरी ए वण हिण्डइ कर्णकुण्डलवज्रधारी ॥
तिअ धाउ खाट पडिला सबरो महासुखे सेजि छाइली
सबरो भुजंग णइरामणि दारी पेहम राति पोहाइली ॥
हिअ तांबोला महासूहे कापूर खाइ।
सून निरामणि कण्ठे लइआ महासूहे राति पोहाइ ॥
गुरुवाक पुंजआ बिन्ध णिअ मणे बाणें।

1. चार, पाँच और छः न० के ग्रन्थ संस्कृत के थे या हिन्दी के, इसमें सन्देह है।

एके शर-सन्धानें बिन्धह-बिन्धह परम णिवाणें ।
उमत सबरो गरुआ रोषे ॥
गिरिवर-सिहर-संधि पइसन्ते सबरो लोडिव कइसे ॥२८॥

इनके कुछ गीति-पद्य भी देखिए—

राग द्वेशाख[1]

"नाद न विन्दु न रवि न शशि-मण्डल ॥ चचि-राअ सहावे मूकल ॥ध्रु०॥
उजु रे उजु छाडि मा लेहु रे बंग । निअहि बोहिमा जाहु रे लांक ॥
हाथेरे काम्काण मा लोउ दापण । अपणे आपा बुझतु निअ-मण ॥
पार उआरे सोइ गजिइ । दुज्जण सांगे अवसरि जाइ ॥
वाम दाहिण जो खाल विखला । सरह भणइ बपा उजुवाट भाइला ॥

राग भैरवी

"काअ णावडि खण्टि मण केडुआल । सद्गुरु वअणे घर पतवाल ॥ध्रु०॥
चीअ थिर करि धहुरे नाही । अन उपाये पार ण जई ॥
नौवाही नौका टामुअ गुणे । मेलि मेल सहजें जाउ ण आणें ॥
वाट अमअ खाण्टवि बलआ । भव उलोलें षअवि बोलिआ ॥
कुल लइ खरे सौन्ते उजाअ । सरह[2] भणइ गणें पमाणें ॥

भूसुकु

भूसुकु (सिद्ध ४१)—नालन्दा के पास के प्रदेश में, एक क्षत्रिय-वंश में पैदा हुए थे। भिक्षु बनकर नालन्दा में रहने लगे। उस समय नालन्दा के राजा (गौडेश्वर) देवपाल (८०६-८४६ ई०) थे। कहते हैं, 'भूसुकु' का नाम शान्तिदेव भी था। इनकी विचित्र रहन-सहन को देखकर राजा देवपाल ने एक बार 'भूसुकु' कह दिया और तभी से इनका नाम 'भूसुकु' पड़ गया। शान्तिदेव के दर्शन-सम्बन्धी छः ग्रन्थ 'तन्-जूर' में मिलते हैं,

---

१. बौद्धगान-उ-दोहा 'चर्याचर्य विनिश्चय' ('चर्या-गीति' नाम ठीक जँचता है)। पाठ बहुत अशुद्ध हैं। यहाँ कहीं मात्रा के ह्रस्व-दीर्घ करने से, कहीं संयुक्त वर्णों के घटाने-बढ़ाने से तथा कहीं-कहीं एकाध अक्षर छोड़ देने से छन्दोभंग दूर हो जायगा। जैसे—पहली पंक्ति में 'रवि न शशि' के स्थान पर 'रवि-शशि', 'चचि-राअ' के स्थान पर 'चीअ-राअ', 'कान्काण' के स्थानपर 'कंकण', 'आपा' के स्थान पर 'अप्पा'।

२. 'सरहपाद' संस्कृत के भी कवि थे—

"या सा संसारचक्रं विरचयति मनः सन्नियोगात्महेतोः ।
सा धीर्यस्य प्रसादाद्दिशति निजभुवंस्वामिनो निष्प्रपंच (म्)
तच्च प्रत्यात्मवेद्यं समुदयति सुखं कल्पनाजालमुक्तम् ।
कुर्यात् तस्याङ्घ्रियुग्मं शिरसि सविनयं सद्गुरोः सर्वकाल (म्)
—'चर्याचर्यविनिश्चय', पृष्ठ—१ ।

और तंत्र पर तीन ग्रन्थ। भूसुकु के नाम से भी दो ग्रन्थ हैं, जिनमें एक 'चक्रसंबरतन्त्र' की टीका है। मागधी हिन्दी में लिखी इनकी 'सहजगीति' (त० ४८,१) भोटिया-भाषा में मिलती है[१]।

राग मल्लोही

"बाज णव-पाड़ी पँउआ खालें बाहिउ, अदअ बंगाले क्लेश लुड़िउ ॥ध्रु०॥
आजि भूसु बंगाली[२] भइली, णिअ घरिणीं चण्डाली लेली ॥
डहि जो पंचघाट णइ दिबि संज्ञा णठा, ण जानमि चिअ मोर कहिं गइ पइठा ॥
सोण तरुअ मोर किम्पि ण थाकिउ, निअ परिवारे महासुहे थाकिउ ॥
चउकोडि भण्डार मोर लइआ सेस, जीवन्ते मइलें नाहि विशेष ॥"

विरुपा

विरुपा (सिद्ध ३)—महाराज देवपाल (सन् ८०६-८४६ ई०) के देश 'त्रउर' (?) में इनका जन्म हुआ था। भिक्षु बनकर 'नालन्दा' विहार में पढ़ने लगे और वहाँ के अच्छे पण्डितों में हो गये। इन्होंने देवीकोट और श्रीपर्वत आदि सिद्ध स्थानों की यात्रा की। श्रीपर्वत में इन्हें सिद्ध नागबोधि मिले। यह उनके शिष्य हो गये। पीछे नालन्दा में आकर जब इन्होंने देखा कि 'विहार' में मद्य, स्त्री आदि सहजचर्या के लिए अत्यावश्यक वस्तुओं का व्यवहार नहीं किया जा सकता है, तब वहाँ से गंगा के घाट पर चले गये। वहाँ से फिर उड़ीसा गये। इनके शिष्यों में 'डोम्भिपा' (सि० ४) और 'कण्हपा' थे। ये 'यमारितन्त्र' के ऋषि थे। 'तन्-जूर' में इनके तन्त्र-सम्बन्धी अठारह ग्रन्थ मिलते हैं, जिनमें ये ग्रन्थ मगही में थे[३]—

१. अमृतसिद्धि (त० ४७-२७)।
२. दोहाकोष (त० ४७-२४)।
३. प—दोहाकोषगीति-कर्मचण्डालिका (त० ४८-४)।
४. मार्गफलान्वितावबादक (त० ४७-२५)।
५. विरुपगीतिका (त० ४८-२६)।
६. विरुपवज्रगीतिका (त० ४८-१६)।
७. विरुपपदचतुरशीति (त० ४७-२३)।
८. सुनिष्प्रपंचतत्त्वोपदेश (त० ४३-१००)।

राग गबड़ा

"एक से शुण्डिनि दुइ घरे सान्धअ, चीअण वाकलअ वारुणी बान्धअ ॥ध्रु०॥
सहजे थिरकरी वारुणीसान्धे, जें अजरामर होइ दिट कान्धे ॥

---

१. देखिए--पुरातत्त्वनिबन्धावली, पृ० १७६ से १७७; इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग।
२. डा० भट्टाचार्य ने लिखा है—"The Rag-Sum-Jon-Zan—it is said that Santideva was a native of Saurashtra, but I am inclined to think that he belonged to Bengal. It is evident from his song आजु भूसु बंगाली भइली (ibid)
३. 'पुरातत्त्व-निबन्धावली', पृ० १७८ से १७९।

दशमि दुआरत चिह्नन देखइआ, आइल गराहक अपणे बहिआ ॥
चउशठी घड़िये देट पसारा, पइठेल गराहक नाहि निसारा ॥
एक स डुली सरुई नाल, भणन्ति 'विरुआ' थिर करि चाल" ॥

डोम्भिपा

डोम्भिपा (सिद्ध ४)—मगधदेश में क्षत्रिय-वंश में पैदा हुए। 'वीणापा' और 'विरुपा' दोनों ही इनके गुरु थे। लामा तारानाथ ने लिखा है कि यह 'विरुपा' के दस वर्ष बाद तथा 'वज्रघंटापा' के दस वर्ष पूर्व सिद्ध हुए। यह 'हेवज्रतन्त्र' के अनुयायी थे। सिद्ध 'कण्हपा' (१७) इनके भी शिष्य थे। 'तन्-जूर' में इक्कीस ग्रन्थ 'डोम्भिपाद' के नाम से मिलते हैं; किन्तु पीछे भी एक 'डोम्भिपा' हुए हैं। 'डोम्भिपा' के नाम के ये ग्रन्थ मिले हैं—

१. अक्षरद्विकोपदेश (त० ४८,६४)।
२. डोम्बिगीतिका (त० ४८,२८)।
३. नाडीविंदुद्वारे योगचर्या (त० ४८,६३)।

राग धनसी

"गंगा जउना माझेरें बहइ नाई,
तहिं बुड़िली मातंगि पोइआ लीले पार करेइ ॥ध्रु०॥
वाहतु डोम्बी वाहलो डोम्बी वाटत भइल उछारा,
सद्गुरु पाअ-पए जाइब पुणु जिणउरा ॥
पाँच केडुआल पड़न्ते माँगें पिटत काच्छी बान्धी,
गअणदुखोलें सिंचहु पाणी न पइसइ सान्धी ॥
चन्द सूउज दुइ चका सिठिसंहार पुलिन्दा,
वाम दहिण दुइ माग न रेवइ बाहतु छन्दा ॥
कबडी न लेइ बोडी न लेइ सुच्छड़े पार करेइ,
जो रथे चड़िला वाहवाण जाइ कुलें कुले बुड़इ" ॥

'भिक्षावृत्ति' में इनका यह दोहा मिलता है—

"भुंजइ मअण सहावर कमइ सो सइअल।
मोअ ओधर्म करण्डिया, मारउ काम सहाउ।
अच्छउ अक्खं जे पुनइ, सो संसार-विमुक्क।
ब्रह्म महेसरणारायणा, सक्ख असुद्ध सहाव ॥"

कम्बलपाद

कम्बलपाद (सिद्ध ३०)—ओडिविश (उड़ीसा) के राजवंश में इनका जन्म हुआ। भिक्षु होकर त्रिपिटक के पण्डित बने। पीछे सिद्ध वज्रघंटापा (५२) के सत्संग में पड़े और उनके शिष्य हो गये। इनके गुरु सिद्धाचार्य 'वज्रघंटापाद' या 'घंटापाद' उड़ीसा में कई वर्ष रहे और उनके ही कारण उड़ीसा में वज्रयान का बहुत प्रचार हुआ। सिद्ध राजा 'इन्द्रभूति' इनके शिष्य थे। 'कम्बलपाद' बौद्ध दर्शन के भी पण्डित थे। 'प्रज्ञापारमिता'-दर्शन

पर इनके चार ग्रन्थ भोटिया में मिलते हैं। इनके तन्त्र-ग्रन्थों की संख्या ग्यारह है, जिनमें निम्नांकित प्राचीन उड़िया या मगही भाषा में थे—

१. असम्बन्ध-दृष्टि (त० ४८/३८)।
२. असम्बन्ध दृष्टि (त० ४८/३६)।
३. कम्बलगीतिका (त० ४८/३०)।

राग देवक्री

"सोने भरिती करुणा नावी, रुपा थोइ महिके ठावी ॥ ध्रु० ॥
वाहतु कामलि गअण उवेसें, गैली जाम बहु उइ काइसें ॥
खुन्टि उपाड़ी मेलिलि काच्छि, वाहतु कामलि सद्गुरु पुच्छि ॥
माँगत चन्हिले चउदिस चाहअ, केइ आल नहि कें कि बाहब के पारअ ॥
वामदाहिण चापो मिलि मिलि मागा, वाटत मिलिल महासुह संगा ॥

कुक्कुरिपा

कुक्कुरिपा (सिद्ध ३४)—कपिलवस्तु प्रदेशवाले क्षेत्र में, एक ब्राह्मणकुल में इनका जन्म हुआ था। 'मीनपा' (८) के गुरु 'चर्पटीपा' इनके भी गुरु थे। इनके शिष्य 'मणिभद्रा' चौरासी सिद्धों में से एक (६५) हैं। 'पद्मवज्र' भी इनके ही शिष्य थे। 'तन्-जूर' में इनके सोलह ग्रन्थ मिलते हैं जिनमें निम्नलिखित हिन्दी के मालूम होते हैं—'तत्त्व-सुख भावनानुसारियोगभावनोपदेश' (त० ४८/६५) और 'स्रवपरिच्छेदन' (त० ४८/६६)।

राग गवड़ा

"दुलि दुहिपिटाधरण न जाइ, रुखेर तेन्तलि कुम्भीरे खाअ ॥ ध्रु० ॥
आंगन घरपणसुन भो विआती; कानेट चौरि निल अधराती ॥
सुसुरा निद गेलबहुडी जागअ, कानेट चोरे निल का गइ मागअ ॥
दिवसइ बहुड़ी काड़इ डरे भाअ, राति भइले कामरु जाअ ॥
अइसन चर्याकुक्करीपाएँ गाइड, कोड़ि मझें एकुड़ि अहिं समाइड़ ॥

राग पटंजरी

"हांउ निवासी खमण भतारे, मोहोर विगोआकहण न जाइ ॥ ध्रु० ॥
फेट लिउ गो माए अन्त उड़ि चाहि, जा एथु बाहाम सो एथु नाहि ॥
पहिल बिआण मोर वासन पूड़, नाड़ि विआरन्ते सेव वापूड़ा (१) ॥
जाण जौवण मोर भइलेसि पूरा, मूल नखलि बाप संघारा ॥
भणथि कुक्कुरीपाये भव थिरा, जो एथु बुझएँ सो एथु वीरा ॥
हले सहि विअ सिअ कमल पवाहिउ वज्जें। अललालल हो महासुहेण आरोहिउ नृत्ये।
रविकिरणेण पफुल्लिअ कमलु महासुहेण। (अल) आरोहिउ नृत्यें ॥"

गोरखनाथ

गोरखनाथ की जीवनी के सम्बन्ध में 'नाथ सम्प्रदाय' नामक ग्रन्थ से हम कुछ उद्धरण

नीचे देते हैं। इस पुस्तक के पृ० ९६ में श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है—

"विक्रम संवत् दसवीं शताब्दी में भारतवर्ष के महान् गुरु गोरखनाथ का आविर्भाव हुआ। शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली महिमान्वित महापुरुष भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। भारतवर्ष के कोने-कोने में उनके अनुयायी आज भी पाये जाते हैं। भक्ति-आन्दोलन के पूर्व सबसे शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन गोरखनाथ का योगमार्ग ही था। भारतवर्ष की ऐसी कोई भाषा नहीं है, जिसमें गोरखनाथ-सम्बन्धी कहानियाँ नहीं पाई जाती हों। इन कहानियों में परस्पर ऐतिहासिक विरोध बहुत अधिक है; परन्तु फिर भी इनसे एक बात स्पष्ट हो जाती है कि गोरखनाथ अपने युग के सबसे बड़े नेता थे। इस महान् धर्म गुरु के विषय में ऐतिहासिक कही जाने लायक बातें बहुत कम रह गई हैं। ये मार्ग के महत्त्व-प्रचार के अतिरिक्त कोई विशेष प्रकाश नहीं देतीं।"

उनके जन्मस्थान का कोई निश्चित पता नहीं चलता। इस सम्बन्ध में डॉ० द्विवेदी लिखते हैं—

"ब्रिग्स ने एक परम्परा का उल्लेख किया है जिसे ग्रियर्सन ने भी उद्धृत किया है। उसमें कहा गया है कि गोरखनाथ सत्युग में पंजाब में, त्रेता में गोरखपुर में, द्वापर में द्वारका के भी आगे हुरभुज में, और कलिकाल में काठियाबाड़ गोरखमढ़ी में प्रादुर्भूत हुए थे। बंगाल में विश्वास किया जाता है कि गोरखनाथ उसी प्रान्त में उत्पन्न हुए थे। नेपाली परम्पराओं से अनुमान होता है कि गोरखनाथ पंजाब से चलकर नेपाल गये थे। गोरखपुर के महन्त ने ब्रिग्स साहब को बताया था कि गुरु गोरखनाथ 'टिला' (झेलम पंजाब) से गोरखपुर आये थे। ग्रियर्सन ने इन्हें गोरखनाथ का सतीर्थ कहा है; परन्तु 'धरमनाथ' बहुत परवर्ती हैं। ग्रियर्सन ने कहा है कि गोरखनाथ संभवतः पश्चिमी हिमालय के रहनेवाले थे। इन्होंने नेपाल को आर्य अवलोकितेश्वर के प्रभाव से निकाल कर शैव बनाया था। मेरा अनुमान है कि गोरखनाथ निश्चित रूप से ब्राह्मण जाति से उत्पन्न हुए थे और ब्राह्मण वातावरण में ही बड़े हुए थे। उनके गुरु मत्स्येन्द्रनाथ भी शायद ही कभी बौद्ध साधक रहे हों।"

ये तो विद्वानों के मत हैं जो गोरखनाथ के जन्मस्थान के सम्बन्ध में है। परन्तु 'बड़थ्वाल' जी द्वारा सम्पादित 'गोरखबानी' नामक पुस्तक के पृ० २१२ में 'ग्यान तिलक' के १९ नम्बर का छन्द है :—

> **"पूरब देश पछाहीं घाटी (जनम) लिख्या हमारा जोगं।**
> **गुरु हमारा नावंगर कहिए ये है भरम बिरोगं॥**

इस छन्द का अर्थ यद्यपि अध्यात्मपक्ष में बड़थ्वाल जी ने किया है; पर इसके प्रथम चरण से अर्थ निकलता है कि गोरखनाथ का जन्म पछाँह की घाटियों में हुआ और उनके जीवन का कार्य्य-क्षेत्र पूरब देश बना। विद्वानों का ध्यान इस छन्द पर क्यों नहीं गया, यह आश्चर्य्य की बात है। इससे और ब्रिड्स साहब की गोरखपुर के महन्त की बताई हुई बात से बिलकुल मेल भी खा जाता है।

'कल्याण' के 'योगांक' में[1] गोरखनाथ जी का परिचय निम्नलिखित रूप में दिया गया है—

१. प्रकाशक—गीता प्रेस, गोरखपुर। संवत् १९९२; पृष्ठ ७८३।

"एक बार गुरु मत्स्येन्द्रनाथ घूमते-फिरते अयोध्या के पास 'जयश्री' नामक नगर में गये। वहाँ वे भिक्षा माँगते हुए एक ब्राह्मण के घर पहुँचे। ब्राह्मणी ने बड़े आदर के साथ उनकी झोली में भिक्षा डाल दी। ब्राह्मणी के मुख पर पातिव्रत्य का अपूर्व तेज था। उसे देखकर मत्स्येन्द्रनाथ को बड़ी प्रसन्नता हुई। परन्तु साथ ही उन्हें उस सती के चेहरे पर उदासी की एक क्षीण रेखा दिखाई पड़ी। जब उन्होंने इसका कारण पूछा तब उस सती ने निःसंकोच भाव से बताया कि सन्तान न होने से संसार फीका जान पड़ता है। मत्स्येन्द्रनाथ ने तुरत झोली से थोड़ी-सी भभूत निकाली और ब्राह्मणी के हाथ पर रखते हुए कहा—'इसे खा लो। तुम्हें पुत्र प्राप्त होगा।' इतना कह कर वे तो चले गये। इधर एक पड़ोसिन स्त्री ने जब यह बात सुनी तब ब्राह्मणी को भभूत खाने से मना कर दिया। फलस्वरूप उसने उस राख को एक गड्ढे में फेंक दिया। बारह वर्ष बाद मत्स्येन्द्रनाथ उधर पुनः आये और उन्होंने उसके द्वार पर जाकर अलख जगाया। ब्राह्मणी के बाहर आने पर उन्होंने कहा कि अब तो बेटा बारह वर्ष का हो गया होगा, देखूँ तो वह कहाँ है? यह सुनते ही वह स्त्री घबरा गई और उसने सारा हाल सच-सच कह दिया। मत्स्येन्द्रनाथ—उसे साथ लेकर उस गड्ढे के पास गये, और वहाँ भी अलख जगाया। आवाज सुनते ही बारह वर्ष का एक तेजपुञ्ज बालक प्रकट हुआ और मत्स्येन्द्र नाथ के चरणों पर सिर रखकर प्रणाम करने लगा। यही बालक आगे चलकर गोरख-नाथ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। मत्स्येन्द्रनाथ ने उस समय से ही बालक को साथ रखा और योग की पूरी शिक्षा दी। गोरखनाथ ने गुरोपदिष्ट मार्ग से साधना पूरी की और स्वानुभव से योगमार्ग में और भी उन्नति की। योगसाधन और वैराग्य में वे गुरु से भी आगे बढ़ गये। योगबल से उन्होंने चिरंजीव स्थिति को प्राप्त किया।

"गोरखनाथ केवल योगी ही नहीं थे, वरन् वे बड़े विद्वान् और कवि भी थे। उनके 'गोरक्ष सहस्र नाम', 'गोरक्षशतक', गोरक्ष पिष्टिका', 'गोरक्ष गीता', 'विवेक मार्तण्ड' आदि अनेक ग्रन्थ संस्कृत भाषा में मिलते हैं। हिन्दी में भी उनकी बहुत-सी कविताएँ मिलती हैं।"

नेपाल के लोग श्रीगोरखनाथ को श्रीपशुपतिनाथ जी का अवतार मानते हैं। नेपाल के भोगमती, भातगाँव, मृगस्थली, औंधरा, स्वारी कोट, पिडपन इत्यादि कई स्थानों में उनके योगाश्रम हैं। आज भी नेपाल राज्य की मुद्रा पर एक ओर श्री-श्री-श्री गोरखनाथ लिखा रहता है। गोरखनाथ जी के शिष्य होने के कारण ही नेपाली गोरखा कहलाते हैं। कहते हैं, गोरखपुर में उन्होंने तपस्या की थी। यहाँ उनका बहुत बड़ा मन्दिर है, जहाँ दूर-दूर से नेपाली आया करते हैं। गोंडा जिले के 'पटेश्वरी' नामक स्थान में भी उनका योगाश्रम है तथा महाराष्ट्र प्रान्त में आठवें 'नागनाथ' के पास उनकी तपस्थली है।

डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल के अनुसार गोरखनाथ विक्रम की ११वीं सदी में हुए थे। श्री रामचन्द्र शुक्ल ने भी अपनी 'हिन्दीसाहित्य का इतिहास' पुस्तक में बड़ी विवेचना करके गोरखनाथ के समय के सम्बन्ध में लिखा है,—"गोरखनाथ विक्रम की १०वीं सदी

में हुए हों, चाहे १३वीं में।" राहुल सांकृत्यायनजी ने भी बज्रयानी सिद्धों की परपरा के बीच गोरखनाथ का समय विक्रम की दसवीं शताब्दी ही माना है।

"यद्यपि कुछ ऐसे भो साक्ष्य हैं, जिनके आधार पर गोरखनाथ का समय बहुत पीछे की ओर ले जाया जा सकता है, तथापि जबतक यथेष्ट प्रमाण न मिलें, इनका समय संवत् १०५० मानना ही अधिक उचित होगा। हिन्दी का जो प्राचीनतम रूप गोरख की बानियों में मिलता है, उससे भी यह समय ठीक ठहरता है।"

गोरखनाथ के चमत्कार के सम्बन्ध में सारे भारत में अनेकानेक कहानियाँ प्रसिद्ध हैं। एक कहानी के अनुसार—"एक बार मत्स्येन्द्रनाथ सिंहलद्वीप की रानी पद्मावती में आसक्त हो गये थे; किन्तु गोरक्षनाथ के प्रयत्न करने पर उनका उद्धार हुआ। हाल में ही मत्स्येन्द्रनाथ की लिखी संस्कृत को किसी 'कौलीय' पुस्तक का पता चला है। इससे प्रतीत होता है कि उनके पतन का कारण 'कौलीय' प्रवृत्ति का बढ़ जाना था (जिससे गोरक्षनाथ ने ही उनकी रक्षा की)। गोरक्षनाथ ने कौलीय पद्धति को भलीभाँति देख लिया था, अतः उस ओर भूलकर भो दृष्टि-विक्षेप न किया। योगिराज गोरक्ष को अपनी सात्विक पद्धति पर कितना विश्वास था, यह नीचे के पद्य से स्पष्ट हो जाता है।

सबद हमारा षरतर षांडा, रहणि हमारी साँचा।
लेषै लिखी न कागदमा-डी, सो पत्नी हम बाँची॥"(गो० बानी)

"पद्मावती में आसक्त मत्स्येन्द्र को गोरख बार-बार सचेत करते हैं—

सुणौं हो मछिंद्र गोरषबोले, अगम गवंन कहूँ हेला।
निरति करी नैं नीका सुणिज्यौ, तुम्हें सतगुरु मैं चेला॥" (गो० बानी)

महात्मा गोरखनाथ ने भोजपुरी में रचनाएँ की हैं, यह शुक्लजी, बड़थ्वालजी और हजारीप्रसादजी तीनों ने स्वीकार किया है। शुक्ल जी ने 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' नामक पुस्तक में स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है—"पहली बात है भाषा। सिद्धों की उद्धृत रचनाओं की भाषा देश-भाषा मिश्रित अपभ्रंश अर्थात् पुरानी हिन्दी की काव्य-भाषा है, यह तो स्पष्ट है। उन्होंने भरसक उसी सर्वमान्य व्यापक काव्य-भाषा में लिखा है, जो उस समय गुजरात, राजपुताने और ब्रजमंडल से लेकर बिहार तक लिखने-पढ़ने की शिष्ट भाषा थी। पर मगध में रहने के कारण उनकी भाषा में कुछ पूरबी प्रयोग भी (जैसे भइले, बूड़िल) मिले हुए हैं।"

यहाँ हम कहना चाहते हैं कि शुक्लजो, पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी तथा पश्चिम प्रदेश के अन्य विद्वानों ने जिसे पूरबी प्रयोग कहा है, उसमें भोजपुरी के प्रयोग भी सम्मिलित हैं।

पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी अपनी विख्यात पुस्तक 'नाथ संम्प्रदाय' के पृ० ६८ में लिखा है—"उन्होंने (गोरखनाथ ने) लोकभाषा को भी अपने उपदेशों का माध्यम बनाया। यद्यपि उपलब्ध सामग्री से यह निर्णय करना बड़ा कठिन है कि उनके नाम पर चलनेवाली लोक-भाषा की पुस्तकों में कौन-सी प्रामाणिक हैं और उनकी भाषा का विशुद्ध

रूप क्या है, तथापि इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने अपने उपदेश लोक-भाषा में प्रचारित किये थे।"

डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने गोरखनाथ के ३६ हिन्दी-ग्रन्थों को प्रामाणिक माना है। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने उनसे सहमति प्रकट करते हुए लिखा है कि सूची के पूर्व के प्रथम चौदह ग्रन्थ, जिन्हें बड़थ्वाल जी ने निस्संदिग्ध रूप से प्राचीन माना है, अवश्य प्राचीनतम प्रतियाँ हैं।

उक्त ग्रन्थों की नामावली

१—सबदी।
२—पद।
३—सिष्या दरसन।
४—प्राण संकली।
५—नरवै बोध।
६—आत्म बोध।
७—अभैमात्रा योग।
८—पंन्द्रह तिथि।
९—सप्तवार।
१०—मछिन्द्र गोरख बोध।
११—रोमावली।
१२—ग्यान तिलक।
१३—ग्यान चौतीसा।
१४—गोरख गणेश गुष्टि।
१५—गोरख दत्त गोष्ठी (ग्यान दीप बोध)।
१६—महादेव गोरख गुष्टि।
१७—सिष्ट पुरान।
१८—दया बोध।
१९—जाती भौंरावली (छंद गोरख)।
२०—नवग्रह।
२१—नव रात्र।
२२—अष्ट परिच्छा।
२३—रहरास।
२४—ग्यान माला।
२५—आत्म बोध (२)।
२६—व्रत।
२७—निरंजन पुराण।
२८—गोरख वचन।
२९—इन्द्री देवता।
३०—मूल गर्भावली।
३१—खाणी वाणी।
३२—गोरख सत।
३३—अष्ट मुद्रा।
३४—चौबीस सिधि।
३५—षड्क्षरी।
३६—पंच अग्नि।
३७—अष्ट चक्र।
३८—अवली सिलक।
३९—काफिर बोध।

'गोरखवानी' में उद्धृत सभी छन्द इन्हीं पुस्तकों के छन्द हैं, जिनके पाठ को बड़थ्वाल जी ने दस हस्तलिखित पुस्तकों से लिया है। मैंने जब उन छन्दों का अध्ययन किया और भाषा की जाँच की तब भोजपुरी भाषा की बहुत-सी कविताएँ मिलीं। अनेक कविताएँ तो मुहावरे और प्रयोग तथा क्रिया की दृष्टि से विशुद्ध भोजपुरी की हैं और अधिक में उस समय के अपभ्रंश के शब्द, जैसा कि शुक्लजी ने लिखा है, भोजपुरी क्रियाओं तथा मुहावरों के साथ व्यवहृत हैं। मैंने उन्हीं पाठों के साथ गोरखनाथ की भोजपुरी रचनाएँ यहाँ उद्धृत की हैं, जिनसे पता लग सके कि आज से दस सौ वर्ष पूर्व भोजपुरी का क्या रूप था?

नीचे की सरणी से स्पष्ट हो जायगा कि 'गोरखबानी' में दिये हुए गोरखनाथ जी के ग्रन्थों में भोजपुरी के छन्द कितनी मात्रा में हैं। इन भोजपुरीवाले सभी छन्दों की भाषा को भी हम सर्वत्र केवल भोजपुरी ही नहीं मान सकते। इनमें अधिकांश शब्द तो भोजपुरी, के हैं; किन्तु कुछ ऐसे छन्द भी हैं, जिनकी भाषा मिश्रित कही जायगी, फिर भी भोजपुरी क्रिया होने के कारण उनकी गणना भोजपुरी छन्द में कर ली गई है।

नाम पुस्तक	संख्या छन्द	भोजपुरी भाषा के छन्दों की संख्या
१—सबदी	२७५	४६
२—पद	६२	२०
३—शिष्या दरसन	३१ (पंक्तियाँ)	७ (पंक्तियाँ)
४—आत्म बोध	२२	२
५—नरवै बोध	१४	१
६—सप्तवार	८	१
७—मछिन्द्र गोरष बोध	१२७	१०
८—रोमावली	५५ (पंक्तियाँ)	०
९—ग्यान तिलक	४५	०
१०—पंच मात्रा	२४	०
११—गोरष गणेश गुष्टि	५२	०

'गोरखबानी' के लेखक ने जिन विभिन्न पुरानी पाण्डु-लिपियों में छन्दों के जितने भी पाठ पाये हैं, उनके उदाहरण वर्ण-चिह्नों आदि के अनुसार अपनी पुस्तक के फुटनोट में हर भेद वाले पाठ के साथ दे दिये हैं। उसी क्रम का पालन 'गोरखबानी' से गोरखनाथ के छन्दों का उद्धरण करते समय भी किया गया है। पाण्डु-लिपियों का सांकेतिक वर्ण-चिह्न के लिए जो सरणी बड़थ्वाल जी ने दी है, उसको यहाँ इसलिए उद्धृत कर दिया जाता है। उसकी सहायता से पाठक उद्धृत पाठ भेद को समझ सकेंगे।

(क) 'प्रतिपौड़ी हस्तलेख' गढ़वाल के पंडित तारादत्त गैरोला को जयपुर से प्राप्त हुआ था। इसके चार विभाग हैं। समय संवत् १७१५ के आसपास होना चाहिए।

(ख) जोधपुर दरबार पुस्तकालय की प्रति। जोधपुर के पुरातत्त्व-विभाग के अध्यक्ष पं० विश्वेश्वरनाथ रेऊ ने इसकी नकल कराकर भेजने की कृपा की। परन्तु इसमें गोरखनाथ की रचनाओं में केवल 'सबदियाँ' आई हैं।

(ग) यह प्रति मुझे जोधपुर के श्रीगजराज ओझा से उपलब्ध हुई। लिपिकाल इसका भी ज्ञात नहीं।

(घ) यह प्रति मुझे जोधपुर के कवि श्री 'शुभकरण चरण' से प्राप्त हुई। यह बृहत् संग्रह-ग्रन्थ है जिसे एक निरंजनी साधु ने प्रस्तुत किया। यह प्रति संवत् १८२५ में लिखी गई थी।

(ङ) मंदिर बाबा हरिदास, नारनौल, राज्य पटियाला में है और कार्तिक शुदी अष्टमी गुरुवार १७६४ को लिखी गई है।

(च) यह प्रति श्रीपुरोहित हरिनारायणजी, बी० ए०, जयपुर के पास है। इसमें बहुत-से ग्रन्थ हैं। प्रति का लिपिकाल पुस्तिका में इस प्रकार दिया है—

संवत् १७१५ वर्षे शाके १५८० महामंगलीक फाल्गुन मासे शुक्ल पक्षे त्रयोदस्यां तिथौ १३ गुरुवासरे: डिंडपुर मधयेस्वामी पिराग दास जी शिष्य स्वामी माधोदास जी तत्शिष्य वृन्दावनेनालेखि आत्मार्थे।

(छ) यह प्रति भी पुरोहित जी के पास है। यह भी संग्रह-ग्रन्थ बड़ा है। रज्जब जी की साखी की समाप्ति के बाद जो योगियों की बानी के कुछ पीछे आती है, लिपिकाल में यों दिया है—

संवत् १७४१ जेठ मासे ॥ थावर वारे ॥ तिथिता ॥८॥ दीन ५ मैं लिषि पति स्वामी साईं दास की सु लिषि ॥

(ज) यह प्रति भी उक्त पुरोहित जी के पास है और सं० १८५५ की लिखी है।

(झ) इस प्रति की नकल एक महत्त्वपूर्ण सूत्र के द्वारा कराई गई है।

इनके अतिरिक्त इन योगियों की रचनाओं के एक संस्कृत-अनुवाद की हस्तलिखित प्रति मिलती है, जो सरस्वती-भवन, काशी में है। इसमें लिपिकाल नहीं दिया गया है और आरंभ का कुछ अंश नहीं है।

'गोरखबानी' के भोजपुरी छन्द

सबदी

हसिबा षेलिबा रहिबा रंग। कांम क्रोध न करिबा[1] संग॥
हसिबा षेलिबा गाइबा गीत। दिढ[2] करि राषिबा आपनां[3] चीत[4] ॥ पृ०—३।

हँसूँगा, खेलूँगा, मस्त रहूँगा; किंतु कभी काम, क्रोध का साथ न करूँगा। हँसूँगा, खेलूँगा और गीत भी गाऊँगा; किंतु अपने चित्त को दृढ करके रखूँगा।

हसिबा षेलिबा धरिबा ध्यांन। अहनिसि कथिबा ब्रह्म गियान।
हसै षेलै न करै मन भंग। ते निहचल सदा नाथ के संग॥ पृ०—४।

हँसूँगा, खेलूँगा और ध्यान-धारणा करूँगा। रात-दिन ब्रह्म-ज्ञान का कथन करूँगा। इसी प्रकार (संयमपूर्वक) हँसते खेलते हुए जो अपने मन को भंग नहीं करते, वे निश्चल होकर ब्रह्म के साथ रमण करते हैं अथवा निश्चित रूप से मेरे साथ रह सकते हैं।

गगन[5] मंडल मैं ऊंधा[6] कूवा, तहाँ अंमृत[7] का बासा।
सगुरा[8] होइ सु भरि भरि पीवै निगुरा जाइ पियासा ॥२॥ पृ०—६।

आकाशमंडल (शून्य अथवा ब्रह्मरंध्र) में एक औंधे मुँह का कुँआ है, जिसमें अमृत का वास है। जिसने अच्छे गुरु की शरण ली है, वही उसमें से भर-भर कर अमृत पी सकता है। जिसने किसी अच्छे गुरु को धारण नहीं किया, वह इस अमृत का पान नहीं कर सकता, वह प्यासा ही रह जायगा॥

---

१. 'न करिबा' के स्थान पर 'का तजिबा'। २. डिढि। ३. आंपणां, अपणां।
४. च्यंत, चित। ५. गीगनि। ६. औंधा, (ख) ऊधा,। ७. अम्रत, (घ) यंम्रत,
(ख) में लिपिकर्त्ता पहले दो अक्षरों को पढ़ नहीं सका।

हबकि[1] न बोलिबा, ठबकि[1] न चलिबा धीरैं[2] धरिबा पावं।
गरब न करिबा सहजैं[3] रहिबा भणत[4] गोरष रावं॥ पृ०—११।

सब व्यवहार युक्त होने चाहिए, सोच-समझकर काम करना चाहिए। अचानक फट से बोल नहीं उठना चाहिए। जोर से पाँव पटकते हुए नहीं चलना चाहिए। धीरे-धीरे पाँव रखना चाहिए। गर्व नहीं करना चाहिए। सहज स्वाभाविक स्थिति में रहना चाहिए। यह गोरखनाथ का उपदेश (कथन) है।

धाये[5] न षाइबा[6] भूषे[7] न मरिबा[8] अहनिसि[9] लेबा[10] ब्रह्म अगनि का भेवं।
हठ न करिबा पड़्या[11] न रहिबा यूँ बोल्या गोरष देवं[12]॥

भोजन पर टूट नहीं पड़ना चाहिए (अधिक नहीं खाना चाहिए), न भूखे ही मरना चाहिए। रात-दिन ब्रह्माग्नि को ग्रहण करना चाहिए। शरीर के साथ हठ नहीं करना चाहिए और न पड़ा ही रहना चाहिए।

दषिणी[13] जोगी रंगा, पूरबी[14] जोगी बादी।
पछमी जोगी बाला भोला, सिध जोगी उतराधी॥ पृ०—१६।

योग-सिद्ध के लिए उत्तराखंड का महत्त्व ४१-४२ सबदियों में कहा गया है। स्वयं गोरखनाथ ने हिमालय की कंदराओं में योग-साधन किया था, ऐसा जान पड़ता है। कहते हैं दक्षिणी रंगी होता है और पूरबी-प्रकृति का होता है। पश्चिमी योगी भोलाभाला स्वभाव का तथा उत्तराखंड का योगी सिद्ध होता है।

अवधू दमकौं[15] गहिबा उनमनि[16] रहिबा, ज्यूं[17] बाजबा अनहद तूरं।
गगन मंडल मैं तेज[18] चमंकै[19], चंद नहीं तहाँ सारं॥
सास उसास वाइ[20] कौं भषिबा[21] रंकि लेहु[22] नव द्वार।
छठै छमासि काया पलटिबा[23], तब उनमँनी जोग अपारं॥ पृ०—१६।

हे अवधूत, दम (प्राण श्वास को पकड़ना चाहिए, प्राणायाम के द्वारा उसे वश में करना चाहिए। इससे उन्मनावस्था सिद्ध होगी। अनाहत नाद रूपी तुरी बज उठेगी और ब्रह्मरंध्र में बिना सूर्य या चंद्रमा के (ब्रह्म का) प्रकाश चमक उठेगा॥

(केवल कुम्भक द्वारा) श्वासोच्छ्वास का भक्षण करो। नवों द्वारों को रोको। छठे छमासे कायाकल्प के द्वारा काया को नवीन करो। तब उन्मन योग सिद्ध होगा॥

१. (ख), (ग), (घ) हबके—ढबके। २. (ग) धीरा (घ) धीरै। ३. (ख) सहजै (ग) सहिजै। ४. (ख) यूँ भणत, (ग) यौं बोल्या। ५. (ख) धावे। ६ (ख), (घ) षायबा। ७ (ग), (घ) भूषा। ८. (ग), (घ) रहिबा। ९. (क) अहनिस, (ख) अहिनिसि। १० (ख) लेइबा। ११. (क) पड़े, (ख) पड़ि। १२. (घ) रावं। १३. (क) दछिणी, (ख), (घ) दिषणी। १४. (ख), (ग), (घ) पुरब-पछिम। १५. (ख), (ग), (घ) दमकूं। १६. (क) उनमन (घ) उनमन्य। १७. (ग), (घ) तब। १८. (ख) जोति। १९. (क), (ख), (ग) चमकै। २०. (ग), (घ) बाय। २१. (क) मछिबा। २२. (ख) लेबा, (ग) लै, (घ) लेह। २३. (ग) (घ,) पलटै।

बड़े बड़े[1] कूले[2] मोटे मोटे पेट, रे पूता गुरु सौं[3] भेंट।
खड़ खड़काया निरमल नेत,[4] भई[5] रे पूता गुरु सौं भेंट ॥१०९

गो० बा०, पृ० १८

जिनके बड़े-बड़े कूल्हे और मोटी तोंद होती है, (उन्हें योग की युक्ति नहीं आती। समझना चाहिए कि) उन्हें गुरु से भेंट नहीं हुई है। या तो उन्हें अच्छा योगी गुरु मिला ही नहीं है अथवा गुरु के शरीर के दर्शन होने पर भी उसकी वास्तविकता को उन्होंने नहीं पहचाना है, उनकी शिक्षा से लाभ नहीं उठा पाया है, वे उसके अधिकारी नहीं हुए हैं। यदि (साधक का) शरीर खड़ खड़ (चरबी के बोझ) से मुक्त है और उसके नासा-रंध्र निर्मल अथवा उसकी आँखें (नेत्र) निर्मल, कांतिमय हैं तो (समझना चाहिए कि उसकी) गुरु से भेंट हो गई है; नेत=(१) मंथन की डोरी। इसी से नेति क्रिया का नाम बना है। इस क्रिया में नासारंध्रों में डोरी (नेत) का उपयोग होता है, इस लिए साहचर्य से नासारंध्र अर्थ भी सिद्ध होता है। (२) आँख॥

एकटी विकुटी त्रिकुटी संधि पछिम द्वारे पवनां बंधि।
षूटै तेल न बूझै दीया बोलैनाथ निरन्तरि हूवा। १८७ गो० बा० पृ० १८

एकटी (पहलज, इडा) और विकुटी (दूसरी, पिंगला) का जब त्रिकुटी (तीसरी सुषुम्ना) में मेल होता है और सुषुम्ना-मार्ग में जब पवन का निरोध हो जाता है तब साधक अमर हो जाता है। उसका आयु रूप तेल समाप्त नहीं होता और जीवन रूपी शिखा बुझती नहीं है। इस प्रकार नाथ कहते हैं कि साधक निरन्तर अर्थात् नित्यस्वरूप हो जाता है।

एक=स्वार्थे टा (स्त्री० ई) उपसर्ग के लगने से एकटी शब्द सिद्ध हुआ है। इसके अनुकरण पर द्वि से विकुटी और त्रि से त्रिकुटी शब्द बने हैं। त्रिकुटी भी अभिप्रेत है॥

राग रामश्री

छाँटै तजौ गुरु छाँटै तजौ तजौ[6] लोभ मोह[7] माया।
आत्मां परचै राषौ गुरुदेव[8] सुन्दर काया ॥टेक॥
कांन्हीं पाव[9] भेटीला गुरु बद्यानम्रे सैं।[10]
तार्थै मैं पाइला गुरु, तुम्हारा उपदेसैं[11] ॥१॥
ओतैं कछू[12] कथीला गुरु, सर्वैंभैला[13] भोलै।
सर्ब[14] रस षोइला गुरु, बाघनी चै[15] पोलै ॥२॥

१. (ग) बड़ै बड़ै २. (ख) (ग) (घ) कूला। यह सबदी (ग) (घ) में कुछ अंतर के साथ है। (ग) में इस प्रकार है।

बड़े बड़े कूला असथूल, जोग जुगति का न जाणै मूल।
खाया भात फुलवा या पेट, नहीं रे पुता गुर स्यौं भेट॥

३. (ख) स्यूं (ग) स्यौं (घ) सूं। ४. (ख) नेत्र। ५. (ख) होइ रै, (घ) हुई रे। ६. (घ) में नहीं। ७. (घ) अरु। ८. (घ) गुरुदेव राषौ। ९. (घ कांन्ही पान। १०. (घ) विद्याप्रेसं। ११. उपदेसं। १२. (घ) ओता काय। १३. (घ) सरब भला। १४. (घ) सरब। १५. (घ) बाघणी कै, (घ) बाघणी।

नाचत गोरषनाथ घूंघरी, घातैं।
सबैं[1] कमाई षोई गुरु, बाघनी चै राचैं ॥३॥
रस कुस बहि गईला, रहि गई छोई।
भणत मछिंद्रनाथ पूता, जोग न होई ॥४॥
रस-कुस[2] बहि गईला रहि गईला[3] सार।
बदंत गोरषनाथ गुर[4] जोग अपार ॥५॥
आदिनाथ नाती मछिन्द्रनाथ पूता ॥
षटपदी भणीलै[5] गोरष अवधूता[6] ॥६॥ पृ०—८७।

हे गुरु, लोभ और माया को (छाँटै) अलग से अर्थात् बिना स्पर्श किये हुए छोड़ दो। हे गुरुदेव, आत्मा का परिचय रक्खो जिससे यह सुन्दर काया रह जाय, नष्ट न हो। विद्यानगर के (या—से आए हुए) कान्हपाद से भेंट हुई थी। उसी से आपकी इस दशा का पता लगा कि आप कामिनियों के जाल में पड़े हुए हैं। (गुरु संबंधी होने के कारण कान्हपाद के कहे हुए संदेश को 'उपदेश' कहा है।) यह जो कुछ कहा है, अर्थात् आपका पतन भ्रम के कारण हुआ है। आपने अमृत रस को बाघनी (माया) की गोद में (षोलै, कोरै क्रोड़ में) खो दिया है। गोरख कहते हैं कि बाघनी (माया) के घूँघरू के बजने के स्वर के साथ ताल मिला कर नाचते हुए माया के प्रेम (राचं) से हे गुरु, तुमने अपनी सारी आध्यात्मिक कमाई खो डाली है।

रस कुस-तरल पदार्थ। छोई—संभवतः राख। निस्सार वस्तु। गढ़वाल में कपड़े धोने के लिये 'छोई' बनाई जाती थी। वहाँ 'छोई' राख को पानी में मिलाकर विधि विशेष से छानकर निकाले पानी को कहते हैं। यहाँ उसका उलटा अर्थ जान पड़ता है। तुम्हारा रस बह गया। सीठी शरीर में बच रही है। मछिन्द्रनाथ पुत्र कहता है कि गुरु, तुमसे अब योग न होगा। तुम्हारा रस कुस बह गया। सार रह गया। गोरखनाथ कहते हैं कि हे गुरु, योग-विद्या अपार विद्या है। सारांश यह है कि कुछ वस्तुएँ ऐसी होती हैं जिनमें बहने या नष्ट हो जानेवाले अंश के साथ तत्त्व पदार्थ निकल जाता है, कुछ ऐसी जिनमें उस अंश के निकल जाने के बाद भी तत्त्व वस्तु बनी रहती है। ऐसे ही, कुछ मतों में सार वस्तु का ग्रहण न होकर बाहरी अनावश्यक बातों का ग्रहण होता है, और दूसरों में केवल सार तत्त्व का ग्रहण होता है, बाहरी अनावश्यक बातों का नहीं। योग मत इसी दूसरे प्रकार का है।

चाल्योरे[7] पांचौं भाइला[8] तेणैं बन जाइला[9]
जहाँ दुष सुष नांव न जानिये[10] ॥टेक॥
षेती करौं[11] तो मेह बिन[12] सूकै
बनिज करौं तौ पूंजी तूटै ॥१॥

---

१. हाथैं। २. (घ) रसकस। ३. (घ) गई ल्यौ। ४. (घ) मछिंद्र गोरष।
५. (घ) भणीली। ६. (घ) औधूता। ७. (घ) चाल्यौ। ८ (घ) भायला
९ (घ) तिहि बनि जायला। १०. (घ) जाणीयला। ११. (घ) करूँ। १२. (घ) बिण।

अस्त्री[१] करौं तो घर भंग हुवैला।
मित्र करौं तौ बिसहर भैला[२] ॥२॥
जुवटै षेलौं[३] तौ बैठडौ हारौं[४]।
चोरि करौं तौ प्यंडको मारौं[५] ॥३॥
बन षड[६] जांऊं तौ बिरछ न फलना[७]
नगरी मैं जाऊँ[८] तौ भिष्या न मिलना[९] ॥४॥
बोल्या गोरष नाथ मछिंद्र का पूता।
छाडिनैं माया भया अवधूता[१०] ॥५॥ पृ०—९४।

हे पाँचों भाइयो, (पंचेंद्रियो) चलो उस वन को जायें जहाँ सुख-दुःख का नाम भी नहीं जाना जाता। (यहाँ तो सब सुख दुःख में परिणत हो जाते हैं।) बिसहर—विषधर, साँप।

यदि खेती करता हूँ तो बिना जल के सूखने लगती है। वाणिज्य करता हूँ तो उसमें नीयत ठीक न होने के कारण पूँजी ही डूब जाती है। अस्त्र ग्रहण करके युद्ध करता हूँ तो यह सब अपना ही घर रूपी संसार भंग हो जाता है। यदि इस दुनिया में किसी को मित्र बनाता हूँ तो वह विषधर साँप हो जाता है। युवती के संग खेलता हूँ तो सब कुछ हार बैठता हूँ। चोरी करता हूँ तो मार से गिर पड़ता हूँ। यदि वन में जाता हूँ तो कोई फलने वाले वृक्ष नहीं कि भोजन मिले। नगर में जाऊँ तो भिक्षा नहीं मिलती। मछिन्द्र पुत्र गोरख कहते हैं कि माया त्याग कर मैंने अवधूत बनना ही उचित समझा जिसमें पंचेन्द्रिय की विजय प्राप्ति के बाद सुख-दुःख का नामोनिशान नहीं है।

अवधू जाप जपौं[११] जपमाली[१२] चीन्हौंजाप[१३] जप्यां फल होई।
अजपा जाप जपीला[१४] गोरष, चीन्हत[१५] बिरला कोई ॥टेक॥
कवल[१६] बदन काया करि[१७] कंचन[१८], चेतनि करौ[१९] जपमाली।
अनेक जनम नां[२०] पातिग छूटै[२१], जपंत[२२] गोरष चवाली[२३] ॥१॥
एक अषीरी[२४] एकंकार जपीला[२५], सुंनि अस्थूल[२६], दोइ[२७] वांणीं।
प्यंड ब्रह्मांड[२८] समि तुलि ब्यापीले[२९], एक अषिरी हम[३०] गुरमुषि जांणीं ॥२॥
द्वै[३१] अषिरी दोइ पष उधारीला[३२], निराकार[३३] जापं जपियां।
जे जाप सकल सिष्टि उतपंनां, तें जाप श्री गोरषनाथ कथियां ॥३॥

---

१. (घ) असत्री। २. (घ) होयला। ३. (घ) जूवा षेलूं। ४. (घ) हारूँ। ५. (घ) पिंडको पारूँ। ६. (घ) षडि। ७. (घ) फलणां। ८. (घ) आऊँ। ९ (घ) मिलणां। १०. (घ) औधूता। ११. जपौ। १२. बनमाली। १३. तिने जाप। १४. में 'अजपा' के स्थान पर 'जैसा जाप जपंता'। १५. चीन्है। १६. कंवल। १७. भई। १८. कंचनरे अवधू। १९. चेतन कीया। २०. जन्म का। २१. छूटा। २२. जपै। २३. चमाली। २४. अच्छर। २५. जपीलै। २६. थूल। २७. दोय। २८. पिंड ब्रह्मंड। २९. ब्यापीला। ३०. एकअच्छर गोरखनाथ। ३१. दोय अच्छर। ३२. उधारिलै। ३३. 'मैं निराकार—कथिया' के स्थान पर तिरला मैं पारं। ऐसा जाप जतंतां। गोरष भागा भरम बिकारं।

द्व्यक्षरी जप यह है कि हमने निराकार का जप करते हुए इहलोक और परलोक, निर्गुण और सगुण, सूक्ष्म और स्थूल दोनों पक्षों का उद्धार किया है। इस प्रकार जिस जप से सारी सृष्टि उत्पन्न हुई है, उसी का कथन 'गोरखनाथ' ने किया है।

पवनां रे तूँ जासी कौनैं बाटी।
जोगी अजपा जपै त्रिवेणी कै घाटी ॥टेक॥
चंदा गोटा टीका करिलै, सूरा करिलै बाटी।
गूंनी राजा लूगा धौवै, गंग जमुन की घाटी ॥१॥
अरधैं उरधैं लाइलै कूँची, थिर होवै मन तहाँ थाकीले पवनां।
दसवां द्वार चीन्हिले, छूटै आवा गवनां ॥२॥
भणत गोरषनाथ मछिंद्र ना पूता, जाति हमारी तेली।
पीड़ी गोटा काढ़ि लीया, पवन षलि दीयां ठेली ॥३॥ पृ०—११६।

अधः और ऊर्ध्व (निःश्वास और प्रश्वास) दोनों की ताली लगाकर (केवल कुम्भक के द्वारा) मन स्थिर होता है और पवन थक जाता है। दशम द्वार में परमात्मा का परिचय प्राप्त करने से आवागमन छूट जाता है। मछन्दर का पुत्र शिष्य गोरखनाथ कहता है कि हम तेली हैं। गोटा (तिलों का पिंडा) पेर कर के (तेल अर्थात् आत्मतत्त्व) हमने निकाल लिया है और पवन रूप खली को फेंक दिया है॥

सति सति[1] भाषत श्री गोरष जोगी, अमे[2] तौ रहिबा रंगै।
अलेष पुरिस जिनि गुर-मुषि चीन्ह्यां रहिबा तिसकै संगै ॥टेक॥
सतजुग मधे जुग एक रचीला, बिसहर[3] एक निपाया।
ग्यांन बिहूणां गण गंध्रप अवधू, सब हीं डसि-डसि षाया ॥१॥
त्रेता जुग मधे जुग दोइ रचीला, राम रमाइंण[4] कीन्हां।
नर बंदर सब लड़ि-लड़ि मूये[5] तिन भीत ग्यांन न चीन्हां ॥२॥
द्वापर जुगमधे जुग तीनि रचीलै, बहु डम्बर बहु भारं।
कैरौं पांडौं लड़ि-लड़ि मूये[6] नारद कीया संघारं ॥३॥
कलिजुग मधे जुग चारि रचीला[7], चूकिला चार बिचारं।
घरि घरि दंदी[8] घरि घरि बादी, घरि घरि कथण हारं ॥४॥
चौहू जुग मधे जुग चारि थापिला, ग्यांन निरालंब रहिया।
मछींद्र प्रसादै जती गोरष बोल्या, कोई बिरला पार उतरिया[9] ॥५॥ पृ०—१२३।

श्रीगोरखनाथ जोगी सत्य-सत्य कहते हैं कि हम तो (अपने) रंग में मस्त रहते हैं। जिन्होंने गुरु-मुख-शिक्षा के द्वारा अलक्ष्य पुरुष (ब्रह्म) को पहचाना है, उन्हीं के साथ रहना चाहिए। अनेक क्रियावाचक शब्द भोजपुरी के इनमें स्पष्ट हैं।

१. (क) सत्य-सत्य। २. हम। ३. विसहरण। ४.रसाइंण। ५. मूवा। ६.मूदा।
७. रचीलै—चूकिले। ८. नादी,। ९. उतरिया पारं।

कर्ता ने चारों युगों के लिए अलग-अलग विशेषताएँ बनाई। एक, दो और तीन क्रमशः पहले, दूसरे और तीसरे के लिए प्रयुक्त हुए हैं।

मन लगा कर ऐसा जाप जपो कि 'सोहं' 'सोहं' की वाणी के उपयोग के बिना अजपा गान (अजपा जाप) हो जाय।

गुर कीजै गरिला निगुरा न रहिला।
गुर बिन[1] ग्यांन म पायला रे[2] भाईला ॥टेक॥
दूधैं धोया कोइला उजला[3] न होइला।
कागा कंठै पहुप[4] माल हँसला न भैला[5] ॥१॥
अभाजै सी रोटली[6] कागा जाइला[7]।
पूछौ म्हारागुरु[8] नै[9] कहाँ सिषाइला[10] ॥२॥
उतर[11] दिस आविला[12], पछिम दिस जाइला[13],
पूछौ म्मारा सतगुरु नै[14], तिहाँ बैसि षाइला[15] ॥३॥
चीटी केरा नेत्र (सेत)[16] मैं गज्येंद्र[17] समाइला।
गावडी के[18] मुष मैं बाघला बिवाइला[19] ॥४॥
बाहें बरसैं बांझ ब्याई, हाथ पाव टूटा।
बदंत गोरखनाथ मछिंद्र ना पूता ॥२॥ पृ०—१२८।

हे अहिल गुरु धारण करो, निगुरे न रहो। हे भाई, बिना गुरु के ज्ञान नहीं प्राप्त होता। दूध से धोने पर भी कोयला उज्ज्वल नहीं होता। कौए के गले में फूलों की माला पहनाने से वह हंस नहीं हो जाता। गहलाअहिल, जो व्याधि, भूत-बाधा या मानसिक विकार से ग्रस्त हो। यहाँ मानसिक विकार से ग्रस्त होने से मूर्ख कहा गया है। तुलना कीजिए, गढ़वाली भाषा का 'गयेल' और भोजपुरी के 'गईल'—उपेक्षा, असावधानी और उदासीनता की एक साथ भावना प्रकट करता है।

कौआ (जीव) बेतोड़ी-सी (संपूर्ण) रोटी (आध्यात्मिक परिपूर्णता) ले जाता है। स्वांतरस्थ गुरु से पूछो कि वह उसे कहाँ बैठकर खाता है। (आभा जैसी अविभक्त-सी)।

वह उत्तरदिशा (ब्रह्मपद, ब्रह्मरंध्र) से आया है (ब्रह्म उसका मूल वा अधिष्ठान है) और पश्चिम दिशा (सुषुम्णा मार्ग) से वह जायगा (अर्थात् पुनः ब्रह्मरंध्र में प्रवेश करेगा)। वहाँ बैठकर, जहाँ यह मार्ग ले जाता है, ब्रह्मरंध्र में वह उस रोटी (ब्रह्मानुभूति) का भोग करता है।

---

१. बिण। २. प्रामियेरे। 'भाईला' नहीं है। ३. ऊजला। ४. कउओ कैगलि पहौप। ५. थायला। ६. आभा जैसी रो टली (क) अभा जेसी हूटी हूटरीटली। ७. कउवा ले आइला। ८. माया या माह्या। ९. कूँ। १०. बैठि खाइला। ११. पूरब। १२. अँबिला। १३. (घ) डालिला। १४. (घ) कूँ। १५. (घ) बैठि बाचला। १६. (घ) में 'सेत' नहीं है। १७. (घ) गनिन्द्र १८. (घ) का। १९. ब्याईला।

इस प्रकार चींटी की आँखों में गजेन्द्र समा जाता है। (अर्थात् सूक्ष्म आध्यात्मिक स्वरूप में स्थूल भौतिक रूप समा गया। गाय के मुँह में बाघिन बिया जाती है अर्थात् इसी भौतिक जीवन में उसको नाश करनेवाला आध्यात्मिक ज्ञान उत्पन्न हो जाता है।

बारह वर्ष में बाँझ ब्याई है; पर इस प्रसूति में उसके हाथ-पाँव टूट गये हैं—वह निकम्मी हो गई है। यह मछन्दर के शिष्य गोरखनाथ का कथन है। मायिक जीवन निष्फल होता है, इसलिए उसे बाँझ कहा गया है। परन्तु बड़ी साधना के अनन्तर इसी मायिक जीवन में ज्ञान की भी उत्पत्ति हो जाती है, यही बाँझ का बियाना है। जब ज्ञानोदय हो जाता है, तब माया शक्ति-हीन हो जाती है, यही उसके हाथ-पाँव टूटना है।

कैसें बोलौं पंडिता देव कौंनै ठांई[1]
निज तत निहारताँ अम्हें तुम्हें[2] नाहीं[3] ||टेक||
पषाणची देवली पषांण चा देव[4] ।
पषाँण पूजिला कैसे फीटीला सनेह[5] ॥१॥
सरजीव तेड़िला[6] निरजीव पूजीला
पाप ची[7] करणी पार कैसे उतरीला[8] ॥२॥
तीरथि तीरथि सनांन करीला[9] ।
बाहर[10] धोये कैसे भीतरि[11] भेदीला ||३||
आदिनाथ नाती मछींद्रनाथ पूता
निज तत निहारै गोरष अवधूता * ||४|| पृ०—१३१ ।

हे पंडितो, कैसे बताऊँ कि देवता किस स्थान में रहता है ? निज तत्त्व को देख लेने पर हम और तुम नहीं रह जाते (सब एक हो जाते हैं, भेद मिट जाता है)। पत्थर के देवता की प्रतिष्ठा (करते हो)। (तुम्हारे लिए) स्नेह (दया) का प्रस्फोट कैसे हो सकता है ? (पत्थर का देवता कहीं पसीज सकता है ?)

तुम सजीव फूल-पत्तियों को तोड़ कर निर्जीव मूर्त्ति को पूजते हो। इस प्रकार पाप की करनी (कृत्यों) से दुस्तर संसार को कैसे तर सकते हो ? तीर्थ में स्नान करते हो। बाहर धोने से भीतर प्रवेश कर जल आत्मा को कैसे निर्मल कर सकता है ? (पानी तो केवल शरीर को निर्मल बनाता है।) आदिनाथ का नाती-शिष्य और मछन्दरनाथ का पुत्र-शिष्य गोरख निज तत्त्व (आत्मा) का दर्शन करता है।

---

१. (घ) हूँ तोहि पूछूँ पांड्या देव, कौंणें ठांय रे। २. (क) हमें तुम्हें। ३. (घ) नाहि रे। ४. (घ) पाषाणं का देहुरा पाषांण का देव। ५. (घ) पाषांण कूं पूजि फीटीला सनेह रे। ६. (घ) तोड़ीला, पूजीला। ७. (घ) की। ८. (क) 'कैसे दूतर तिरीला'। ९. तीरथि तीरथि जाईला असनान (क) तीरथ तीरथ सनांन। १०. बाहरि कै। ११. कैसैं भीतर (ख) भीतरि कैसैं।

* तृतीय छन्द के प्रथम चरण का पाठ पुस्तक में 'सरजीव तीडिला निरजीव पूजिल पापची करणी ! कैसे दूतर तिरीला' के निकट फुट नोट में जो (घ) का पाठ था वह अधिक भोजपुरी था, इसलिए वही रखा गया है। —लेखक

ज्ञान तिलक

पूरब देश पछांही घाटी (जनम) लिष्या हमारा जोगं ;
गुरु हमारा नांवगर कहीए, मेटै भरम बिरोगं ||१९|| पृ०–२१२ |

पन्द्रह तिथि

चौदसि चौदह[1] रतन बिचार। काल बिकाल आवता निवारि।
आपैं[2] आप देखौ पट तारि। उतपति परलै[3] काया मंझारि ||१५|| पृ०—१८३ ।

भर्तृहरि

'भर्तृहरि' या 'भरथरी' गोरक्षनाथ के शिष्य कहे जाते हैं। इनका चलाया वैराग्य पंथ है। इनके सम्बन्ध के गीत साईं लोग सर्वत्र भोजपुरी प्रदेश में गाया करते हैं, जिनको सालाना फसल के समय किसान कुछ दिया करते हैं। भर्तृहरि के सम्बन्ध में डाक्टर हजारीप्रसाद द्विवेदी के ये वाक्य देखिए[4]—

"गोरक्षनाथ के एक अन्य पंथ का नाम वैराग्य पंथ है। भरथरी या भर्तृहरि इस पंथ के प्रवर्तक हैं। भर्तृहरि कौन थे, इस विषय में पंडितों में नाना प्रकार के विचार हैं; परन्तु पंथ का नाम वैराग्य पंथ देखकर अनुमान होता है कि 'वैराग्य शतक' नामक काव्य के लेखक भर्तृहरि ही इस पंथ के मूल प्रवर्तक होंगे। दो बातें संभव हैं— या तो भर्तृहरि ने स्वयं कोई पथ चलाया हो और उसका नाम वैराग्य-मार्ग दिया हो या बाद में किसी अन्य योगमार्ग ने वैराग्य-शतक में पाये जानेवाले वैराग्य शब्द को अपने नाम के साथ जोड़ लिया हो। 'वैराग्य-शतक' के लेखक भर्तृहरि ने दो और शतक लिखे हैं—शृंगार-शतक और नीतिशतक। इन तीनों शतकों का पढ़ने से भर्तृहरि की जिन्दादिली और अनुभूतिशीलता खूब प्रकट होती है। चीनी यात्री 'इत्सिंग' ने लिखा है कि भर्तृहरि नामक कोई राजा था जो सात बार बौद्ध संन्यासी बना और सात बार गृहस्थाश्रम में लौट आया। वैराग्य और शृंगार शतकों में भर्तृहरि के इस प्रकार के संशयित भावावेगों का प्रमाण मिलता है। संभवतः शतकों के कर्त्ता भर्तृहरि 'इत्सिंग' के भर्तृहरि ही हैं। उनका समय सप्तम शताब्दी के पूर्व भाग में ठहरता है। कहानी प्रसिद्ध है कि अपनी किसी रानी के अनुचित आचरण के कारण वे विरक्त हुए थे। 'वैराग्य-शतक' के प्रथम श्लोक से इस कहानी का सामंजस्य मिलाया जा सकता है। परन्तु इसी भर्तृहरि से गोरक्षनाथ के उस शिष्य भर्तृहरि को, जो दसवीं शताब्दी के अन्त में हुए, अभिन्न समझना ठीक नहीं है। यदि 'वैराग्यशतक' के कर्त्ता भर्तृहरि गोरक्षनाथ के शिष्य थे तो क्या कारण है कि सारे शतक में गोरक्षनाथ का नाम भी नहीं आया है? यही नहीं, गोरक्षनाथ द्वारा प्रवर्तित हठयोग से वैराग्य-शतक के कर्त्ता परिचित नहीं जान पड़ते। मेरा इस विषय में यह विचार है कि भर्तृहरि दो हुए हैं, एक तो 'वैराग्य-शतक' वाले और दूसरे उज्जैन के राजा जो अन्त में जाकर गोरक्षनाथ के शिष्य हुए थे। भर्तृहरि का वैराग्य-मत गोरक्षनाथद्वारा अनुमोदित हुआ और बाद में परवर्ती भर्तृहरि के नाम से चल पड़ा। इस मत

१. (घ) चवदसि चवदेह। २. (घ) आपै। ३. (क) प्रलै। ४. 'नाथसम्प्रदाय'–पृ० १६६-१६८।

को भी गोरक्ष द्वारा 'अपना मत माना जाना' इसी लिए हुआ होगा कि 'कपिलायनी' शाखा तथा 'नीम-नाथी पारसनाथी' शाखा की भाँति इनमें योगक्रियाओं का बहुत प्रचार होगा। द्वितीय भर्तृहरि के विषय में आगे कुछ विचार किया जा रहा है। यह विचार मुख्य रूप से दन्त-कथाओं पर आश्रित है। इनके विषय में नाना प्रकार की कहानियाँ प्रचलित हैं। मुख्य कथा यह है कि ये किसी मृगीदल-विहारी मृग को मार कर घर लौट रहे थे। तब मृगियाँ नाना प्रकार के शाप देने लगीं और नानाभाव से विलाप करने लगीं। दयार्द्र राजा निरुपाय होकर सोचने लगे कि किसी प्रकार यह मृग जी जाता तो अच्छा होता। संयोगवश गुरु गोरक्षनाथ वहाँ उपस्थित हुए और उन्होंने इस शर्त पर कि मृग के जी जाने पर राजा उनका चेला हो जायगा, मृग को जिला दिया। राजा चेला हो गये। कहते हैं, 'गोपीचंद' की माता 'मयमामता' (मैनावती) इनकी बहन थीं।

"हमारे पास 'बिधना क्या कर्तार' का बनाया हुआ 'भरथरी-चरित्र' है, जो दूधनाथ प्रेस, हवड़ा से छपा है। इस पुस्तक के अनुसार भरथरी या भर्तृहरि उज्जैन के राजा इन्द्रसेन के पौत्र और चन्द्रसेन के पुत्र थे। वैराग्य ग्रहण करने के पूर्व राजा सिंहलदेश की राजकुमारी 'सामदेई' से विवाह करके वहीं रहते थे। वहीं मृग का शिकार करते समय उनकी गुरु गोरखनाथ से भेंट हुई थी। हम पहले ही विचार कर चुके हैं कि योगियों का सिंहलदेश वस्तुत: हिमालय का पाददेश है, आधुनिक 'सीलोन' नहीं।"

"एक और कहानी में बताया जाता है कि भर्तृहरि अपनी पतिव्रता रानी 'पिंगला' की मृत्यु के बाद गोरक्षनाथ के प्रभाव में आकर विरक्त हुए और अपने भाई विक्रमादित्य को राज्य देकर संन्यासी हो गये। उज्जैन में एक विक्रमादित्य (चंद्रगुप्त द्वितीय) नामक राजा सन् १०७६ से ११२६ तक राज्य करता रहा[1]। इस प्रकार भर्तृहरि ग्यारहवीं शताब्दी के मध्यभाग के ठहरते हैं।"

अपनी भूमिका में मैंने मालवा के परमारों द्वारा भोजपुर प्रदेश यानी आज के शाहाबाद, गाजीपुर और बलिया आदि जिलों में आकर राजा भोजदेव के नेतृत्व में राज्य स्थापित किये जाने की बात प्रतिपादित की है। उससे और मालवा के ग्यारहवीं सदी के विक्रमादित्य द्वितीय के भाई इस भर्तृहरि के इस प्रदेश में आने की पुष्टि होती है। इसकी पुष्टि में और अधिक बल इस बात से मिलता है कि गाजीपुर के गजेटियर के पृ० १५२ में गाजीपुर के पुराने ऐतिहासिक गणों के वर्णन में एक 'भित्री' स्थान का वर्णन आया है। इस 'भित्री' स्थान को मौर्य्यकालीन नगर कहा गया है और कहा गया है कि सुंगों के पतन के समय (७२ पू० ई०) से गुप्तकाल तक (३२० ए० डी०) का इतिहास अन्धेरा है। गुप्तों के समय में और उसके बाद बहुत से बौद्ध नगर नष्ट होकर हिन्दू नगरी में परिणत हो गये। 'भित्री' के सम्बन्ध में भी यही बात लागू हुई होगी। वहाँ 'स्कन्दगुप्त' के समय (४६६ ए० डी०) में विष्णु का मन्दिर और लाट निर्मित किये गये थे। अत: जान पड़ता है कि उसी प्राचीन स्थान पर मालवा

---

१. ब्रिग्स : पृ० २४४।

के विक्रमादित्य द्वितीय के भाई भर्तृहरि ने आकर अपना राज्य-गढ़ पुनः ग्यारहवीं सदी में, जब भोज यहाँ आये थे, बनाया होगा; और उसका प्राचीन नाम बदल कर अपने नाम पर भर्तृहरि नाम रखा होगा, जिसका विकृत रूप आज (भत्री) या भित्री है। 'हरि' उच्चारण की सुविधा से जन-कण्ठ ने भुला दिया होगा। यही भर्तृहरि गोरखनाथ के शिष्य होंगे, जैसा कि डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने माना है। इनके ही नाम पर भरथरी की उपर्युक्त गाथा अपनी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के साथ चल पड़ी होगी। यह अनुमान इस बात से भी पुष्ट होता है कि गोरखपुर जिला के वैराग्यपंथावलम्बी भरथरी के गीत गानेवाले साँई लोग बलिया-गाजीपुर-शाहाबाद के जिलों में साल में दो बार, फसल के समय, आते हैं और हर घर से आना-दो-आना, जैसा बँधा है, या कपड़ा वसूल कर ले जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि भर्तृहरि का राज्य यहीं था और उनके संन्यास ग्रहण करने के बाद उनके राज्य में उनके चलाये पंथ के अनुयायियों ने अपनी वृत्ति कायम कर ली और जनता ने उसे स्वीकार भी कर लिया।

'कल्याण' के 'योगांक'[१] में योगी भर्तृहरि का परिचय मालवा के राजा विक्रमादित्य के भाई के रूप में दिया गया है। उनका दूसरा नाम 'भोज' भी कहा गया है और इनके गोरक्षनाथ के शिष्य होने का वृहत् वर्णन इस प्रकार दिया गया है कि ये शिकार खेलने गोरखपुर की ओर गये हुए थे। इन्होंने गोरक्षनाथ के पालतू हरिण को देखकर पीछा किया और गोरक्षनाथ से जब भेंट हुई तब उनसे हरिण का पता पूछा। उसी क्षण जब हरिण सामने दिखाई पड़ा, तब इन्होंने बाण से उसे मार दिया। इसपर गोरक्षनाथ और भर्तृहरि में वार्ता हुई और अन्त में गोरक्षनाथ ने इस शर्त पर हरिण को पुनः जिलाया कि यदि हरिण जी जायगा तो भर्तृहरि राज्य त्यागकर संन्यास ग्रहण करेंगे। हरिण के जी उठने पर उन्होंने वचन का पालन किया। ह्यूफ फेजर ने 'फोक लोरस् फ्रॉम वेस्टर्न गोरखपुर' शीर्षक लेख में भरथरी का एक 'बारहमासा' प्रकाशित किया है। यह बारहमासा इन्हीं भर्तृहरि द्वारा रचा हुआ प्रतीत होता है।

डा० हजारीप्रसाद ने फिर भर्तृहरि के सम्बन्ध में लिखा है—

"एक दूसरी कहानी में रानी पिंगला को राजा भोज की रानी बताया गया है। राजा भोज का राज्यकाल सन् १०१८ से १०६० ई० बताया गया है[२]। एक दूसरे मूल से भी भर्तृहरि मैनावती और गोपीचन्द का संबंध स्थापित किया जा सका है। पालवंश के राजा महीपाल के राज्य में ही, कहते हैं, 'रमणवज्र' नामक बज्रयानी सिद्ध ने मत्स्येंद्रनाथ से दीक्षा लेकर शैव मार्ग स्वीकार किया था। यही गोरक्षनाथ हैं। पालों और प्रतीहारों (उज्जैन) का झगड़ा चल रहा था। कहा जाता है कि गोविंदचन्द्र, महीपाल का समसामयिक राजा था और प्रतीहारों के साथ उसका संबंध होना विचित्र नहीं है।[३]

१. गीता प्रेस, गोरखपुर; पृ० ७८४।

२. डा० का० सें० प्रो०—जिल्द २, पृ० ४०३ और ब्रिग्स पृ० २४४

३. ब्रिग्स : म० म० हरप्रसाद शास्त्री के आधार पर।

ह्यूफ फ्रेजर के 'फोक लोरस् फ्रॉम वेस्टर्न गोरखपुर' नामक शीर्षक में प्रकाशित वह बारहमासा है—

बारहमासा

चन्दन रगड़ो सोवासित हो, गूँथी फूल के हार ॥
इंगुर मँगियाँ भरइतों हो, सुभ के असाढ़ ॥१॥
साँवन अति दुख पावन हो, दुःख सहलो नहिं जाय।
इहो दुःख परे वोही कूबरी हो, जिन कन्त रखले लोभाय ॥२॥
भादो रयनि भयावनि हो, गरजे मेह घहराय।
बिजुलि चमके जियरा ललचे हो, केकरा सरन उठ जाय ॥३॥
कुँआर कुसल नहिं पाओं हो, ना केऊ आवे ना जाय।
पतिया में लिख पठवों हो, दीहें कन्त के हाथ ॥४॥
कातिक पूरनमासी हो सभ सखि गंगा नहायँ।
गंगा नहाय लट भूरवें हो, राधा मन पछतायँ ॥५॥
अगहन ठाढ़ि अँगनवा हो, पहिरों तसरा का चीर।
इहो चीर भेजे मोर बलमुआ हो, जीए लाख बरीस ॥६॥
पूसहिं पाला परि गैले हो, जाड़ा जोर बुझाय।
नव मन रुइआ भरवलों हो, बिनु सैयाँ जाड़ न जाय ॥७॥
माघहिं के सिव तेरस हो सिव बर होय तोहार।
फिरि फिरि चितवों मँदिरवा हो बिन पिया भवन उदास ॥८॥
फागुन पूरनमासी हो, सभ सखि खेलत फाग।
राधा के हाथ पिचकारी हो भर भर मारेली गुलाल ॥९॥
चैत फूले बन टेसू हो, जब दुण्ड हहराय।
फूलत बेला गुलबवा हो, पिया बिनु मोहि न सोहाय ॥१०॥
बैसाखहि बँसवाँ कटइतों हो, रच के बँगला छँवाय।
ताहि में सोइतें बलमुआ हो, करितों अँचरवन बयार ॥११॥
जेठ तपे मिरडहवा हो, बहे पवन हाहाय।
'भरथरी' गावे 'बारह-मासा' हो, पूजे मन के आस ॥१२॥

आषाढ़ मास शुभ मास है। यदि आज मेरे प्रीतम होते तो अपने लिए सुवासित चन्दन रगड़ती और फूलों की माला गूँथती और सिन्दूर से माँग भराती; परन्तु हा! वे आज नहीं हैं ॥१॥

यह सावन आया। अति दुःख देनेवाला है। इसका दुःख सहा नहीं जाता। यह दुःख उस कूबरी के ऊपर जाकर पड़े, जिसने मेरे कन्त को बिलमा रखा है ॥२॥

भादो आया। इसकी रात्रि कितनी भयावनी है। आकाश में मेह गरज रहे हैं। बिजली जोर-जोर से चमकती है और प्रीतम के बिना उनसे मिलने के लिए मेरा जी ललच रहा है। मैं किसकी शरण में उठ कर जाऊँ? ॥३॥

क्वार मास भी आ गया; पर प्रीतम के कुशल क्षेम का कोई समाचार नहीं मिला। न कोई उधर से आता है और न इधर से ही कोई जाता है कि पत्र भेजूँ। मैंने इसके पूर्व कई पत्र लिख-लिख कर पथिकों के हाथ भेजे और ताकीद की थी कि कन्त के ही हाथ में उन्हें देना; पर कोई उत्तर नहीं आया ॥४॥

अब कार्तिक की पूर्णमासी भी आ गई। सभी सखियाँ गंगा-स्नान कर रही हैं। गंगा-स्नान करके राधा भी अपनी लट सुखा रही हैं और मन-ही-मन प्रीतम के नहीं आने की बात से पश्चात्ताप कर रही है ॥५॥

अगहन मास में तसर की साड़ी पहन कर बीच आँगन में खड़ी हूँ और कह रही हूँ कि इस साड़ी को मेरे प्रीतम ने भेजा है, वे लाख वर्ष जीवित रहें।

पूस मास में पाला अभी पड़ा है। जोरों का जाड़ा मालूम हो रहा है। मैंने रजाई में नौ मन रूई भरा तो ली है; पर तब भी सैयाँ के बिना जाड़ा नहीं जाता ॥३॥

माघ मास का तेरस भी आ गया। हे शिव जी, आज ही तुम वर बने थे। मैं फिर-फिर कर अपने घर को निहार रही हूँ। पर बिना पिया के यह मेरा भवन उदास लग रहा है ॥७॥

आज फागुन की पूर्णिमा है। सब सखियाँ फाग खेल रही हैं। राधा के हाथ में पिचकारी है। रंग भर-भर कर वह पिचकारी मार रही है। आज प्रीतम आ गये हैं ॥८॥

चैत मास में वन में टेसू फूल रहे हैं। अब केवाली खेती में लहर मार रही है। बेला गुलाब सर्वत्र फूल रहे हैं; परन्तु बिना प्रीतम के ये सारे दृश्य मुझे नहीं भाते-सुहाते ॥९॥

बैसाख मास आ गया है। काश, आज प्रीतम यहाँ होते तो मैं बाँस कटवाती और रचि-रचि कर के बंगला छवाती और उसके नीचे प्रीतम सोते और मैं अंचल से हवा करती ॥१०॥

जेठ मास में मृगडाह (मृगशिरा) नक्षत्र तप रहा है। लू हा-हाकार करके बह रही है। भरथरी बारहमासा गाते हैं और कहते हैं—मेरे मन की अभिलाषा आज पूर्ण हुई अर्थात् मेरे प्रीतम आ गये।

जहाँ तक इस बारहमासे की भाषा का प्रश्न है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह भर्तृहरि की भाषा का सम्पूर्णतः नवीन रूपान्तर है। केवल इसी कारण यह नहीं कहा जा सकता कि यह भर्तृहरि की रचना नहीं है। हिन्दी साहित्य की भी बहुत-सी ऐसी कृतियाँ हैं, जिनकी भाषा तो सम्पूर्ण रूप से परिवर्तित हो गई है; किन्तु उन्हें अभी तक श्रद्धा और सम्मान के साथ मूल लेखकों के नाम से युक्त करके स्मरण किया जाता है। 'जगनिक' के 'परमाल रासो' इस प्रसंग में उल्लेखनीय है।

महात्मा कबीरदास

कबीरदास जी एक महान व्यक्ति हो गये हैं। आप भक्त, कवि और सुधारक तीनों थे। आपका एक पन्थ ही चल रहा है। आपकी जीवनी के सम्बन्ध में 'कल्याण' के 'योगाङ्क' से निम्नलिखित पंक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं—

"कहते हैं कबीर जी का जन्म काशी में स्वामी रामानन्द जी के आशीर्वाद से एक ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ था। माता ने किसी कारणवश पुत्र को रात के समय एक तालाब में बहा दिया। सबेरे 'नूर अली जुलाहे' ने देखा और अपने घर लाकर पोसा-पाला। इसी से कबीर जुलाहा कहलाये, और जन्म भर जुलाहे का ही काम किया। परन्तु ये जन्म से ही सन्त-भाव लेकर आये थे। इन्होंने स्वामी रामानन्द जी को अपना गुरु बनाया और साधना द्वारा बहुत अच्छी गति प्राप्त की। यह काशी में रहकर सत्संग कराया करते थे। ये बड़े निर्भीक सन्त थे। इन्होंने बड़े-बड़े शब्दों में उस समय की बुराइयों का खण्डन किया और सच्ची शिक्षा दी। इनकी वाणियों का अनुवाद अँग्रेजी और फारसी में भी हुआ है, और वे अन्य देशों में भी आदर के साथ पढ़ी जाती हैं। ये अन्त समय में काशी छोड़ कर मगहर ग्राम, जिला बस्ती में चले गये। पण्डितों के मत से उस स्थान में मृत्यु होने से गदहे का जन्म होता है। (इस सम्बन्ध में कबीर ने ही कहा था—"जो कबिरा काशी मरे, रामहिं कवन निहोरा") । जब इन्होंने चोला छोड़ा तब हिन्दू-मुसलमानों में झगड़ा हो गया। हिन्दू समाधि देना चाहते थे और मुसलमान कब्र। इसी बीच कबीर साहब का शव लापता हो गया और उसकी जगह कफन के नीचे थोड़े फूल पड़े मिले। इन्हीं फूलों को हिन्दू-मुसलमान दोनों ने बाँट लिया और अपनी-अपनी रीति के अनुसार अलग-अलग समाधि और कब्र बनाई। दोनों आज भी मगहर में मौजूद हैं। इनका जीवन-काल संवत् १४५५ से १५७५ तक माना जाता है।

इनके जन्म के सम्बन्ध में निम्नलिखित छप्पय प्रसिद्ध है—

चौदह सौ पचपन साल गये, चन्द्रवार एक ठाट ठये।
जेठ सुदी बरसाएत को, पूरनमासी तिथि प्रकट भये॥
घन गरजे, दामिनि दमके, बूँदें बरसें झर लाग गये।
लहर तलाब में कमल खिले, तहँ कबीर भानु प्रगट भये॥

कबीर ने भोजपुरी में प्रचुर मात्रा में कविताएँ लिखी थीं। डा० उदयनारायण तिवारी का तो कहना है कि इनकी सभी रचनाएँ सम्भवतः भोजपुरी में थीं। बाद को वे हिन्दी में परिवर्तित कर दी गईं। कबीर साहब ने भी एक दोहे में अपनी भाषा को भोजपुरी स्वीकार किया है।

"बोली हमरी पुरब की, हमें लखे नहीं कोय।
हमके तो सोई लखे, धुर पुरब का होय"॥

कबीर साहब भोजपुरी के बड़े भारी रहस्यवादी आदि कवि थे। यदि उनको विशुद्ध भोजपुरी का कवि न मानकर हिन्दी का भी कवि माना जाय, जैसा कहना सही है, तब भी यह मानना अनिवार्य होगा कि हिन्दी में जब रहस्यवाद आया तभी भोजपुरी में भी रहस्यवाद का जन्म हुआ या जिस कवि ने भोजपुरी में रहस्यवाद का जन्म दिया, उसी ने हिन्दी में भी। निम्नलिखित गीतों में अधिकांश गीत कबीर साहब की कविताओं के संग्रहों से लिये गये हैं। इनके पाठ की सत्यता पर दो मत नहीं हो सकते।

(१)

कवँल से भवराँ बिछुड़ल हो, जाहाँ केहू ना हमार।
भव जल नदिया भयावन हो, बिन जल ,कइ धार॥
ना देखो नाव न बेड़वा हो, कइसे उतरबि पार।
सतकइ नइया सिरजावल हो, सुमिरिन करुआर॥
गुरु के सबद गोनहरिया हो, खेइ उतरबि पार।
दास कबीर निरगुन गावल हो, संतो लेहु बिचार॥

अरे, कमल से भ्रमर उस जगह बिछुड़ा, जहाँ कोई हमारा नहीं है। संसार की नदी भयावनी है। यहाँ बिना जल के ही प्रचण्ड धाराएँ बहा करती हैं। मैं न तो कोई नाव देखता हूँ, न कोई नाव का बेड़ा ही देखता हूँ। कैसे पार उतरूँगा? मैंने सत की नाव का सृजन किया और उसमें सुमिरन का करुआर लगाया है। गुरु-वचन को गोंन (नाव खींचने की पतली रस्सी) बनाया और इस तरह भवनद को खेकर पार होऊँगा। सेवक कबीर ने निरगुन गाया है। हे संतो, इसका विचार कर लो।

(२)

तोर हीरा हेराइल बा कीचँड़े में ॥टेक॥
केउ ढूँढ़इ पूरब, केउ ढूँढ़इ पछिम केउ ढूढें पानी पथरे में।
सुर, नर, मुनि अवरु पील अवलिया,सब भूलल बाड़े नखरे में॥
दास कबीर ई हीरा के परखले, बाँधि लिहले जतन से अँचरे में॥

अरे, तुम्हारा हीरा कीचड़ में हेरा गया। इसको तो कोई पूरब में ढूँढ़ रहा है अर्थात् सूर्य भगवान के पूजन में ढूँढ़ रहा है और कोई इसको पच्छिम में (मक्का-मदीना में) ढूँढ़ रहा है। सुर, नर, मुनि और पीर तथा औलिया सभी अपने-अपने नखरों में भूले हुए हैं। सेवक कबीर दास ने इस हीरे को पहचान लिया और प्रेमपूर्वक अपने अंचल में इसको बाँध लिया।

(३)

केउ ठगवा नगरिया लूटल हो।
चनन काठ के बनल खटोलना, तापर दुलहिन सूतलि हो॥
उठु रे सखि मोर माँगु सवाँरहु, दुलहा मोसे रूसल हो।
अइले जमराज पलंग चढ़ि बइसल, नयनन असुँआ टूटल हो॥
चारि जना मिलि खाट उठवले, चहुँ दिसि धूँ धूँ ऊठल हो।
कहत कबीर सुनहु भाइ साधो, जगवा से नाता टूटल हो॥

अरे, किसी ठग ने इस नगरी को लूट लिया। चन्दन की लकड़ी का खटोलना (बच्चों के सोने के लिए छोटा पलंग) बना है और उसी पर (प्रकृति की बनी देह रूपी) दुलहिन सो रही है। हे सखि, उठो मेरी माँग सवाँर दो (मेरा शृंगार कर दो) दुलहा (आत्मा) मुझ से रूठ गया है। यमराज आये और मेरे पलंग पर चढ़कर बैठ गये। मेरे नेत्रों से आँसू बहना बंद हो गया। चार मनुष्यों ने मिलकर खाट उठाई और (चिता से) धू-धूकर

चारों तरफ अग्नि उठने लगी। कबीर दास कहते हैं कि हे सन्तो, सुनो, अब इस जगत् से सम्बन्ध टूट गया।

(४)

का ले जइबों ससुर घर जइबो।
गउँआँ के लोग जब पूछन लगिहें, तब तुम काइ बतइबो॥
खोलि घूँघट जब देखन लगिहें, तब बहुते सरमइबो।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, फिर सासुर नाहीं पइबो॥

जब तुम अपने श्वसुर-घर (ईश्वर के घर) जाओगी तो क्या लेकर जाओगी ? इसका भी विचार क्या तुमने कभी कुछ किया है ?

जब गाँव के लोग (परम धाम व्यक्ति) वहाँ तुमसे पूछने लगेंगे कि मायके (मृत्यु-लोक) से क्या लाई हो तब तुम क्या बताओगी ? जब तुम्हारे घूँघट (धर्म-कर्म) को खोलकर लोग देखेंगे (और तुम्हारे पास कुछ करनी-धरनी नहीं रहेगी) तब तुम बहुत शर्माओगी। कबीर कहते हैं—हे भाई साधुगण ! बार-बार श्वसुरपुर जा नहीं पाओगे (अपनेको वहाँ जाने के योग्य बनाओ)।

(५)

साहेब मोर बसले अगमपुर हो, जहाँ गम न हमार ॥टेक॥
आठ कुआँ, नव बावलि हो, सोरह पनिहार।
भरले घइलवा ढरकि गइले हो, धनि ठाढ़े पछिताय।
छोटी मोटी डँड़िया चनन कइ हो, लगले चारि कहार॥
जाइ उतरले ओहि देसवा हो, जाहाँ केहु न हमार।
उचँकी महलिया साहब कइ हो, लागे विषम बजार॥
पाप पुन्नि दुइ बनिया हो, हीरा रतन बिकाय॥
कहत कबीर सुनु सइयाँ हो, मोरे अवहिय देस।
जे गइले से बहुरले ना हो, के कहसु सनेस॥

हमारे साहब अगमपुर नामक नगरी में बसते हैं, जहाँ मेरा गम (पहुँच) नहीं है। वहाँ आठ कुँए (आठ अंग) हैं, नौ बावलियाँ (नव द्वार) हैं, और सोलह पानी भरनेवाली पनिहारिनें (दस इन्द्रियाँ और पाँच तन्मात्राएँ) हैं। फिर भी भरा हुआ घड़ा (आत्मा) लुढ़क गया है और धनि (सधवा नारी शरीर) खड़ी-खड़ी पछता रही है। छोटी-सी चन्दन की डाँडी है, उसमें चार कहार (मृत्यु के समय) लगे हैं। उन्होंने उस देश में मुझे जा उतारा जहाँ मेरा कोई नहीं था। वह ऊँचावाला महल साहब (ईश्वर, मालिक) का है। वहाँ विषमता का बाजार लगा हुआ है। पाप और पुण्य नामक दो बनिये हैं। हे मेरे स्वामी, सुनो, तुम मेरे हृदय में ही आ बसो। वहाँ तो जो गया, वह लौटा ही नहीं। कौन तुम्हारा सन्देश कहे ?

(६)

सूतल रहलौं मैं नींद भरि हो, गुरू दिहलहुँ जगाइ ।
चरन कवँल कइ अंजन हो, नयना लिहलहुँ लगाइ ॥
जासे निदियों न आवे हो, नाहि तन अलसाइ ।
गुरू के बचन जिन सागर हो, चलु चलीजा नहाइ ॥
जनम जनम केरा पपवा हो, छिन डारबि धोआइ ।
यहि तन के जग दियरा बनवलों, सुत बतिया लगाइ ॥
पाँच तत्त्व के तेलवा चुअवलो, ब्रह्म अगिनि जगाइ ।
सुमति गहनवाँ पहिरलों हो कुमति दिहलों उतारि ॥
निगुॅन मँगवा सँवरलो हो, निरभय-सेनुरा लाइ ।
प्रेम के पिआला पिआइ के हो, गुरू देलें बउराइ ॥
बिरहा अगिनि तन तलफइ हो, जिय कछु न सुहाइ ।
उँच की अटरिया चढ़ि बइठलीं हो, जहाँ काल न खाइ ॥
कहले कबीर विचारि के हो, जम देखि डेराइ ॥

मैं तो प्रगाढ़ निद्रा में शयन कर रही थी। गुरु ने जगा दिया। गुरु के चरण कमल की धूरि का अंजन अपनी आँखों में लगा लिया जिससे नींद न आवे और शरीर अलसाय नहीं। अरे, गुरु जी के वचन रूपी सागर में चलो, नहाने चलें। वहाँ जन्म-जन्म के पाप क्षण मात्र में मैं धो डालूँगी। इस शरीर को संसार रूपी दीपक बनाया। उसमें श्रुति की बत्ती लगाई। पंच तत्त्वों का तेल चुवा कर उस दीप ने ब्रह्म अग्नि की ज्योति जगाई। फिर मैंने सुमति रूपी सुन्दर आभूषणों को पहन लिया और कुमति के अलंकारों को उतार फेंका। फिर निगुॅण रूपी अपनी माँग को सँवारा और उसमें निर्भयता का सिन्दूर भरा। हा, गुरु ने प्रेम का प्याला पिलाकर मुझे बौरा दिया। विरह की अग्नि इस तन में तलफ (धीरे-धीरे सुलग) रही है। हृदय को कुछ सुहाता नहीं है। मैं उस ऊँची अटारी पर चढ़ बैठी, जहाँ काल नहीं खाता। कबीर विचार करके कहते हैं कि वहाँ यम भी देखकर डरता है।

जँतसार (राग)

(७)

सुर्रात मकरिया गाड़हु हो सजनी—अहे सजनी ।
दुनो रे नयनवाँ जुअवा लखहु रे की ॥
मन धरु मन धरु मन धरु हे सजनी—अहे सजनी ।
अइसन समइया फिरि नहिं पावहु, रे की ॥
दिनदस रजनी हे सुख करु सजनी—अहे सजनी ।
एक दिन चाँद छिपइहनि—रे की ॥
संगहि अछत पिय भरम भुलइलों—अहे सजनी ।
मोरे लेखे पिया परदेसहिं रे की ॥

नव दस नदिया अगम बहे सोतिया—अहे सजनी ।
बिचहिं पुरइन दल लागल, रे की ॥
फूल इक फूलले अनूप फूल सजनी—अहे सजनी ।
तेहि फूल भवँरा लोभाइल—रे की ॥
सब सखि हिलमिल निज घर जाइब—अहे सजनी ।
समुद लहरिया समाइब रे की ॥
दास कबीर यह गवलें लगनियाँ हो—अहे सजनी ।
अब तो पिया घरवा जाइबि—रे की ॥

हे सखी, सुरति की 'मकरी'[1] गाड़ी और इन दोनों नेत्रों को जाँता का जुआ[2] बनाया। हे सजनी, जैसी धारणा मन में दृढ़तापूर्वक धरो, वैसी धारणा धारण करो। ऐसा समय फिर तुमको नहीं प्राप्त होगा। हे सजनी, दस दिन दस रात भले सुखकर लो; लेकिन हे सजनी, जान रखो, यह चाँद एक दिन छिप जायगा। साथ में प्रीतम के रहते हुए भी हे सजनी, मैं भ्रम में भूल गई थी। हे सजनी, मेरे लिए तो प्रीतम पर-देश में ही हैं। नव और दस नदी हैं, उनमें अगम स्रोत बह रहे हैं। हे सजनी, बीच में ही पुरइन दल लगा हुआ है। हे सजनी, उस पुरइन दल से एक फूल फूला। हे सजनी, वह फूल अनुपम फूल हुआ। हे सखी, उसी फूल पर भँवरा लोभाया हुआ है। हे सजनी, हम सब सखी हिलमिलकर अपने घर जायँगी और समुद्र की लहरों में समा जायँगी। दास कबीर ने इस मंगल गीत (लगनिया=विवाह गीत) को गाया। हे सजनी, अब तो मैं पिया के घर जाऊँगी, अवश्य जाऊँगी।

(८)

अपना पिया के मैं होइबों सोहागिन—अहे सजनी ।
भइया तेजि सइयाँ सँगे लागबि—रे की ॥
सइयाँ के दुअरिया अनहद बाजा बाजे—अहे सजनी ।
नाँचे ले सुरति सोहागिन—रे की ॥
गंग जमुन केरा अवघट घटिया हो—अहे सजनी,
देइहहुँ सतगुरु सुरति क नइया हो—अहे सजनी ।
जोगिया दरसे देखे जाइब—रे की ॥
दास कबीर यह गवलें लगनियाँ हो—अहे सजनी ।
सतगुरु अलख लखावल—रे की ॥

मैं अपने पिया (परमात्मा) की सोहागिन (सधवा नारी) बनूँगी। हे सखि, अपने भाई को त्याग कर मैं अपने स्वामी के पीछे लगूँगी। अहा, मैं तो अपने स्वामी के पीछे लगूँगी। स्वामी के दरवाजे पर अनहद बाजा बजता है। अहा! सुरतिसोहागिन वहाँ

१. लोहे की मोटी कील जो जाँता के दोनों पत्थर के बीच के सुराख में गाड़ी जाती है और जिसके सहारे जाँता घुमता है।

२. लकड़ी का जुआ, जिसको पकड़ कर जाँता घुमाते हैं।

नाच रही है !! हे सखि, गंगा-यमुना (इड़ा और पिंगला) का अवघट घाट है। उसी पर जोगी ने मठ छाया है। अहा, उसी पर जोगी ने मठ छाया है। (यहाँ रे की का अर्थ व्यंजना से यह है कि कवि आह्लाद विह्वल हो 'रे की' का उच्चारण करता है और उसकी पुनरावृत्ति कर आनन्द प्रकट करता है)। हे सखि, सतगुरु मुझे सुरति की नाव देंगे। मैं उस जोगी का दर्शन देखने (यहाँ दर्शन करने न कह कर कवि ने दर्शन देखने कह कर अर्थ और शब्द दोनों में लालित्य लाया है) जाऊँगी।

अहा ! मैं सुरति के चौके पर चढ़ कर उस जोगी का दर्शन करने जाऊँगी !! कबीरदास ने यह मंगल गीत ब्याह का गाया है। हे सजनि, सतगुरु ने अलख को भी मुझे दिखा दिया।

(९)

अपना राम के बिगाड़ल बतिया केहू ना बनाई।
राम बिगड़ गइले, लछिमन बिगड़ले, बिगड़े जानकी माई।
अंजनि पूत हनिवन्ता बिगड़ि गैले, छिन में कइले उजारी॥
तितलौकी के बनर्ली तुमड़िया, सबे तीरथ कइ आई।
साधु संत सब अचवन लागे, तब हूँ ना छुटे तिताई॥
आसन छूटे, बासन छूटे, छुटी गैले महल अटारी।
जेकर लाल पकड़ले बेगारी, केउ नाहीं लेत छुड़ाई॥
कहे कबीर सुनो भाई साधो, यह पद हव निरवानी।
जे यह पद के अरथ लगइहें, उहि गुरु हव ज्ञानी॥

अपने राम की (खुद अपनी) बिगाड़ी हुई बातें कोई नहीं बना सकता। रामजी बिगड़े, लक्ष्मण बिगड़े और माँ जानकी भी बिगड़ गईं। अंजनिपुत्र हनुमान बिगड़े और क्षण-मात्र में लंका उजाड़ डाले। तितलौकी की तुमड़ी बनी और उसने सभी तीर्थों का भ्रमण भी किया। साधु-सन्त उससे पानी ले हाथ-मुँह भी धोने लगे तब भी उसकी तिताई नहीं छूटी। अपना आसन छूट गया, निवास भी छूट गया और महल, अटारी सभी छूट गये। किन्तु जब उसका पुत्र बेगारी में पकड़ा गया तब कोई उसे छुड़ाता नहीं। कबीर कहते हैं कि हे भाई साधुओ, सुनो। यह पद निर्वानी पद है। जो इस पद का अर्थ लगायेगा, वही गुरु और ज्ञानी है।

(१०)

उड़ि गइले हंसा यह मोरे—देसवा,
भैया यह जग कोई नाहीं आपन।
कंकड़ चुनि चुनि महल उठाया, पत्थर कइ दरवाजा।
ना घर मेरा, ना घर तेरा, चिरिया रैन बसेरा॥
बाप रोवेले पूत सपूता, भइआ रोवे चउमासा।
लट छिटकवले उनकर तिरिया जे रोवे।
परि गइले पराया जिय आसा॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, यह पद हव निरवानी।
जे यह पद के अरथ लगइहें, उहे गुरु महा ज्ञानी॥

इस मेरे देश से हंस उड़ गया। हे भाई, इस जगत में कोई अपना नहीं है। कंकड़ चुन-चुन कर महल उठाया और पत्थर का दरवाजा लगाया। किन्तु यह घर न मेरा रहा और न तेरा। यह केवल पक्षी का रैन-बसेरा मात्र सिद्ध हुआ। पिता रोते हैं कि पुत्र सपूत था, और भाई चौपाल में रोता है कि अब काम कैसे होगा? लट बिखेरे हुई उसकी पत्नी इसलिए रो रही है कि अब मैं पराश्रिता हो गई। कबीर कहते हैं कि हे भाई साधुओ, सुनो यह पद निरवानी पद है जो इसका अर्थ लगायेगा, वही महाज्ञानी है।

(११)

[1]नइया बिच नदिया डूबलि जाइ ॥
एक अचरज हम देखल सन्तो कि बानर दूहले गाइ ॥
बनरुत दुधवा खाइ पी गइले, घीउआ बनारस जाइ ॥
एक सिहरी के मरले सन्तो नौ सौ गीध अघाइ।
कुछ खइले, कुछ भुइआँ गिरवले, किछु छकड़न लदाइ ॥
एक, अचरज हम देखल सन्तो, जल बीच लागलि आगी ॥
जलवा जरि बरि कोइला भइले, मछरी में ना लागल दागी।
एक चिउंटी के मूतले सन्तो, नदी नार बहि जाइ।
बम्हना बहुआ पखारेले धोतिया, गोढ़िया लगावे महाजाल ॥
कहत कबीर सुनो भाइ सन्तो, यह पद हव निरबानी।
जे यह पद के अरथ लगइहें, सेइ गुरु महा ज्ञानी ॥

इन गीतों का असली अर्थ कबीर के शब्दों में कोई महाज्ञानी गुरु ही कर सकता है, जो लेखक नहीं है। शब्दार्थ यों है—

नाव के बीच में नदी डूबती चली जा रही है। हे सन्तो, मैंने एक आश्चर्य देखा कि बन्दर गाय दूह रहा है। बनार देव तो दूध को खा-पी गये; परन्तु उस दूध का घी बनारस भेजा जा रहा है। एक सिहरी (सिधरी मछली, तीन इंच की एक छोटी मछली) के मरने पर हे सन्तो, नौ सौ गिद्धों को मैंने अघाते देखा। उन्होंने कुछ तो खाये, कुछ पृथ्वी पर गिराये और बाकी गाड़ियों पर लदाया गया। हे सन्तो, एक आश्चर्य मैंने यह देखा कि जल के बीच आग लगी हुई है। जल जरकर और बर कर कोयला हो गया; पर उसी में रहनेवाली मछली को दाग तक नहीं लगा। फिर एक चींटी ने पेशाब किया और नदी-नाले बह निकले। उसमें ब्राह्मण बधू तो धोती पखारती है और मल्लाह उसमें महाजाल लगाता है। कबीर कहते हैं कि हे सन्तो, सुनो यह पद निर्वानी पद है [यानी वाणी (अभिधा) द्वारा इसके वाक्यों का अर्थ नहीं लगाया जा सकता]। जो इसका अर्थ समझेगा, वही गुरु और महाज्ञानी है।

(१२)

अमरपुर बासा, राम चले जोगी।
राम चले जोगी, राम चले जोगी ॥अमर०॥

१. इस गीत का दूसरा पाठ गीत नं० २३ में है, जो स्त्री-समुदाय से प्राप्त हुआ है। वह पाठ अधिक शुद्ध ज्ञात होता है।

ओह जोगी के रूप न रेखा, अबतक जात केहू नाहीं देखा ।
राम चले जोगी, राम चले जोगी, अमरपुर बासा ॥
एक कोठरी में दस दरवाजा ।
नव हऊँए चोर, एक हऊँए राजा ॥राम चले०॥
कहत कबीर साहब, सुन मोरी माता ।
अपने तू भँखऽ हमार कवन आसा ॥राम चले०॥

अमरपुर में राम का निवास है । हे योगी, तुम वहीं राम के पास चलो । उस योगी की रूप-रेखा नहीं है–यानी निराकार निर्गुण है । उसको आते-जाते किसी ने नहीं देखा है। हे योगी ! राम के पास चलो, एक कोठरी में दस दरवाजे (दस इन्द्रियाँ) हैं । उनमें नौ तो चोर हैं और एक (मन) राजा है । कबीर साहब अपनी माता से कहते हैं—'हे मेरी माता, सुनो तुम अपने लिए भँखो । मेरी क्या आशा है ।'

(१३)

करऽ हो मन राम नाम धनखेती ॥
राम नाम के बोअना हो, उपजे हीरा-मोती ।
ज्ञान ध्यान के बयल बनल हव, मन आई तब जोतीं ॥करऽ हो०॥
पहिल पहिल हम खेती कइलो, गंगा जमुन के रेती ।
यह खेती में नफा बहुत हव, जीव के मुक्ति होती ॥करऽ हो०॥
मोलना होय कुरान के बाँचे, पण्डित बाँचे पोथी ।
भाव भगत के मरम न जाने, मुक्ति कहाँ से होती ॥करऽ हो०॥
कहें कबीर सुनो भाई साधो, ना लगिहें कौड़ी चित्ती ।
ना लगिहें दाम छदाम पास से, मुफुत में बनिहें खेती ॥करऽ हो०॥

हे मन, राम-नाम रूपी धान की खेती कर । राम-नाम को बोने से हीरा-मोती उपजता है । ज्ञान-ध्यान नामक दो बैल हैं । जभी मन में इच्छा हो, तभी उन्हें जोत ले । पहले पहल मैंने खेती गंगा और यमुना की रेत में की । इस खेती में नफा बहुत हुआ, जीव की मुक्ति हुई । मौलाना होकर कुरान पढ़ता है और पण्डित होकर पोथी बाँचता है । पर भाव-भक्ति का भेद दोनों नहीं जानते । उनकी मुक्ति कैसे होगी ? कबीर साहब कहते हैं कि हे भाई सन्तो ! सुनो, इस खेती में एक चित्ती कौड़ी भी व्यय नहीं होती । इसमें पास से दाम-छदाम भी खर्च नहीं होते, मुफ्त में ही खेती बन जाती है । इसलिए राम नाम की खेती करो ।

(१४)

हमके गुरूजी पठवले चेला सो निआमति लेके आना ॥
पहिले निआमति आटा लाना, भाई बहिन के मति सताना ।
चक्की जाँता बचा के चेला, भोजन भर के तुम लाना ॥हम०॥
दूसर नेआमत पानी लाना, तलाब पोखरा पास न जाना ।
कुआँ इनरा के बचा के चेला, कमंडल भर के लाना ॥हम०॥

तीसर नेआमत लकड़ी लाना, बीरीछा डार के पास न जाना।
झूरी ओदी बचा के चेला, बोझा बांध तुम लाना ॥हम०॥
चउथा नेआमत कलिया लाना, जिआजन्तु के पास न जाना।
मुआ जीआ बचा के चेला, खप्पर भर के लाना ॥हम०॥
कहें कबीर सुनो भाई साधों, यह पद हव निर्बाना।
ई पद के जे अरथ लगइहें, सेई बैकुण्ठे जाना ॥हम०॥

हमको गुरु जी ने भेजा है और कहा है कि हे चेला, न्यामत लेकर लौटना। उनका आदेश है कि पहली न्यामत आटा लाना; परन्तु माँ-बहन को सताना मत। उन्होंने कहा है:—हे चेला, भोजन भर का आटा लाना, पर वह जाँता-चक्की का आटा पीसा न हो। उससे बचा हुआ हो। फिर उनका आदेश है कि दूसरी न्यामत पानी लाना; परन्तु देखना, ताल और तालाब के पास मत जाना। इनारा-कुँआ बचा कर कमण्डल भर जल लाना। तीसरी न्यामत लकड़ी लाने का आदेश है, परन्तु निषेध है कि वृक्ष या डार के पास न जाना और इस के साथ ही वह लकड़ी न सूखी हो और न ओदी हो। फिर भी पूरा एक बोझ लकड़ी बँधी हो। फिर उनका हुकुम है कि चेला, चौथी न्यामत कलिया (मांस) लाना। परन्तु देखना जीव-जन्तु के पास हरगिज न जाना। मरा और जिन्दा दोनों को बचा कर खप्पर भर कलिया लाना। कबीर साहब कहते हैं—हे भाई साधुओ, सुनो यह पद निर्वानी है। इस पद का जो अर्थ लगायगा, वही वैकुण्ठ जा सकेगा।

(१५)

अगूंवा राम नाम नाहीं आई, पाछुवा समुझि पड़ी हो भाई।
अइसन नामवा आवे कंठ भीतर, छाड़ि कपट चतुराई।
सेवा बंदगी करो रे मन से, तबे मिली रघुराई ॥अगूंवा०॥
कर से दान कबहु ना कइल, तीरथ कबहुँ ना नहाई।
एही पाप से बादुर बन में, उलटि पाँव टंगाई ॥अगूंवा०॥
रामनाम कए तागा भेजे, धागा अजब बनाई।
मातु पिता के दोष ना देवे, करम लिखल फल पाई ॥अगूंवा०॥
कहे कबीर सुन भाई साधो, देखली जगत दुनिआई।
साचं कहे जग मारल जावे, झूठे सब पतिआई ॥अगूंवा०

हे भाई, आगे जो राम-नाम मुख में नहीं आया, तो पीछे समझ पड़ेगा। ऐसा नाम कंठ के भीतर आवे कि कपट-चतुराई सब छूट जाय। सेवा और नमस्कार मन से खूब करो तभी राम मिलेगा। हाथ से तो कभी दान नहीं दिया और तीर्थ-स्नान भी नहीं किया। इसी पाप से बादुर बन-वन में उलटे पाँव टँगा कर लटके हुए हैं। राम एक तागा है जो अजीब तरह से बना हुआ है। माता-पिता का दोष नहीं देना है, जो करम में लिखा है, वही फल पाना है। कबीर कहते हैं—हे भाई सन्तो! सुनो, मैंने इस जगत को और इसकी दुनियादारी

को देख लिया। यहाँ साँच कहनेवाला मारा जाता है और झूठ कहनेवाले का संसार विश्वास करता है।

(१६)

प्रेम के चुनरीआ पहिर के हम चलली हो साजनवाँ,
ज्ञान दीपक लेले हाथ हो साजनवाँ ॥१॥
सतगुरु मत लरवा लावल हो साजनवाँ,
खुली गइले भरम केवाड़ हो साजनवाँ ॥२॥
गंगा जमुनवाँ के संगम बहत हो साजनवाँ,
करु त्रिवेनी असनान हो साजनवाँ ॥३॥
साहब कबीर यह झुमर गायल हो साजनवाँ,
बहुरी न अइबों संसार हो साजनवाँ ॥४॥

हे साजन, प्रेम की चुन्दरी पहन कर ही मैं चल निकली हूँ। अपने हाथों में हे साजन, ज्ञान रूपी दीपक लेकर ही मैं बाहर निकल पड़ी हूँ। सत्गुरु धन्य हैं जिन्होंने मुझे सत् को दिखाया। हे साजन! गंगा-यमुना का संगम बह रहा है। इस त्रिवेणी में ही स्नान करो। कबीरदास ने इस झूमर को गाया है। हे साजन, अब इस संसार मुझे फिर नहीं आना है।

(१७)

मन भावेला भगति भिलिनिये के।
पांड़े ओझा, सुकुल तिवारी, घंटा बाजे डोमिनिये के ॥
गंगा के जल में सभे नहाला, पूत तरे जोलहिनिये के।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, अइले बिमान गनिकवे के ॥

भिल्लिनी की भक्ति ही उन परमेश्वर के मन को भाती है। पांडे, ओझा, शुक्ल, तिवारी आदि नामधारी लोगों की अर्चनाएँ वैसी ही पड़ी रह गईं; पर डोमिन का घंटा उनके द्वार पर बजने लगा। गंगा के जल में तो नित्य सब स्नान कर ही रहे हैं; परन्तु कोई तरा तो केवल वह जोलहिनिया पुत्र (कबीर) ही तरा। कबीरदास कहते हैं कि हे साधो सुनो, किसी के लिए विमान नहीं आया और यदि वह आया; तो केवल गनिका नाम्नी वेश्या के लिए ही आया।

(१८)

कलवारिन होइबो, पिअबो मैं मदिरा बनाय।
मन महुआ गुर गेयान जबर करि, तन के भटी चढ़इबो।
सत गाँछ के लकड़ी मँगइबों, प्रेम अगिनि धधकइबों ॥
यह बोतल के बहुत दाम हो दारू सराब न पइबों।
सभ संतन के लागल कचहरी दरुअन द्वार चढ़इबों ॥
दारू पी मन मस्त भइल सत के रूप बनि जइबों।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, राम-नाम गोहरइबों ॥

मैं कलवारिन बनूँगा और खुद मदिरा बना कर पीऊँगा। मन का महुआ और गुरु-ज्ञान का गुड़ इकट्ठा कर शरीर को भट्ठी पर चढ़ाऊँगा। सत् रूपी गांछ की लकड़ी मगाऊँगा और प्रेम की अग्नि धधकाऊँगा। अहो, इस बोतल का बहुत मूल्य होगा! इसको दारू या शराब नहीं पायगा। सब सन्तों की लगी हुई कचहरी में मैं इसी दारू को ढार-ढार कर चलाऊँगा और इस दारू को पीकर मेरा मन मस्त हो गया है। मैं अब सत रूप बन जाऊँगा। कबीर कहते हैं कि हे भाई सन्तो, अब मैं राम-नाम पुकारूँगा।

(१९)

पाँचों जानी बलम् सँग सोईंगे।
पाँचो नारी सरब गुन आगरि एक से एक पिआरी जानी।
पाँचो मारि पचीस बस कइले, एक के प्यारी बनावे जानी॥
एक सखि बोले पिया बतलावे, ना बतलावे लगाही बानी॥
कहे कबीर सुन भाई साधो, सुर नर मुनि के एके जानी॥

पाँचों जनी (पाँच तत्त्व) बालम के साथ सो गईं। पाचों जानी सब गुणों से सम्पन्न हैं और एक-से-एक पियारी हैं। पाचों को मार कर पच्चीस (तत्त्व) को वश में किया और एक को प्यारी बनाया। एक सखी ने कहा कि अरे, प्रीतम तो बातें बता ही देता है, केवल झूठी बातें वह नहीं बताता। कबीर कहते हैं हे भाई सन्तो, सुनो सुर-नर-मुनि सबको एक ही प्रिय है।

(२०)

चलु मन जहाँ बसे प्रीतम हो वैरागी मोरे यार।
लगली बजरिया धरमपुर हो हीरा रतन बिकाय।
चतुर चतुर सौदा करि ले ले हो मुरुख ठाढ़े पछिताय।
साँप छोड़े साँप केंचुलि हो, गंगा छोड़ेली अरार।
प्राण छोड़े घर आपन हो, केऊ संग नाहीं जाय॥
छोटी मुटी डोलिया चननवा के हो, लागे बतीस कहार।
लेके बिंदावन उतरे हो जहाँ केउ ना हमार॥
पाँच कुंइया नव गागर हो सोरह पनिहार॥
भरल गगरिया ढरकि गइली हो सुन्दरि खाड़े पछिताय॥
दास कबीर निरगुन गावेले हो शंकर दरबार।
अबना आइबि भव सागर हो कइसे उतरबि पार॥

हे मन, हे मेरे बैरागी यार मन! वहाँ चलो, जहाँ तुम्हारा प्रीतम बसता है। धर्मपुर का बाजार लगा हुआ है। वहाँ हीरा-रत्न बिक रहे हैं। चतुरों ने तो सौदा कर लिया। मूर्ख खड़े-खड़े पछता रहे हैं। साँप अपना केंचुल छोड़ता है और गंगा अरार (किनारा) को छोड़ रही है। प्राण अपने घर को त्याग रहा है और कहीं कोई उनके संग नहीं जा रहा है। छोटी-सी डोली चन्दन की है। उसमें बत्तीस कहार लगे हुए हैं। मुझे लेकर उन्होंने बृन्दावन में उतारा, जहाँ हमारा कोई नहीं था। पाँच कुँए हैं और नव गागर हैं तथा

सोलह पनिहारिनें हैं। भरी हुई गगरी लुढ़क गई और सुन्दरी खड़ी-खड़ी पछता रही है। कबीरदास शंकर भगवान के दरबार में निरगुन गाते हैं और कहते हैं, मैं अब इस भवसागर में नहीं आऊँगा। कैसे मैं उस पार उतरूँगा, यही सोच रहा हूँ।

(२१)

सइयाँ जी विदेसे गइले राम सवती के झगरवे।
अइसन बिरहिए हम ना जिअबि।
नइहरवा भागि जाइबि हो राम॥
फूल तोरे गइलीं बारी सारी मोरे अटके।
बिना सइयाँ सारी मोरे केहू ना उतारेला हो राम॥
सारी मोर फाटि गइली, चोलिया मसकि गइली।
नयन किनरवे नव रंग भींजल हो राम॥
दास कबीर ए राम गावे निरगुनवा।
गाई गाई सखी के बुझबिले हो राम॥

मेरे सैयाँ जी सवति के झगड़े के कारण विदेश चले गये। हा राम! ऐसे विरह में मैं जिन्दा नहीं रहूँगी। मैं नइहर भाग जाऊँगी। हा राम! मैं तो फूल तोड़ने पुष्पवाटिका में गई; पर मेरी साड़ी डार से उलझ गई। हा, अब मेरे सैयाँ के बिना मेरी साड़ी को कोई नहीं उतारता (छुड़ाता) है। मेरी वह साड़ी फट गई, चोली मसक गई और मेरे नेत्रों के किनारे नव रंगों से भींग गये। कबीरदास राम का निरगुन गाते हैं और गा-गा करके सखी को बुझाते हैं (समझाते) हैं।

(२२)

छतिया से उठेली दरदिया पिया के जगाव बारी हो ननदी।
सैंया मोहे सूते ए राम प्रेम के अटरिया।
खोल ना केवरिया ए राम पूछी दिलवा के बतिया, बारी हो ननदी।
आधी-आधी रतिया ए राम, धरमवा के बेरवा।
जमले होरिलवा धगरिनि बोलाव बारी हो ननदी॥
सब अभरनवा ए ननदी बान्हि लना मोटरिया।
समुझि-समुझि के डेगवा डाल बारी हो ननदी॥
बाड़ा ए सुदिनवा ए जमले होरिलवा।
अझुरल केसिया सवार बारी हो ननदी॥
दास कबीर ए राम गावे पद निरगुनवा।
हरि के चरनिया अब चित लावहु रे ननदी॥

हे मेरी बारी उमरवाली ननद, मेरी छाती से दर्द उठ रहा है। मेरे पिया को जगाओ। मेरे प्रीतम प्रेम की अटारी पर सोये हैं। तू किवाड़ खोलो, जिससे कि मैं दिल की बात पूछूँ। आधी रात को, जब धर्म की बेला है, होरिला (बालक) ने जन्म लिया। हे बारी ननद, धगरिन (चमाइन) को बुलाओ। हे ननद! अब सब आभूषणों को गठरी में बाँध

लो और खूब समझ-समझ कर पग डालो। बड़े सुदिन में हे ननद, होरिला जन्मा है। हे मेरी बारी ननद ! उलझे हुए केशों को संवार दो। कबीरदास राम के निर्गुण पद गा रहे हैं और कहते हैं कि हरि के चरणों में अब चित्त लगाओ।

(२३)

नैया नीचे नदिया डूबी ए नाथ जी
अब नइया में नदिया डूबी।
एक अचरज हम आउर देखलीं
कुँइया में लागल बाड़ी आगि॥
पानिया भरिजरि कोइला हो गइल,
अब सिधरी बुझावताड़ी आगि॥
एक अचरज हम आउर देखलों
बानर दुहे धेनु गाइ।
अजी दुधवा दुहि दुहि अपने खइले
घीउवाँ बनारस जाइ॥नैया०॥
अजी एक अचरज हम अउरी देखलीं
चिंउटी ससुरवा जाइ।
अब नव मन कजरा लाइ, ए नाथ जी॥नैया०॥
अरे हाथी मारि बगल धइ दबली
अउर उँटवा के दिहली लटकाइ।
अजी एक चिंउटी का मरले नव सौ गीध अघाय॥नैया०॥
कुछ खइले कुछ भुइंया गिरवले कुछ मुहवाँ में लपटाइ।
कहेले कबीर बचन के फेरा ओरिया के पानी बड़ेरिया जाइ[1]॥

हे नाथ, अब नाव के बीच नदी डूबेगी। अब नाव के बीच नदी डूबेगी। एक आश्चर्य मैंने और देखा कि कुँए में आग लगी हुई है। पानी तो जरकर कोयला हो गया; पर सिधरी मछली तब भी आग बुझा रही है। अजी एक अचम्भा की बात मैंने और देखी कि बन्दर धेनु गाय दूह रहा है। दूध तो दूह कर उसने स्वयं पान किया; परन्तु तब भी घी बनारस भेजा गया। अजी एक आश्चर्य मैंने और देखा कि चींटी सासुर जा रही है, और नव मन काजर अपने नेत्रों में लगा कर जा रही है। फिर हाथी को मार कर तो उसने बगल में दाब लिया और ऊँट को लटकाये हुए ले चली। फिर एक आश्चर्य मैंने और देखा कि एक चींटी मरी और नव सौ गिद्ध उसे खाकर अघा गये। गिद्धों ने कुछ तो खाया और कुछ पृथ्वी पर गिराया भी और कुछ उनके मुखों में लपटाया ही रह गया। कबीर दास कहते हैं कि वचन का फेर है। छप्पर की ओरी का पानी बड़ेर पर जाता है।

१ यह गीत एक महिला से प्राप्त हुआ है। इसमें कुछ चरण इधर-उधर के जान पड़ते हैं। फिर भी जैसा प्राप्त हुआ, वैसा यहाँ दिया गया है। इस तरह के गीत का दूसरा पाठ गीत नं० ११ में भी है। कई चरणों का साम्य भी है।

(२४)

ओह दिनवा के ततबीर कर हो चोला, वोह दिनवा के ततबीर ॥
भव सागर के राह कठिन बा नदिया बहे गंभीर ।
नाव ना बेड़ा लोग घनेरा खेवन वाला जदुबीर ॥
ना संग जइहें भाइ भतीजा, ना संग जइहें नारी ।
ना संग जइहें धन दउलतिया, ना संग जाले शरीर ॥
जम्हु के दुअरा लोहा के सीकर बान्हताड़े मुसुक चढ़ाइ ।
ले सोटा जम्हु मारन लागे, पूछ ताड़े पिछला कमाइ ॥
कहेले कबीर सुनो भाई साधो ई पद हउवे सही ॥

हे मेरे चोला (शरीर) ! उस दिन का तदबीर कर लो। उस दिनका तदबीर कर लो। इस भव-सागर की राह कठिन है। बहुत गहरी नदी बह रही है। न कोई नाव है और न कोई बेड़ा है। बहुत-से लोग जानेवाले खड़े हैं। खेनेवाले का बल वही यदुबीर ही है। अपने संग में भाई-भतीजा कोई नहीं जायगा, न नारी ही जायगी। ये धन-दौलत और न यह शरीर ही साथ जाते हैं। यम के दरवाजे पर लोहा का सीकड़ है। वह मुसुक चढ़ाकर बाँधता है, सोटा लेकर पीटता है और पिछली कमाई पूछता है। कबीर साहब कहते हैं हे भाई साधो, यही सही और ठीक है। जो इस पद को बूझे-समझेगा वही नर सही रास्ते पर है।

(२५)

अइली गवनवा के सारी हो, अइली गवनवा के सारी ।
साज समाज ले सइयाँ मोरे ले अइले कहरवाँ चारी ।
बभन बिचारा दरदिओ ना बूझे जोरत गठिया हमारी ॥
सखी सब गावेली गारी ॥
बिधि भैले बाम नाहीं समुझि परे कुछ बैरन भइली महतारी ।
रो रो अखियाँ धुमिल भई सजनी घरवा से देत निकारी ।
भइलीं सबके हम भारी ॥
माता पिता बिदा कर देलन सुधि नाहीं लेलन हमारी ।
धइ बहिया झकझोरि चढ़वले केउना छोड़ावन हारी ।
देखहु, यह अति बरिआरी ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो प्यारी गवने सिधारी ।
अबकी गवनवे लवटि नाहिं अवना करिलेहु भेंट सब नारी ।
चली मैं ससुरा दिहारी ॥

अब गवना की सारी (नेआर) आ गई। अब गवना की सारी आ गई अर्थात् द्विरागमन के लिए बुलाहट आ गई। मेरे प्रीतम साज-सामान सब लेकर आये और कहार भी चार लाये। ब्राह्मण बेचारा दरद नहीं बूझता है। वह हमारा गँठबन्धन प्रीतम के साथ कर रहा है। सखियाँ सब गाली गा रही हैं। विधाता हमारे वाम हो गये हैं।

मुझको कुछ समझ में नहीं आ रहा है कि क्या करूँ ? मेरी माँ भी आज बैरन (शत्रु) बन गई है। रो-रो कर मेरी आँखें धूमिल हो गईं। साथ की सखी-सहेलियाँ घर से मुझे निकाले दे रही हैं। हा! आज मैं सब के लिए भारी हो गई। माता-पिता ने मुझे विदा कर दिया। उन्होंने मेरी जरा भी सुधि नहीं ली। हे सखि! बाँह पकड़ कर और झकझोर कर वे मुझे डोली में चढ़ा रहे हैं और हा! कोई मुझको छुड़ानेवाला नहीं है! हे राम देखो, यह अत्यन्त बरिआरी (जबरदस्ती) है। कबीर कहते हैं कि हे भाई साधो, सुनो प्यारी ने द्विरागमन के अवसर पर प्रस्थान किया। इस बार का जाना, फिर लौटना नहीं है। सब अच्छी तरह अँकवार-भेंट कर लो।

उपर्युक्त गीतों में भोजपुरी शब्दों, क्रियाओं आदि के अनेक प्रयोग हैं; केवल इतना कहना ही न्यायसंगत नहीं होगा। वास्तव में ये गीत ही भोजपुरी के हैं जिनकी विशेष विवेचना की आवश्यकता नहीं जान पड़ती।

कमालदास

कमालदास कबीरदास के पुत्र थे। आपने भी भोजपुरी में कबीर की तरह अनेकों रचनाएँ की हैं। आपकी वाणी भी कबीर की तरह कहीं-कहीं उलटी होती थी। आपके सम्बन्ध में कबीर की कही हुई वाणी आज भोजपुरी में कहावत की तरह व्यवहृत होती है— "गइल वंश कबीर के जमले पूत कमाल"।

परन्तु वास्तव में जिस अर्थ में इसे हम आज प्रयोग करते हैं, वैसा कमाल साहेब नहीं थे। आप पहुँचे हुए सन्त थे और सन्त-समाज में आपकी पूरी ख्याति है। उपर्युक्त कहावत से मालूम होता है कि कमालदास के बचपन की चाल-ढाल कबीर साहेब को पसन्द न थी। कमालदास की भोजपुरी कविताओं को देखिए—

(१)

अइसन ज्ञान न देखल अबदुल।
माता मेरी पहिले मरी गे पीछे से जनम हमारा जी।
पिता हमरो बियहन चललें हम तो चली बरिआती जी॥
ससुर हमारा असिआ बरिस के सासु त बाढ़ी कुमारी जी।
सइयाँ मोरा पलँग चढ़ि झूले हमत झुलावनहारी जी।
चारो भाई हम एकसँग जनमली एकु मरत हम देखली जी॥
पाँच पचीस भौजइया देखनी तीस के लागल लेखा जी॥
कहे कमाल कबीर के बालक ई पद हउए सही जी।
जे यहि पद के अरथ लगइहें सेही गुरु हम चेला जी॥

हे अब्दुल, ऐसा ज्ञान हमने नहीं देखा। मेरी माता पहले मर गई और मेरा जन्म पीछे हुआ। मेरे पिताजी विवाह करने चले और मैं उनकी बारात में चला। हमारे ससुर जी तो अस्सी वर्ष के हैं, पर हमारी सास अभी कुँआरी ही हैं। मेरे पति पलँग पर चढ़ कर झूला झूलते हैं और मैं झूला झूलानेवाली हूँ। हम चारों भाइयों ने एक साथ जन्म लिया; पर एक को मरते हमने अपनी आँखों देखा। हमने पाँच और पचीस भौजाइयों को

देखा और तीस का लेखा पूरा हुआ। कबीर के पुत्र कमाल कहते हैं कि यह पद सही है। जो इस पद का अर्थ लगायगा, वही गुरु होगा और मैं उसका चेला बनूँगा।

(२)

समझ बूझ दिल खोज पिआरे।
आसिक हो के सोना का॥
जिन नयनों मे नींद गँवावल
तकिया लेप बिछवना का॥
रूखा सूखा राम के टुकड़ा
चिकना अबर सलोना का॥
कहत कमाल प्रेम के मारग
सीस देइ फिर रोना का॥

हे प्यारे, समझ-बूझ करके अपने दिल में खोज। प्रेम में पागल होकर के अब सोना कैसा! नयनों से तुमने नींद भुला दी। अब तुमको तकिया, उबटन और बिछावन की क्या आवश्यकता है? रूखा-सूखा राम का दिया हुआ टुकड़ा ही जब खाना है, तब उसमें घृत और नमक का प्रश्न कैसा? कमाल कहते हैं कि अरे भाई प्रेम के मार्ग में शीश (सिर) देकर फिर रोना कैसा?

धरमदास

धरमदास कबीरदास के शिष्य थे। आपका समय कबीरदास की मृत्यु तथा उसके बाद का समय है। यानी संवत् १५७५ चाहे उसके बाद। आपने भी भोजपुरी में कविता की है[1]।

"धर्मदास जी बाँधो गढ़ नगर (रीवाँ राज्य) के एक बड़े महाजन थे। इनके जन्म और मृत्यु के समय का ठीक-ठीक पता नहीं है। कहते हैं, कबीर साहब ने इन्हें सन्त मत का उपदेश दिया और चमत्कार दिखाया, जिससे इनका उनपर पूरा विश्वास हो गया। ये उनके पूरे भक्त हो गये। इन्होंने अपना सारा धन लुटा दिया और काशी में आकर गुरु के चरणों में रहने लगे। गुरु की कृपा से ये भी अच्छी स्थिति के महात्मा हो गये। कबीर-दास के परम धाम पधारने पर आपही उनकी गद्दी पर बैठे।" इनकी कुछ कविताएँ यहाँ दी जा रही हैं :—

(१)

मितऊ मड़ैया सूनी करि गैलो।
अपने बलमु परदेस निकसि गैलो, हमरा के कछु नागुना देइ गैलो ॥१॥
जोगिन होइके मैं बन बन ढूँढ़ों, हमरा के बिरहा बिराग देइ गैलो ॥२॥
संग के सखी सब पार उतरि गैलो, हम धनि ठाढ़ अकेला रहि गैलो ॥३॥
धरमदास यह अरज करतु हव, सार सबद सुमिरन देइ गैलो ॥४॥

---

१. धर्मदास जी का यह परिचय 'कल्याण' के 'योगाङ्क' से लिया गया है। इनके गीत और भोजपुरी कविताएँ कबीर-पंथी ग्रन्थों में प्रचुर मात्रा में पाई जाती हैं।

मेरा मित्र मेरी मड़ई सूनी करके चला गया। बालम अपने तो परदेश निकल गया; पर मुझको कोई गुण नहीं दे गया। जोगिन बन कर मैं बन-बन उसको ढूँढती-फिरती हूँ। हा, मित्र ने मुझको विरह और वैराग ही देकर प्रस्थान किया। मेरे संग की सभी सखियाँ पार उतर गईं; परन्तु मैं धनी (सोहागवती स्त्री) अकेली खड़ी रह गई। धरमदास अर्ज करता है कि मित्र ने मुझको सार शब्द के सुमिरन का आदेश देकर प्रस्थान किया है। उसी को जपना है।

शायद इस गीत की रचना धरमदास जी ने कबीरदास के समाधि लेने के बाद की हो। इसमें कितनी विरहानुभूति आध्यात्म्य पक्ष में व्यक्त है। भोजपुरी में 'मीत' का प्रयोग तब होता है जब एक ही नाम दो व्यक्तियों का होता है। एक व्यक्ति दूसरे को सम्बोधन करते समय उसका नाम न लेकर 'मीत' का प्रयोग करता है। आत्मा और ईश्वर के अर्थ में इसका कितना सुन्दर प्रयोग हुआ है।

(२)

खेलत रहलीं बाबा चौपरिया, आइ गैलें अनिहार हो।
पार परोसिन भेटहूँ ना पवलीं, डोलिया फँदाये लिहे जात हो।
डोलिया से उतरलीं बा उतर दिस धनिया, नइहर लागल आगि हो।
सबद प छावल साईं के नगरिया, जहवाँ लिअवले लिहे जात हो।
भादव नदिया अगम बहे सजनी, सूझत आर ना पार हो।
अबकी बेरिया साहेब पार उतारहु, फिरि ना आइब संसार हो।
डोलिया से उतरे साहेब घरे सजनी, बइठे घूँघट टारि हो।
कहे कबीर सुनो धरम दास, पावल पुरुख अपार हो।

बाबा के चौपाल में खेल रही थी कि ले जानेवाले आ गये। अड़ोस-पड़ोस की सखियों से भेंट भी नहीं कर पाई कि वे सब डोली पर चढ़ा कर मुझे ले चले। मैं सोहागवती उत्तर दिशा में डोली से उतरी तो क्या देखती हूँ कि मेरे मायके में आग लगी है अर्थात् मेरा शरीर (शव) जल रहा है। अनहद शब्द से साईं की नगरी छाई हुई है। वहीं मुझको लोग लिवाये चले आ रहे हैं। हे सजनी, भादो की नदी अथाह और अगम्य हो बह रही है। वार-पार कुछ नहीं सूझता है। हे मालिक, इस बार पार उतारो। अब फिर इस संसार में नहीं आऊँगी। हे सखी, साहब के घर पहुँची तो डोली से उतरी और घूँघट हटा कर बैठी। कबीरदास कहते हैं कि हे धरमदास सखी को अपार पुरुष मिल गया।

(३)

अचरज खयाल हमरे रे देसवा।
हमरे देसवाँ बादर उमड़इ, नान्ही परेली फुहेरिया।
बइठल रहीं चउगाने चउक में, भीँजइ हमरी देहिया॥
हमरे देसवाँ अरध मुख कुइयाँ, साँकर ओकर खोरिया।
सुरति सुहागिनि जल भरि लावसु, बिनु रसरी बिनु डोरिया॥

हमरे देसवा चुनरि उपजै, मँहगे मोल बिकाय।
की तो लेइहहुँ सतगुरु साहेब, की केहू साधु सुजनिया ॥
हमरे देसवा बाजा बाजइ, गरजी उठे अवजवा।
साहेब 'धरमदास' मगन होइ बइठे, तखत परकसवा ॥

अपने देश में मैंने एक आश्चर्य देखा। हमारे देश में बादल उमड़ आये और नन्हीं-नन्हीं फुहियाँ बरसने लगीं। मैं चौराहे के मैदान में खुलेआम बैठी थी कि मेरा शरीर भींगने लगा। हमारे देश में अर्ध मुखवाला कूप है। उसके पास जाने की गली अति पतली है। सौभाग्यवती सखी 'सुरति' उस कुएँ से पानी बिना रस्सी और डोरी के भर लाती है। उस हमारे देश में चुन्दरी (सारी) बनती है। वह बड़े अधिक दामों पर बिकती है। उसको या तो साहिब (ईश्वर) खरीद सकता है या कोई बड़ा साधु या सुजान पुरुष ही। हमारे देश में बाजा बजता है (पारलौकिक) आवाज उठती है। 'धरमदास' कहते हैं कि उस स्वर को सुननेवाले (ईश्वर) मगन होकर महाप्रकाश के सिंहासन पर बैठे हुए हैं।

(४)

मोरा पिया बसे कवने देस हो?
अपना पिया के ढूँढ़न हम निकसीं।
केउ ना कहत सनेस हो ॥
पिया कारन हम भइली बावरी।
धइलीं जोगिनिया के भेस हो ॥
ब्रह्मा बिसुन महेस न जाने।
का जानसु सारद सेस हो ॥
धन जे अगम अगोचर पवलन।
हम सब सहत कलेस हो ॥
उहाँ के हाल कबीर गुरु जानले
आवत जात हमेस हो ॥

अरे, मेरा प्रीतम किस देश में बसता है! मैं तो अपने प्रीतम को ढूढ़ने निकली थी; पर कोई मुझसे सन्देश नहीं कहता है। प्रीतम के कारण मैं बावरी हुई हूँ और मैंने जोगिन का भेष धारण किया है। उसको ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी नहीं जानते, शारदा और शेषनाग उसको क्या जानें? वे नर धन्य हैं, जिन्होंने उस अगम और अगोचर प्रीतम को पा लिया। मैं तो केवल क्लेश ही सह रही हूँ। वहाँ का हाल 'कबीर गुरु' ही, जानते हैं, जो हमेशा वहाँ आते-जाते हैं।

(५)

साहब, तोरी देखीं सेजरिया हो।
लाल महल कइ लागल कँगूरा, ललहिं लागलि केवरिया हो।
लाल पलँगवा लाल बिछवना, लालहिं लागि झलरिया हो ॥
लाल साहेब के लालहिं मूरति, लालि लालि अनुहरिया हो।
'धरमदास' बिनवें कर जोरी, गुरु के चरन बलिहरिया हो ॥

हे मालिक, मैंने तुम्हारी सय्या देख ली। तुम्हारे लाल महल का लाल कंगूरा है और उसमें लाल ही रंग की किवाड़ी लगी हुई है। तुम्हारा पलँग लाल है। उसपर बिछावन भी लाल ही है और उसमें लाल ही झालर लगी हुई है। हमारे लाल साहब की लाल मूर्त्ति है और लाल-लाल सेविकाएँ हैं। 'धरमदास' हाथ जोड़ कर बिनती करते हैं और अपने गुरु के चरणों पर बलिहारी होते हैं।

(७)

पिया बिनु मोरा नींद न आवे ॥
खन गरजे खन बिजुरी चमके, उपरा मे मोके झांकि दिखावे।
सासु ननदि घर दारुनि अहईं, नित मोहि बिरहा सतावे ॥
जोगिन होइ के बन-बन ढूँढ़लीं, केउ नाहिं सुधि बतलावे।
'धरमदास' विनवे लें कर जोरी, केउ निअरे केउ दूर बतावे ॥

अरे, प्रीतम के बिना मुझे नींद नहीं आ रही है। कभी तो बादल गरजता है और कभी बिजली चमकती है। मानों ऊपर से झाँक कर वे मुझे संकेत बता रहे हैं। घर में कष्ट देनेवाली सास तथा ननद हैं और उसपर से बिरह मुझे नित्य सताया करता है। मैंने जोगिन बनकर प्रीतम को वन-वन ढूँढ़ा; पर किसी ने उनका ठीक पता नहीं बताया। धर्मदास कर बाँधकर विनय करता है और कहता है कि उनका कोई ठीक पता नहीं बताता। कोई उन्हें निकट कहता है तो कोई दूर बताता है।

(८)

पिया बिनु मोहि नीक न लागे गाँव ॥
चलत चलत मोरा चरन दुखा गइले, अँखियन परि गइले धूरि ॥
अगवाँ चलत पंथ ना सूझत, पछवाँ परत ना पाँव ॥
'ससुरे जाऊँ त पिया न चिन्हइ, नइहर जात लजाउँ ॥
इहाँ मोर गाँव उहाँ मोर पाही, बीचवा अमरपुर धाम ॥
'धरमदास' विनवे कर जोरी, तहाँ ठाँव न गाँव ॥

प्रीतम के बिना मुझे अपना गाँव अच्छा नहीं लगता। चलते-चलते मेरे चरण दुख गये हैं और आँखों में धूलि पड़ गई है। आगे चलने में तो पंथ नहीं सूझता और पीछे को पाँव मुड़ नहीं पाते हैं। यदि मैं सासुर जाती हूँ तो प्रीतम मुझे पहचानता नहीं है और नइहर जाते मुझे लज्जा घेर लेती है। यहाँ मेरा गाँव (जन्म-स्थान) है और वहाँ मेरा पाही[1] है। बीच में अमरपुर नामक धाम है। 'धरमदास' हाथ जोड़ कर बिनती करते हैं और कहते हैं कि उस अमरपुर धाम में न स्थल है और न गाँव ही है (मैं जाऊ तो कहाँ जाऊँ?)।

१. (दूसरे गाँव में जो जाकर खेती की जाती है और हल-बैल वहाँ नहीं रखे जाते; बल्कि नित्य अपने गाँव से ही बैल खेती के लिए वहाँ ले जाने पड़ते हैं। उस खेती को पाही कहते हैं)।

तुम सत गुरु हम सेवक तोहरे।
जो केउ मारे औ गरिआवे, दाद फरियाद करबि तुमहीं से।
सोवत जागत के रछपाला, तोहके छाड़ि भजबि नाहीं अउरे॥
तुम धरनीधर सबद अनाहद, अमृत भाव करबि प्रभु सगरे।
तोहरी बिनय कहाँ लगि बरनों, धरमदास पद गहले॥

हे प्रभु, तुम हमारे सत्गुरु हो और हम तुम्हारे सेवक हैं। यदि कोई हमें मारता है या गाली देता है तो मैं तारीफ या शिकायत तुमसे ही करूँगा। तुम सोते और जागते—दोनों के रक्षक हो। तुमको छोड़कर मैं और को नहीं भजूँगा। तुम धरनी को धारण करनेवाले अनाहद शब्द हो। हे प्रभु जी, मैं सदा और सर्वत्र अमृत तुल्य अर्थात् अमर भाव आपके प्रति वहन करूँगा। मैं तुम्हारी बिनती कहाँ तक करूँ! मैं 'धर्मदास' ने तुम्हारे चरण पकड़ रखे हैं।

(९)

जमुनियाँ के डारि, ममोरि तोरि देबि हो।
एक जमुनियाँ के चउदह डरिया, सार सबद लेके मोरि देबि हो॥
काया कंचन अजब पिआला, नाम बूटी रस घोरि देबि हो॥
सुरत सुहागिन गजब पिआसी, अमृत रस में बोरि देबि हो॥
सतगुरु हमरे ज्ञान जवहरी, रतन पदारथ जोरि देबि हो॥
धरमदास के आज गोसांई, जीवन बन्द छोरि देबि हो॥

अरे, मैं इस शरीर रूपी जामुन की डाल को ऐंठकर तोड़ दूँगा अर्थात् तपस्या से इसे नष्ट कर दूँगा। एक जामुन रूपी शरीर की चौदह डालियाँ हैं। सार शब्द लेकर मैं उसे मोड़ दूँगी। मेरी सुरति सुहागिन, अजीब तरह से प्यासी है। मैं उसे अमृत-रस में बोर कर अमर कर दूँगा। हमारे सत के गुरु जानकार जौहरी हैं। मैं उनके लिए सभी रत्न पदार्थों को इकट्ठा करूँगा। धरमदास के मालिक (ईश्वर) आज उसके जीवन के बन्दों को खोल देगा, अवश्य खोल देगा।

(१०)

झरि लागइ महलिया, गगन घहराय।
खन गरजे खन बिजुरी चमके, लहरा उठे सोभा बरनि न जाय।
सून महल से अमरित बरसे, प्रेम आनन्द होइ साधु नहाय।
खुललि केवरिया मीटलि अँधियरिया, धन सत गुरु जे दीहले लखाय।
धरमदास बिनवेलें कर जोरी, सतगुरु चरन में रहत समाय॥

महल में पानी बरस रहा है और गगन घहरा रहा है—यानी गरज रहा है। कभी तो देव गरजता है और कभी बिजली चमकती है। लहर उठती है और उनकी शोभा बरनी नहीं जाती। शून्य से अमृत बरस रहा है और प्रेम में आनन्दित हो साधुगण उसमें स्नान कर रहे हैं। (मेरे अज्ञान का) कपाट खुल गया और अँधियाली मिट गई। सत्गुरु

धन्य हैं, जिन्होंने इसको लखा दिया। 'धर्मदास' कर जोर कर विनय-पूर्वक कहते हैं कि मेरी गति तो सत् गुरु के चरणों में समा कर रहने में ही है।

(११)

आठ चाम के गुरिया रे [1] मनमाला फेर सबेरिया [2]।
अमिय रस निकसत राग-फाग तांत झनकरिया [3]।
नाम से अवर सउदा नाहिं भावइ, पिया के मौज लहरिया।
मिलहु सन्त, सुकीरति रस भोगहु, होवहु प्रेम पियरिया।
सीत होहु तन मन धन जारे, जइसे सती सिंगरिया।
नव दिस दुआर तपन तहँ देखो, ससवे खोलि केवरिया।
पाँच रागिनी झुमक पचीसो, छठए धरम नगरिया।
अजया लागि पागि रहे डोरी, निरखो सुरति सुंदरिया।
धरम-दास के साहेब कबिरा ले पहुँचवले सत्त नगरिया॥

अरे, अष्ट चर्म की मनिका है। मन की माला सवेरे (प्रातः काल) फेरा कर। उससे अमृतरूपी रस निकलता है और तांत (नस) से फाग रागनी की झंकार निकला करती है। प्रीतम के मौज की लहरों में नाम को छोड़कर दूसरा कोई सौदा करता (बेसाहता) तो मुझे भाता नहीं।

अरे, सत्य से साक्षात्कार करो, मुक्ति का रस भोगो और पिया के प्रेम की प्यारी बनो।

अरे जीव, जिस तरह से सती नारी सिंगार करके प्रीतम से मिलने के लिए सती होती है, उसी तरह तू भी तन, मन, धन को जारकर प्रीतम को प्राप्त करो। नवों दिशाओं में तपते हुए दरवाजों का दर्शन अपने दसवें द्वार केवाड़ को खोल कर करो। पाँच रागिनी और पच्चीस झुमक हैं। छठा धर्मनगर है। अजया के हेतु डोरी पाग (भींग) रही है। अरे, सुरति सुन्दरी को निरखो। धरमदास के साहब (स्वामी) कबीर हैं। उन्होंने उसको सत्नगर में ले जाकर पहुँचा दिया।

यहाँ रहस्यरूप से कुछ जैसे वाक्य और शब्दों का प्रयोग किया गया है जिनकी धार्मिक तत्त्वों को जाननेवाले ही पूर्ण व्याख्या कर सकते हैं।

(१२)

चढ़ि नवरँगिया के डार, कोइलिया बोलइ हो॥
अगम महल चढ़ि चलहु, उहाँ पिय से मिलहु हो।
सीलि चलहु आपन देस, जहाँ छवि छाजइ हो॥
सेत सबत जहाँ खिलहूँ, हंस होइ आवहिं हो॥
अगरबती मिलि जाय, सबद टकसारहिं हो॥
चहुँ दिसि लगलो झलरिया, तऽलोकवा असंखहिं हो॥
अम्बु दीप एक देस, पुरुस तहँ रहहिं हो।
कहे कबीर धरमदास, बिछुरन नहिं होई हो॥

अरे, नौरंगी (नारंगी) नीबू की डाल पर चढ़ कर यह कोयल बोल रही है। अरे, वह महल जो अगम है, उसपर चढ़ तुम चलो। वहीं प्रीतम से मिलोगे। वहाँ प्रीतम से मिलकर अपने उस देश को चलोगे जहाँ सौन्दर्य सदा छाया रहता है, जहाँ श्वेत शब्द (शब्द रूपी श्वेत कमल) सदा खिले रहते हैं, और हंस (जीवात्मा) जहाँ आया-जाया करते हैं। जहाँ अगरबत्ती मिला करती है अर्थात् अगर-बत्ती की जहाँ सदा सुगन्ध आया करती है और जहाँ शब्द (अनहद शब्द) का टकसार है यानी निर्माण होता है। उस देश के चारों तरफ झालरें लगी हुई हैं और असंख्य लोक जगमगा रहे हैं। अम्बु-द्वीप नाम का एक देश है, वहीं परम (ईश्वर) रहता है। कबीरदास धर्मदास से कहते हैं कि हे धर्मदास! उस पुरुष का वियोग तो कभी होता ही नहीं।

(१३)

सूतल रहलों में सखिया त विष कइ आगर हो ॥
सत गुरु दिहलेंइ जगाइ, पावों सुख सागर हो ॥१॥
जब रहलों जननि के ओदर प्रान सम्हारल हो ॥
जबले तनवा में प्रान, न तोंहि बिसराइब हो ॥२॥
एक बूँद से साहेब, मंदिल बनावल हो ॥
बिना रे नेंव केरा मंदिल, बहुकल लागल हो ॥३॥
इहवाँ गाँव न ठाँव, नहीं पुरबासिन हो ॥
नाहि न बाट बटी संग हो, नहीं हित आपन हो ॥४॥
सेमर हव संसार, भुआ उधराइल हो ॥
सुंदर भक्ति अनूप, चलों पछताइल हो ॥५॥
नदी बहै अगम अपार, पार कस पाइब हो ?
सत गुरु बइठे सुख मोरि, काहि गोहराइब हो ॥६॥
सत्त नाम गुन गाइब, सतना डोलाइब हो ॥
कहैं कबीर धरमदास, अमर पद पाइब हो ॥७॥

हे सखि, मैं तो विष के नशे में माती हुई शयन कर रही थी कि मेरे सतगुरु ने मुझे जगा दिया। मैंने सुख का समुद्र पा लिया। जब मैं माँ के उदर में थी, तब उसने मेरा प्राण सँभाला। जबतक इस शरीर में प्राण रहेगा तबतक मैं उसको नहीं भूलूँगी। एक बूँद से साहब (स्वामी) ने इस मन्दिर (शरीर) को बनाया है। यह मन्दिर बिना नींव का बना हुआ है। इसका न गाँव है, न कोई ठिकाना है और न गाँववाले ही कोई इसमें बसते हैं। यहाँ बाट (रास्ते) में साथ चलनेवाला कोई बटोही भी नहीं है और न कोई अपना हित ही है। यह संसार सेमल के फूल सरीखा सुन्दर है। (पहले तो खूब आकर्षक था, पर) अब उसके फूट जाने पर (पर्दाफाश हो जानेपर) भुआ (रूई) ही सर्वत्र उधरा (उड़)रहा है। हाय, इस सुन्दर और अनुपम भक्तिमार्ग को पाकर भी मैं उसपर पछताती हुई चल रही हूँ। सामने अगम और अपार नदी बह रही है। मैं इसको पार किस तरह कर पाऊँगी अथवा मैं इस संसार रूपी अगम और अपार नदी से संग्राम करके किस तरह इसे तैर सकूँगी? मेरे

सतगुरुजी भी तो मुख मोड़कर बैठे हुए हैं, मैं किसको पुकारूँ ? मैं सत्य नाम के गुणों को गाऊँगी। अपना सत किसी तरह नहीं भुलाऊँगी। कबीरदास की कही हुई बात को धरमदास कहते हैं कि इस पर चलकर अमर पद अवश्य पाऊँगी।

(१४)

मेहीं मेहीं बुकवा पिसावों, त पिया के लगावों हो।
सुरति सोहंगम नारि, त दुर मति छाँड़ो हो।
घरहीं में मानसरोवर, घाट बंधावों हो।
घरहीं में पाँच कहार, दुलह नहवावहुँ हो।
घर ही में नेह नउनिया, त पलना झुलावहुँ हो।
प्रेम प्रीतिकइ ललना त पलना झुलावहुँ हो।
घरहीं में दया कर दरजी, त दरज मिलावहु हो।
पाँच तन्त कर जामा, दुलह पहिरावहि हो।
घरहीं में लोह लोहरिया, त कगना गढ़ावहिं हो।
तीन गुनन के सेहरा, दुलह पहिरावहिं हो।
घरहीं में चंदन चौक, त चउक पुहिरावहिं हो।
सत्त सुकृत के कलसा, तहवाँ धरावहिं हो।
घरहीं में मन सत माली, त मउर ले आवहिं हो।
घरही में जुगुति के जौहरी, त जोत पुरवावहिं हो।
घरही सोहंगम नारि, त पिया के रिझावहिं हो।
बार बार गुरु झगरि, त अरज सुनावहिं हो।
यह मंगल सत लोक, हंस जन गावहिं हो।
कहे कबीर धरमदास, बहुरि नहिं आवहिं हो।

मेहीं-मेहीं (अत्यन्त-बारीक) उबटन पिसाऊँ तो अपने पिया को लगाऊँ। अरे, सोहं-सोहं की सुरति (स्मृति) रूपी नारी को हम दूर मत छोड़ दें अर्थात् सदा साथ रखें (नारी चंचला होती है, सुरती भी चंचला है। इसको अपने साथ से दूर कभी मत होने दें)। अपने शरीर रूपी घर में ही तो मानसरोवर है। उसी में घाट बँधावें और इसी घर में (शरीर में) जो पाँच कहार पंचतत्त्व हैं, उनसे पानी भरवा कर दुल्हे (प्रीतम) को नहलावें। घर में ही तो नेह रूपी नाउनि है, उससे दुल्हे के चरणों को क्यों न पखरवा लूँ ? और तब, अपने प्रेम से उत्पन्न प्रीत रूपी ललना को पालने मे झुलाऊँ। (इसी शरीर रूपी) घर में तो दया रूपी दरजी बसता है, उससे फटे छिद्रों को (अपनी त्रुटियों को) जोड़वा लूँ। यानी अपने आचरणों में जो दुराव आ गया है, उसको क्यों न दुरुस्त करवा लूँ ? पाँच तत्त्वों का जामा अपने दुल्हे को पहनाऊँ और घर में ही जो लोहार की लोहसार है, उससे लोहे का कँगना कढ़वा लूँ (दुल्हे को बारात जाते समय लोहे का कंगन पहनाते हैं कि दीठि या नजर न लगे। उसी से मतलब है)। अरे, अपने दुल्हे को तीन गुणों (रजस्, तमस्, सत्) का बुना सेहरा (मौर) पहनाऊँ। फिर घर में ही चन्दन और चौकी

है, उनसे विवाह के लिए चौक पुरावें। अर्थात् हृदय रूपी चौके पर मन रूपी चन्दन को घीस कर दुल्हे के बैठने के लिए और विवाह के विधि-व्यवहार के लिए चौक पुरावें। फिर उस चौक पर सत और सुकृति का कलस स्थापन करें। अरे इसी घर में जो मन का सत-भाव रूपी माली बसता है, उससे कहें कि मौर ले आवे। फिर घर में ही तो जुगुति (युक्ति) रूपी जौहरी है। वह जवाहरातों का आभूषण दुल्हे को पहनावे।

फिर घर में ही सोहंगम (सोहं की सुरति रूपी) नारी है, वह प्रीतम को रिझावे। बार-बार गुरु जी झगड़ कर यही उपदेश सुनाते हैं कि इस मंगल गीत को सतलोक में जीवगण ही गाते हैं। कबीरदास के कहे हुए को धरमदास कहते हैं कि वे लोग पुनः बहुर कर इह-लोक में नहीं आते।

(१५)

कहवाँ से जिव आइल, कहवाँ समाइल हो?
कहवाँ कइल मुकाम, कहाँ लपटाइल हो?
निरगुन से जिव आइल, सगुन समाइल हो।
काया गढ़ कइल मुकाम, माया लपटाइल हो।
एक बूँद से साहेब, काया-महल उठावल हो,
बूँद परे गल जाय पाछे पछितावल हो।
हंस कहे भाई सरवर, हम उड़ि जाइब हो,
मोर तोर एतने दीदार, बहुरि नहिं पाइब हो!
इहवाँ केहु नाहिं आपन, केहि सँग बोले हो।
बीच तरवर मैदान, अकेला हंसा गइले हो।
लख चौरासी भरमि, मानुख तन पाइले हो।
मानुस जनम अमोल, अपन के खोइले हो।
साहब कबीर सोहर गावल, गाइ सुनावल हो।
सुनहु हो धरमदास, एही चित चेतहु हो॥

प्रश्नः—अरे, यह जीव कहाँ से आया, कहाँ समाया, कहाँ मुकाम किया और कहाँ लिपटा गया?

उत्तर—यह जीव निर्गुण से आया और सगुण में समाया, काया रूपी गढ़ पर मुकाम किया और माया में लिपटा गया। साहब ने एक बूँद से काया का महल उठाया। पर वही (मिट्टी का) महल एक बूँद के पड़ने से ढह जाता है और पीछे पछताता जाता है। हंस कहता है कि हे भाई सरोवर! अब मैं उड़ जाऊँगा। हमारा-तुम्हारा इतना ही भर का दीदार था। मैं अब यहाँ लौट कर नहीं आऊँगा। यहाँ अपना कोई नहीं है। किसके साथ वार्ता की जाय? इस मैदान के बीच जो शरीर रूपी यह वृक्ष है, उससे उड़कर हंस अकेला हो चला गया। लाख चौरासी (चौरासी लक्ष) योनियों में भ्रमण करके मनुष्य का शरीर पाया था। परन्तु इस अमूल्य मानव-जन्म को मैं अपने से ही

खो देता हूँ। धरमदास कहते हैं कि कबीर दास ने इस सोहर को (अर्थात् इस ज्ञान को) गाया और गाकर सुनाया और मुझे समझाया कि हे धरमदास सुनो, तुम चित में अब भी चेत जाओ।

(१६)

खेलत रहलूँ अगनवाँ, सखी संग साथी हो।
आइ गवन निगिचाई, भवन निगिचाई, बदन भैले धूमिल हो।
पहिले गवनवाँ ऐलूँ, पनियाँ के भेजलन हो।
देखि कुआँ मोर भइल भारी, त गागर फूटलि हो।
कवन उतर घर देबि, हाथ दूनो छूँछें हो।
घर मोरि सासु दारूनि, त ननदी हठीली हो।
केहि से कहबि दुख आपन, संगी ना साथी हो।
ठाढ़ि मोहरि धनि सुसुके, मने पछतावेली हो।
पिया मोसे मुखहुँ ना बोले, कवन गुन लागल हो।
सजन के उँची अटरिया, त चढ़त लजाइले हो।
कल नहिं लेत अँधरिया, कवन बिधि जाईले हो।
गले गज मोती के हार, त दीपक हाथे में हो।
झमकि के चढ़लूँ अटरिया पुरूष के पासे हो।
कहे कबीर पुकारि, सुनु धरम आगर हो।
बहुत हँस ले साथ, उतर भव सागर हो॥

अरे, मैं अपनी सखी-सहेली के साथ आँगन में खेल रही थी कि गवना (द्विरागमन का दिन) निकट आ गया और मेरा मुख धूमिल हो गया। पहले-पहल मैं गवना (द्विरागमन) में सासुर आई। आते ही उन्होंने पानी लाने को मुझे भेज दिया। कूप का रूप देखकर मैं मन में पछताने लगी। मेरे लिए यह संसार रूपी कूप भारी हो गया और पानी भरने की मेरी गगरी भी फूटी निकली। हा! मैं घर जाकर प्रीतम से क्या उत्तर दूँगी? मेरे दोनों हाथ छूँछे हैं। मेरे घर में सासु कष्टदा है, यानी—कर्कशा है और ननद हठीली है। मैं अपना दुःख किससे कहूँगी? कोई संगी साथी नहीं है। मोहरि (घर के मोहाने पर—निकसार पर) खड़ी-खड़ी धनि (सधवा नारी) सुसक रही है अर्थात् सुसक-सुसक कर रो रही है और अपने-आप मन में पछता कर कह रही है—"प्रीतम मुझसे मुख से एक बात तक नहीं कहते। मुझमें कौन दोष लग गया है, यह समझ में नहीं आता (यहाँ गुन शब्द का प्रयोग उलटा अर्थ में यानी दोष के लिए व्यंग्यात्मक भाव से किया गया है)। मेरे साजन की ऊँची अटारी है, उसपर चढ़ते समय मुझे लज्जा लग रही है। इधर अंधेरी रात क्षण-भर को भी शान्त नहीं होती, अर्थात्—क्षण मात्र भी घना अँधेरा फीका नहीं पड़ता। मैं किस तरह से प्रीतम के पास जाऊँगी?" इस पश्चात्ताप के बाद उसने पुनः सोचा—"मेरे गले में तो गजमुक्ता की माला है और हाथ में दीपक है। बस मैं झमकि के (तेजी और आनन्द के साथ) अटारी पर चढ़ गई और अपने पुरुष के पास पहुँच गई।'

कबीर ने पुकार कर मुझसे कहा है—"अरे, धर्म का आगर, सुनो। तुम मेरे साथ बहुत हँसे हो। अब भवसागर पार होओ।"

(१७)

ज्ञान के चुनरी धूमिल भइलीं सजनी, मनके न पुरबल आस हो।
बारहिं बार जीव मोर लरजइ, कइसे कटे दिन रात हो।
सासु दु:ख सहलीं, ननद दु:ख सहलीं, पिया दु:ख सहल न जाय हो।
जागहु हो मोरी सासु गोसइयाँ, पिय मोर चलले बिदेस हो।
पइयाँ परि परि ननद जगावे, केइ न पावे सनेस हो।
मोर मुख ताकि सइयाँ मति जा बिदेसवा, होइबें मैं चेरिया तोहार हो।
बहियाँ पकरि सामी सेजिया बिठावे, जनि रोअहुँ धनियाँ हमार हो।
कहेलें कबीर सुनहु धरमदास, जुगन जुगन अहिबात हो॥

हे सजनी, मेरे ज्ञान की चुन्दरी धूमिल (मैली) हो गई। मेरे मन की आशा नहीं पूरी हुई। बार-बार मेरा जीव लरजता है—अर्थात् काँपता है। किस तरह से मेरे रात-दिन कटेंगे? सास के दिये हुए दु:खों को मैंने सहन किया। उसी तरह ननद प्रदत्त दु:खों को भी झेला। परन्तु प्रीतम के विरह का दु:ख तो अब सहा नहीं जाता।

हे मेरी मालकिन सासुजी, आप जागिए; मेरे प्रीतम विदेश चले जा रहे हैं। पाँव पड़-पड़ कर ननद को जगाती हूँ और बिनती करती हूँ कि प्रीतम को जाने से रोको; पर मेरी पुकार कोई नहीं सुनता। मैं बिनती करके प्रीतम से कहती हूँ कि मेरे मुख को देख कर अर्थात् मेरे कष्टों के ख्याल से हे साजन, विदेश मत जाओ।

भड्डरी

पं० रामनरेश त्रिपाठी लिखित 'घाघ और भड्डरी,' नामक पुस्तक में प्रकाशित भड्डरी की जीवनी इस प्रकार दी गई है :—

"गाँवों में यह कहानी आमतौर से प्रचलित है कि काशी में एक ज्योतिषी रहते थे। उन्होंने गणना करके देखा तो एक ऐसी अच्छी साइत आनेवाली थी, जिसमें गर्भाधान होने पर उससे बड़ा ही विद्वान् और यशस्वी पुत्र पैदा होगा। ज्योतिषीजी एक गुणी पुत्र की लालसा से काशी छोड़ घर की ओर चले। घर काशी से दूर था। ठीक समय पर वे घर नहीं पहुँच सके। रास्ते में शाम हो गई और एक अहीर के दरवाजे पर उन्होंने डेरा डाला। अहीर की युवती कन्या या स्त्री उनके लिए भोजन बनवाने बैठी। ज्योतिषी जी बहुत उदास थे। अहीरिन ने उदासी का कारण पूछा तो कुछ इधर-उधर करने के बाद ज्योतिषी जी ने असली कारण बता दिया। अहीरिन ने स्वयं उस साइत से लाभ उठाना चाहा। उसी की इच्छा का परिणाम यह हुआ कि समय पाकर भड्डरी का जन्म हुआ। वे बड़े भारी ज्योतिषी हुए।

"श्री त्रिपाठी जी ही लिखते हैं कि श्री बी० एन० मेहता, आइ० सी० एस० ने इस कहानी को इस प्रकार लिखा है :—

"भड्डरी के विषय में ज्योतिषाचार्य वराहमिहिर की एक बड़ी ही मनोहर कहानी कही जाती है। एक समय, जब वे तीर्थ-यात्रा में थे, उनको मालूम हुआ कि अमुक अगले दिन का उत्पन्न हुआ बच्चा गणित और फलित ज्योतिष का बहुत बड़ा पण्डित होगा। उन्हें स्वयं ही ऐसे पुत्र के पिता होने की उत्सुकता हुई और उन्होंने अपने घर उज्जैन के लिए प्रस्थान किया। परन्तु उज्जैन इतनी दूर था कि वे उस शुभ-दिन तक वहाँ न पहुँच सके। अतएव रास्ते के एक गाँव में एक गड़ेरिये की कन्या से विवाह कर लिया। उस स्त्री से उनको एक पुत्र हुआ, जो ब्राह्मणों की भाँति शिक्षा न पाने पर भी स्वभावतः बहुत बड़ा ज्योतिषी हुआ। आज दिन वही लड़का सभी नक्षत्र-सम्बन्धी कहावतों के वक्ता 'भड्डरी' या 'भड्डली' कहा जाता है।

"इस कहानी से मालूम होता है कि 'भड्डली' गड़ेरिन के गर्भ से पैदा हुए थे। पर अहीरिन के गर्भ से उत्पन्न होने की बात पण्डित कपिलेश्वर झा के उद्धरण में भी मिलती है, जो घाघ की जीवनी में दी गई है। बिहार में घाघ के लिए ही प्रसिद्ध है कि वे वराहमिहिर के पुत्र थे—'डाक', 'खोना', 'भाड' आदि। यह 'भाड' ही शायद भड्डरी हो। मारवाड़ में 'डंक कहै सुनु भड्डली' का प्रचार है। सम्भवतः मारवाड़ का 'डंक' ही बिहार का डाक है।"

"भाषा देखते हुए 'घाघ' या 'भड्डरी' कोई भी वराहमिहिर के पुत्र नहीं हो सकते। वराहमिहिर का समय 'पंचसिद्धान्तिका' के अनुसार शक ४२७ या सन् ५०५ ई० के लगभग पड़ता है। उस समय की यह भाषा नहीं हो सकती, जो 'भड्डली' या 'घाघ' की कहावतों में व्यवहृत है।

"मारवाड़ में भड्डली की कुछ और ही कथा है। वहाँ भड्डली पुरुष नहीं स्त्री है। वह भंगिन थी और शकुन विद्या जानती थी। 'डंक' नाम का एक ब्राह्मण ज्योतिष-विद्या जानता था। दोनों परस्पर विचार-विनिमय किया करते थे। अन्त में दोनों पति-पत्नी की तरह रहने लगे और उनसे जो सन्तान हुई, वह 'डाकोत' नाम से अब भी प्रसिद्ध है। किन्तु 'डाकोत' लोग कहते हैं कि 'भड्डली' धन्वन्तरि वैद्य की कन्या थी।"

"मारवाड़ में एक कथा और भी है। राजा परीक्षित के समय में 'डंक' नाम के एक बड़े ऋषि थे। वे ज्योतिष विद्या के बड़े ज्ञाता थे। उन्होंने धन्वन्तरि वैद्य की कन्या 'सावित्री' उर्फ 'भड्डली' से विवाह किया था। उनसे जो सन्तान पैदा हुई, वह 'डाकोत' कहलाई।

"भड्डरी की भाषा देखते हुए ऊपर की दोनों कहानियाँ बिल्कुल मनगढ़न्त हैं। न परीक्षित के समय में और न वराहमिहिर के ही समय में वह भाषा प्रचलित थी जो 'भड्डरी' की कहावतों में है। सम्भवतः डाकोतों ने ऐसी कहानियाँ जोड़कर अपनी प्राचीनता सिद्ध की होगी। भड्डली या भड्डरी काशी के आसपास के थे या मारवाड़ के, यह विचारणीय प्रश्न है। भड्डरी की भाषा में मारवाड़ी शब्दों के प्रयोग बहुत मिलते हैं, तथा युक्तप्रान्त और बिहार की ठेठ बोली के भी शब्द मिलते हैं। इससे अनुमान होता है कि या तो दो 'भड्डरी'

या 'भड्डुली' हुए होंगे, अथवा एक ही भड्डरी युक्तप्रान्त से मारवाड़ में जा बसे होंगे और उन्होंने यहाँ और वहाँ दोनों प्रान्तों की बोलियों में अपने छन्द रचे होंगे।

मैंने जोधपुर के पण्डित विश्वेश्वरनाथ रेउ से 'भड्डुली' के विषय में पत्र लिखकर पूछा तो उन्होंने लिखा:—

"नहीं कह सकता कि ये मारवाड़ के ही थे, पर राजपुताने के अवश्य थे।"

"राजपुताने में 'डाकोतों' की संख्या अधिक है। उनका भी कथन है कि 'डंक' और 'भड्डुली' राजपुताने के ही थे। एक उलझन यह भी है कि राजपुताने और युक्तप्रान्त के 'भड्डरी' में स्त्री-पुरुष का अन्तर है। ऐसी दशा में यह कहना दुःसाहस की बात होगी कि दोनों प्रान्तों के भड्डुली एक ही व्यक्ति हैं।

भड्डरी और भड्डुली के विषय में पूछताछ से जो कुछ मालूम हो सका है, वह इतना ही है।"

भड्डरी की एक छोटी-सी पुस्तिका छपी हुई मिलती है। उसका नाम 'शकुन-विचार' है; पर वह इतनी अशुद्ध है कि कितने ही स्थानों पर उसका समझना कठिन है।

राजपुताने में भड्डुली की एक पुस्तक 'भड्डली-पुराण' के नाम से प्रसिद्ध है। उसका कुछ ही अंश मुझे मिल सका है, जो इस पुस्तक के अन्त में दिया गया है।

भड्डरी की जीवनी के सम्बन्ध में पं० रामनरेश त्रिपाठी जी ने 'घाघ और भड्डरी' नामक पुस्तक में उपर्युक्त बातें लिखी हैं, उसका सारांश चार मतों में निकलता है :—

(१) "बिहार में घाघ के लिए अहीरिन के पेट से उत्पन्न होनेवाली बात प्रसिद्ध है। घाघ को ही वे वराहमिहिर का पुत्र मानते हैं।

(२) घाघ के और कई नाम भी बिहारवालों में प्रचलित हैं। जैसे—'डाक', 'खोना', 'भाड' आदि। यह 'भाड' ही शायद भड्डरी हैं।

(३) मारवाड़ में 'डंक कहै सुनु भड्डली' का प्रचार है। सम्भवतः मारवाड़ का डंक ही बिहार का डाक है।

(४) मारवाड़ में भड्डली की कुछ और ही कथा है। वहाँ भड्डली पुरुष नहीं, स्त्री है इत्यादि।"

इन प्रश्नों पर विचार करने से पता चलता है कि बिहार के सम्बन्ध की बातें त्रिपाठी जी को अच्छी तरह नहीं मालूम हो सकी थीं और इसीसे उन्होंने अनुमान से अधिक काम लिया है और किसी निश्चित राय पर नहीं पहुँच सके हैं। हम उन प्रश्नों पर विचार करेंगे।

बिहार में घाघ को अहीरिन के पेट से उत्पन्न नहीं मानते।

पं० कपिलेश्वर झा के 'विशाल भारत', फरवरी १६२८, के लेख का उद्धरण देकर त्रिपाठी जी ने स्वयं ही लिखा है कि यह कथा 'भड्डरी' के सम्बन्ध में प्रचलित है। फिर ऊपर बी० एन० मेहता आइ० सी० एस० की दी हुई कहानी, जो भड्डरी के विषय की ही है, का भी उन्होंने ही उल्लेख किया है। तो ये दोनों कहानियाँ भड्डरी के सम्बन्ध की ही हैं, न कि 'घाघ' के सम्बन्ध की। बिहार में भड्डरी, घाघ और डाक तीनों व्यक्ति माने जाते

हैं और तीनों की अलग-अलग कविताएँ हैं। बिहार पीजेंट लाइफ नामक पुस्तक में ग्रियर्सन साहब ने तीनों कवियों के नाम से सुनी हुई कविताओं का उल्लेख अलग-अलग किया है* जो डाक की जोवनी के साथ इसी पुस्तक में उद्धृत है। डाक की जीवनी के सम्बन्ध में भी ठीक वही कहानी, जो त्रिपाठी जी ने इस पूर्वोक्त जीवनी के प्रथम पारा में कही है, मुझे बेगूसराय के रहनेवाले बाबू शुकदेव सिंह से—जो आजकल बांका (भागलपुर) सब-डिवीजन में सहायक प्रचार अफसर हैं—भागलपुर में सुनने को मिली और उन्होंने ही 'डाक वचनावली' नामक पुस्तक, जो दरभंगा के शुभंकरपुर-निवासी श्री मुकुन्द शर्मात्मज श्री कपिलेश्वर शर्मा द्वारा संगृहीत होकर, श्रीरमेश्वर प्रेस, दरभंगा से, सन् १६४२ ई० में, दो भागों में प्रकाशित हुई हैं, लाकर दी। उनकी कहानी कही हुई ठीक वैसी ही थी; पर वह डाक के जन्म के सम्बन्ध की थी। उन्होंने उसमें इतनी और बात अन्त में अधिक कही थी कि अहीरिन ने इस साइत से स्वयं लाभ उठाने की इच्छा प्रकट की तब अतिथि ज्योतिषी ने इस शर्त्त पर उससे सम्भोग स्वीकार किया कि यदि सन्तान पुत्र होगी तो उसे वह ब्राह्मण ले जायगा और यदि वह कन्या होगी तो वह अहीरिन के साथ रहेगी। दैवात् अहीरिन को पुत्र उत्पन्न हुआ और उसका नाम उसने 'डाक' रखा। जब पुत्र बोलने और खेलने लगा तब ब्राह्मण देवता आये और शर्त्त के मुताबिक डाक को लेकर घर चलते बने। रास्ते में पगडंडी के दोनों तरफ गेहूँ और जौ के खेत मिले। जौ के कुछ बीज गेहूँ के खेत में भी आकर गिर गये थे और गेहूँ में दो-चार जौ के पौधे उग आये थे। बालक डाक ने पिता ब्राह्मण से प्रश्न किया:—

"पिताजी, यह दोनों खेत एक ही आदमी के हैं या दो के ?"

पण्डित पिता ने तर्क करके कहा—"दो के होंगे; क्योंकि एक में गेहूँ बोया है और दूसरे में जौ।"

पुत्र—"तब जौ के खेतवाले का ही बीज छींटते समय इस गेहूँ के खेत में गिर गया होगा, जिससे ये जौ के पौधे उगे हैं ?"

पण्डित ने कहा—"हाँ, बीज छींटते समय कुछ बीज उधर पड़ गये होंगे।"

पुत्र—"तो पिता जी, यह बताइये कि ये जौ के अन्न गेहूँ के खेतवाले के होंगे या जौ के खेतवाले के ?"

पण्डित—"गेहूँ के खेतवाले के।"

तब पुत्र डाक ने कहा—"पिता जी, तब आप मुझको क्यों अपनी माँ से छुड़ाकर लिये जा रहे हैं, जब आपके बीज से माँ के पेट से मेरा जन्म हुआ है ? पुत्र 'डाक' की इस बुद्धि को देख कर ब्राह्मण ज्योतिषी ने कहा—'बेटा, तुम मुझसे बुद्धिमान हो। चलो, तुमको तुम्हारी माँ के पास पहुँचा दूँ।' 'डाक' आकर माँ के पास रहने लगे।

* पृष्ठ २७७, छन्द ६—"कहै डाक सुनु भिल्लरि, कुत्ता भात न खाय"। पृष्ठ २८०, छन्द १५—"कह भड्डर सुनु भड्डरि, परबत उपजै सार।" पृष्ठ २८६, छन्द ३२—'घाघ कहै हम होइबों जोगी, कुआँ के पानी धोइहैं धोबी।

मुझे यह कहानी 'घाघ और भड्डरी' नामक पुस्तक प्राप्त होने के पूर्व ही मिली थी और डाक की जीवनी में ही मैंने इसे रखा था; किन्तु जब 'घाघ और भड्डरी' नामक पुस्तक में श्री बी० एन० मेहता आइ० सी० एस० तथा पं० रामनरेश त्रिपाठी और पं० कपिलेश्वर झा के मतों को पढ़ा, जो इसे भड्डरी के जन्म के साथ रखते हैं, तब मैंने उसको डाक की जीवनी से हटा दिया; क्योंकि बहुमत इस कहानी को भड्डरी से सम्बन्धित मानता है। भड्डरी को 'वराहमिहिर' का पुत्र अस्वीकार करने का प्रधान कारण पं० रामनरेश त्रिपाठी ने यह बताया है कि 'वराहमिहिर' के समय में यानी ५०५ ई० के लगभग भोजपुरी भाषा का अस्तित्व ही नहीं था। किन्तु मैं ऐसा मानने के लिए तैयार नहीं हूँ। मेरी धारणा रही है कि भोजपुरी का इतिहास विक्रमादित्य शकारि के समय से यानी पहली सदी ई० पू० से प्रारम्भ हुआ माना जा सकता है। इसके लिए मेरे पास अभी सामग्री नहीं प्राप्त हुई है; क्योंकि मेरी ऐसी धारणा अभी हुई है और खोज अभी शुरू ही किया है। अतः भड्डरी का पिता 'वराहमिहिर' के होने की बात जो बी० एन० मेहता तथा कपिलेश्वर झा ने कही है, उसको मैं भाषा के कारण अमान्य नहीं कह सकता। भड्डरी की प्राचीनता अकाट्य है। यह इससे भी साबित होता है कि 'डाक' के समय में 'भड्डरी' खेती आदि पर ज्ञान रखने के लिए आदि आचार्य्य माने जाते थे; क्योंकि डाक ने भी भड्डरी को संबोधित करके अनेक छन्द कहा है जो बिहार में प्रचलित है और 'बिहार के कृषक जीवन' तथा उक्त डाक 'वचनावली' में संगृहीत है। यथा—

दखिन लौका लौकहिं, उत्तर गरजे मेह।
कहहिं डाक सुनु भांडरी, ऊँच कच किल्ला देह ॥१॥
आदि न बरिसे आदरा, हस्त न बरिसे निदान।
कहहिं डाक सुनु भांडरी, किसान होएत पिसान ॥२॥
साओन सुकला सत्तमी, मेघनहिं छावै रैन।
कहहि डाक सुन भांडरी, बरखा हो गई चैन ॥३॥
साओन सुकला सत्तमी, गगन स्वच्छ जो होय।
कहहि डाक सुनु भांडरी, पछमी खेती होय ॥४॥
मृगसिरा तवक रोहिन लवक, आदरा जाय बुँद-बुँदाय।
कहै डाक सुनु भिलरि, कुत्ता भात न खाय ॥५॥

फिर यही नहीं 'डाक' ने अपनी स्त्री को भी सम्बोधन किया है।

'कहे डाक सुनु डाकिनी' के चरण अनेक पदों में आये हैं। इसका अर्थ यह होता है कि भड्डरी का समय अति प्राचीन था, जिसके कारण वे इस विषय के आचार्य्य माने जाते रहे हैं। इसलिए डाक ने उनको अपना गुरु-सा मानकर सम्बोधन किया है जैसा कि कबीर तथा गोरखनाथ के शिष्यों ने किया है।

फिर राजपुताने में 'भड्डली पुराण' नामक ग्रन्थ की प्रसिद्धि की बात श्री रामनरेश त्रिपाठी जी ने स्वीकार की है और उसके कुछ अंश जो उन्हें मिले थे, उनको अपनी 'घाघ और भड्डरी' नामक पुस्तक के अन्त में दिया भी है। उसमें 'डाक कहै सुनु भड्डली' का

प्रयोग खूब हुआ है[1] और वह पुराण राजस्थानी भाषा में है। इससे डाक का भी राजपुताने में तथा बिहार (मिथिला) में रहना सिद्ध होता है और दोनों की प्राचीनता प्रमाणित होती है।

राजपुताने में डाक के नाम पर डाकोत-जाति का अस्तित्व भी डाक की प्राचीनता तथा उससे भी अधिक भड्डुरी की प्राचीनता सिद्ध करता है। गोरखनाथ जी की कविता की भाषा में भी भोजपुरी, अवधी और राजस्थानी आदि भाषाओं के प्रयोग आये हैं। इससे यह नहीं माना जा सकता कि भड्डुरी या घाघ अथवा डाक, चूँकि इनकी कविताओं में दो भाषाओं का प्रयोग है, एक नहीं, दो थे।

इसके अलावा एक दूसरी बात की सम्भावना भी हो सकती है और वह मारवाड़ की भड्डुली के स्त्री होने के आधार पर आरोपित की जा सकती है।

भंगिन भड्डुली के डाक की स्त्री होने की किंवदन्ती से यह शंका की जा सकती थी कि भड्डुली और भाँडरी एक ही हों और भंगिन भड्डुली डाक की रखेली स्त्री हो, जिसको सम्बोधन करके उसने कविताएँ की हैं। परन्तु जब हम यह मानेंगे तब डाक का राजपुताने और बिहार दोनों में रहना मानना पड़ेगा। और, यह मानने पर भड्डुरी राजपुताने की भड्डुली से भिन्न हो जाते हैं; पर यह 'भड्डुरी पुराण' के राजपुताने में अस्तित्व के कारण अमान्य होता। इस दशा में भड्डुरी और डाक के दो होने की बात ही सही सिद्ध होती है। चूँकि डाक ने आचार्य्य 'भड्डुली या भड्डुरी' का प्रयोग खूब किया है। इससे भड्डुली स्त्रीलिंग शब्द होने के कारण कालान्तर में डाक को स्त्री के रूप में माना गया और उसके साथ कहानियाँ जोड़ दी गई ! यह कहानी शायद डाक के वंशज डाकोतों के बढ़ते हुए यश को रोकने के लिए उनके शत्रुओं द्वारा प्रचारित की गई हो। पं० रामनरेश त्रिपाठी ने जो घाघ का दूसरा नाम 'खोना' और 'भाड' बिहार में प्रचलित होने की बात लिखी है, वह मुझे अबतक नहीं सुनने को मिली और न किसी से ये नाम ही सुनने को मिले। ज्ञात होता है कि यह बात निराधार ही है। फिर भी भड्डुरी का जन्म-स्थान काशी के आसपास मानना अधिक संगत प्रतीत होता है।

भड्डुरी की कहावतें

कातिक सुदी एकादसी, बादल बिजुली होय।
तो असाढ़ में भड्डुरी, बरखा चोखी होय॥

कार्तिक शुक्ला एकादशी को यदि बादल हों और बिजली चमके, तो 'भड्डुरी' कहते हैं कि आषाढ़ में निश्चय वर्षा होगी।

कातिक मावस देखो जोसी। रवि सनि भौमवार जो होसी।
स्वाति नखत अरु आयुख जोग। काल पड़ै अरु नासै लोग॥

१. देखिए—'घाघ और भड्डुरी' हिन्दुस्तानी एकेडेमी (प्रयाग) द्वारा प्रकाशित १९४६ ई० में छपी राजपुताने के भड्डुली की कहावतें। पृ० १२६, छन्द ३७; पृ० १३०, छ० ६५; पृ० ६७, १३१, छ० ७०।

ज्योतिषी को कार्तिक अमावस्या को देखना चाहिए। यदि उस दिन रविवार, शनिवार और मगंलवार होगा और स्वाती नक्षत्र तथा आयुष्य योग होगा तो अकाल पड़ेगा और मनुष्यों का नाश होगा।

पाठान्तर—स्वाती नखत और पुप जोग।

कातिक सुद पूनो दिवस, जो कृतिका रिख होइ।
तामें बादर बीजुरी, जो सँजोग सों होइ॥
चार मास तब बर्खा होर्वा। भली भाँति यह भाषे जोसी॥३॥

कार्तिक सुदी पूर्णिमा को यदि कृतिका नक्षत्र हो और उसमें संयोग से बादल और बिजली भी हों, तो समझना चाहिए कि चार महीने वर्षा अच्छी होगी।

माघ महीना माहिं जो, जेष्ठा तपै न मूर।
तो अस बोले भड्डरी, उपजे सातो तूर॥

अगहन के महीने में यदि न ज्येष्ठा नक्षत्र तपे और न मूल, तो भड्डरी कहते हैं कि सातों प्रकार के अन्न पैदा होंगे।

पूस अँधयारी सत्तमी, जो पानी नाहिं देइ।
तो अदरा बरसे सही, जल थल एक करेइ॥

पौष बदी सप्तमी को यदि पानी न बरसे, तो आर्द्रा अवश्य बरसेगा और जलथल को एक कर देगा।

पूस अँधियारी सत्तमी, बिनु जल बादर जोय।
सावन सुदि पूनो दिवस, बरखा अवसहिं होय॥

पौष बदी सप्तमी को यदि बादल हों, पर पानी न बरसे, तो सावन सुदी पूर्णिमा को वर्षा अवश्य होगी।

पूस मास दसमी दिवस, बादल चमके बीज।
तो बरसे भर भादवो, साधौ खेलो तीज॥

पौष बदी दसमी को यदि बादल हों और बिजली चमके, तो भादो भर बरसात होगी। हे सुहागिनयो, आनन्द से तीज का त्योहार मनाओ।

सनि आदित औ मंगल, पूस अमावस होय।
दुगुना तिगुना चौगुना, नाज महँगा होय॥

यदि पौष की अमावास्या को शनिवार, रविवार या मंगल पड़े तो इसी क्रम से अन्न दोगुना, तिगुना और चौगुना महँगा होगा।

सोम सुक्र सुरगुरु दिवस, पूस अमावस होय।
घरघर बजी बधावड़ा, दुखी न दीखे कोय॥

यदि पौष की अमावस्या को शनि, रवि या मंगलवार पड़ें तो घर-घर बधाई बजेगी और कोई भी दुखी नहीं दिखाई पड़ेगा।

करक बुआवे कांकरी, सिंह अबोये जाय।
ऐसन बोले भडडरी, कीड़ा फिर फिर खाय॥

कर्क राशि में ककड़ी बोये और सिंह में न बोये, तो 'भड्डरी' कहते हैं कि उसमें कीड़ा बार-बार लगेगा।

मंगल सोम होय सिवराती, पछेआ बाय बहे दिन राती।
घोड़ा रोड़ा टिड्डी उड़ें, राजा मरें कि परती पड़े॥

यदि शिवरात्रि मंगल या सोमवार को पड़े और रात-दिन पछेया हवा बहती रहे, तो समझना कि घोड़ा (एक पतिंगा), रोड़ा (मिट्टी के ढेले) और टिड्डी उड़ेंगे, जिससे राजा की मृत्यु होगी, अथवा खेत परती पड़े रहेंगे।

काहें पंडित पढ़ि पढ़ि मरऽ पूस अमावस की सुधि करऽ
मूल बिसाखा पूरबापाढ़। झूरा जान लऽ बहिरे ठाढ़॥

हे पंडित, बहुत पढ़-पढ़कर क्यों जान देते हो? पौष की अमावस्या को देखो, यदि उस दिन मूल, विशाखा या पूर्वाषाढ़ नक्षत्र हो, तो समझना कि सूखा घर के बाहर खड़ा है।

पूस उजेली सत्तमी, अष्टमी नौमी गाज।
मेघ होय तऽ जान लऽ, अब सुभ होइहें काज॥

पौष सुदी सप्तमी, अष्टमी और नवमी को यदि बादल गरजे, तो समझना कि काम सिद्ध होगा, अर्थात् सुकाल होगा।

माघ अँधेरी सत्तमी, मेह बिज्जु दमकन्त।
मास चारि बरसे सही, मत सोचे तू कन्त॥

माघ बदी सप्तमी को यदि बादल हों और बिजली चमके तो हे स्वामी, तुम सोच मत करो, चौमासा-भर पानी बरसेगा।

माघ उजियारी दूजि दिन, बादर बिज्जु समाय।
तो भाखें अस भड्डरी, अन्न के महँगी लाय॥

माघ सुदी दूज को यदि बादलों में बिजली समाती दिखाई पड़े, तो 'भड्डरी' कहते हैं कि अन्न महँगा होगा।

माघ सत्तमी ऊजरी, बादर मेघ करंत।
तो असाढ़ में भड्डरी, घना मेघ बरसंत॥

माघ सुदी सप्तमी को यदि बादल घिर आये तो भड्डरी कहते हैं कि आषाढ़ में खूब वर्षा होगी।

माघ सुदी जो सत्तमी, भौम बार के होय।
तो भड्डर 'जोसी' कहें, नाजु किरालें लोय॥

यदि माघ सुदी सप्तमी मंगलवार को पड़े तो अन्न में कीड़े लग जायँगे।

फागुन बदी सुदूज दिन, बादर होय न बीज।
बरसे सावन भादवो, साधे खेलो तीज॥

फागुन बदी दूज को यदि बादल हों; पर बिजली न चमके, अथवा न बादल हों न बिजली, तो सावन-भादो दोनों महीने में वर्षा होगी। हे सजनी! आनन्द से तीज का त्योहार मनाओ।

मंगलवारी मावसी, फागुन चैती जोय।
पशु बेंचो कन संग्रहो, अवसि दुकाली होय॥

फागुन और चैत की अमावस्या यदि मंगल को पड़े, तो अकाल पड़ेगा। पशुओं को बेच डालो और अन्न संग्रह करो।

पँच मंगरी फागुनी, पूस पाँच सनि होय।
काल पड़े तब भड्डरी, बीज बोअऽ मति कोय॥

यदि फागुन के महीने में पाँच मंगल और पौष में पाँच शनिवार पड़े, तो भड्डरी कहते हैं कि अकाल पड़ेगा, कोई बीज मत बोओ।

होली झरे के करऽ बिचार। सुभ अरु असुभ कहल फल सार॥
पच्छिम बायु बहे अति सुन्दर। सभ अन उपजे सजल बसुन्धर॥
पूरब दिसि के बहे जो बायु। कुछु भीजे कुछु कोरे जाय॥
दखिन बाय बहे बध नास। समया निपजे सनई घास॥
उत्तर बाय बहे दड़बड़िया। पिरथी अचूक पानी पड़िया॥
जोर झकोरे चारो बाय। दुखया परघा जीव डराय॥
जोर झले आकासे जाय। तो पृथवी संग्राम कराय॥

होली के दिन की हवा का विचार करो। उसके शुभ और अशुभ फलों का सार बताया जाता है। पश्चिम की हवा बहे, तो बहुत अच्छा है। उससे पैदावार अच्छी होगी और वृष्टि होगी। पूरब की हवा बहती हो, तो कुछ वृष्टि होगी और कुछ सूखा पड़ेगा। दक्षिण की हवा बहती हो, तो प्राणियों का बध और नाश होगा। खेती में सनई और घास की पैदावार अधिक होगी। उत्तर की हवा बहती हो, तो पृथ्वी पर निश्चय पानी पड़ेगा। यदि चारों ओर का झकोरा चलता हो, तो दुःख पड़ेगा और जीवों को भय होगा। यदि हवा नीचे से ऊपर को जाय, तो पृथ्वी पर संग्राम होगा।

चइत मास उजियारे पाख। आठें, दिवस बरसता राख॥
नव बरसे जित बिजली जोय। ता दिसि काल हलाहल होय॥

चैत सुदी अष्टमी को यदि आकाश से धूल बरसती रहे और नवमी को पानी बरसे, तो जिस दिशा में बिजली चमकेगी, उस दिशा में भयानक दुर्भिक्ष पड़ेगा।

चैत मास दसमी खड़ा, बादर बिजुरी होय।
तऽ जानऽ चित माँहि यह, गरभ गलल सब जोय॥

चैत सुदी दशमी को यदि बादल और बिजली हो, तो यह समझ रखना कि वर्षा का गर्भ गल गया। अर्थात् चौमासे में वृष्टि बहुत कम होगी।

चैत मास दसमी खड़ा, जो कहूँ कोरा जाइ।
चौमासे भर बादला, भली भाँति बरसाइ॥

यदि चैत सुदी दशमी को बादल न हुआ, तो समझना कि चौमासे भर अच्छी वृष्टि होगी।

चैत पूर्णिमा होइ जो, सोम गुरु बुधवार।
घर घर होइ बधावड़ा, घर घर मंगलचार॥

चैत की पूर्णिमा यदि सोमवार, बृहस्पतिवार और बुधवार को पड़े तो घर-घर आनन्द की बधाई बजेगी और घर-घर मंगलाचार होगा।

कृतिका तऽ कोरी गैल, अदरा मेंह न बूँद।
तो ई जानऽ भड्डरी, काल मचावे दूँद॥

कृतिका नक्षत्र कोरी ही चला गया, वर्षा हुई ही नहीं, आर्द्रा में बूँद भी नहीं गिरी। भड्डरी कहते हैं कि निश्चय ही अकाल पड़ेगा।

रोहिनि माहीं रोहिनी, एक घड़ी जो दीख।
हाथ में खपरा मेदिनी, घर घर माँगे भीख॥

यदि रोहिणी में एक घड़ी भी रोहिणी रहे, तो ऐसा अकाल पड़ेगा कि लोग हाथ में खप्पर लेकर भीख माँगते फिरेंगे।

आदरा तऽ बरसे नहीं, मृगसिर पवन न जोय।
तब जानऽ ये भड्डरी, बरखा बूँद न होय॥

आर्द्रा में वर्षा नहीं हुई और मृगशिरा में हवा न चली, तो भड्डरी कहते हैं कि जान रखो एक बूँद भी बरसा नहीं होगी।

अखै तीज रोहिनी न होई। पूस अमावस मूल न जोई॥
राखी श्रवणी हीन बिचारो। कातिक पूनो कृतिका टारो॥
महि माहीं खल बलहिं प्रकासे। कहत भड्डरी सालि बिनासे॥

वैशाख की अक्षय तृतीया को यदि रोहिणी न हो, पौष की अमावस्या को मूल न हो, रक्षाबन्धन के दिन श्रवण और कार्तिक की पूर्णिमा को कृत्तिका न हो, तो पृथ्वी पर दुष्टों का बल बढ़ेगा और भड्डरी कहते हैं कि धान की उपज न होगी।

तपल जेठ में जो चुइ जाय। सभ नखत हलुक परि जाय॥

जेठ में मृगशिरा के अंत के दस दिन को दसतपा कहते हैं। यदि दसतपा में पानी बरस जाय, तो पानी के सभी नक्षत्र हलके पड़ जायँगे।

नवे असाढ़े बादलो, जो गरजे घनघोर।
कहैं भड्डरी जोतिसी, काल पड़े चहुँ ओर॥

आषाढ़ कृष्ण नौमी को यदि बादल जोर से गरजे, तो भड्डरी ज्योतिषी कहते हैं कि चारों ओर अकाल पड़ेगा।

सुदि असाढ़ की पंचमी, गरज धमधमा होय।
तो यों जानो भड्डरी, मधुरी मेघा जोय॥

आषाढ़ शुक्ल पंचमी को यदि बादल जोर से गरजे तो भड्डरी कहते हैं कि बरसात अच्छी होगी।

आसाढ़ी पूनो की सांझ, वायु देखिहऽ नभ के मांझ।
नैऋत भूहूँ बूँद ना पड़े, राजा परजा भूखन मरे॥

अगिन कोन जो बहे समीरा। पड़े काल दुख सहे सरीरा ॥
उत्तर से जल फूही परे। मूस साँप दूनों अवतरे ॥
पच्छिम समै नीक करि जान्यो। आगे बहै तुसार प्रमान्यो ॥
जो कहीं बहे इसाना कोना, नापऽ बिसवा दू दू दोना ॥
जो कहीं हवा अकासे जाय। परे न बूंद काल परि जाय ॥
दक्खिन पच्छिम आधी समयो। भड्डर जोसी ऐसन भनयो ॥

आषाढ़ की पूर्णिमा की शाम को आकाश में हवा की परीक्षा कहते हैं। नैऋत्य कोण की हवा हो, तो पृथ्वी पर एक बूँद भी पानी नहीं पड़ेगा और राजा-प्रजा दोनों भूखों मरेंगे। अग्नि कोण की हवा हो, तो अकाल पड़ेगा और शरीर को कष्ट मिलेगा। उत्तर की हवा हो, तो पानी साधारण बरसेगा, चूहे और साँप बहुत पैदा होंगे। पश्चिम की हवा हो, तो समय अच्छा होगा, किन्तु आगे चलकर पाला पड़ेगा और यदि कहीं ईसान कोण की हवा हो, तो पैदावार बिस्वे में दो-दो दोने भर की होगी। यदि हवा आकाश की ओर जाय, तो एक बूँद भी वर्षा न होगी और अकाल पड़ जायगा। दक्खिन-पश्चिम की हवा हो, तो पैदावार आधी होगी। भड्डरी ज्योतिषी ने ऐसा कहा है।

रोहिनि जो बरसे नहीं, बरिसे जेठा मूर।
एक बूँद स्वाती पड़े, लागै तीनों तूर ॥

यदि रोहिणी न बरसे, पर जेष्ठा और मूल बरस जाय और एक बूँद स्वाती की भी पड़ जाय, तो तीनों फसलें अच्छी होंगी।

सावन पहिले पाख में, जो दसमी रोहिनि होइ।
महँग नाज आ अलप जल, बिरला बिलसे कोइ ॥

श्रावण के पहले पक्ष की दशमी को यदि रोहिणी हो, तो अन्न महँगा होगा, जल कम बरसेगा और शायद ही कोई सुख भोगे।

सावन बदी एकादसी, बादल ऊगे सूर।
तो अस भासे भड्डरी, घर-घर बाजे तूर ॥

सावन बदी एकादशी को यदि उदय होते हुए सूर्य पर बादल रहें तो भड्डरी कहते हैं कि सुकाल होगा और घर-घर आनन्द की बंशी बजेगी।

तीतर बरनी बादरी, बिधवा काजर रेख।
ऊ बरिसेंई घर करे, कहें भड्डरी देख ॥

तीतर के पंख की तरह बदली हो और विधवा की आँखों में काजल की रेखा हो, तो भड्डरी कहते हैं कि बदली बरसेगी और विधवा बरस-भीतर ही दूसरा घर करेगी।

जै दिन जेठ बहे पुरवाई। तै दिन सावन धूरि उड़ाई ॥

जेठ में जितने दिन पूर्वा हवा बहेगी, सावन में उतने दिन धूल उड़ेगी।

सावन पुरवाई चले, भादों में पछियाँव।
कन्त डँगरवा बेंचि दे, लरिका जाइ जियाव ॥

सावन में पूर्वा हवा चले और भादों में पछुवा, तो हे स्वामी, बैलों को बेंचकर बाल-बच्चों की रक्षा करो। अर्थात् वर्षा कम होगी।

अगहन द्वादस मेघ अखाड़। असाढ़ बरसे अछना धार ॥

यदि अगहन की द्वादशी को बादलों का जमघट दिखाई पड़े, तो आषाढ़ में वर्षा बहुत होगी।

मोरपंख बादल उठे, राँडाँ काजर रेख।
ऊ बरसे ई घर करे, या में मीन न मेख ॥

जब मोर के पंख की-सी सूरतवाले बादल उठें और विधवा आँखों में काजल दे, तो समझना चाहिए कि बादल बरसेंगे और विधवा किसी पर-पुरुष के साथ बस जायगी। इसमें संदेह नहीं।

नारि सुहागिन जल घट लावे, दधि मछली जो सनमुख आवे ॥
सनमुख धेनु पिआवे बाछा, यही सगुन हऽ सब से आछा ॥

सौभाग्यवती स्त्री पानी से भरा हुआ घड़ा लाती हो, या सामने से दही और मछली आती हो या गाय बछड़े को पिला रही हो, तो यह शकुन सबसे अच्छा है।

घाघ

घाघ के जन्म-स्थान के सम्बन्ध में बहुत विद्वानों ने अधिकांश बातें अटकल और अनुमान के आधार पर कही हैं। किसी-किसी ने डाक के जन्म की गाथा को लेकर घाघ के साथ जोड़ दिया है। परन्तु इस क्षेत्र में रामनरेश त्रिपाठीजी ने सबसे अधिक छानबीन की है। उनके परिश्रम का फल यह हुआ कि घाघ के वंशधरों का पता ठीक-ठीक चल गया और उनके कार्य-क्षेत्र और स्थान का ठीक पता मिला।

बात यह है कि प्रतिभावालों का यश जब दूर तक फैल जाता है, तब कालान्तर में लोग उनको अपनाने की कोशिश करने लगते हैं और जबतक प्रामाणिक बातें सामने नहीं आतीं तबतक ऐसी ही अटकलबाजियाँ चला करती हैं। वही बात घाघ के सम्बन्ध में भी हुई है। शिवसिंह-सरोज के लेखक से लेकर बाद के विद्वानों तक ने इनके सम्बन्ध में अनेक बातें कहीं और उनके जन्म-स्थान को अलग-अलग कहा। 'घाघ और भड्डरी' नामक पुस्तक में यह विवरण उद्धृत है[1]।

घाघ की जीवनी

घाघ के सम्बन्ध में शिवसिंह ने अपने 'सरोज' में लिखा है :—

"घाघ कान्यकुब्ज अंतर्वेद वाले सं० १७५३ में उ० ॥"

"इनके दोहा, छप्पय, लोकोक्ति तथा नीति-सम्बन्धी उपदेश ग्रामीण बोलचाल में विख्यात हैं।"

१. देखिए, रामनरेश त्रिपाठी लिखित 'घाघ और भड्डरी' नामक पुस्तक। हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग से सन् १९४६ में प्रकाशित। पृष्ठ १७ से २२ तक।

मिश्रबन्धु अपने 'विनोद' में लिखते हैं :—

"ये महाशय संवत् १७५३ में उत्पन्न हुए और १७८० में इन्होंने कविता की मोटिया नीति आपने बड़ी जोरदार ग्रामीण भाषा में कही है।"

हिन्दी शब्दसागर के सम्पादकों का कथन है :—

"घाघ गोंडे के रहनेवाले एक बड़े चतुर अनुभवी व्यक्ति का नाम है, जिसकी कही हुई बहुत-सी कहावतें उत्तरीय भारत में प्रसिद्ध हैं। खेती-बारी, ऋतु काल तथा लग्न-मुहूर्त आदि के सम्बन्ध में इनकी विलक्षण युक्तियाँ किसान तथा साधारण लोग बहुत कहा करते हैं।

'भारतीय चरिताम्बुधि' में लिखा है :—

"ये कन्नौज के रहनेवाले थे। सन् १६९६ में पैदा हुए थे।"

श्री पीर मुहम्मद मूनिस का मत है :—

'घाघ के पद्यों की शब्दावली को देखते हुए अनुमान करना पड़ता है कि घाघ चम्पारन और मुजफ्फरपुर जिले के उत्तरीय सरहद पर, औरैयामठ या बैरगनिया और कुंड़वा चैनपुर के समीप किसी गाँव के थे।"

"अथवा चम्पारन के तथा दूहो-सूहो के निकटवर्त्ती किसी गाँव में उत्पन्न हुए होंगे, अथवा उन्होंने यहाँ आकर कुछ दिनों तक निवास किया होगा।"

श्री बी० एन० मेहता, आइ० सी० एस० अपनी 'युक्तप्रान्त की कृषि-सम्बन्धी कहावतों' में लिखते हैं :—

"घाघ नामक एक अहीर की उपहासात्मक कहावतें भी स्त्रियों पर आक्षेप के रूप में हैं।"

रायबहादुर बाबू मुकुन्दलाल गुप्त 'विशारद' अपनी 'कृषिरत्नावली' में लिखते हैं:-

"कानपुर जिलान्तर्गत किसी गाँव में संवत् १७५३ में इनका जन्म हुआ था। ये जाति के ग्वाला थे। १७८० में इन्होंने कविता की मोटिया नीति बड़ी जोरदार भाषा में कही।"

राजा साहब पँड़रौना (जि० गोरखपुर) ने स्वागत-समिति के सभापति की हैसियत से अपने भाषण में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के गोरखपुर के वार्षिकोत्सव के अवसर पर कहा था कि घाघ उनके राज के निवासी थे। गाँव का नाम भी उन्होंने शायद रामपुर बताया था। मैंने जाँच कराई, तो मालूम हुआ कि इसमें कुछ भी तथ्य नहीं है।

'शिवसिंह सरोज' के आधार पर 'कविता-कौमुदी' (प्रथम भाग) में लिखा है—

"घाघ कन्नोज-निवासी थे। इनका जन्म सं० १७५३ में कहा जाता है। ये कबतक जीवित रहे, न तो इसका ठीक-ठीक पता है, और न इनका या इनके कुटुम्ब का ही कुछ हाल मालूम है।"

इसमें श्री पीर मुहम्मद मूनिस का मत सही है। घाघ का जन्म छपरा जिले में ही हुआ था। इसको पं० रामनरेश त्रिपाठी ने भी घाघ के परिवार का निवास कन्नौज के पास 'अकबराबाद सराय घाघ' से लगा कर अस्वीकार नहीं किया है। बात यह है कि घाघ का जन्म छपरा जिले में हुआ और यहाँ उनकी प्रतिभा का बिकास भी खूब हुआ। सम्मान

भी उन्हें अच्छा मिला। किन्तु उनका प्रौढ़ समय दिल्ली दरबार में अकबर के पास बीता। इन्होंने उन्हें जागीर दी और उन्होंने अपने और अपने बादशाह के नाम पर 'अकबराबाद सराय घाघ' बसाया और वहीं बस गये। 'शिवसिंह-सरोज' के आधार पर जब रामनरेश त्रिपाठी ने कन्नौज के पास पता लगाया तब उनको वहाँ—उनके परिवारवाले भी मिले। उन्होंने लिखा है[1]—"मैंने प्रायः सब स्थानों की खोज की। कहीं-कहीं अपने आदमी भेजे। मैंने अवध के प्रायः सभी राजाओं और ताल्लुकेदारों को पत्र लिखकर पूछा। परन्तु कुछ ताल्लुकेदारों ने उत्तर दिया कि 'नहीं'। खोज के लिए कनौज रह गया था। मैं उसकी चिन्ता में ही था कि तिर्वा के राजा साहब के प्राइवेट सेक्रेटरी ठाकुर केदारनाथ सिंह, बी० ए० का पत्र मिला कि कन्नौज में घाघ के वंशधर मौजूद हैं। उनका पत्र पाकर मैंने कन्नौज में घाघ की खोज की, तो यह पता चला कि घाघ कन्नौज के एक पुरवे में, जिसका नाम चौधरी सराय है, रहते थे। अब भी वहाँ उनके वंशज रहते हैं। वे लोग दूबे कहलाते हैं। घाघ पहले-पहल हुमायूँ के राजकाल में गंगा पार के रहनेवाले थे। वे हुमायूँ के दरबार में गये। फिर अकबर के साथ रहने लगे। अकबर उनपर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने कहा कि अपने नाम का कोई गाँव बसाओ। घाघ ने वर्त्तमान 'चौधरी सराय' नामक गाँव बसाया और उसका नाम रक्खा 'अकबराबाद सरायघाघ'। अब भी सरकारी कागजात में उस गाँव का नाम 'सराय घाघ' ही लिखा जाता है।

सरायघाघ कन्नौज शहर से एक मील दक्षिण और कन्नौज स्टेशन से तीन फर्लांग पश्चिम है। बस्ती देखने से बड़ी पुरानी जान पड़ती है। थोड़ा-सा खोदने पर जमीन के अन्दर से पुरानी ईंटें निकलती हैं। अकबर के दरबार में घाघ की बड़ी प्रतिष्ठा थी। अकबर ने इनको कई गाँव दिये थे, और इनको चौधरी की उपाधि भी दी थी। इसीसे घाघ के कुटुम्बी अभी तक चौधरी कहे जाते हैं। 'सराय घाघ' का दूसरा नाम 'चौधरी-सराय' भी है।"

ऊपर कहा जा चुका है कि घाघ दूबे थे। इनका जन्म-स्थान कहीं गंगा पार में कहा जाता है। अब उस गाँव का नाम और पता इनके वंशजों में कोई नहीं जानता। घाघ देवकली के दूबे थे और 'सराय घाघ' बसा कर अपने उसी गाँव में रहने लगे थे। उनके दो पुत्र हुए—मार्कंडेय दूबे और धीरधर दूबे। इन दोनों पुत्रों के खानदान में दूबे लोगों के बीस-पचीस घर अब उस बस्ती में हैं। मार्कंडेय दूबे के खानदान में बच्चू लाल दूबे और विष्णु-स्वरूप दूबे तथा धीरधर दूबे के खानदान में रामचरण दूबे और श्रीकृष्ण दूबे वर्तमान हैं। ये लोग घाघ की सातवीं या आठवीं पीढ़ी में अपनेको बतलाते हैं। ये लोग कभी दान नहीं लेते। इनका कथन है कि घाघ अपने धार्मिक विश्वासों में बड़े कट्टर थे, और इसी कारण उनको अन्त में मुगल-दरबार से हटना पड़ा था, तथा उनकी जमींदारी का अधिकांश जब्त हो गया था।"

इस विवरण से घाघ के वंश और जीवन-काल के विषय में संदेह नहीं रह जाता। मेरी राय में अब घाघ-विषयक सब कल्पनाओं की इतिश्री समझनी चाहिए। घाघ को

१. देखिए—पृष्ठ १६ (घाघ और भड्डरी)

ग्वाला समझनेवालों अथवा 'वराहमिहर' की सन्तान माननेवालों को भी अपनी भूल सुधार लेनी चाहिए।"

इस उद्धरण से सभी मतभेद समाप्त हो गये और घाघ के छपरा का निवासी होना भी मुहम्मद मूनिस के मतानुसार सिद्ध हो गया है। छपरा, मोतिहारी और शाहाबाद तथा बलिया में घाघ की भोजपुरी कविताएँ खूब प्रसिद्ध हैं और कोई बूढ़ा या जवान गृहस्थ बिरले ऐसा मिलेगा जिसने घाघ की एक दो कविताएँ नहीं याद की हों। घाघ के साथ उनकी पतोहू की रचनाओं का भी उद्धरण आता है। किस्सा है कि घाघ जो कविता करते थे, उसके उल्टा उनकी पतोहू कविता करती थी। लोग इसका खूब रस लिया करते थे। घाघ ने जहाँ कविता लिखी कि उसे लोगों ने उनकी पतोहू के पास पहुँचाया और उसके जवाब को घाघ तक पहुँचा कर उनको चिढ़ा कर वे आनन्द लेते थे।[1] इससे घाघ यहाँ से चिढ़कर कन्नौज चले गये जहाँ उनकी ससुराल थी। कन्नौज से उनका दिल्ली जाना सिद्ध है। यह भी सिद्ध है कि उनके साथ उनके दोनों पुत्र मार्कण्डेय दूबे और धीरधर दूबे भी गये; क्योंकि दोनों के वंशज वहाँ आज भी वर्तमान हैं।

अतः घाघ का छपरा का छोड़ना जीविकोपार्जन के हेतु ही अधिक सम्भव है; पतोहू के कारण नहीं। कन्नौज में उनका सम्बन्ध था। वहीं से वे दिल्ली गये; क्योंकि अकबर के दरबार में मेधावी पुरुषों का सम्मान होता था और वहाँ जब जागीर वगैरह मिली तब वहीं अपने नाम से पुरवा बसा कर वे बस गये। घाघ और उनकी पतोहू की कविताओं की नोक-झोंक के सम्बन्ध में निम्नलिखित पद्य देखिए, जिसे पं० रामनरेश त्रिपाठी ने भी उद्धृत किया है।

घाघ ने कहा—

मुये चाम से चाम कटावे, भुइँ सँकरी माँ सोवे[2]।
घाघ कहे ये तीनों भकुआ, उढ़रि जाइँया रोवे॥

उनकी पतोहू ने इसका प्रतिवाद इस प्रकार किया—

दाम देइ के चाम कटावे, नींद लागे जब सोवे।
काम के मारे उढ़रि जाय जो, समुझि परे तब रोवे॥

घाघ ने कहा—

पौला पहिरे हर जोते औ, सुथना पहिरि निरावे।
घाघ कहें ये तीनों भकुआ, बोझ लिए जो गावे॥

पतोहू ने कहा—

अहिर होइ तो कस ना जोते, तुरकिन होइ निरावे।
छैला होय तो कस ना गावे, हलुक बोझ जो पावे॥

घाघ ने कहा—

तरुन तिया होइ अँगने सोवे, रन में चढ़ि के छत्री रोवे॥
साँझे सतुवा करे बियारी, घाघ मरे उनकर महतारी॥

१. इसका जिक्र 'घाघ और भड्डरी' में पृ० २१ पर भी है।

२. घाघ और भड्डरी—पृ० २१।

पतोहू ने कहा—

पतिव्रता होइ अँगने सोवे। बिना अस्त्र के छत्री रोवे॥
भूख लागि जब करै बियारी[1]। मरे घाघ ही के महतारी॥

घाघ ने कहा—

बिन गवने ससुरारी जाय। बिना माघ विउ खिचरी खाय।
बिन बरखा के पहिने पौआ[2]। घाघ कहें ये तीनों कौआ॥

पतोहू ने कहा—

काम परे ससुरारी जाय। मन चाहे घिउ खिचरी खाय॥
करे जोग तो पहिरे पौआ। कहे पतोहू घाघे कौआ॥

पतोहू का शरीर जरा भारी था। पर घाघ के पुत्र का शरीर पतला था। एक दिन क्रोध में आकर घाघ ने कहा—

पातर दुलहा मोटलि जोय[3], घाघ कहें रस कहाँ से होय॥

लोगों ने यह मजाक पतोहू तक पहुँचाया। पतोहू कब चूकनेवाली थी? उसने कुढ़कर कहा—

घाघ दहिजरा[4] अस कस कहे, पातरि[5] ऊख बहुत रस रहे[6]॥

× × ×

घाघ के मरने के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वे अपनी मृत्यु का कारण ज्योतिष से जान गये थे कि जल में डूब कर मरेंगे। इससे वे जल में प्रवेश नहीं करते थे। पर एक दिन मित्र-गण उन्हें यह कहकर तालाब में नहवाने बलात् ले गये कि हम सब साथ ही तो हैं। पर नहाते समय उनकी चुटिया जाठ से फँस गई और वे डूब कर मर गये। मरते समय उन्होंने कहा था :—

हे जनि जान घाघ निबुद्धी।
आवे काल बिनासे बुद्धी॥

घाघ की कविताएँ उत्तरप्रदेश, बिहार, कन्नौज तथा अवध में सर्वत्र पाई जाती हैं और लोगों ने अपनी-अपनी बोली में उन्हें खूब होशियारी से उतार लिया है। बैसवाड़े वाले 'पेट' को 'प्यार,' 'सोवें' को "स्वावें' बोलते हैं। पर भोजपुरी ठीक उसी रूप में रखते हैं। रामनरेश त्रिपाठी की 'घाघ और भड्डरी' नामक पुस्तक में जो कविताएँ संगृहीत हैं, उनमें भी भोजपुरी पाठ की बहुत कविताएँ हैं। श्री जी० ए० ग्रीअर्सन ने भी घाघ की कविताओं को भोजपुरी पाठ के साथ 'रिजेन्ट लाइफ आफ बिहार' में उद्धृत किया है। घाघ ने प्रारम्भ में भोजपुरी में ही अधिकांश कविताएँ लिखी होंगी; किन्तु बाद में उनकी उपयोगिता से आकृष्ट हो अन्य भाषा-भाषियों ने भी उनको अपनी भाषा के अनुकूल तोड़-मरोड़ कर बना लिया होगा; क्योंकि उनकी मातृ-भाषा भोजपुरी थी।

---

१. ब्यालू, भोजन। २. खड़ाऊँ। ३. पत्नी। ४. दाढ़ीजार (एक गाली)। ५. पतली। ६. यह छन्द पं० रामनरेश त्रिपाठी को महामना पं० मदनमोहन मालवीय जी से प्राप्त हुआ था।

पं० रामनरेश त्रिपाठी का यह अनुमान है कि भाषा के आधार पर घाघ का जन्म-स्थान कहीं निर्धारित करना ठीक नहीं, तर्क और युक्ति-सम्पन्न नहीं प्रतीत होता है। हाँ, घाघ जब कन्नौज में बस गये तब कन्नौज के आस-पास बोली जानेवाली भाषा में उनकी रचनाओं की प्राप्ति स्वाभाविक है। किन्तु तब भी उनकी अधिकांश रचनाएँ भोजपुरी में ही हैं।

अकबर का समय सन् १५४२ से १६०५ तक है। यही घाघ का भी समय मानना चाहिए। यदि घाघ के वंशजों के कथनानुसार वे हुमायूँ के साथ भी रह चुके होंगे तो अकबर के सिंहासनारूढ होने के समय उनकी अवस्था पचास वर्ष से अधिक ही रही होगी। घाघ के वंशधरों के कथनानुसार उनकी मृत्यु कन्नौज में ही हुई थी।

हर होइ गोयँड़े[1] खेत होइ चास[2]।
नारि होइ गिहिथिनि[3] भँइस सन्हार॥
रहरी के दाल जड़हन के भात॥
गारल नेबुआ औ घीव तात॥
सारस अंड दही जब होय।
बाँके नयन परोसय जोय॥
कहे घाघ ई साँच ना झूठ।
उहाँ छाड़ि इहवें बैकुण्ठ[4]॥

इस उक्ति में कवि ने गृहस्थ के सुखी जीवन की तुलना वैकुण्ठ से की है। गाँव के निकट ही हल चलता हो अर्थात् गोयँड़े में ही खेत हो। खेत चास हो उठे हों। नारी गिहिथिन (घर-गृहस्थी सँभालने में कुशल) हो और भैंस सन्हार (यानी दूध देनेवाली) हो। अरहर की दाल हो और जड़हन धान का भात हो। उसपर नीबू का रस हो और तप्त-तप्त घृत ऊपर से डाला गया हो। सारस के अंडे के रंग का दही हो अर्थात् खूब औंटे दूध का लाल रंग का दही हो। साथ ही बाँकी चितनवाली जवान पत्नी परोसती हो। तब घाघ कहते हैं, साक्षात् वैकुंठ यहीं है, अन्यत्र कहीं नहीं।

घाघ की कहावतें

बनिय क सखरच[5] ठकुर क हीन। बइद क पूत व्याधि नहीं चीन्ह॥
पंडित चुपचुप बेसवा मइल। कहें घाघ पाँचों घर गइल॥

यदि बनिये का लड़का शाहखर्च (अपव्ययी) हो, ठाकुर का लड़का तेजहीन पतला-दुबला हो, वैद्य का लड़का रोग न पहचानता हो, पंडित चुप-चुप (मुँहदुबर) हो और वेश्या मैली हो तो घाघ कहते हैं कि इन पाँचों का घर नष्ट हुआ समझो।

नसकट खटिया दुलकन घोड़। कहें घाघ यह बिपति क ओर॥

छोटी खाट—जिस पर लेटने से एँड़ी की नस पाटी पर पड़ती हो, जिससे वहाँ की नस में

१. गाँव के निकट। २. जोता हुआ। ३. सुगृहिणी। ४. अपने पितामह कविवर 'ईश' नर्म्मदेश्वरप्रसाद सिंह से, ठीक इसी पाठ में, आज से ४० वर्ष पूर्व, कण्ठस्थ कराया गया।—लेखक ५. शाहखर्च।

पाटी गड़ती हो—तथा दुलक कर चलनेवाला घोड़ा, ये दोनों घाघ कहते हैं कि विपत्ति के ओर (कारण) हैं।

नसकट पनही[1], बतकट जोय। जो पहिलौंठी बिटिया होय॥
पातर खेत, बौरहा भाय। घाघ कहें दुख कहाँ समाय॥

घाघ कहते हैं कि पैर की नस काटनेवाली जूती, बात काटनेवाली स्त्री, पहली सन्तान कन्या, कमजोर खेती और बावला भाई जिनको हो; उनके दुख की सीमा नहीं होती है!

उधार काढ़ि ब्योहार चलावे, छप्पर डारे तारो[2]।
सारे के संग बहिनी पठवे, तीनिउ के मुँह कारो॥

जो उधार लेकर कर्ज देता है, जो घास-फूस के घर में ताला लगाता है और जो साले के साथ कहीं बहन को भेजता है, घाघ कहते हैं, इन तीनों का मुँह काला होता है।

आलस नींद किसाने नासे, चोरे नासे खाँसी।
अँखिया लीबर[3] बेसवे नासे, बाबे[4] नासे दासी॥

आलस्य और नींद किसान का, खाँसी चोर का, लीबर (कीचड़) वाली आँखें वेश्या का और दासी साधु का नाश करती है। इसलिए किसान को आलस्य और अधिक नींद से, चोर को खाँसी से, वेश्या को गंदी आँखों से और साधु को दासी से हमेशा बचना चाहिए।

फूटे से बहि जातु है ढोल, गंवार, अँगार।
फूटे से बनि जातु है फूट, कपास, अनार॥

ढोल, गँवार और अँगार, ये तीनों फूटने से नष्ट हो जाते हैं। पर फूट (ककड़ी), कपास और अनार फूटने से बन जाते हैं अर्थात् मूल्यवान् हो जाते हैं।

बाध[5], बिया, बेकहल[6], बनिक, बारी, बेटा, बैल।
ब्योहर, बढ़ई, बन, बबुर, बात, सुनो ये छैल॥
जो बकार बारह बसैं सो पूरन गिरहस्त।
औरन को सुख दै सदा आप रहै अलमस्त॥

बाध (जिससे खटिया बुनी जाती है), बीज, बेकहल (पटुए या सन की छाल), बनिया, बारी (फुलवाड़ी), बेटा, बैल, ब्योहर (सूद पर उधार देना), बढ़ई, बन या जंगल, बबूल और बात, ये बारह बकार जिसके पास हो, वही पूरा गृहस्थ है। वह दूसरों को सदा सुख देगा और स्वयं भी निश्चिन्त रहेगा।

गइल पेड़ जब बकुला बइठल। गइल गेह जब मुड़िया पइठल॥
गइल राज जहँ राजा लोभी। गइल खेत जहँ जामल गोभी॥

बगुले के बैठने से पेड़ का नाश हो जाता है, मुड़िया (संन्यासी) जिस घर में आता-जाता है—वह घर नष्ट हो जाता है, जहाँ राजा लोभी होता है, वहाँ का राज्य नष्ट हो जाता है और गोभी (एक प्रकार की जलवाली घास) जमने से खेत नष्ट हो जाता है। बगुले

१. जूती। २. ताला। ३. चुँधियाई, कीचड़वाली। ४. साधु। ५. साबे या मूँज को कूट कर उसके रेशे से बनाई गई रस्सी। ६. वल्कल।

को बीट पेड़ के लिए हानिकारक बताई जाती है और गोभी के जमने से खेत की पैदावार बहुत कम हो जाती है।

घर घोड़ा पैदल चले, तीर चलावे बीन।
थाती धरे दमाद घर, जग में भकुआ[1] तीन॥

संसार में तीन मूर्ख हैं—एक तो वह जो घर में घोड़ा होते हुए भी पैदल चलता है, दूसरा वह जो बीन-बीनकर (चुन-चुनकर) तीर चलाता है, और तीसरा वह जो दामाद के घर थाती (धरोहर) रखता है।

खेती, पाती, बीनती और घोड़े का तंग।
अपने हाथ सँवारिये लाख लोग हों संग॥

खेती करना, चिट्ठी लिखना, विनती करना और घोड़े का तंग कसना; ये काम अपने ही हाथ से करना चाहिए। यदि लाख आदमी भी साथ हों तब भी स्वयं करना चाहिए।

बैल बगौधा[2] निरघिन[3] जोय। वा घर ओरहन कबहुँ न होय॥

बगौधे के नस्लवाला बैल और घिनौनी स्त्री जिस घर में हो, उस घर में उलाहना कभी नहीं आता।

चैते गुड़ बैसाखे तेल। जेठ के पंथ असाढ़ के बेल॥
सावन साग न भादो दही। कुआर करेला कातिक मही॥
अगहन जीरा पूसे धना। माघे मिसिरी फागुन चना॥

चैत में गुड़, बैसाख में तेल, जेठ में राह, असाढ़ में बेल, सावन में साग, भादो में दही, कार में करेला, कातिक में मट्ठा, अगहन में जीरा, पौष में धनिया, माघ में मिश्री और फागुन में चना हानिकारक हैं। इसी के जोड़ का एक दूसरा छंद है, जिसमें प्रत्येक महीने में लाभ पहुँचानेवाली चीजों के नाम हैं।

सावन हर्रे भादो चीत। कुआर मास गुड़ खायउ मीत॥
कातिक मूली अगहन तेल। पूस में करे दूध से मेल॥
माघ मास घिउ खिचरी खाय। फागुन उठि के प्रात नहाय॥
चैत मास में नीम बेसहनी। बैसाखे में खाय जड़हनी॥
जेठ मास जो दिन में सोवे। ओकर जर असाढ़ में रोवे॥

सावन में हर्रे, भादो मास में चिरायता; कार मास में गुड़, कातिक में मूली, अगहन में तेल, पौष मास में दूध, माघ मास में घी और खिचड़ी, फागुन में प्रातःकाल स्नान, चैत मास में नीम, बैसाख में जड़हन का (पानी डाला हुआ बासी) भात, जेठ मास के दिन में नींद का जो सेवन करता है, उसको आषाढ़ में ज्वर नहीं लगता।

बूढ़ा बैल बेसाहे झीना कपड़ा लेय।
अपने करे नसौनी दैव न दूषन देय॥

जो गृहस्थ बुड्ढा बैल खरीदता है, बारीक कपड़ा लेता है, वह तो अपना नाश आप ही करता है, वह दैव को व्यर्थ ही दोष लगाता है।

---

१. मूर्ख। २. बगौधे की नस्लवाले बैल बड़े सीधे होते हैं। ३. फूहड़, घिनौनी

बैल चौंकना जोत में अरु चमकीली नार।
ये बैरी हैं जान के कुसल करे करतार॥

हल में जोतते वक्त चौंकनेवाला बैल और चटक-मटक से रहनेवाली स्त्री, ये दोनों ही गृहस्थ के प्राण के शत्रु हैं। इनसे ईश्वर ही बचावें।

निरपछ राजा, मन हो हाथ। साधु परोसी, नीमन[1] साथ॥
हुकुमी[2] पूत धिया सतवार[3]। तिरिया भाई रखे विचार॥
कहे घाघ हम करत बिचार। बड़े भाग से दे करतार॥

राजा निष्पक्ष हो, मन वश में हो, पड़ोसी सज्जन हो, सच्चे और विश्वासी आदमियों का साथ हो, पुत्र आज्ञाकारी हो, कन्या सतवाली हो, स्त्री और भाई विचारवान् हों तथा अपना ख्याल रखते हों। घाघ कहते हैं कि हम सोचते हैं कि बड़े भाग्य से भगवान इन्हें किसी को देते हैं।

ढीठ पतोहू धिया गरियार[4]। खसम बेपीर न करे बिचार॥
घरे जलावन अन्न न होइ। घाघ कहैं से अभागी जोइ॥

जिसकी पुत्रवधू ढीठ हो, कन्या आलसी हो, पति निर्दय हो और पत्नी का ख्याल न करता हो, घर में जलावन तथा अन्न न हो; घाघ कहते हैं ऐसी स्त्री महाअभागिनी है।

कोपे दई मेघ ना होइ। खेती सूखति नैहर जोइ[5]॥
पूत बिदेस खाट पर कन्त। कहे घाघ ई बिपति क अन्त॥

दैव ने कोप किया है, बरसात नहीं हो रही है, खेती सूख रही है, स्त्री पिता के घर है, पुत्र परदेश में है, पति खाट पर बीमार पड़ा है। घाघ कहते हैं, ये सब विपत्ति की सीमाएँ हैं।

पूत न माने आपन डाँट। भाई लड़े चाहे नित बाँट॥
तिरिया कलही करकस[6] होइ। नियरा बसल दुहट[7] सब कोइ॥
मालिक नाहिन करे बिचार। घाघ कहे ई बिपति अपार॥

पुत्र अपनी डाँट-डपट नहीं मानता, भाई नित्य झगड़ता रहता है और बँटवारा चाहता है, स्त्री झगड़ालू और कर्कशा है, पास-पड़ोस में सब दुष्ट बसे हुए हैं, मालिक न्याय-अन्याय का विचार नहीं करता, घाघ कहते हैं कि ये सब अपार विपत्तियाँ हैं।

बैल मरखहा चमकल जोय। वा घर ओरहन[8] नित उठि होय।

मारनेवाला बैल और चटकीली-मटकीली स्त्री जिस घर में हों, उसमें सदा उलाहना आता रहेगा।

परहथ बनिज, सँदेसे खेती। बिन बर देखे ब्याहे बेटी॥
द्वार पराये गाड़े थाती। ये चारो मिलि पीटैं छाती॥

दूसरे के भरोसे व्यापार करनेवाला, संदेशा द्वारा खेती करनेवाला और जो बिना वर देखे बेटी ब्याहनेवाला तथा जो दूसरे के द्वार पर धरोहर गाड़नेवाला, ये चारों छाती पीट कर आखिर में पछताते हैं।

---

१. अच्छा। २. आज्ञाकारी। ३. सच्चरित्रा। ४. मट्ठर, आलसी। ५. पत्नी ६. कर्कशा। ७. दुष्ट। ८. उपालम्भ।

अगते[1] खेती, अगते मार। कहें घाघ ते कबहुँ न हार।

घाघ कहते हैं कि जो सबसे पहले खेत बोते हैं और झगड़ा होने पर जो सब से पहले मारते हैं, वे कभी नहीं हारते।

सधुवे दासी, चोरवे खाँसी, प्रेम बिनासे हाँसी।
घाघ उनकर बुद्धि बिनासे, खायँ जे रोटी बासी॥

साधु को दासी, चोर को खाँसी और प्रेम को हँसी नष्ट कर देती है। घाघ कहते हैं कि इसी प्रकार जो लोग बासी रोटी खाते हैं, उनकी बुद्धि नष्ट हो जाती है।

ओछे बैठक, ओछे काम। ओछी बातें आठों जाम॥
घाघ बतावे तीन निकाम। भूलि न लीहऽ इनकर नाम॥

जो ओछे आदमियों के साथ बैठता है, जो ओछे काम करता है और जो रातदिन ओछी बातें करता रहता है। घाघ कहते हैं ये तीन निकम्मे आदमी हैं। इनका नाम कभी भूल कर भी न लेना चाहिए।

आठ कठौती माठा पीये सोरह मकुनी खाय।
ओकरे मरे न कबहूँ रोइहऽ घर के दलिद्दर जाय॥

जो आठ कठौता (काठ की परात) मट्ठा पीता हो और सोलह मकुनी (एक प्रकार की सत्तू भरी रोटी) खाता हो, उसके मरने पर कभी भी रोने की जरूरत नहीं। उसके मरने से तो मानों घर की दरिद्रता निकल गई।

चोर, जुवारी, गँठकटा, जार औ नार छिनार[2]।
सौ सौगंध खायँ जो घाघ न करु एतवार॥

घाघ कहते हैं कि चोर, जुवारी, गँठकटा, जार और छिनार स्त्री यदि सौ सौगंध भी खायँ, तो भी इनका विश्वास न करना चाहिए।

छज्जा के बैठल बुरा परछाहीं के छाँह।
भीरी[3] के रसिया बुरा नित उठि पकरे बाँह॥

छज्जे की बैठक बुरी होती है, परछाँई की छाया बुरी होती है। इसी प्रकार निकट का रहनेवाला प्रेमी बुरा होता है जो नित्य उठकर बाँह पकड़ता है।

नित्तें खेती दुसरे गाय। नाहीं देखे तेकर जाय॥
घर बैठल जो बनवे बात। देह में वस्त्र न पेट में भात॥

जो किसान रोज खेती की और एक दिन बीच डालकर गाय की देखभाल नहीं करता, उसके ये दोनों चीजें बरबाद हो जाती हैं। जो घर में बैठे-बैठे बातें बनाया करता है, उसकी देह पर न वस्त्र होता है, न पेट में भात—अर्थात् वह दरिद्र हो जाता है।

विप्र टहलुआ चिक्क[4] धन औ बेटी कर बाढ़।
एहू से धन ना घटे तो करे बड़न से रार॥

ब्राह्मण को नौकर रखने से, कसाई की जीविका उठाने से और कन्याओं की बढ़ती से

१. सबसे पहले। २. कुलटा। ३. पास। ४. कमाई।

भी यदि धन घटता नहीं है, तो अपने से जबरदस्त से झगड़ा करना चाहिए।

जाके छाती बार ना; ओकर एतबार ना।

जिस आदमी की छाती पर एक भी बाल न हो, उसका विश्वास नहीं।

माते पूत पिता ते घोड़। ना बहुतो त थोरो थोर॥

माँ का गुण पुत्र में आता है और पिता का गुण घोड़े में आता है। यदि बहुत न आया, तो कुछ तो जरूर आता ही है।

बाढ़े पूत पिता के धर्मे। खेती उपजे अपने कर्मे॥

पुत्र पिता के धर्म से बढ़ता है; पर खेती अपने ही कर्म से होती है।

राँड़ मेहरिया अनाथ भैंसा। जब बिचलै तब होवे कैसा॥

राँड़ स्त्री और बिना नाथ का भैंसा, यदि बहक जाय तो क्या हो? अर्थात् भयंकर अनर्थ हो।

जेकर ऊँचा बैठना जेकर खेत निचान।
ओकर बैरी का करे जेकर मीत दिवान॥

जिस किसान का उठना-बैठना ऊँचे दरजे के आदमियों में होता है, और खेत आस-पास की जमीन से नीचा है तथा राजा का दीवान जिसका मित्र है, उसका शत्रु क्या कर सकता है?

घर के खुनुस[1] ओ जर के भूख। छोट दमाद बराहे ऊख।
पातर खेती भकुवा भाय। घाघ कहैं दुख कहाँ समाय॥

घर में रात-दिन का चखचख, ज्वर के बाद की भूख, कन्या से छोटा दामाद, सूखती हुई ईख, कमजोर खेती और बेवकूफ भाई—ये ऐसे दुःख हैं कि घाघ कहते हैं कि जिनका कहीं अन्त नहीं है।

माघ मास की बादरी ओ कुवार के घाम।
ई दूनों के जेउ सहे करे पराया काम॥

माघ की बदली और कुवार का घाम, ये दोनों बड़े कष्टदायक होते हैं। इन्हें जो सह सके, वही पराया काम कर सकता है अर्थात् नौकरी कर सकता है।

खेत ना जोतीं राढ़ी, भैंस ना पोसीं पाड़ी।

राढ़ी घासवाला खेत न जोतना चाहिए, न पाड़ी (बच्ची भैंस) पालनी चाहिए।

सावन घोड़ी, भादो गाय। माघ मास जो भैंस बियाय।
कहे घाघ यह साँचे बात। आप मरे कि मलिके खाय॥

यदि सावन में घोड़ी, भादों में गाय और माघ के महीने में भैंस ब्याये, तो घाघ कहते हैं कि यह बात निश्चित है कि या तो वह स्वयं मर जायगी या मालिक को ही खा जायगी।

हरहट नारि बास एकबाह। परुवा बरद सुहुत हरवाह॥
रोगी होइ रहे इकन्त। कहैं घाघ ई बिपति के अन्त॥

कर्कशा स्त्री, गाँव के एक किनारे बसना, हल में बैठ जानेवाला बैल, सुस्त हलवाहा, रोगी होकर अकेले रहना, घाघ कहते हैं कि इनसे बढ़कर विपत्ति और नहीं।

१. नोंक-झोंक, चखचख।

लरिका ठाकुर बूढ़ दिवान। ममिला[1] बिगरै साँझ बिहान॥

यदि ठाकुर (राजा, जमींदार) बालक हो और उसका दीवान बुड्ढा हो, तो सारा मामला सुबह-शाम में ही बिगड़ जायगा।

ना अति बरखा, ना अति धूप। ना अति बकता, ना अति चूप॥

न बहुत वर्षा ही अच्छी है, न बहुत धूप ही। इसी प्रकार न बहुत बोलना अच्छा है, न बहुत चुप रहना ही।

ऊँच अटारी मधुर बतास। कहैं घाघ घरही कैलास।

ऊँची अटारी हो और वहाँ मंद-मंद हवा मिलती हो, तो घाघ कहते हैं कि घर में ही कैलास है।

बिन बैलन खेती करे, बिन भैयन के रार।
बिन मेहरारू घर करे चौदह साख लबार[2]॥

जो गृहस्थ यह कहता है कि मैं बिना बैलों के खेती करता हूँ, बिना भाइयों की सहायता के दूसरों से झगड़ा करता हूँ और बिना स्त्री के गृहस्थी चलाता हूँ, उसकी चौदह पीढ़ियाँ झूठी हैं।

ढिलढिल बेंट कुदारी। हँसि के बोलै नारी॥
हँसि के माँगे दाम। तीनों काम निकाम॥

कुदाल की बेंट ढीली हो, स्त्री हँसकर जिस किसी से बात करती हो और उधार दी हुई चीज का दाम हँसकर माँगा जाय तो इन तीनों को बिल्कुल चौपट ही समझना चाहिए।

उत्तम खेती मध्यम बान। निर्घिन सेवा भीख निदान॥

खेती का पेशा सबसे अच्छा है। वाणिज्य (व्यापार) मध्यम और नौकरी सबसे घिनौनी है। पर भीख माँगना तो सबसे गया-गुजारा अत्यन्त खराब पेशा है।

सब के कर। हर के तर॥

सारे काम-धंधे हल पर निर्भर हैं।

कीड़ी संचे तीतर खाय। पापी के धन पर ले जाय॥

कीड़ी (चींटी) अन्न जमा करती है, किन्तु तीतर पक्षी उसे खा जाता है। इसी प्रकार पापी का धन दूसरे लोग उड़ा लेते हैं।

भईंसि सुखी जो डबरा भरे। राँड़ सुखी जो सबके मरे॥

बरसात के पानी से गड्ढा भर जाय तो भैंस बड़ा खुश होती है। इसी प्रकार राँड़ तब खुश होती है, जब सभी स्त्रियाँ राँड़ हो जायँ।

मारि के टरि रहु। खाइ के परि रहु॥

मारकर टल जाओ और खाकर लेट जाओ। पहली बात से फिर स्वयं मार खाने की नौबत नहीं आती और दूसरी बात से स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

खाइ के मूते सूते बाँव। काहे के बैद बसावे गाँव॥

खाकर पेशाब करे और फिर बाईं करवट लेट जाय, तो वैद्य को गाँव में बसाने की क्या जरूरत है; यानी ऐसा करनेवाला सदा नीरोग रहता है।

---

१. कारोबार। २. मिथ्यावादी।

सावन भैंसा, माघ सियार। अगहन दरजी चैत चमार॥

सावन में भैंसा, माघ में सियार, अगहन में दरजी और चैत में चमार मोटे हो जाते हैं। सावन में भैंसे इसलिए मोटे होते हैं कि उन्हें चरने को हरियरी खूब मिलती है। माघ में सियार इसलिए मोटे होते हैं कि उन दिनों में ऊख आदि मिठी वस्तुएँ मिलती हैं और यह मौसम उनकी जवानी का मौसम होता है। अगहन मास में किसानों के यहाँ अन्न हो जाने के कारण उनसे दरजी को खूब काम मिलता है और वे बदले में प्रचुर अन्न पाते हैं। इसी तरह चैत महीने में मवेशियों को ज्यादा बीमारी होती है और वे मरते हैं, जिससे चमारों को पूरा लाभ होता है।

खेती सम्बन्धी रचनाएँ

उत्तम खेती जो हर गहा। मध्यम खेती जो संग रहा॥
जो पूछेसि हरवाहा कहाँ। बीज बूड़िगे तिनके तहाँ॥

जो स्वयं अपने हाथ से हल चलाता है, उसकी खेती उत्तम; जो हलवाहे के साथ रहता है, उसकी मध्यम और जिसने पूछा कि हलवाहा कहाँ है, उसका तो बीज लौटना भी मुश्किल है।

खेत बेपनिया जोते तब। ऊपर कुँआ खोदा ले जब॥

जिस खेत में पानी न पहुँचता हो, उसे तब जोतो, जब उसके ऊपर कुँआ खुदवा लो।

एक मास ऋतु आगे धावे। आधा जेठ असाढ़ कहावे॥

मौसम एक महीना आगे चलता है। आधे जेठ से ही आषाढ़ समझना चाहिए और खेती की तैयारी प्रारम्भ कर देनी चाहिए।

ढेला ऊपर चील जो बोले। गली गली में पानी डोले॥

यदि चील ढेले पर बैठ कर बोले, तो समझना चाहिए कि इतना पानी बरसेगा कि गली-कूचे पानी से भर जायँगे।

अम्बाझोर चले पुरवाई। तब जानो बरखा ऋतु आई॥

यदि पुरवा हवा ऐसे जोर से बहे कि आम झड़ पड़ें तो समझना चाहिए कि वर्षा-ऋतु आ गई।

माघ के ऊखम जेठ के जाड़। पहिले बरखा भरिगा ताल॥
कहैं घाघ हम होइब जोगी। कुँआ खोदि के धोइहैं धोबी॥

यदि माघ में गरमी पड़े और जेठ में जाड़ा हो और पहली ही वर्षा से तालाब भर जाय, तो घाघ कहते हैं कि ऐसा सूखा पड़ेगा कि हमें परदेश जाना पड़ेगा और धोबी लोग कुँआ खोदकर कपड़ा धोयेंगे।

रात करे धापधुप दिन करे छाया। कहैं घाघ तब वर्षा गया॥

यदि रात साफ होने लगें और दिन में बादल की सिर्फ छाया पृथ्वी पर पड़ने लगे, तो घाघ कहते हैं कि वर्षा का अन्त समझना चाहिए।

खेती ऊ जे खड़े रखावे। सूनी खेती हरिना खावे॥

खेती वही है जो प्रतिदिन मेंड़ पर खड़े होकर उसकी रखवाली करे, बगैर रखवाली के खेत को तो हिरन आदि पशु चर जाते हैं।

उलटा बादर जो चढ़े। बिधवा खड़े नहाय॥
घाघ कहें सुन भड्डरी ऊ बरसे ऊ जाय॥

जब पुरवा हवा में पश्चिम से बादल चढ़े और विधवा खड़ी होकर स्नान करे, तब घाघ कहते हैं कि हे भड्डरी, सुनो, बादल बरसेंगे और विधवा किसी पुरुष के साथ चली जायगी।

पहिले पानी नदी उफनाय। तो जनिहऽ कि बरखा नाय

पहली ही बार की वर्षा से यदि नदी उफन कर बहे तो समझना चाहिए कि वर्षा अच्छी न होगी।

माघ के गरमी जेठ के जाड़। कहें घाघ हम होब उजाड़॥

माघ में गरमी और जेठ में सरदी पड़े तो घाघ कहते हैं कि हम उजड़ जायँगे अर्थात् पानी नहीं बरसेगा।

थोड़ा जोते बहुत हेंगावे। ऊँच न बाँधे आड़॥
ऊँचे पर खेती करे। पैदा होवे भाड़॥

थोड़ा जोते, बहुत हेंगावे (सिरावन दे), मेंड भी ऊँचा न बाँधे और ऊँची जगह पर खेती करे, तो भड़भड़ा घास पैदा होगी[1]।

गेहूँ बाहे धान गाहे। ऊख गोड़े से हो आहे॥

गेहूँ कई बाँह करने (एक बार से अधिक छीटने) से, धान बिदाहने (धान के पौधे उग आवें तब जोतने) से और ईख कई बार गोड़ने से अधिक पैदा होती है।

रहड़े गेहूँ कुसहे धान। गड़रा के जड़ जड़हन जान॥
फुली घास रो देयँ किसान। ओह में होय आन के तान॥

राड़ घास काटकर गेहूँ बोने के, कुश काटकर धान बोने के और गड़रा काटकर जड़हन बोने के खेत बनाये जायँ तो पैदावार अच्छी होती है। लेकिन जिस खेत में फुलही घास होती है, उसमें कुछ नहीं पैदा होता और किसान रो देता है।

जब सैल खटाखट बाजे। तब चना खूब ही गाजे॥

खेत में इतने ढेले हों कि हल चलते वक्त यदि बैलों के जुए की सैलें खट-खट बजती रहें तो उस खेत में चने की फसल अच्छी होगी।

जब बरसे तब बाँधे कियारी। बड़ किसान जे हाथ कुदारी॥

जब बरसे, तब कयारी बाँधनी चाहिए। बड़ा किसान वह है जिसके हाथ में कुदाल रहती है।

माघ मघारे जेठ में जारे॥
भादों सारे तेकर मेहरी डेहरी पारे॥

गेहूँ का खेत माघ में खूब जोतना चाहिए, फिर जेठ में उसे खूब तपने देना चाहिए

---

१ भाड़=भड़भड़ा=धमोर एक काँटेदार चितकबरी पत्तीवाला पौधा, जिसके फूल पीले और कटोरे के आकार के होते हैं। चमार लोग उसके बीज का तेल निकालते हैं।

जिससे घास और खेत की मिट्टी जल जाय। फिर भादों में जोत कर सड़ावे। जो किसान ऐसा करेगा, उसी की स्त्री अन्न भरने के लिए डेहरी (कोठला) बनायेगी।

जोते खेत घास न टूटे। तेकर भाग साँझे फूटे॥

जोतने पर भी यदि खेत की घास न टूटे, तो उसका भाग्य उस दिन की संध्या आते ही फूटा समझना चाहिए।

गहिर न जोते बोवे धान। सो घर कोठिला भरे किसान॥

धान के खेत को गहरा न जोतकर धान बोना चाहिए। इतना धान पैदा हो कि किसान का घर कोठिलों से भर जायगा।

दुइ हर खेती एक हरबारी। एक बैल से भला कुदारी॥

दो हल से खेती और एक से शाक-तरकारी की बाड़ी होती है। और, जिस किसान के पास एक ही बैल है, उससे तो कुदाल ही अच्छी है।

तेरह कातिक तीन असाढ़। जे चूकल से गइल बजार॥

तेरह बार कातिक में और तीन बार आषाढ़ में जोतने से जो चुका, वह बाजार से खरीद कर खायगा। अथवा कातिक में तेरह दिन में और आषाढ़ में तीन दिन में बो लेना चाहिए। जो नहीं बोयेगा, उसे अन्न नहीं मिलेगा।

जतना गहिरा जोते खेत। बीज परे फल अच्छा देत॥

खेत जितना ही गहरा जोता जाता है, बीज पड़ने पर वह उतना ही अच्छा फल देता है।

जोंधरी जोते तोड़ मँड़ोर। तब वह डारे कोठिला फोर॥

जोंधरी के खेत को खूब उलट-पलट कर जोतना चाहिए। तब वह इतनी पैदा होगी कि अन्न कोठिले में न समायगा।

तीन कियारी तेरह गोड़। तब देखऽ ऊखी के पोर॥

तीन बार सींचो और तेरह बार गोड़ो, तब ऊख लम्बी पोर (गाँठ की लम्बाई वाला हिस्सा) की अच्छी उपजेगी।

थोर जोताई बहुत हेंगाई ऊँचे बाँध किआरी।
ऊपज जो उपजे नहीं त घाघे दीह गारी॥

थोड़ा जोतने से, बहुत बार सिरावन देने से और ऊँची मेड़ बाँधने से अन्न की उपज अच्छी होगी। यदि इतना करने पर भी न हो तो घाघ को गाली देना, अर्थात् ऐसा करने से अन्न अवश्य बहुत उपजेगा।

एक हर हत्या दू हर काज। तीन हर खेती चार हरराज॥

एक हल की खेती हत्या ही मात्र है, दो हल की खेती काम-चलाऊ है, तीन हल की खेती खेती है और चार हल की खेती तो राज ही है।

गोबर मैला नीम की खली। एसे खेती दूनी फली॥

गोबर, पाखाना और नीम की खली डालने से खेती में दूनी पैदावार होती है।

गोबर मैला पाती सड़े। तब खेती में दाना पड़े॥

खेत में गोबर, पाखाना और पत्ती सड़ने से दाना अधिक होता है।

पुक्ख पुनर्बस बोवे धान। असलेखा जोन्हरी परमान॥

पुष्य और पुनर्वसु नक्षत्र में धान बोना चाहिए और अश्लेषा में जोन्हरी बोनी चाहिए।

सॉवन साँवाँ अगहन जवा। जितना बोवे उतने लेवा॥

सावन में साँवाँ और अगहन में जो तौल में जितना बोया जायगा, उतना ही काटा जायगा। अर्थात् उपज कम होगी।

अद्रा धान पुनर्बसु पैया। गया किसान जो बोवे चिरैया॥

आर्द्रा में धान बोना चाहिए। पुनर्वसु नक्षत्र में बोने से केवल पैया (बिना चावल का धान = खँखरी) हाथ आयेगा। और उस किसान का तो सर्वनाश होगा जो चिरैया यानी पुष्य नक्षत्र में धान बोवेगा।

कातिक बोवे अगहन भरे ताके हाकिम फिर का करे॥

जो कातिक में बोता है और अगहन में सींचता है। उसका हाकिम क्या कर सकता है? अर्थात् वह लगान आसानी से दे सकता है।

पुरवा में मति रोपऽ भइया। एक धान में सोलह पइया॥

हे भाई, पूर्वा नक्षत्र में धान न रोपना, नहीं तो एक धान में सोलह पय (रोग) लगेगा।

अद्रा रेंड पुनरबस पाती। लाग चिरैया दिया न बाती॥

धान आर्द्रा में बोया जायगा तो डंठल अच्छे होंगे, पुर्नवसु में पत्तियाँ अधिक होंगी और चिरैया (पुष्य नक्षत्र) लगने पर बोया जायगा तो घर में अंधेरा ही रहेगा—अर्थात् उस अन्न के भरोसे घर में चूल्हा नहीं जलेगा।

घने घने जब सनई बोवे। तब सुतरी के आसा होवे॥

सनई को घनी बोने से सुतली की आशा होगी।

कदम कदम पर बाजरा, मेढक कुदौनी ज्वार।
ऐसे बोवे जो कोई, घर घर भरे कोठार॥

एक-एक कदम पर बाजरा और मेढक की कुदान भर की दूरी पर ज्वार जो कोई बोवे, तो घर-घर का कोठिला भर जाय।

फाँफर भला जौ चना, फाँफर भला कपास।
जिनकर फाँफर ऊखड़ी, उनकर छोड़ऽ आस॥

जौ और चने तथा कपास के पौधे कुछ अन्तर देकर बोने पर अच्छे उपजते हैं; पर जिनकी ईख दूर-दूर पर है, उनकी आशा छोड़ो।

कुड़हल बोओ यार। तब चिउरा के होय बहार॥

कुड़हल (कोड़ी हुई) जमीन में भादों की फसल बोओ, तब चिउड़ा खाने को मिलेगा अथवा धरती खोदकर भदई धान बोओ।

बाड़ी में बाड़ी करे, करे ऊख में ऊख।
ऊ घर ओइसे जइहें, सुने पराई सीख॥

जो कपास के खेत में पुनः कपास और ईख के खेत में फिर दूसरे वर्ष भी ईख बोता है, उसका घर वैसे ही नष्ट हो जाता है जैसे पराई सीख सुननेवाले का घर नष्ट होता है।

बुध बउनी। सुक लउनी ॥

बुध को बोना चाहिए और शुक्र को काटना चाहिए।

दीवाली के बोये दिवालिया ॥

जो दिवाली को बोता है, वह दिवालिया हो जाता है। अर्थात् उसके खेत में कुछ नहीं पैदा होता।

गाजर गंजी मूरी। तीनों बोवे दूरी ॥

गाजर, शकरकन्द और मूली को दूर-दूर बोना चाहिए।

पहिले काँकरि पाछे धान। ओहके कहिहऽ पूर किसान

पूरा किसान वह है जो पहले ककड़ी बोता है, उसके बाद धान।

बाँधे कुदारी खुरपी हाथ। लाठी हँसुवा राखे साथ
काटे घास औ खेत निरावे। सो पूरा किसान कहावे ॥

वही पूरा किसान है जो कुदाल और खुरपी हाथ में, लाठी और हँसुआ साथ में रखता है तथा घास काटता है और खेत निराता है।

माघ में बादर लाल रंग धरे। तब जानऽ साँचो पत्थर परे ॥

माघ में यदि लाल रंग के बादल हों, तो जानना कि सचमुच पत्थर पड़ेगा।

जब वर्षा चित्रा में होय। सगरी खेती जावै खोय ॥

यदि चित्रा नक्षत्र में वर्षा हो, तो सारी खेती बरबाद हो जायगी।

चढ़त जो बरसै आदरा, उतरत बरसे हस्त।
कितनो राजा डँड़ ले, हारे नाहिं गृहस्त ॥

यदि आद्रा नक्षत्र चढ़ते समय बरसे और हस्त उतरते समय, तो इतनी अच्छी पैदावार होगी कि राजा कितना ही दंड ले, पर गृहस्थ नहीं हारेगा।

पूरब धनुहीं पच्छिम भान। घाघ कहें बरखा नियरान ॥

सन्ध्या समय यदि पूर्व में इन्द्रधनुष निकले, तो घाघ कहते हैं कि वर्षा निकट है।

बायू में जब वायु समाय। कहें घाघ जल कहाँ समाय ॥

यदि एक ही समय आमने-सामने की दो हवा चले, तो घाघ कहते हैं कि पानी कहाँ समायगा? अर्थात् बड़ी वृष्टि होगी।

सावन मास बहे पुरवैया। बरधा बेंचि लिहऽ धेनुगैया ॥

सावन में यदि पुर्वा हवा बहे, तो बैल बेंचकर दूध देनेवाली गाय ले लेना; क्योंकि वर्षा नहीं होगी, अकाल पड़ेगा और बैल खरीदने में लगाये गये रुपये बेकार जायेंगे।

जेठ में जरै माघ में ठरे। तब जीभी पर रोड़ा परे ॥

जेठ की धूप में जलने से और माघ की सरदी में ठिठुरने से ईख की खेती होती है और तब किसान को जीभ पर गुड़ का रोड़ा पड़ता है।

धान गिरे सुभागे का गेहूँ गिरे अभागे का ॥

खेत में धान का पौधा भाग्यवान का गिरता है और गेहूँ का पौधा अभागे का गिरता है।

मंगलवारी होय दिवारी। हँसे किसान रोवे बैपारी ॥

यदि दिवाली मंगल को पड़े तो किसान हँसेगा और व्यापारी रोयेगा।

बैल मुसरहा जो कोई ले। राजभंग पल में कर दे।
त्रिया बाल सब कुछ छुट जाय। भीख माँगि के घर-घर खाय॥

जो किसान मुसरहा बैल (जिसकी पूँछ के बीच में दूसरे रंग के बालों का गुच्छा हो, जैसे काले में सफेद, सफेद में काला अथवा डील लटका हुआ) खरीदता है, उसका जल्द ही सब ठाट-बाट नष्ट हो जाता है—स्त्री, पुत्र सब छूट जाते हैं और वह घर-घर भीख माँग कर खाता है।

बड़सिंगा जनि लीहऽ मोल। कुँए में डरब रुपिया खोल॥

चाहे रुपया खोलकर कुँए में डाल देना; पर बड़े लम्बे सींग वाला बैल न खरीदना।

करिया काछी धौंरा बान, इन्हें छाँड़ि जनि बेसहिह आन॥

काली कच्छ (पूँछ की जड़ के नीचे का भाग) और सफेद रंगवाले बैल को छोड़कर दूसरा मत खरीदना।

कार कछौटा सुनरे बान, इन्हें छाँड़ि न बेसहिह आन॥

काली कच्छ और सुन्दर रूप-रंगवाले बैल को छोड़कर दूसरा न खरीदना।

जोते क पुरबी लादे क दमोय। हेंगा क काम दे जे देवहा होय॥

पूर्वी नस्ल का बैल जुताई के लिए, दमोय नस्ल का बैल लादने के लिए और देवहा नस्ल का बैल हेंगा के लिए अच्छा होता है।

सींग मुड़े माथा उठा, मुँह का होवे गोल।
रोम नरम चंचल करन, तेज बैल अनमोल॥

जिस बैल के सींग मुड़े (छोटे और एक दूसरे की ओर) हों, माथा उठा हुआ हो, मुँह गोल हो, रोआँ मुलायम हो और कान चंचल हों, वह बैल चलने में तेज और अनमोल होगा।

मुँह के मोट माथ के महुअर। इन्हें देखि जनि भूलि के रहिह॥
धरती नहीं हराई जोते। बैठ मेंड़ पर पागुर करे॥

जो बैल मुँह का मोटा होता है, और माथा जिसका पीला होता है, उसे देखकर सावधान हो जाना। वह एक हराई भी खेत नहीं जोतता है, मेंड़ पर बैठा हुआ पागुर करता रहता है।

अमहा जबहा जोतहु जाय। भीख माँगि के जाहु बिलाय॥

अमहा और जबहा नस्लवाले बैलों को जोतोगे, तो भीख माँगनी पड़ेगी और अन्त में तबाह हो जाओगे।

हिरन मुतान औ पतली पूँछ। बैल बेसाहो कंत बेपूछ॥

जो हिरन की तरह मूतता हो और जिसकी पूँछ पतली हो, वैसे बैल को बिना पूछे ले लेना।

उपर्युक्त रचनाओं के अधिकांश पद्य 'घाघ और भड्डरी' नामक पुस्तक में भिन्न पाठों के साथ उद्धृत हैं। मेरे संग्रह में शाहाबाद, छपरा तथा मोतिहारी के जिलों से जिस पाठ के छन्द मिले थे, कुछ संशोधन के साथ, उन्हीं पाठों के साथ वे ऊपर दिये गये हैं। श्री ग्रिअर्सन

साहब ने अपनी 'पीजेन्ट लाइफ आफ बिहार' नामक पुस्तक में भी घाघ, भड्डरी और डाक की अनेक कहावतों और रचनाओं को उद्धृत किया है। निम्नलिखित छन्द वहाँ से यहाँ उद्धृत किये गये हैं। जिन छन्दों में नाम नहीं हैं, उनको भी मैंने घाघ के साथ इसलिए रखा है कि मुझे उनकी शैली और भाषा में घाघ की रचना से साम्यता मालूम हुई। सम्भव है, वे डाक या किसी दूसरे की ही रचना हों।

बैल बेसाहे चललह कन्त,
बैल बेसहिहऽ दू दू दन्त।
जब देखिहऽ रूपा औ धौर,
टका चार दीहऽ उपरौर॥
ब देखिहऽ तू मैना,
यही पार से करिहऽ बैना॥
जब देखिहऽ बैरिया गोल,
ऊठ बैठ के करीहऽ मोल॥
जब देखिह करिअवा कन्त,
कैला गोला देखिह कन्त॥

स्त्री अपने स्वामी से कहती है। हे कन्त! तुम बैल खरीदने तो चले; पर बैल दो दाँत का ही खरीदना। जब रूपा-धौर यानी चाँदी की तरह सफेद रंग का बैल देखना तो चार रुपया अधिक भी देकर खरीद लेना। जब तुम मैना बैल देखना यानी जिसके दोनों सींग हिलते हों तब तुम बिना पूछ-ताछ किये ही नदी के इसी पार से बेआना दे देना। जब तुम्हें बैरिया गोल यानी बैर के रंग का लाल बैल मिले, तब उसका मोल उठ-बैठ कर करना अर्थात् किसी तरह उसे खरीदना। हे कन्त, जब तुम काले रंग का बैल देखना, तब उसकी तुलना में कइल[1] रंग का और साधारण लाल रंग का बैल मत देखना। कइल और साधारण लाल रंग का बैल अच्छा नहीं होता। भोजपुरी की एक कहावत में कहा भी है—'कइल के दाम गइल।' अर्थात् कइल बैल का दाम गया ही होता है।

सरग पताली भौंआ टेर।
आपन खाय परोसिया हेर॥

जिस बैल का सींग सरग-पताली हो, यानी एक ऊपर की ओर गया हो और एक नीचे की ओर हो और भौंहें उसकी टेढ़ी हों तो वह बैल अपने स्वामी को तो खाही जाता है, पड़ोसी के लिए भी घातक सिद्ध होता है।

वर्षा-सम्बन्धी उक्तियाँ 'पीजेन्ट लाइफ आफ बिहार से'—

मघा लगावे घगघा, सिवाती लावसु टाटी।
कह ताड़ी हाथी रानी, हमहूँ आवत बाटीं॥

जब मघा नक्षत्र में मेह घहरे और स्वाती में बरसे, तब हस्त नक्षत्र में भी पानी बरसेगा।

१. जिसकी आँख के चमड़े नोकड़ा घोड़े की तरह रोम रहित और सफेद हों। यह जाति बहुत सुकुमार होती है।

सावन सुकला सत्तमी, छिपके ऊगहिं भान।
तौं लगि मेघा बरसिहें जौं लगि देव उठान॥

श्रावण शुक्ल सप्तमी को यदि सूर्योदय बादल से छिप कर हो, तो वर्षा तबतक होगी जबतक कार्तिक का देवठन (देवोत्थान) व्रत नहीं हो जाता—यानी कार्तिक शुक्ल पक्ष की एकादशी तक वर्षा होती रहेगी।

सावन सुक्ला सत्तमी उगि के लूकहिं सूर।
हाँकऽ पियवा हर-बरद, बरखा गैल बड़ि दूर॥

श्रावण शुक्ला सप्तमी को यदि सूर्य्य उदय होकर फिर बादलों में छिप जाय तो पानी बहुत दूर हो जाता है। किसान की पत्नी कहती है कि हे प्रीतम, हर-बैल अब हाँक कर घर ले चलो, वर्षा इस साल नहीं बरसेगी।

सावन सुकला सत्तमी उदय जो देखे भान।
तुम जाओ पिया मालवा हम जैबों मुलतान॥

श्रावण शुक्ला सप्तमी को यदि सूर्य्य का उदय साफ हो तो पानी की आशा नहीं है। हे प्रिय, तुम मालवा नौकरी करने जाओ और मैं मुलतान जाऊँगी।

सावन सुकला सत्तमी जो गरजे अधिरात।
तू जाओ पिया मालवा हम जैबों गुजरात॥

श्रावण शुक्ला सप्तमी को यदि आधी रात को गरजे तो पानी की आशा नहीं। हे पिया, तुम मालवा जाना और मैं गुजरात जाऊँगी। अर्थात् अकाल पड़ेगा। किन्तु भड्डरी की भी एक उक्ति इसके कुछ विपरीत-सी जान पड़ती है, यद्यपि थोड़ा फरक अवश्य है। वह यों है—

श्रावण सुकला सत्तमी रैन होइ मसियार।
कह भड्डर सुनु भड्डरी परवत उपजे सार॥

भिन्नता इसमें यह है कि रैन में हल्का बादल हो तो खूब बरसा होगी; पर घाघ कहते हैं कि आधी रात को गरजे तब पानी नहीं पड़ेगा। न मालूम क्यों, इस तिथि पर इतने सूक्ष्म भेद के साथ इतने शुभ-अशुभ फल निकाले गये हैं!

सावन क पछिया दिन दुइ चार, चुल्हि क आगे उपजे सार।

श्रावण में दो-चार दिन जो पछेया बहे तो अच्छा पानी हो और चूल्हे के सामने की धरती भी अन्न उपजावे।

सावन क पछेआ भादो भरे, भादो पुरबा पत्थल पड़े।

जो सावन में पछेआ बहे तो भादो में जल पूरा होगा और भादो में जो पुरवा बहे तो पत्थर पड़ेगा।

जौं पुरवा पुरवैया पावे, सुखले नदिया नाव चलावे।

जो पुर्वा नक्षत्र में पुरवैया वायु बहे तो सूखी नदी में भी नाव चलने लगे अर्थात् पानी खूब बरसेगा।

डाक

घाघ की तरह 'डाक' भी खेती सम्बन्धी कविता लिखने में बड़े जनप्रिय कवि थे। इनकी कविताएँ जनकण्ठ में आज भी प्राप्त होती हैं। गृहस्थ उनको खेती के लिए आदर्श वाणी मानते हैं। डाक की कविताएँ मुझे जब सर जार्ज ग्रिअर्सन द्वारा लिखित 'बिहार पिजेण्ट लाइफ'-नामक पुस्तक में मिलीं, तब मैंने इनके सम्बन्ध में छान-बीन करना शुरू किया। मुँगेर-जिले के निवासी बाबू सुखदेव सिंह (सहायक प्रचार अफसर, बाँका, भागलपुर) ने बताया कि उनके जिले में डाक की कविताएँ बहुत प्रचलित हैं और दो भागों में 'डाक-वचनावली'-नामक पुस्तक छप भी चुकी है। उन्होंने ही डाक के जन्म के सम्बन्ध में यह लोक-प्रचलित कथा बताई—

'डाक के पिता ब्राह्मण और माता अहीरिन थी। एक दिन ब्राह्मण घर से दूर जा रहा था तो उसे विचार हुआ कि इस शुभ मुहूर्त में यदि गर्भाधान हो तो महा प्रतिभावान पुत्र उत्पन्न होगा। उसे एक अहीरिन मिली। उसने अहीरिन से यह भेद सुनाकर रतिदान माँगा। अहीरिन ने स्वीकृति दी; पर ब्राह्मण ने इस शर्त पर भोग किया कि सन्तान ब्राह्मण की होगी। फलस्वरूप डाक का जन्म हुआ। जब डाक पाँच वर्ष का हुआ, तब ब्राह्मण-देव आये और अहीरिन से पूर्व-प्रतिज्ञा के अनुसार डाक को लेकर अपने घर चले। रास्ते में गेहूँ और जौ के खेत मिले। गेहूँ के कुछ बीज जौ के खेत में पड़ गये थे और जौ के कुछ बीज गेहूँ के खेत में। डाक ने ब्राह्मण से पूछा—"पिताजी, इस खेत के गेहूँ का बीज उस खेत के जौ में मिल गया है। बताइये तो, यह गेहूँ किसका होगा। गेहूँ के खेतवाले का कि जौ के खेतवाले का?'

ब्राह्मण ने कहा—'जौ के खेत में यह जन्मा है तो जौ के खेतवाले का ही होगा।' डाक ने कहा—'तब पिताजी, अपनी माता से छुड़ाकर मुझे क्यों ले जा रहे हैं? यदि बीजवाला फसल का अधिकारी नहीं है, तो आपका अधिकार मेरे ऊपर माता से अधिक कैसे माना जायगा?' ब्राह्मणदेव बालक की इस युक्ति से निरुत्तर हो गये और उन्होंने बालक से कहा कि 'तुम अपनी माता के पास ही रहो। तुम मुझसे चतुर हो। मैं तुमको पढ़ा नहीं सकता।'

ठीक यही कहानी, थोड़े परिवर्तन के साथ, भड्डरी के जन्म के सम्बन्ध में भी, पं० रामनरेश त्रिपाठी ने अपनी 'घाघ और भड्डरी'-नामक पुस्तक में, श्री वी० एन० मेहता, आइ० सी० एस० तथा पं० कपिलदेव शर्मा के 'विशाल भारत' में छपे लेख से उद्धृत की है।[1]

इन बातों से मालूम होता है कि डाक की जन्म-कहानी भड्डरी की जन्म-कहानी से मिल गई हो और उसमें कोई वास्तविक तथ्य नहीं हो। डाक के न तो जन्म-स्थान का पता है और न पिता तथा समय का। 'डाक-वचनावली'[2]-नामक पुस्तक के दोनों

१. देखिए इसी पुस्तक में भड्डरी की जीवनी। परन्तु उसमें ब्राह्मण का नाम वराह मिहिर, प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य, (जो ईसवी सदी ३०० के बाद में हुए थे), दिया गया है।

२. लेखक और प्रकाशक—कपिलेश्वर शर्मा, शुभंकरपुर, दरभंगा, सन्० १६४२ ई०।

भागों में ज्योतिष-सम्बन्धी विचार अधिक हैं। डाक का फलित ज्योतिष का ज्ञान अच्छा मालूम पड़ता है। उनकी वचनावली में, दरभंगा जिले से ही संगृहीत और प्रकाशित होने के कारण, अधिकांश रचनाएँ मैथिली की ही हैं। परन्तु 'बिहार पिजेण्ट लाइफ' में डाक की जो उक्तियाँ मुझे मिलीं, वे प्रायः सभी भोजपुरी तथा हिन्दी की थीं। उक्त 'डाक-वचनावली' में भी भोजपुरी और हिन्दी की काफी उक्तियाँ हैं।

डाक ने अपनी उक्तियों में भल्लरी नाम का सम्बोधन में प्रयोग किया है। इससे ज्ञात होता है कि 'भल्लरी' या 'भड्डरी' उनकी स्त्री का नाम था।

परन्तु 'डाक-वचनावली' में भल्लरी के स्थान पर भड्डरी पाठ है। यह भी सम्भव हो सकता है कि डाक ने मशहूर कवि को सम्बोधन करके अपनी उक्तियों में अपना अनुभव कहा हो।

तीतिर - पंख मेघा उड़े
ओ विधवा मुसकाय।
कहे डाक सुनु डाकिनी
ऊ बरसे ई जाय॥

आकाश में यदि तीतर के पंख के समान (चितकबरा) मेघ दिखाई पड़े और विधवा स्त्री मुस्कान बिखेरती दिखाई पड़े तो डाक कहते हैं कि हे डाकिनी, वैसा मेघ अवश्य बरसेगा और वैसी विधवा अवश्य पर-पुरुष के साथ चली जायगी।

सावन सुक्ला सत्तमी, बादर बिजुरी होय।
करि खेती पिया भवन में, हो निचिन्त रह सोय॥

अर्थात्—सावन मास के शुक्ल पक्ष की सप्तमी तिथि को यदि बादल और बिजली आकाश में दिखाई पड़ें तो हे प्रियतम! गृहस्थी करके, निश्चिन्त होकर सो जाओ। फसल तो होगी ही।

बाबा बुलाकी दास अथवा बुल्ला साहब

बुल्ला साहब का ही नाम बुलाकी दास था। बुल्ला साहब का जन्म-स्थान या समय ठीक-ठीक अब तक ज्ञात नहीं था। श्री भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव' ने अपनी 'संत-साहित्य'-नामक पुस्तक में उनका समय अनुमानतः विक्रम-संवत् अठारह सौ का अन्त माना है। 'माधव'जी ने लिखा है कि उनका नाम बुलाकी राम था और जाति के वे कुनबी थे तथा भुरकुण्डा (गाँजीपुर) गाँव में रहा करते थे। परन्तु 'माधवजी' के इस अनुमान के पूर्व ही 'बलिया के कवि और लेखक'[1]-नामक पुस्तक में, उनका पूरा परिचय, उक्त पुस्तक के लेखक ठाकुर प्रसिद्धनारायण सिंह ने दिया है, जो नीचे उद्धृत किया जाता है—

"आपका जन्म संवत् १७८० के लगभग सुल्तानपुर-नामक-ग्राम में हुआ था। आपके पिता बाबू जोध राय एक गरीब सेंगरवंशी राजपूत थे। आपकी स्त्री का नाम कुन्द-कुँवरि था। वे एक पढ़ी-लिखी महिला थीं और कविता भी करती थीं। कुन्दकुँवरि का

१. वि० संवत् १९८६ में गोविन्द प्रेस, बलिया, से प्रकाशित।

नाम आपके भजनों में प्रायः आया है। आप सिद्ध महात्मा थे। भीखा साहब के आप समकालीन थे। आपके विषय में बहुत-सी आश्चर्यजनक किंवदन्तियाँ प्रसिद्ध हैं। मृदंग बजाने के आप बड़े शौकीन थे।

"टेकारी (गया) के राजा के यहाँ आपका बड़ा मान था। उन्होंने तथा अन्य कई प्रतिष्ठित पुरुषों ने आपको कई सौ बीघे माफी जमीन दी थी, किन्तु आप ऐसे निर्लोभ थे कि कुल जमीन साधु-सन्तों को भेंट कर दी।

"आपका विवाह लगभग ३०-४० वर्ष की अवस्था में, आपके गुरु जुड़ावन पर्वत ने, रतनपुरा के निकट, मुस्तफाबाद में एक चौहान राजपूत के घर कराया। आप अपने गुरु की बात कभी नहीं टालते थे। यही कारण है कि इच्छा न रहते हुए भी आपको विवाह-बन्धन में बँधना पड़ा। विवाह के पश्चात् आप अपने जन्मस्थान से कुछ दूर उत्तर, अमनपुर मौजे में, कुटी बनाकर रहने लगे। यहीं आपके पाँच पुत्र उत्पन्न हुए।

अब आपकी कुटिया एक छोटे ग्राम के रूप में परिवर्तित हो गई है और 'बुलाकी दास की मठिया' के नाम से पुकारी जाती है।

आपने भोजपुरी भाषा में बहुत सुन्दर कविता की है। आपने कोई पुस्तक नहीं लिखी है। यदि आपकी रचनाओं का संग्रह प्रकाशित हो जाय तो वह भोजपुरी साहित्य में एक अनुपम पुस्तक होगा।

अनुमान से कहना पड़ता है कि आप गाजीपुर जिले के ही थे। आपकी भोजपुरी कविताएँ नीचे दी जाती हैं।

घाँटो (चैत का गीत)

(१)

छोटीमुटि ग्वालिनि सिर ले मटुकिया हो रामा, चलि भइली।
गोकुला सहर दहिया बेचन हो रामा, चलि भइली॥
एक बन गइली, दूसर बनें गइली, रामा तीसर बनें,
कान्हा मोर धरेला अँचरवा हो रामा, तीसर बनें॥
छोड़ु छोड़ु कान्हा रे हमरो अँचरवा हो रामा, पड़ि जइहें,
दही के छिटिकवा हो रामा, पड़ि जइहें॥
तोरा लेखे ग्वालिनि दही के छिटिकवा हो रामा, मोरा लेखे।
अगर चनन देव बरिसे हो रामा, मोरा लेखे॥
दास हो बुलाकी चइत घाँटो गावे हो रामा, गाइ गाई,
बिरहिन सखि समुझावे हो रामा, गाइ गाई॥१॥

मैं छोटी-सी ग्वालिन सिर पर मटुकी लेकर गोकुल ग्राम में दही बेचने के लिए गई। एक वन से दूसरे वन में गई और तब तीसरे वन में कृष्ण ने मेरा आँचल पकड़ लिया। ग्वालिन ने कहा—अरे कान्ह, मेरा आँचल छोड़ दे, नहीं तो दही के छींटे पड़ जायँगे। इसपर कृष्ण ने जवाब दिया—"हे ग्वालिन, तुम्हारे लिए ये दही के छींटे हैं, पर मेरे लिए तो मानो देवता अगर-चन्दन की वर्षा कर रहे हैं।" इस तरह बुलाकीदासजी चैत मास में घाँटो गा-गाकर विरहिणी स्त्रियों का मन बहलाते हैं।

(२)

ननदी का अंगना चननवा हो रामा, ताही चढ़ि,
कगवा बोलेला सुलच्छन हो रामा, ताही चढ़ि॥
तोहे देबों कगवा हो दूध भात खोरवा[1] हो रामा, तनीएक,
सइयाँ कुसल बतलइते हो रामा, तनीएक॥
पिया पिया मति करऽ पिया के सोहागिनि हो रामा, तोर पिया,
लोभले बारी तमोलिनि हो रामा, तोर पिया॥
कढ़ितों में अपन कटरिया से मरितों जियरवा हो रामा, मोरा आगे,
उढ़री के कइल बखनवाँ हो रामा, मोरा आगे॥
दास बुलाकी चइत घाँटो गावे हो रामा, गाइ गाई,
कुन्द कुँवरि समुझावे हो रामा, गाइ गाई॥

ननद के आँगन में चन्दन का पेड़ है। उसपर सुलक्षण (शुभ संवाद सुनानेवाला) कौआ बोल रहा है। स्त्री कहती है कि अरे काग, तुझको कटोरे में दूध-भात दूँगी, जरा मेरे स्वामी का कुशल-सन्देश बतला दे। इसपर कौए ने कहा—सोहागिन नारि, तू पिया-पिया की रट अब न लगा। तेरे पिया अल्प-वयस्का तमोलिन पर लुभा गये हैं। इसपर नायिका कहती है—काश, आज मैं अपनी कटारी अपने हृदय में भोंक लेती। उस उढ़री (रखेली) का बखान इस काग ने मेरे सामने किया। बुलाकी दास चैत मास में घाँटो गा-गाकर, कुन्द कुँवरि (अपनी पत्नी) को समझाते हैं।

महाकवि दरिया दास

महात्मा दरिया दास[2] का जन्म शाहाबाद जिलान्तर्गत ससराम सबडिवीजन के दीनार थाने के धरकंधा ग्राम में हुआ था। आपका जन्म संवत् १६६१ में और निधन संवत् १८३७ में हुआ। फलतः आपका जीवनकाल १४६ वर्ष का था। बेलवेडिअर प्रेस, इलाहाबाद से मुद्रित "दरिया-सागर" में आपका जन्म-संवत् १७३१ लिखा है। किंवदन्ती है कि आप उज्जैन (पम्मार) जाति के क्षत्रिय थे। कहते हैं कि आपके पिता मुसलमान हो गये थे। आपने दरियादासी सम्प्रदाय चलाया। आप एक सन्त-महात्मा कवि थे। आपने अग्रज्ञान, अमरसार, काल चरित्र, गणेशगोष्ठी, दरिया, सागर, निर्मल ज्ञान, प्रेममूल ब्रह्म-वेदान्त, ब्रह्म-विवेक, भक्तिहेतु, मूर्त्तिउखाड़, यज्ञसमाधि, विवेक-सागर, शब्द (बीजक) और सहस्त्रीनाम्नी-नामक २० कवितावद्ध धर्म-ग्रन्थ लिखे। आपके बहुत-से छन्द विशुद्ध भोजपुरी में हैं। ऐसी रचनाओं में भी पूर्ण दार्शनिक तत्त्व मिलते हैं। आपकी कुछ भोजपुरी रचनाएँ यहाँ दी जाती हैं—

१. खोरा—कटोरा।

२. 'सन्त कवि दरिया : एक अनुशीलन'-नामक ग्रन्थ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से प्रकाशित है। उसके लेखक डाक्टर धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री हैं। मूल्य १४)

झूमर

मोहि न भावै नैहरवा, ससुरवा जइबों हो ।
नैहर के लोगवा बड़ अरिआर ।
पिया के बचन सुनि लागेला बिकार ॥
पिया एक डोलिया दिहल भेजाय ।
पाँच पचीस तेहि लागेला कहाँर ॥
नैहरा में सुख-दुख सहलों बहूत ।
सासुर में सुनलों खसम मजगूत ॥
नैहरा में बारी भोली ससुरा दुलार ।
सत के सेनुरा अमर भतार ॥
कहे दरिया धन भाग सोहाग ।
पिया केरि सेजिया मिलल बड़ भाग ॥

मुझे नैहर (इहलोक) भाता नहीं है । मैं ससुराल (ईश्वर के लोक) जाऊँगी । इस नैहर के लोग बड़े अरिआर (हठी, अड़ियल) हैं । इनको प्रियतम (ईश्वर) का वचन नहीं सुहाता । पिया ने मेरे लिए एक डोली (देह) भेज दी है, जिसमें पाँच और पचीस कहार[1] लगे हैं । मैंने नैहर में बहुत सुख-दुःख सहन किया । सुना है कि ससुराल में मेरे खसम (स्वामी) बड़े मजबूत हैं । नैहर में तो मैं अल्प-वयस्का और भोली कही जाती हूँ; परन्तु ससुराल में ही मेरा दुलार होता है । वहीं सत्य का सिन्दूर मिलता है और अमर भर्ता से भेंट होती है । दरिया कहते हैं कि ऐसे सोहाग का भाग्य धन्य है । पिया की शय्या का मिलना (ईश्वर का सान्निध्य) बड़े भाग्य की बात है ।

घाँटो

कुबुधि कलवारिनि[2] बसेले नगरिया हो रे ।
उन्हक मोरे मनुआँ मतावल हो रे ॥
भूलि गैले पिया पंथवा द्रस्टिया हो रे ।
अवघट[3] परलीं भुलाए हो रे ॥
भवजल नदिया भेआवन हो रे ।
कवने के विधि उतरब पार हो रे ॥
दरिया साहब गुन गावल हो रे ।
सतगुर सब्द सजीवन पावल हो रे ॥

इस शरीररूपी नगर में दुष्टबुद्धि माया बसी हुई है । उसने वासनाओं की शराब पिलाकर मेरे मन को मतवाला बना दिया है । इस कारण वह पिया (परमात्मा) के पाने

---

१. पाँच तत्त्व और उनमें से प्रत्येक की पाँच-पाँच प्रकृतियाँ अथवा प्रवृत्तियाँ । विशेष के लिए देखिए—'सन्त कवि दरिया : एक अनुशीलन', पृ० १५६

२. शराब बेचनेवाली स्त्री । ३. अवघट—बीहड़ रास्ता, कुमार्ग ।

का रास्ता भूल गया और दृष्टि भी मदमूर्च्छित हो गई। विषयों के बीहड़ रास्ते में उलझ गया। संसार-रूपी भयावनी नदी को यह जीवात्मा कैसे पार करेगी। दरिया साहब गुरु का गुणगान करते हैं कि जिससे उपदेश-रूपी संजीवनी प्राप्त हो गई है।

धरनी दास

सारन जिले में सरयू तट पर माँझी नाम का एक प्राचीन ग्राम है। यहाँ कभी क्षत्रिय राजाओं की राजधानी थी। पुराने किले का टीला अबतक वर्तमान है। उक्त राज्य के दीवान-घराने में, शाहजहाँ के निधन के समय में, धरनी दास नाम के एक महान सन्त कवि हो गये हैं। ये अपने पिता की मृत्यु के बाद उक्त राजवंश के दीवान हुए। पर, इन्होंने दिल्ली के तख्त पर बादशाह औरंगजेब के आसीन होते ही फकीरी ले ली। फकीरी लेते समय इन्होंने यह दोहा कहा था —

> "साहजहाँ छोड़ी दुनिआई, पसरी औरंगजेब दुहाई।
> सोच-विचार आतमा जागी, धरनी धरेउ भेष बैरागी॥"

इनके पिता का नाम 'परसुराम' तथा माता का नाम 'बिरमा' था। इनका बचपन का नाम 'गैबी' था। इनके गुरु का नाम विनोदानन्दजी था। इनका देहावसान विक्रम-संवत् १७३१ में, श्रावण-कृष्ण-नवमी को हुआ था।

धरनीदासजी ने भोजपुरी और हिन्दी—दोनों भाषाओं में 'प्रेम-प्रकाश' और 'शब्द-प्रकाश'-नामक दो काव्य-ग्रंथ लिखे थे, जो आज भी प्राप्य हैं। 'शब्द-प्रकाश' तो सन् १८८७ ई० में बाबू रामदेवनारायण सिंह, चैनपुर, (सारन) द्वारा नासिक प्रेस (छपरा) से प्रकाशित हो चुका है; पर 'प्रेम-प्रकाश' अभी तक अप्रकाशित है जो माँझी के धरनीदासजी के मठ में प्राप्य है। 'शब्द-प्रकाश' की छपी कापी के अलावा एक और पाण्डु-लिपि माँझी-निवासी बाबू राजवल्लभ सहाय द्वारा डॉक्टर उदयनारायण-तिवारी को मिली थी, जिसकी प्रतिलिपि उन्होंने इन पंक्तियों के लेखक को दी। उसे देखने से पता चला कि जिस पाण्डुलिपि से श्री रामदेवनारायण सिंह ने 'शब्द-प्रकाश' छपवाया था, वह चुन्नीदास द्वारा लिखी गई थी। उन्होंने माँझी के महंथ रामदासजी के लिए लिखी थी। वह संवत् १९२६ में वैशाली पूर्णिमा (सोमवार) को समाप्त हुई थी। उक्त छपी प्रति में अन्त के कुछ छन्द नहीं हैं। परन्तु जिस पाण्डु-लिपि की प्रतिलिपि मुझे डा० उदयनारायण तिवारी ने दी थी, वह संवत् १८९९ में फाल्गुन-बदी-पंचमी (सनीचर) को तैयार हुई थी। इससे यह सिद्ध है कि यह पाण्डु-लिपि दूसरी है जो छपी पुस्तक की पाण्डु-लिपि के लिखे जाने की तिथि के २७ वर्ष पहले की है।

'शब्द-प्रकाश' की प्रधान भाषा हिन्दी है। उसके बाद प्रधानता भोजपुरी को मिली है। किन्तु 'शब्द-प्रकाश' में बँगला, पंजाबी, मैथिली, मगही, मोरंगी, उर्दू आदि भाषाओं का भी प्रयोग किया गया है। छन्दों का नामकरण भी इन्होंने उन्हीं भाषाओं के नाम पर किया है, जैसे राग मैथिली, राग बँगला, राग पंजाबी इत्यादि।

हमने भोजपुरी के गीत या छन्द 'शब्द-प्रकाश' की पाण्डु-लिपि और छपी प्रति,— दोनों से यहाँ उद्धृत किये हैं। हाँ, कहीं-कहीं अशुद्ध पाठ को शुद्ध कर दिया गया है। अतः पाठकों को ३०० वर्ष पूर्व की भोजपुरी का भी नमूना इनमें देखने को मिलेगा।

धरनी दास की भोजपुरी कविता में छन्दों की प्रौढ़ता, सरसता और स्वाभाविकता देखते ही बनती है। उसमें भोजपुरी भाषा की व्यापकता और शब्द-सम्पत्ति का दर्शनीय उदाहरण मिलता है।

झूमटा

सुभ दीना आजु सखि सुभ दीना ॥
बहुत दीनन्ह पीअ बसल बिदेस।
आजु सुनल निजु आवन संदेस।
चित चितसरिआ मैं लीहल लेखाइ।
हिरदए कँवल धइलि दीअरा ले जाइ।
प्रेम पलँग तहाँ धइलों बिछाइ।
नख - सिख सहज सिंगार बनाइ।
मन सेवक हि दीहुँ आगु चलाइ।
नैन धइल दुइ दुअरा बैसाई।
धरनी सो धनि पलु पलु अकुलाइ।
बिनु पिआ जीवन अकारथ जाइ ॥

हे सखि! आज मेरा शुभ दिन है। बहुत दिनों से प्रियतम विदेश में बस रहे हैं। आज मैंने उनके आगमन का सन्देश सुना है। अपनी चित्तरूपी चित्रशाला में मैंने उनकी छबि अंकित की और अपने हृदय-कमलरूपी दीपक को जलाकर उस चित्रशाला में प्रियतम की छबि के सामने रखा। फिर वहाँ प्रेमरूपी पलँग बिछा लिया और नख-शिख सहज सिंगार करके मनरूपी सेवक को मैंने प्रियतम की अगवानी (स्वागत) में आगे भेज दिया। और, अपने दोनों नेत्रों को उनकी प्रतीक्षा में, उनके आगमन को देखने के लिए, द्वार पर बैठा दिया अर्थात् दरवाजे को निहारने लगी। धरनी दास कहते हैं कि इन तैयारियों को करके प्रिय-मिलन की आशा में बैठी विरहिणी प्रियतम की प्रतीक्षा में पल-पल अकुला रही है और सोच रही है कि उनके बिना यह जीवन अकारथ (बेकार) बीता चला जा रहा है।

बिसराम

ताहि पर ठाढ़ देखल एक महरा अबरनि बरनि न जाय।
मन अनुमान कहत जन धरनी धन जे सुनि पतिआय ॥

मैंने उसी चक्र पर खड़ा एक महरा (ईश्वर) को देखा जो अवर्णनीय है। मन में अनुमान करके जनसेवक धरनी दास कहते हैं कि वे धन्य हैं, जो सुनकर ही इसपर प्रतीति करते हैं।

महराई

पाव दुवौ पउआ परम झलकार। दुरहुर स्याम तन लाम लहकार ॥
झँमहरि केसिआ पतरि करिहाँव। पीअरि पिछौरी कटि करतेन आव ॥
चंदन खोरिया भरेला सब अंग। धारा अनगनित बहेला जनु गंग ॥
माथे मनि मुकुट लकुट सुठि लाल। झीनवा तीलक सोभे तुलसी के माल ॥
नीक नाक पतरी ललौहिं बड़ि आँखि। मुकुट मझोर एक मोरवा के पाँखि ॥
कान दुनौ कुंडल लटक लट झूल। दारही मोछ नूतन जैसन मखतूल ॥
परफुलित बदन मधुर मुसुकाहिं। ताहि छबि उपर 'धरनी' बलि जाहिं ॥
मन कैला दंडवत भुइआँ धरि सीस। माथे हाथे धरि प्रभु देलन्हि असीस ॥

उन आराध्य देवता के दोनों चरण सुन्दर 'पावे' की तरह अत्यन्त चमकीले दीख रहे हैं। दुरहुर (चमकीले) श्यामल शरीर, लम्बे और लहकार (लहकती हुई प्रज्वलित अग्नि-शिखा की तरह देदीप्यमान) केश हैं और करिहाँव (कमर) पतली है, जिसमें पीताम्बर की शोभा अवर्णनीय है। चन्दन की खोरि (छाप) से सब अंग भरे हैं और उस चन्दन के लेप की धारा अंगों में ऐसी सोभ रही है जैसे गंगा की धारा बह रही हो। माथे पर मणियों का बना हुआ मुकुट है और हाथ में सुन्दर लाल लकुटी है। माथे पर पतला तिलक है और गले में तुलसी की माला है। नाक सुन्दर तथा पतली है और आँखें बड़ी एवं ललौहो (हल्की गुलाबी) रंग की हैं। उस मणि-मुकुट के बीच मोर का पंख लगा है। दोनों कानों से कुंडल लटके हुए हैं और उनके ऊपर लट झूल रही है। दाढ़ी और मूँछें अभी-अभी निकल रही हैं, और रेशम के लच्छे की तरह शोभित हो रही हैं। मुखारविन्द प्रफुल्लित है तथा मुस्कान अत्यन्त मधुर है। धरनी दास इस छवि पर न्योछावर हो जाते हैं और उनके मन ने पृथ्वी पर शीश रखकर दंडवत् किया और प्रभु ने उनके माथे पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया।

चेतावनी

जीव समुझि परबोधहु हो, भैया जनि जानहु खेलवाड़।
जा दिन लेखवा परिहै हो, भैया करबहि कवन उपाय।
मंत्र सिखाइ कवन सिधि हो, भैया जंत्र जुगुति नहिं काम।
नहिं षट करम करम कटि हो, भैया अवर करम लपटाइ।
ऐहि बिसवास बिगरब ना हो, भैया दैव दीहल दहिनाय।
'धरनी' जन गुन गावल हो, भैया भजु लेहु आतम राम।

हे भाई, सभी प्राणियों को जीव समझकर उनके साथ अच्छा बर्ताव करो, इसे खेलवाड़ मत समझो। जिस दिन भगवान तुम्हारे कर्मों का लेखा करेंगे उस दिन, हे भाई, तुम (अपने बचने का) कौन उपाय करोगे। मन्त्र सिखाने से कौन-सी सिद्धि होगी तथा यन्त्र और युक्ति किस काम आयेगी, यदि तुम जीव को जीव समझकर व्यवहार नहीं करोगे। हे भाई, षट्कर्म करने से कर्म-फल नहीं कटेगा, बल्कि तुम कर्म में और लिपटते जाओगे। हे मित्र, तुम इस विश्वास को धारण करके बिगड़ोगे नहीं; बल्कि जो ऐसा

विश्वास तुम्हारा हो जाय तो समझो कि ईश्वर तुम्हारे दाहिने (अनुकूल) हो गये। भक्त धरनीदास गुण गाकर कहते हैं कि हे भाई, तुम आत्मा (परमात्मा) राम को भज लो।

[इस पद में कवि ने भोजपुरी के 'दहिन' शब्द को क्रिया के रूप में व्यवहृत करके भोजपुरी भाषा का लचीलापन दिखलाया है।]

डगरि चलति धनि मधुरि नगरिया, बीचे साँवर मतवलवा हे ना॥
अटपटि चलनि लटपटी बोलनि, धाइ लगवले अकँवरिया हे ना॥
साथ सखिअ सब मुखहूँ ना बोलें, कौतुक देखि भुलानी हे ना॥
मद केरि बासक्ष भइल मोरि ननदिया, जाइ चढ़ल ब्रह्मंडे हे ना॥
तबहिं से हो धनि भइली मतवलिया, बिनु मरद रहलो ना जाइ हे ना॥
प्रेम मगन तन गावे जन धरनी, करिलेहु पंडित बिचार हे ना॥

सुन्दरी स्त्री कहती है कि मैं माया मधुर नगर (संसार) के मार्ग पर चली जा रही थी कि बीच में ही साँवला (जीव) मतवाला मिल गया। उसकी चाल अटपटी थी और बोली लटपट। (उसने दौड़कर) मुझे अँकवार में भर लिया। मेरे साथ की सब सखियाँ (वासनाएँ) मुख से कुछ नहीं बोलीं। प्रीतम के इस कौतुक को देखकर भूल-सी गई। मेरी नाक में मद (प्रेम) की गंध लगी और वह सीधे ब्रह्माण्ड (मस्तक) तक चढ़ गई। तब से मैं भी मतवाली हो गई। अब मुझे बिना मर्द (जीवात्मा) के रहा ही नहीं जाता। धरनीदास प्रेम में मगन होकर गाते हैं और कहते हैं कि हे पण्डित-जन! इस रहस्य पर विचार कर लेना।

हाथ गोड़ पेट पिठि कान आँखि नाक नीक
मॉथ मुँह दाँत जीभि ओठ बाटे ऐसना।
जीवन्हि सताईला कुभच्छ भच्छ खाईला,
कुलीनता जनाईला कुसंग संग बैसना॥
चलि ला कुचाल चाल ऊपर फिरेला काल,
साधु के सुमंत्र बिसराईला से कैसना।
धरनी कहे भैया ऐसना में चेतीं ना तऽ,
जानि लेबि ता दिना चीरारी गोड़ पैसना॥

(मनुष्य सर्वांग सुन्दर और कुलीन होकर भी संसार में कुमार्गी होकर अपना अमूल्य जीवन नष्ट कर देता है और चितारोहण के समय तक भी नहीं चेतता। इसी पर कवि की यह उक्ति है।)

मेरे हाथ, पाँव, पेट, पीठ, कान, आँख, नाक, माथ, मुह, दाँत, जीभ और ओठ सुन्दर हैं, परन्तु मैं जीवों को सताता हूँ। भक्ष्याभक्ष्य भोजन करता हूँ और कुसंगियों के साथ बैठता हूँ। तिसपर भी अपनी कुलीनता दर्शाता हूँ। मैं बुरी चाल चलता हूँ, परन्तु सर पर मँडराते हुए काल का ध्यान नहीं कर पाता हूँ। तब भी साधुओं के सुन्दर मन्त्रों (उपदेशों) को भुला देता हूँ। धरनीदास ऐसे मनुष्यों से कहते हैं कि हे भाई, ऐसी दशा में भी यदि नहीं चेतोगे तो चीरारी (चिता) में पैर रखने पर पता चलेगा।

शैयदअली मुहम्मद 'शाद'

'शाद' साहब के पौत्र श्री नकी अहमद सिवान में जुडिशियल मजिस्ट्रेट हैं। इनके यहाँ 'शाद' साहब की लिखी हुई 'फिकरेबलीग़' नामक पुस्तक की पाण्डुलिपि वर्तमान है। इसमें 'शाद' की उन रचनाओं जो १८६५ से १८७० तक लिखी गईं, का समावेश है। इस पुस्तक में शेरों और गीतों की आलोचनाएँ तथा टिप्पणियाँ भी हैं। इस पुस्तक के पृष्ठ ११२ या ११४ में भोजपुरी के निम्नलिखित गीत लिखे गये हैं, जो 'शाद' की रचनाएँ हैं। हर गीत के नीचे अर्थ लिखते हुए टिप्पणी भी है। इससे स्पष्ट है कि 'शाद' ने भोजपुरी में लोकगीतों की अच्छी रचना की है। ये गीत भोजपुरी प्रदेश में प्रचलित भी हैं।

'शाद' उर्दू के मशहूर कवि थे। आपकी ख्याति अच्छी है। हैदराबाद के सर निजाम जंग ने "खयालात शाद" नामक पुस्तक का अँगरेजी में अनुवाद किया है। हिस्ट्री आफ उर्दू-लिटरेचर पुस्तक में भी आपकी जिल्द है।

'शाद' साहब का पूरा नाम श्री सैयद अली मुहम्मद था। आप बिहार के एक प्रमुख उर्दू-कवि थे। आपका जन्म सन् १८४६ में पटना में हुआ था। आप जनवरी, १९२७ ई० में दिवंगत हुए। आपको अँगरेजी सरकार से 'खाँ बहादुर' की पदवी भी मिली थी। आपके पूर्वज बहुत ऊँचे खानदान के थे जिनका सम्बन्ध बादशाहों से भी था। आपके कई पूर्वज मुगलकालीन सल्तनत में ऊँचे-ऊँचे पदों पर थे। आपके परिवारवालों के हाथ में बहुत दिनों तक इलाहाबाद मुल्तान, अजीमाबाद, पूर्णिया, हुसेनाबाद आदि स्थानों की सूबेदारी थी। आपको अँगरेजी सरकार से पेंशन भी मिलती थी जो गदर के साथ सहानुभूति रखने के कारण बन्द हो गई।

आपने बचपन में हिन्दी और संस्कृत का अध्ययन एक ब्राह्मण पंडित की देखरेख में किया था। आपकी शिक्षा-दीक्षा फारसी और अरबी में समयानुकूल हुई थी। बहुभाषा-विज्ञ होने के नाते आप अनेक भाषाओं में कविता किया करते थे। आपकी शैली बड़ी ही चुस्त, आसान और मुहावरों से भरी रहती थी। आपने भोजपुरी भाषा में भी कुछ गीत लिखे हैं।

चैत

काहे अइसन हरजाई हो रामा।
तोरे जुलुमी नयना तरसाई हो रामा॥
सास ननद मोका ताना देत हईं
छोटा देवरा हँसि के बोलाई हो रामा॥
मोरा सैयाँ मोरो बात न पूछै
तड़पि-तड़पि सारी रैन गँवाई हो रामा॥
नाजुक चुनरी रंग में बोरो
बाला जोबनवा कइसे छुपाई हो रामा॥

'शाद' पिया को ढूँढ़न निकली
गलिअन-गलिअन खाक उड़ाई हो रामा ॥

—'फिकरे बलीग', पृष्ठ—११२।

सावन

असों[1] के सवना[2] सइयाँ घरे रहु, घरे रहु ननदी के भाय ॥
साँप छोड़ेला साँप केंचुल हो, गंगा छोड़ेली अरार[3] ॥
रजवा छोड़ेला गृह आपन हो, घरे रहु ननदी के भाय ॥१॥
घोड़वा के देबो मलीदवा त हथिया अवँगिया के डार ॥
रउरा के प्रभु देबो घीव खिंचड़िया, घरे रहु ननदी के भाय ॥२॥
नाहीं घोड़ा खइहें मलीदवा, हाथी न लवँगिया के डाढ़ि ॥
नाहीं हम खइबों घीव खीचड़िया, नैया बरधी[4] लदबो बिदेस ॥३॥
नैया बहि जइहें मझधरवा, बरधि चोर लेइ जाय ॥
तोहि प्रभु मरिहें घटवरवा[5], घरे रहु ननदी के भाय ॥४॥
नैया मोरी जइहें धीरहि-धीरे, बरधी न चोर लेइ जइहें रे ॥
तोहि धनि बेचबों मुगलवा हाथे, करबो में दोसर बिआही ॥५॥

इस गीत के केवल दो पद 'फकरे-बलिग' के ११३ पृष्ठ में हैं। किन्तु यह पूरा गीत आजतक भोजपुरी लोगों के कण्ठ में बसा हुआ है।

रामचरित्र तिवारी

आप डुमराँव राज (शाहाबाद) के दरबारी कवि थे। आप भोजपुरी के अतिरिक्त हिन्दी में भी रचनाएँ करते थे। आपके निवास-स्थान का पता नहीं प्राप्त हो सका। किन्तु आपकी भोजपुरी रचनाओं की भाषा से ज्ञात होता है कि आप शाहाबाद जिले के निवासी थे। कलकत्ता से श्री यशोदानन्दन अखौरी के सम्पादकत्व में निकलनेवाले हिन्दी 'देवनागर' नामक मासिक पत्र के विक्रम-संवत् १९६४ के चौथे अंक के पृष्ठ १५८ में आपकी पाँच भोजपुरी रचनाएँ छपी हैं। उसी में आपके डुमराँव राज-दरबार के कवि होने की बात भी लिखी हुई है। उसी पत्र में मुद्रित परिचय से आपका समय १८८४ ई० है। संवत् १९६४ विक्रमी संवत् के पूर्व आपका स्वर्गवास हो चुका था; क्योंकि 'देवनागर'-पत्र में आपके नाम के पूर्व स्वर्गीय लिखा हुआ है।

(१)

देखि देखि आजु कालि हाकिम के हालि-चालि।
हमनीका[6] खुस होके मन में मनाइले ॥

---

१. इस साल। २. सावन मास। ३. तट। ४. लदुआ बैल। ५. घाट का मालिक।
६. हमलोग।

राम करे ऐसने निआई[1] बदसाह रहे।
जेकरा[2] भरोसे समै सुख से बिताइले॥
जेकरा से बड़-बड़ बादसाह हारि गइले।
हमरों मुलुक रहि रैयति कहाइले॥
बनि महारानी बिकटोरिया के राज बाटे।
बुझि-बुझि बुधि-बल बलि-बलि जाइले॥

(२)

जेकरा मुलुक में कानून का निसाफ[3] से।
सवाल दाले हमनी का हक-पद पाइले॥
जेकरा पर्सोद से सवारी रेलगाड़ी चढ़ि।
छोटे-छोटे दामे बड़ी दूर देखि आइले॥
जेकरा पर्तापे अब तार में खबर भेजि।
चटले[4] कहाँ-कहाँ के हालि ले[5] जानि जाइले॥
सेकरा के राम करें रोज-रोज राज बाटे।
बुझि-बुझि बुधिबल बलि-बलि जाइले॥

(३)

जब सरकार सब उपकार करते बा[6]।
तब अब हमनी के कवन हरज[7] बा॥
हमनी का साहेब से उतरिन[8] ना होइबि।
हमनी का माँथे सरकार के करज[9] बा॥
आगें[10] अब अवरू[11] कहाँ ले कहीं मालिक से।
अइसे त साहेबे से सगर[12] गरज[13] बा॥
उरदू बदलि 'देव नागरी' अछर चले।
इहे एगो[14] साहेब से ए घरी[15] अरज[16] बा॥

शंकर दास

आपका जन्म स्थान ग्राम इसुआर (परगाना—गोआ; जिला-सारन) था। आपके पिता का नाम शोभा चौबे था। अन्त समय में आप वैरागी हो गये थे।

१. न्यायी। २. जिसके। ३. इन्साफ। ४. तुरत। ५. तक। ६. करता ही है। ७. हानि। ८. उऋण। ९. कर्ज। १०. आगे। ११. और। १२. सब। १३. मतलब, स्वार्थ। १४. एक ही। १५. इस समय। १६. विनती।

जब आप जवान थे, तब की एक उक्ति सुनिए—

(1)

हमरो से छोट-छोट के बिआह होत
हमरो जात जवनियाँ [1] ॥1॥
प्रभु जी हमरा के देतीं रउरा [2] नव तन [3] कनिआ [4] ।
हटिआ[5] जइतीं तज [6] ले अइतीं, सारी राति लेतीं सुँघनिया[7] —(अपूर्ण)

(2)

राम राम भजन कर, जनि [8] कर ठट्ठा ॥
सुमती सलाह रहो, बेकती [9] सब एक मत
दिने दिने धन बढ़े, रहे त एकाट्ठा ॥1॥
जाही घरे सुमती सलाह ना, रात - दिन
झगरा परल रही रही सऽ रहट्ठा [10] ॥2॥
प्रेम के दही सही[11] जेंव[12] मन परसन्न रही
मन में कचोट [13] रही तब परोस मट्ठा ॥3॥

हे गृहस्थ, तुम राम-राम का भजन करो। ठट्ठा (हँसी-खेल) न किया करो। तुम्हारे घर में सुमति और सलाह (एकता) सदा बनी रहे। सब परिवार एक मत होकर रहें और परिवार के सब लोग इकट्ठा रहें, तब तुम्हारा दिन-दिन धन बढ़ेगा। जिसके घर में मेल-जोल नहीं है, रात-दिन झगड़ा-झमेला है, उसके घर में सम्पत्ति के स्थान पर अरहर का डंठल भर ही रह जायगा। प्रेम का जमा हुआ दही खूब खाओ, तब मन प्रसन्न रहेगा। यदि मन में कचोट रहेगी, तो तुम्हारे आगे दही के स्थान पर मट्ठा ही परोसा जायगा।

(3)

राम राम राम राम राम सरन अइलीं
लोग का बुझे से गँवार हम भइलीं ॥
ईहाँ तजे लोक त परलोक भला हाय
सीतापति राम चन्द्र के पीछा अब धइलीं ॥
ठाकुर जी के आरती नइवेद भलीभाँति से
चनाइमरित[14] बालभोग[15] हरिप्रसाद[16] खइलीं ॥ राम राम ॥1॥

मैं तो राम की शरण में आया हूँ। किन्तु दुनिया के लोगों की समझ में गँवार बन गया हूँ। इस लोक के त्यागने से परलोक में भला होता है। इसलिए सीता-पति

---

1. जवानी। 2. आप। 3. नवयुवती। 4. दुलहिन। 5. बाजार। 6. स्त्रियों के सिर के बाल में लगाने का एक सुगन्धित मसाला। 7. सुगन्ध का स्वाद। 8. नहीं। 9. व्यक्ति (परिवार के सदस्य)। 10. अरहर का सूखा डंठल। 11. भरपूर। 12. जेवनार (भोजन करो)। 13. कसक। 14. चरणामृत। 15. प्रातःकाल का प्रसाद। 16. दो पहर का भोजन।

श्री रामचन्द्र का पीढ़ा मैंने पकड़ा। ठाकुरजी की आरती तथा नैवेद्य भली-भाँति (श्रद्धा से) ग्रहण करके चरणामृत, बालभोग, हरिप्रसाद पाया।

बाबा रामेश्वर दास

बाबा रामेश्वर दास के पिता का नाम चिन्तामणि ओझा था।

आप (सरयूपारीण) काश्यप गोत्रीय ब्राह्मण थे। आपका जन्म शाहाबाद जिलान्तर्गत 'कवल पट्टी' नामक ग्राम में (थाना-बड़हरा) संवत् १७७५ वि० में हुआ था तथा मृत्यु १८८५ के ज्येष्ठ-कृष्ण अष्टमी को हुई।

आपके पिता जी का देहावसान आपके बाल्यकाल में हुआ। इससे अपनी माता के साथ आप अपने ननिहाल 'बम्हन गाँवा' नामक ग्राम में रहने लगे जो बड़हरा थाने में ही आरा से ६ मील की दूरी पर है। आप अपने धनाढ्य मामा के पास अपनी युवावस्था तक रहे और वहीं आपके विवाहादि संस्कार भी हुए। आप बड़े लम्बे-तगड़े और पहलवान थे। सत्यवादी और भगवद्-भक्त थे। अपने मामा की छोटी-मोटी सेना के आप सेनापति भी थे। आप अक्सर अपने मामा के मकई के खेतों की रखवाली में भी जाया करते थे।

कहा जाता है कि आपके मामा के यहाँ एक दिन सत्यनारायण की कथा थी अथवा ब्राह्मण-भोजन के लिए बाहर से निमन्त्रण आया हुआ था। तब भी आपको मकई के खेत में रखवाली के लिए बिना खाये-पीये भेजा गया। किसी कारण से आपके पास खेत में उस रात भोजन भी नहीं पहुँचाया जा सका। अतः जब बहुत विलम्ब हुआ तब आपके साथ के 'दुबरिया' नामक नौकर ने कहा—"जान पड़ता है कि आज हमलोगों को भूखे ही रहना पड़ेगा। भोजन अब तक नहीं आया।" इसपर आपने कहा:—

हमरा तोरा रामजी के आस रे दुबरिया।
तब काहे परब जा[1], उपास रे दुबरिया॥

इस पद्य से आपका ईश्वर पर अटूट विश्वास प्रकट होता है। इसके थोड़ी देर बाद ही भोजन लिये हुए एक व्यक्ति आया और आप दोनों को मकई के मचान[2] पर ही भोजन करा कर बरतन वापस ले गया। दूसरे दिन घर जाने पर जब आपने रात्रि में भोजन की बात मामा के घरवालों से कही और उन लोगों ने जब घर से भोजन न भेजने की बात बताई तब आपको आश्चर्य हुआ और विश्वास हुआ कि भगवान ने ही भेष बदल कर आपको भोजन कराया था। उसी समय आपको वैराग्य हुआ और आप घर छोड़कर यह कह कर निकल पड़े कि अब मैं किसी तरह ईश्वर को छोड़कर सांसारिक बंधनों में नहीं फँसूँगा।

आप बारह वर्षों तक वैरागी बनकर पर्यटन करते रहे। तीर्थस्थानों में भ्रमण करते-करते आपको एक महात्मा 'पूर्णानन्दजी' से भेंट हुई। वे उस समय के योगियों में सर्वश्रेष्ठ माने

१. पड़ेंगे। २. लकड़ी और बाँस का बना हुआ ऊँचा मंच।

जाते थे। योग-जिज्ञासुओं की योग्यता की पूर्ण-परीक्षा लेकर ही योग-शिक्षा प्रदान करते थे। उनका आश्रम शाहाबाद के 'कर्जा' नामक गाँव में, गंगातट पर, था। आप की अलौकिक प्रतिभा को जैसे उन्होंने देखा, वैसे ही इन्हें योगज्ञान प्राप्त करने की अनुमति दी। थोड़े ही दिनों में आपकी योग-सिद्धि हुई। उसके अनन्तर अपने ननिहाल 'बम्हनगाँवा' के निकट 'गुंडी' ग्राम के पास वन में आकर आप गुप्त रूप से तपस्या करने लगे। कई वर्षों के बाद जब आपके घरवालों को आपके वहाँ रहने की जानकारी प्राप्त हुई तब उनलोगों ने आपसे घर पर रहने की प्रार्थना की। जब आप सहमत नहीं हुए तब आपके लिए वहीं मठ बनवा दिया गया। आपकी स्त्री भी आपके साथ आकर भगवद्-भजन करने लगी और फिर सारा परिवार आकर वहीं बस गया। आपके चार पुत्र थे जिनके नाम थे—गोपाल ओझा, परशुराम ओझा, अनुराज ओझा तथा कपिल ओझा। परशुराम ओझा के वंशज आज भी 'गुंडी' के पासवाले मठ में बसे हुए हैं। आप हिन्दी में भी अच्छी कविता करते थे [१]।

आपके सम्बन्ध में अनेक चामत्कारिक घटनाओं का वर्णन किया जाता है।

एक बार आपके किसी पुत्र को ज्वर आ गया था। वह बहुत संतप्त हो गया था। उसकी माता ने आपसे कहा। आपने पुत्र का शरीर छूकर कहा—हाँ, ज्वर तो बहुत अधिक है और तत्क्षण हिन्दी में एक सवैया बना डाला। सवैया पाठ के बाद ही ज्वर उतर गया।

एक बार किसी आवश्यक कार्यवश आप गंगा-पार जा रहे थे। पश्चिमी हवा जोर-शोर से बहती थी। बहुत लोग घाट पर इकट्ठे हुए थे। घटवार तेज हवा के कारण नाव खोलने से लगातार अस्वीकार करता गया। आपका जाना जरूरी था। तत्काल आपने एक सवैया बना पश्चिमी पवन से विनय की। हवा शान्त हुई। नाव खोली गई।

एक बार आपकी प्रशस्ति सुन कर एक मंत्रतंत्र-सिद्ध विदुषी अति सुन्दरी कामिनी, संन्यासिनी वेश में आपकी परीक्षा लेने के विचार से आपके पास आई। कहा जाता है कि वह आरा नगर के प्रसिद्ध मठ के संत बालकिसुन दास की भेजी हुई थी। उसने जब बालकिसुन दास से पूछा कि किसी सिद्ध महात्मा के दर्शन मुझे हो सकते हैं तब उन्होंने कहा--"हाँ, आरा से दो कोस उत्तर की ओर रामेश्वरदास नाम के एक महात्मा हैं। शायद उनसे आपकी सन्तुष्टि हो सकती है।" वह सीधे आपके पास चली आई और नंगी हो गई। आपके निकट ही एक स्थानीय जमींदार 'काशीदास' बैठे हुए थे। उन्होंने दृष्टि बचाने के लिए अपनी रेशमी चादर संन्यासिनी के ऊपर फेंक दी, परन्तु वह उसके निकट पहुँचते ही जल गई। इसपर आपने अपना पीताम्बर फेंका। तब उसने कहा—"बाबा, कृपया न फेंकिए।" आपने कहा—"नहीं माता, मेरा पीताम्बर कदापि जलने का नहीं।" निदान पीताम्बर जला नहीं। संन्यासिनी ने आपकी सिद्धि का लोहा मान लिया।

१. देखिए—'साहित्य' (वर्ष ५, अंक २, आषाढ़, संवत् २०११) में पृष्ठ—७८; बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन द्वारा प्रकाशित।

आपके भोजपुरी छन्द का उदाहरण—

ताल झाल मृदंग खाँजड़ी गावत गीत हुलासा[1] रे
कबहूँ हंसा[2] चले अकेला कबहीं सगी प गासा रे
गेंठी[3] दाम न खरची बाँधे राम नाम के आसा रे
रामचन्द्र तोरे अजब चाकरी रामेश्वर बिस्वासा रे ॥

परमहंस शिवनारायण स्वामी

आपका जन्म-विक्रम-संवत् १७५० के लगभग हुआ था। बलिया जिले के चन्दवार नामक ग्राम आपका जन्म-स्थान था। आपके पिता का नाम बाबू बाघराय था। आप संस्कृत के अच्छे विद्वान् थे। आपने अपनेको गाजीपुर का रहनेवाला लिखा है। आपके गुरु का नाम 'दुखहरन' था।

आप 'शिवनारायणी' पन्थ के प्रवर्तक थे। आप एक समाज-सुधारक भी थे। छूत-अछूत का भेद-भाव नहीं मानते थे। विशेष कर हरिजनवर्ग के लोग आपके शिष्य थे। उन्हीं लोगों के लिए आपने भोजपुरी में रचनाएँ कीं। उनमें गँवारू बोली में अनमोल उपदेश भरे पड़े हैं। आज भी आपके हजारों अनुयायी आपके ग्रन्थों की बड़ी प्रतिष्ठा करते हैं।

आपके बनाये १३ ग्रन्थ हैं—(१) लाल ग्रन्थ, (२) संत बिलास, (३) भजन ग्रन्थ, (४) संत सुन्दर, (५) गुरु अन्यास, (६) संतचारी, (७) शान-दीपक, (८) संतोपदेश, (९) शब्दावली, (१०) संत परवाना, (११) संत-महिमा, (१२) संत-सागर और (१३) संत-विचार।

आपने अपने अनुयायियों को वैरागी बनने का उपदेश न देकर उन्हें गृहस्थाश्रम के महत्त्व को ही बतलाया है।

मन तू काहे ना करे रजपूती,
असहीं काल घेरि मारत ह, जस पिंजरा के तूती।
पाँच पचीस[4] तीनों दल ठाढ़े इन संग-सैन बहूती।
रंग महल पर अनहद बाजे काहे गइलऽ तू सूती।
'सिवनारायन' चढ़ मैदाने मोह-भरम गइल छूटी।

१. उल्लास। २. आत्मा। ३. गाँठ। ४. सन्तमतानुसार पाँच तत्त्व (अग्नि; जल, वायु, आकाश, पृथ्वी) और इन पाँचों की पाँच-पाँच प्रकृतियाँ—"अग्नि (आलस्य, तृष्णा, निद्रा, भूख, तेज)। जल (रक्त, वीर्य, पित्त, लार, पसीना)। वायु (चलन, गान, बल, संकोच, विवाद)। आकाश (लोभ, मोह, शंका, डर, लज्जा)। पृथ्वी (अस्थि, मज्जा, रोम, त्वचा, नाड़ी)।" ये ही तीस तत्त्व पाँच और पचीस कहलाते हैं।

अरे मन, तू राजपूती क्यों नहीं करता ? अर्थात् बहादुर की तरह विघ्न-बाधाओं का सामना क्यों नहीं करता ! ऐसे ही (अनायास) काल चारों ओर से घेर कर पिंजड़े में बन्द तूती की तरह जीवों को मार डालता है। सामने देखो, ये पंचतत्त्व और उनकी पचीस प्रकृतियाँ तथा काल—ये तीनों दल—खड़े हैं। इनके साथ बहुत-सी अन्य सेनाएँ (विघ्न-बाधाओं, उत्पातों तथा रोगों की) भी हैं। तुम्हारे रंगमहल (ब्रह्मांड मस्तक) पर अनहद शब्द हो रहा है। अरे मन, तू सो क्यों गया है ? शिवनारायण कहते हैं कि मैं तो संग्राम के हेतु मैदान पर चढ़ आया हूँ। मेरा मोह-भ्रम सब छूट गया है।

सुतल रहलों नींद भरी गुरु देलें हो जगाइ ॥
गुरु के सबद रंग आँजन हो, लेलों नयना लगाइ।
तबहीं नींदो नाहीं आवे हो नाहीं मन अलसाइ ॥
गुरु के चरन सागर हो नित सबेरे नहाइ।
जनम-जनम के पातक हो छन में देले दहवाइ ॥
पेन्हलों में सुमति गहनवाँ हो कुमति दीहलों उतार।
सबद के माँग सँवारों हो, दुरमत दहवाइ ॥
पियलों में प्रेम-पियलवा हो, मन गइले बउराइ।
बइठलों में ऊँची चउपरिया हो, जहाँ चोर ना जाइ।
शिवनरायन-गुरु समरथ हो, देखि काल डेराइ ॥

अरे, मैं गहरी नींद (मोहनिद्रा) में सो रहा था, गुरु ने मुझे जगा दिया। गुरु के शब्दों (ज्ञानोपदेशों) का रच-रच कर मैं ने अंजन बनाया और उसे नेत्रों में लगा लिया। तबसे मुझे नींद नहीं आती और न मन ही अलसाता है। गुरु के चरण-रूपी सागर में मैं नित्य सवेरे उठकर स्नान किया करता हूँ और उसमें जन्म-जन्मान्तर के पापों को क्षणमात्र में ही बहवा दिया करता हूँ। मैं ने सुमति के आभूषणों को पहन लिया और कुमति के गहनों को उतार दिया। मैंने गुरु-वचन-रूपी माँग को सँवार लिया और अपनी कुमति को धो बहाया था। मैंने प्रेम का प्याला पी लिया जिससे मन मतवाला हो गया। परमात्मा के प्रेम में बेसुध हो गया। मैं उस ऊँचे चौपाल (ज्ञान के अंधकार) पर जा बैठा, जहाँ (विकार-रूपी) चोरों की पहुँच नहीं है। शिवनारायण कहते हैं कि गुरु की कृपा से इतना समर्थ हूँ कि अब मुझको काल भी देखकर डरता है।

भव सागर गुरु कठिन अगम हो, कौना बिधि उतरब पार हो।
असी कोस रून्हे बन काँटा, असी कोस अन्हार हो ॥
असी कोस बहे नदी बैतरनी, लहर उठेला धुन्धकार हो।
नइहर रहलों पिता सँग भुकुरी नाहिं मातु धुमिलाना हो ॥
खात-खेलत सुधि भुलि गइली सजनी, से फल आगे पाया हो।
खाल पकड़ि जम भूसा भरिहें, बढ़ई चीरे जइसे आरा हो ॥
अबकी बार गुरु पार उतारऽ, अतने बाटे निहोरा हो।

कवि अपने गुरु से पूछ रहा है, (जीवात्मा परमात्मा से पूछ रही है।)—हे गुरु जी,

भवसागर तो अगम-अपार है। किस तरह से मैं पार उतरूँगी? अस्सी कोसों तक का मार्ग तो घनघोर जंगली काँटों से रुँधा हुआ है और अस्सी कोसों तक घोर अन्धकार है। फिर अस्सी ही कोस में फैली हुई वैतरणी नदी बह रही है, जिसमें गरजती हुई लहरें उठ रही हैं। मायके (संसार) में मैं पिता (मन) के रंग भकुरी[1] (मोहग्रस्त) पड़ी रही। परन्तु तब भी मेरी माता (प्रकृति) धूमिल नहीं हुई। हे सजनी! खाने-खेलने में पड़कर निज स्वरूप की सुधि भूल गई थी, उसका फल आगे मिला। यम खाल खींच कर उसमें भूसा भरेगा और बढ़ई (यमदूत) इस शरीर को आरा की तरह चीर डालेगा। अतः हे गुरु जी! अब आपसे इतना ही मेरा निहोरा (प्रार्थना) है कि इस बार मुझे पार उतार दें।

पातर कुइयाँ पताल बसे पनियाँ, सुन्दर हो!
पनियाँ भरन कैसे जाँव॥
खेलत रहलीं मैं सुपली[2] मउनियाँ[3] सुन्दर हो!
अबचक आ गइले दिन,
सुन्दरह हो! अबचक आ गइले निआर।
के मोरा धइले दिन-सुदिनवाँ सुन्दर हो!
के मोरा भेजलन निआर[4]।
सुन्दर हो, के मोरा भेजलन निआर॥
ससुरा मोरा धैलन दिनवें सुन्दर हो!
सैंयाँ[5] मोरे भेजलन निआर॥
सुन्दर हो, सैंया मोरा भेजलन नियार।
लालीं लालीं डोलिया सबुजि ओहरिया[6] सुन्दर हो!
लागि गइले बतिसो कहार।
सुन्दर हो, लागि गइले बतिसो कहार॥
मिलि लेहु मिलि लेहु सखिया-सलेहर[7] सुन्दर हो!
अबसे मिलन गइले दूर॥
सुन्दर हो! अब से मिलन गइले दूर॥

पतला तो कुँआ है और उसका पानी भी बहुत नीचे है। हे सुन्दरि, मैं पानी भरने कैसे जाऊँ? हे सुन्दरि, मैं सुपली-मौनी से खेल रही थी कि अचानक मेरे बुलावे का दिन आ गया। हे सुन्दरि, किसने मेरे जाने का सुदिन ठीक किया और किसने बुलाने के लिए नियार भेजा! स्वसुर ने मेरे जाने का दिन निश्चित किया और मेरे स्वामी ने नियार भेजा। मेरी डोली तो लाल रंग की है, उसमें हरे रंग का ओहार लगा हुआ है जिसमें बत्तीस कहार लगे हुए हैं। हे सखी-सहेली, आओ, मुझसे मिल लो; नहीं तो अब फिर मिलने का अवसर बहुत दूर हो जायगा।

---

१. भकुरी=बहुत दिनों से रखी हुई चीज के सड़ने से उसपर जमी हुई उजली काई।
२. बाँस का बना छोटा सूप। ३. बाँस की बनी बहुत छोटी चंगेली। ४. आमंत्रण।
५. स्वामी। ६. पालकी का परदा। ७. सहेली।

पलटूदास

फैजाबाद जिले में मालीपुरी स्टेशन से दस या बारह मील पूर्व जलालपुर नामक एक कसबा है। पलटूदास और इनके गुरु गोविन्द साहब यहीं के रहनेवाले थे। बचपन से ही दोनों बड़े जिज्ञासु थे। गोविन्द साहब जाति के ब्राह्मण और पलटूदास कान्दू भड़भूजा) थे। गोविन्द साहब पलटूदास के पुरोहित भी थे। दोनों व्यक्ति एक बार दीक्षा लेने के लिए अयोध्या गये। उन्होंने इनको उस समय गाजीपुर जिले में रहनेवाले बाबा भीखमराम के पास जिस सन्त से इन लोगों ने दीक्षा माँगी—जाने की राय दी। गोविन्द साहब वहाँ गये और पलटूदास इसलिए रुक गये कि गोविन्द साहब के दीक्षा लेकर लौटने पर ये उन्हीं से दीक्षा ले लेंगे। गोविन्द साहब के दीक्षित होकर लौटने पर पलटूदास उनके शिष्य हुए। गोविन्द साहब और पलटू दास बड़े ऊँचे भक्तों में गिने जाते हैं। गोविन्द साहब के नाम पर प्रसिद्ध मेला आज भी लगता है।

पलटूदास के नाम पर आज भी पलटू-पंथी-सम्प्रदाय है। इनके कितने मठ हैं। इनकी सभी रचनाएँ आज भी जलालपुर के पास के मठ में वर्त्तमान हैं। इनका समय आज से डेढ़ सौ वर्ष पूर्व का कहा जाता है। वेलबेडियर प्रेस (प्रयाग) से पलटूदास की रचनाओं का जो संग्रह छपा है, उसमें भी उनका यही समय उल्लिखित है।

(१)

काहे के लगावले सनेहिया हो, अब तुरल न जाय।
जब हम रहलों लरिकवा हो पियवा आवहिं जाय॥
अब हम भइलों सयनिया हो, पियवा ठेकलें[१] बिदेस।
पियवा के भेजलों सनेसवा[२] हो, अइहें पियवा मोर॥
हम धनि[३] पइयाँ उठि लागबि हो, जिया भइल भरोस।
सोने के थरिअवा जेवनवा हो, हम दिहल[४] परोस॥
हम धनि बेनिया[५] डोलाइब हो, जेंवेले पियवा मोर।
रतन जड़ल एक झरिया[६] हो, जल भरल अकास॥
मोरा तोरा बीच परमेसर हो, ए कहले पलटू दास॥

हे प्रेमी, तुमने क्यों स्नेह लगाया। अब तो यह मुझसे तोड़ा भी नहीं जाता। जब मैं कमसिन थी तब पिया निःसंकोच आते-जाते थे, पर अब जब मैं सयानी हुई तब मेरे प्रीतम विदेश जा बसे। मैंने अपने पिया के पास सन्देशा भेजा है। मेरे पिया अवश्य आवेंगे और तब मैं सोहागिन उठकर उनके पाँव पड़ूँगी, ऐसा मुझे विश्वास हो गया है। तब मैं सोने की थाल में जेवनार परोसूँगी और मेरे प्रीतम भोजन करने लगेंगे और मैं सामने बैठकर पंखा झलने लगूँगी। रत्न-जटित एक झारी है। मैं उसमें आकाशरूपी जल भरकर पिया के पीने के हेतु रखूँगी। पलटूदास कहते हैं कि मेरे और तुम्हारे बीच में केवल परमेश्वर का नाता है। दूसरा कोई नहीं।

१. पहुँच गये। २. सन्देश। ३. सोहागिन। ४. दिया। ५. पंखा। ६. झारी (जलपात्र)।

(२)

कइ दिन मेरा तोरा जिअना ऐ[1], नर चेतु गँवार ॥
काँचे माटी कर घइलवा[2] हो, फुटत लागत न बेर।
पनिया बीच बतसवा हो, लागल गलत न देर ॥
धुआँ केरा धवरहर हो, बालू केरा भीत[3] !
लागत पवन झरि जाले हो, तृन ऊपर सीत ॥
जस कागद कइ कलई हो, पाकल फलवा डारि।
सपने केरा सुख सम्पति हो, अइसन[4] हवे संसार ॥
बाँस केरा घन पिंजरा हो, ताहि बीच दस दुआर।
पंछी लिहले बसेरा हो, लागल उड़त न बार[5] ॥
आतसबाजि तन भइलेह, हाथे काल के आगि।
पलटू दास उड़ि जइबहु हो, जबहीं देइहें दागि ॥

हमारी-तुम्हारी कितने दिनों की जिन्दगी है ? रे गँवार, जरा तू चेत जा। जिस तरह कच्चे घड़े को फूटते देर नहीं लगती तथा जिस तरह से पानी के बीच बताशे को गलते विलम्ब नहीं होता; जिस प्रकार धुएँ का धौरहर और बालू की दीवार तथा घास के ऊपर पड़े हुए शीतकण हवा लगते ही विलीन हो जाते हैं; जिस प्रकार कागज पर की हुई कलई और डाल का पका फल तथा सपने में सम्पत्ति क्षणभंगुर है, उसी तरह यह संसार है। बाँस का बना हुआ घना पिंजड़ा (शरीर) है, उसमें दस दरवाजे (इन्द्रियाँ) लगे हैं। उसमें पंछी (आत्मा) बसेरा किये हुए हैं। उसको उड़ते देर नहीं लगती। अरे नर, यह शरीर आतिशभाजी है। काल के हाथ में आग है। पलटूदास कहते हैं कि जिस क्षण काल इस आतिशबाजी में आग छुला देगा, उसी क्षण जल कर उड़ जायगा।

(३)

बनिया समुझि के लादु लदनियाँ[6]।
ई सब मीत काम ना अइहें, संग ना जइहें करधनियाँ ॥
पाँच मने के पूँजी लदले, अतने में गरत गुमनिया[7]।
करलेऽ भजन साधु के सेवा, नाम से लाउ लगनिया[8] ॥
सउदा चाहसि त इहवें[9] करिले, आगे न हाट दुकनियाँ।
पलटू दास गोहराइ[10] के कहेले, अगवा देस निरपनियाँ ॥

अरे वणिक्, समझ-बूझ कर तुम लदौनी करो। ये सब मित्र किसी काम नहीं आवेंगे। कमर की करधनी भी तुम्हारे साथ नहीं जायगी। तूने पाँच मन (पंचतत्त्व) की पूँजी की लदौनी की और इतने में ही गुमान से पागल हो उठे। अरे वणिक्, साधु की सेवा और ईश्वर के नाम से लगन लगा। यदि तुम सचमुच कुछ सौदा (शुभकर्म) करना चाहते हो तो यहीं इस लोक में कर लो। आगे कहीं हाट या दूकान (शुभकर्म करने का स्थान)

१. जिन्दगी। २. घड़ा। ३. दीवार। ४. ऐसा। ५. देर। ६. बोझ की लदाई ७. घमंड। ८. प्रेम। ९. यहीं (इसी लोक में)। १०. जोर से पुकार कर।

तुमको नहीं मिलेंगी। पलटूदास पुकार कर कहते हैं कि आगे का देश बिना पानी का या बिना हाट-बाजार का (साधनहीन) है।

रामदास

रामदास जी 'बुल्ला साहब' (बुलाकी दास) के शिष्यों में से थे। आप के जन्म-स्थान का पता ठीक नहीं लग सका। अनुमान है कि आपका जन्म-स्थान तथा कार्य-क्षेत्र बलिया और गाजीपुर में ही कहीं रहा होगा। आपकी रचनाओं की बड़ी प्रसिद्धि है। देहातों में, अनेक अवसरों पर, झाल-ढोलक के साथ उनको लोग सम्मिलित रूप में गाते हैं।

(१)

रामऽ चइत [1] अजोधिया में राम जनमले हो रामा,
घरे घरे, बाजेला अनँद बधइया हो रामा। घरे घरे०
रामऽ लवँग-सोपरिया के बोरसी [2] भरवलो हो रामा
चन्दन काठी, पसंगि [3] अरावा हो रामा॥ घरे घरे०
रामऽ सोने के चउकिया त राम नहवावें हो रामा
रामऽ चेरिया लउँडिया [4] आई पानी भरे हो रामा। घरे घरे०
रामऽ केई सखि डालेली अंगुठिया मुँदरिया [5] हो रामा
रामा कवन सखी डालेली रतन ए पदारथ हो रामा। घरे घरे०
राम केकई डालेली अँगुठिया, सुमित्रा मुँनरिया हो रामा
कोसिला डालेली, रतन पदारथ हो रामा॥ घरे घरे०
रामदास ए बुलाकी चइत घाटो [6] गावे हो रामा
गाइ गाइ, जियरा [7] बुझावे [8] हो रामा।

(२)

राम जमुना किनरवा सुनरि [9] एक रोवे हो रामा
राम एही दहे [10] मानिक हेरइले हो रामा
राम गोड़ [11] तोर लागों में केवट मलहवा हो रामा
एही दहे डालू महजलिया हो रामा
एक जाल डलेले दोसर जाल डलले हो रामा

१. चैत्र मास। २. गोरसी (भूसा की आग रखनेवाला मिट्टी का पात्र)। ३. प्रसूती गृह के द्वार पर लगाई गई आग जिसमें टोटके के तौर पर राई-सरसों आदि द्रव्य जलाते हैं। ४. दासी। ५. अँगूठी या अशरफी (स्वर्ण-मुद्रा)। ६. वसन्त में ढोलक-झाल पर गाया जानेवाला धमार-गीत। ७. जी। ८. जुड़वाते हैं (संतुष्ट करते हैं)। ९. सुन्दरी। १०. [illegible]। ११. [illegible]

बाझी गइले [1] घोंघवा — सेवरवा हो रामा
राम तोरा लेखे [2] मलहा घोंघवा-सेवरवा हो रामा
मोरा लेखे, उगले चनरमा हो रामा।
रामदास रे बुलाकी आरे गावेलें घटेसरि [3] हो रामा
गाइ गाइ, जियरा समुझावे हो रामा।

आप का निम्नलिखित गीत ग्रियर्सन साहब द्वारा सम्पादित और संगृहीत होकर अंग्रेजी पत्रिका में छप चुका है।

घाँटो

(३)

रामा एहि पार गंगा, ओहि पार जमुना हो रामा।
तेहि बीचे कृष्ण खेलले फुलगेंनवा [4] हो रामा ॥१॥
रामा गेंना जब गिरलें मजधरवा हो रामा।
तेहिरे बीचे कृष्ण खिलले, [5] पतलवा हो रामा ॥२॥
राम लट धुनि [6] केसिया [7] जसोमति मैया हो रामा।
एही राहे मानिक हमरो हेराइल [8] हो रामा ॥३॥
राम गोड तोहि लागो, [9] केवट मलहवा हो रामा।
एही रे दहे डालु महाजलवा हो रामा ॥४॥
राम एकऽजाल बीगले, [10] दोसर जाल बीगले हो रामा।
बाझि [11] गइले घोंघवा - सेवरवा हो रामा ॥५॥
रामा पइठि पताल, नाग नाथल हो रामा।
रामा काली फन ऊपर नाच कइलन हो रामा ॥६॥
रामदास बुलाकी संग घाँटो गावल हो रामा।
गाइ रे गाई, बिरहिन सखि समुझावल हो रामा ॥७॥

गुलाल साहब

गुलाल साहब के जीवन का निश्चित समय ज्ञात नहीं है। ये जगजीवन साहब के गुरु-भाई थे, इसलिए इनका समय भी सं० १७५० से १८०० सं० तक माना जाता है। जाति के ये क्षत्रिय थे। ये 'बुल्ला साहब' के शिष्य थे।

पावल प्रेम पियरवा हो ताही रे रूप।
मनुआ हमार बियाहल हो ताही रे रूप॥

---

१. फँस गया। २. वास्ते। ३. घाटो गीत। ४. सुन्दर गेंद। ५. तह तक पैठ गये। ६. पीटना—धुनना। ७. केश (मस्तक)। ८. भूल गया। ९. निहोरा करना। १०. फेंका। ११. फँस गया।

ऊँच अटारी पिया छावल हो ताही रे रूप।
मोतियन चउक पुरावल हो ताही रे रूप ॥
अगम धुनि बाजन बजावल हो ताही रे रूप।
दुलहिन-दुलहा मन भावल हो ताही रे मन ॥
भुजभर कंठ लगावल हो ताही रे मन।
'गुलाल' प्रभुवर पावल हो ताही रे पद ॥
मनुआ न प्रीत लगावल हो ताही रे पद।

उसी (ध्यानस्थ) रूप में मैंने अपने प्रियतम को पाया। मेरा मन उसी रूप से ब्याहा गया। मेरा प्रियतम ऊँची अटारी (आसन) पर विराजमान है। वहाँ मोतियों का चौक पुरा हुआ है। फिर उसी रूप के लिए अनहद शब्द का बाजा बज रहा है। दुलहिन-रूपी मन को उसी रूपी का दुलहा मन भाया। इसीलिए फिर दुलहिन-रूपी मन ने दुलहे को अँकवार में भरकर गले लगाया। गुलालदास जी कहते हैं कि मैंने अपने उसी प्रभु का सामीप्य पा लिया। मैंने उस पद की प्राप्ति कर उन्हीं में प्रीति लगाई है। गुलाल साहब की अधिक रचनाएँ प्रकाश में नहीं आ पाई हैं।

रामनाथ दास

अनुमान है कि आप शिवनारायण जी के शिष्यों में से एक सन्त कवि थे। आपका परिचय प्राप्त नहीं हो सका। संगृहीत गीतों में आपके इस तरह के गीत मिले हैं—

अपन देसवा के अनहद कासे कहों जी सन्तो,
अपन देसवा के अनहद कासे कहों।
मोरा देसवा में नित पूरनमासी कबहूँ ना लागे अमवसवा।
हे सन्तो, कबहूँ ना लागे अमवसवा।
धूप ना छाह ताहाँ सीतल ना ताप नाहि भूख न पियासवा।
—सन्तो अपना देसवा के०॥
मोरा देसवा म बादल उमड़े, रिमि झिमि बरिसे ले।
देव, सन्तो, रिमझिम बरिसे देव, सन्तो ॥
ठाढ़ रहों जंगल मैदान में कतहूँ ना भींजेला देह सन्तो।
कतहीं ना भींजेला देह सन्तो ॥
अपन देसवा ०।
मोरा देसवा में बाजन एक बाजे, गहिरे उठेले अवाजा।
सन्तो गहिरे उठे अवाजा ॥ अपन देसवा ०॥
रामनाथ जब मगन भैले ठाढ़ रहे ले।
गढ़गाजा सन्तो ढाढ रहे ले गढ़ गाजा ॥
अपन देसवा ०।

भक्त अपनी सिद्धि के बाद अपने मानस-देश की दशा को अन्य साधकों से बता रहा है।

हे सन्तो, मैं अपने देश के अनहद शब्द की कहानी किससे कहूँ? मेरे देश में नित्य पूर्णमासी ही रहती है। यहाँ कभी अमावस्या नहीं आती अर्थात् सदा ज्ञान का उजाला ही रहता है, अज्ञान का अन्धेरा कभी नहीं होता। हे सन्तो, वहाँ न धूप है, न छाया है, न शीत है और न ग्रीष्म है। वहाँ न भूख लगती है, न प्यास सताती है। मेरे देश (हृदय) में बादल (भक्ति की घटा) उमड़कर आते हैं। रिमझिम-रिमझिम मेह बरसता है, अर्थात् आनन्द बरसता है। हे सन्तो, उस वर्षा में मैं जंगल-मैदान में कहीं भी खड़ा रहता हूँ, मेरा शरीर नहीं भींगता। (केवल हृदय ही सिक्त होता है।) मेरे देश में एक अनहद बाजा बजता है जिसकी आवाज बहुत गहरी होकर उठती है। रामनाथ जब ध्यानमग्न होते हैं तब वे आनन्द-रूपी गढ़ पर सदा खड़ा रहते हैं।

भीखा साहब

भीखा साहब की जन्मभूमि बलिया जिला (उत्तर प्रदेश) नहीं है, किन्तु उनकी कर्मभूमि ही बलिया है। उस जिले के बड़ा गाँव के आप निवासी थे। बड़ा गाँव में जहाँ आप रोज बैठते थे, वहाँ एक चबूतेरा है। विजया दशमी के दिन वहाँ एक बड़ा भारी मेला लगता है। लोग चबूतरे को पूजते और भेंट चढ़ाते हैं। बड़ा गाँव (रामशाला) के आदि महन्थ गुलाल साहब के आप ही गुरु थे। आप बारह वर्ष की ही अवस्था में गृहत्यागी बन गुरु की खोज में लग गये। आप जाति के ब्राह्मण (चौबे) थे। घरेलू नाम भीखानन्द था। आप आजमगढ़ के 'खानपुर बोहना' गाँव में, संवत् १७७० आस-पास, पैदा हुए थे। आपके गुरु का नाम गुलाल साहब था।

बड़ा गाँव में किंवदन्ती प्रचलित है कि "जब आप एक ऊँचे चबूतरे पर बैठे हुए थे, तब आप से मिलने के लिए एक मौनीबाबा, सिंह पर सवार होकर आये। कोई दूसरी सवारी पास न होने के कारण आपने चबूतरे को ही चलने की आज्ञा दी। चबूतरा चलने लगा और तभी से उसका नाम 'दुम-दुम' पड़ गया। आप ५० वर्ष की अवस्था में स्वर्गवासी हुए।" *

हे मन राम नाम चित धौबे [१]।
काहे इत उत धाइ मरत हव अवसिक [२] भजन राम से धौबे॥
गुरु परताप साधु के संगति नाम पदारथ रुचि से खौबे [३]।
सुरति निरति अन्तर लव लावे अनहद नाद गगन घर जौबे [४]॥

* ठाकुर प्रसिद्ध नारायण सिंह लिखित—'बलिया के कवि और लेखक' (सन् १८८६ ई० में प्रकाशित) से उद्धृत।

१. धोओगे। ध्यावोगे=ध्यान करोगे। २. अवश्य। ३. खाओगे। ४. जाओगे।

रमता राम सकल घर व्यापक नाम अनन्त एक ठहरोवे[1]।
तहाँ गये जगसों जर[2] टूटत तीनतान[3] गुन औगुन नसोवे॥
जन्म स्थान खानपुर बोहना सेवत चरन 'भिखानन्द' चौबे ॥१॥

दुल्लह दास

आपका परिचय अज्ञात है। कहीं-कहीं कुछ पद मिल गये हैं।

नइहरे में दाग परल मोरी चुनरी।
सतगुरु धोबिया से चरचो ना कइलो रे,
उन्ह धोबिया से कवन उजरी॥ नइहरे०॥
एक मन लागे के सौ मन लगले,
महँग साबुन बीकाला पिया के नगरी॥ नइहरे०॥
चुनरी पहिर के ससुरा चलली,
ससुरा लोग कहे बड़ फुहरी॥ नइहरे०॥
दुल्लह दास गोसाईं जग जीवन,
बिनु सत संग कइसे केहू सुधरी॥ नइहरे०॥

मेरी चुनरी (चोला) में नैहर (संसार) में ही दाग पड़ गया। मैंने इसकी चर्चा अपने सतगुरु-रूपी धोबी से नहीं की। उस धोबी से दूसरा और कौन अधिक स्वच्छ है अर्थात् मल-(पाप) नाशक है। एक मन मैल लगने के बदले सौ मन मैल लग गई। पिया के नगर में तो साबुन (तत्त्व-ज्ञान) बहुत महगा बिकता है। वही चुनरी (चोला) पहनकर मैं ससुराल (परलोक) को गई; पर वहाँ के लोग कहने लगे कि यह बड़ी फूहड़ नारी है। दुल्लह दास कहते हैं कि मेरे मालिक जगजीवन दास ०। इस संसार में विना सत्संग के कोई कैसे सुधरेगा?

नेवल दास जी

आपका जन्म सरजू पार उत्तर प्रदेश के गोंडा जिले में हुआ था। आपकी मृत्यु सं० १८५० में, १०० वर्ष की आयु में हुई। आपके माता-पिता के नाम ज्ञात नहीं हैं। आपके गुरु जगजीवन जी थे। आप सन्त कवियों में प्रसिद्ध हैं।

अपने घर दियरा बारु रे।
नाम के तेल, प्रेम के बाती, ब्रह्म अगिन उदगारु रे॥
जगमग जोति निहारु मँदिलवा में, तन मन धन सब वारु रे।
झूँठ ठगिनि जानि जगत के आसा बारहि बार बिसारु रे।
दास नेवल भजु साईं जगजीवन आपन काज सँवारु रे॥

---

१. ठहरोगे। २. जड़। ३. टीम-टाम।

अरे, अपने घर (हृदय) में (ज्ञान का) दीपक जलाओ। राम नाम का तेल बनाओ। उसमें प्रेम की बत्ती लगाओ और ब्रह्माग्नि की लौ जगाओ। तब अपने मन्दिर (अन्तः-करण) में जगमगाती ज्योति को निहारो। उस ज्योति पर तन-मन-धन सबको न्योछावर कर दो। जगत् की आशा को तुम ठगिनी की तरह समझो। उसको कभी अपने पास न फटकने दो। नेवल दास कहते हैं कि गुरु जगजीवन को भजकर अपना काम बनाओ।

बाबा नवनिधि दास

आपका जन्म बलिया जिले में 'लखउलिया' नामक ग्राम में हुआ था। जाति के कायस्थ और मुंशी शिवदयाल लाल के पुत्र थे। चन्दाडीहवाले कविवर रामचन्द्र उपनाम 'चनरूराम' आपके गुरु थे। पहले आप 'वधुई'-निवासी मुंशी प्रयागदत्त कानूनगो के यहाँ मोसद्दी थे। वहीं आपके हृदय में वैराग्य उत्पन्न हुआ और आपके मुँह से निकल पड़ा—"मोहि राम नाम सुधि आई। लिखनी अब ना करब रे भाई॥"

"अरे मुझे राम नाम की सुधि आ गई। अब हे भाई, मैं लिखनी नहीं करूँगा"

यह कहते हुए आप उठ पड़े और संन्यासी बन गये। आपका रचना-काल संवत् १६०५ है, यह आपकी एक रचना से प्रमाणित है। संन्यास आपने लगभग ५०-६० वर्ष की अवस्था में ग्रहण किया था। आपका जन्मकाल अनुमान से संवत् १८१० के आस-पास हो सकता है; क्योंकि ११० वर्ष की अवस्था में संवत् १९२० के लगभग आपका देहान्त हुआ था। 'मंगलगीता' आपकी प्रसिद्ध पुस्तक है। आपके अनुयायी उसका पाठ करते हैं। लोगों का विश्वास है कि आपकी 'संकटमोचनी' पुस्तक के पाठ से सब प्रकार के संकट दूर हो जाते हैं।

कहीं-कहीं आपकी रचनाओं में कबीर की छाप मिलती है। आपने अपनी 'ककहरा' पुस्तक में जो योग-सम्बन्धी बातें बताई हैं, उनसे पता लगता है कि आप एक सिद्ध योगी थे।

काहे मोरि सुधि बिसरवलऽ हो, बेदरदी कान्ह।
ऊ[1] दिन यादि[2] करऽ मनमोहन गलिअन दूध पिअवलऽ हो।
बेदरदी कान्ह।
अर्द्ध-उर्द्ध बिच तू मोहि के डललऽ कुबरी कंत कहवलऽ हो, बेदरदी कान्ह,
वृन्दावन हरिरास रचवलऽ तहँ कुलकानि गँववलऽ हो, बेदरदी कान्ह।
कहे 'नवनिद्धि' सुनऽ करुनामय आपन बनाइ बिसरवलऽ हो, बेदरदी कान्ह।

१. वह। २. स्मरण।

बाबा शिवनारायण जी

बाबा शिवनारायण जी बलिया (उत्तर प्रदेश) के रहनेवाले थे। कहते हैं, आप 'नर्वानिधिजी' के शिष्य थे और बाबा कीनाराम आपके शिष्य थे।[१] आपने 'मंगल गीत' नामक पुस्तक लिखी थी। आप एक जमींदार के दीवान थे; बैठे-बैठे बही-खाता लिख रहे थे। एकाएक आपके मन में ज्ञान का उदय हुआ। बाबा नर्वानिधिदास के समान आप भी यह कहते हुए घर से निकल पड़े—

"लिखनी अब ना करबि हे भाई।
मोहि राम नाम सुधि आई॥"

आप बहुत बड़े सिद्ध पुरुष माने जाते हैं[२]। आपकी एक रचना मुझे 'झूमर-तरंग'[३] नामक पुस्तक में मिली है, जो नीचे दी जाती है—

चलु सखि खोजि लाईं निज सइयाँ॥
पिया रहले अबहीं साथ में ऊ छोड़ि गइले कवन ठइयाँ[४]।
बेला से पूछों चमेली से पूछों मैं पूंछू बन बन कोइयाँ[५]॥
ताल से पूछों तलइया से पूछों, पूछूं मैं पोखरा[६] कुंइयाँ[७]।
सिवनारायन सखी पिया नहीं भेटें हरि लेले मन जदुरइया॥१॥

बाबा रामायण दास

आपका गृहस्थ-जीवन का नाम पंडित संसारनाथ पाठक था[८]। आपका जन्म-संवत् १६०७ वि० के अगहन में हुआ था। आप भारद्वाज गोत्रीय कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। आपके पूर्व-पुरुष बलिया जिले के 'मुरारपाही' ग्राम में रहते थे। पर, लगभग दस-बारह पुश्त से आपके पूर्वज शाहाबाद जिले के 'बड़का डुमरा' नामक गाँव में रहते आये हैं। आपका जन्म भी उसी गाँव में हुआ।

आपके पिता पं० काशीनाथ पाठक आरा की फौजदारी कचहरी में नाजिर थे। आप छह भाई थे। बाल्यावस्था में ही आपके पिता का देहान्त हो गया। बहुत छोटी

१. भोजपुरी के एक दूसरे शिवनारायण कवि का परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र प्रकाशित है; किन्तु जीवन-गाथा, गुरु-परम्परा आदि में भिन्नता होने के कारण ये शिवनारायण जी दूसरे ही कवि जान पड़ते हैं। —लेखक

२. आपका यह परिचय मुझे बलिया के प्रसिद्ध मुख्तार और हिन्दी के कवि श्री 'मधुर' जी से प्राप्त हुआ। —लेखक

३. बैजनाथ प्रसाद बुक्सेलर, राजा दरवाजा, काशी, सन् १६३१ ई० में प्रकाशित।

४. जगह। ५. वन-कुमुदिनी। ६. पुष्करणी। ७. कूप।

८. आषाढ़ ३०६ तु० स० की मासिक 'सुधा' (लखनऊ) में श्री दामोदरसहाय सिंह 'कवि-किंकर' के लेख से संकलित। —लेखक

अवस्था में आपने अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखलाया। आपकी स्मरण-शक्ति तीक्ष्ण थी। आपने २५ वर्ष की अवस्था में; १६३२ विक्रमी संवत् में, नौकरी की और संवत् ५४ तक आरा, हजारीबाग इत्यादि जगहों में काम करते रहे। आप साधु-सन्तों की सेवा में गृहस्थ-जीवन में भी लगे रहते थे। आपने संवत् १६५५ में अपनी खुशी से पेंसन ली। छोड़ते समय आपने यह पद्य कहा था —

अस जीय जानि छोड़ल कचहरिया।
'क' से काम 'च' से तन चिन्ता 'ह' से हरि नहीं आवे नजरिया।
'री' से रिस[1] बिन कारन देखल यहि लागि मैं माँगलै भगरियाँ[2]।

देवीदास

आप सन्त-कवि थे। आप दुल्लह दास और जगजीवन दास के सम्प्रदाय के ही कवि थे और दुल्लह दास के शिष्य थे। इस हिसाब से ईसवी सदी १६ वीं का प्रारंभ आपका समय कहा जाता है।

१

धन सुमंगल घरिया आजु मोरा धन सुमंगल घरिया।
आजु मोरा अइले संत पहुनवा का ले करबि नेवतरिया[3]॥
अन, धन, तन लेइ अरपन करबो, मातल प्रेम लहरिया।
आज मोरा धन सुमंगल घरिया॥
देवीदास बरन लिखि पठवों सब रंग लाली चुनरिया।
दुलभ दास गोसाई जगजीवन मातेले प्रेम लहरिया॥
आजु मोरा धनि सुमंगल घरिया।

आज मेरी यह मंगलमय घड़ी धन्य है। आज मेरे यहाँ संत पाहुन के रूप में आये हैं। मैं उनका स्वागत क्या लेकर करूँगा? मैं अन्न, धन, तन, अर्पण करके और प्रेम की लहर में मस्त होकर स्वागत करूँगा। देवीदास कहते हैं कि अवछर (प्रेम-पत्र) लिखकर प्रीतम के पास भेजूँगा कि मेरा आत्मा पूर्ण अनुरक्त हो गई है। दुल्लह दास और जगजीवन दास से दीक्षा प्राप्त करके मैं ईश्वर-प्रेम की लहर में उन्मत्त हो उठा हूँ।

सुवचन दासी

आपकी गणना संत-कवयित्रियों में है। आप बलिया जिलान्तर्गत डेहना-निवासी मुंशी दलसिंगार लाल की पुत्री थीं और संवत् १६२८ में पैदा हुई थीं। इतनी भोली-भाली थीं कि बचपन में आपको लोग 'बउरहिनिया' कहते थे। १४ वर्ष की अवस्था में आपका विवाह बलिया-निवासी मुंशी युगलकिशोरलाल से हुआ। वे सरकारी नौकर थे।

१. क्रोध। २. भागने की छुट्टी। ३. पहुनाई, स्वागत।

आप तपस्विनी थीं। लगभग २० वर्ष की अवस्था में आपने हीरादास नामक एक नानकपंथी साधु से दीक्षा ली। तभी से आपका मन संसार से विरक्त हो गया। गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी आप योग की क्रियाओं में प्रवृत्त रहने लगीं।

संवत् १९८६ वि० में आप स्थायी रूप से बालापुर (गाजीपुर) में निवास करती थीं। साधु-सन्तों में पूर्ण प्रेम रखती थीं।

आपके भजनों का संग्रह 'प्रेम-तरंगिनी' नाम से पाँच भागों में प्रकाशित है। आपकी रचनाओं में शब्द-लालित्य नहीं है; किन्तु भाव अच्छे हैं। सोहर, लावनी, जँतसार आदि गीतों में आपने अपने अनुभवों को आध्यात्मिक ढंग से प्रकाशित करने का प्रयत्न किया है[1]।

तन चुनरी के दाग छोड़ाऊ धोबिया॥ टेक॥
लख चौरासी धूमिल चुनरिया, अबकी दाग छोड़ाऊ धोबिया॥
सत गुरु कुंडिया[2] में सउनन[3] होई प्रेम-सिला[4] पटकाऊ धोबिया॥
सान्ति-सरोवर जल में धोवा दे नाम के साबुन लगाऊ धोबिया॥
तनमन धन हऽ छाक[5] धोबिया के स्वेत चुनरिया पेन्हाऊ धोबिया॥
'सुवचन दासी' चुनर पेन्हि बइठली हरि लेलीं गोद लगाय धोबिया॥१॥

तन-रूपी चुनरी का दाग (पाप) हे धोबी (पाप धोनेवाले परमात्मा)! चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करते-करते यह शरीर-रूपी चुनरी धूमिल हो गई है। हे धोबी, इस बार इसका दाग छोड़ा दो। सतगुरु-रूपी कुंडी में इस शरीर-रूपी कपड़े को धोने के लिए भिगो कर और प्रेम-रूपी पाट पर पटक कर साफ कर, तब इस शरीर-रूपी कपड़े को शान्ति-सरोवर में नाम-जप-रूपी साबुन लगाकर धो दो। उसके लिए मेरा तन, मन, धन निछावर है। निष्कलंक शरीर-रूपी श्वेत चुनरी मुझे पहनाओ। सुवचन दासी जब ऐसी चुनरी पहन कर बैठी, तब हरि ने उसे गोद में बिठा लिया।

राम मदारी

आप शाहाबाद जिले के कवि थे। आपके जन्म-स्थान का ठीक पता नहीं चला। आपके गीत शाहाबाद में गाये जाते हैं। आपका समय १९ वीं सदी का मध्यकाल है। ग्रियर्सन साहब ने अपने भोजपुरी-व्याकरण में आपका निम्नलिखित जँतसार गीत उद्धृत किया है—

पिया बटिया जोहत दिन गैलों।
तोरि खबरिया न पाइलों॥

---

१. 'बलिया के कवि और लेखक' नामक पुस्तक के आधार पर। २. धोबी का नाद, जिसमें गन्दे कपड़े सज्जी में गोते जाते हैं। ३. शराबोर करना। ४. धोबी का पाट। ५. धोबी को दिया जानेवाला कलेवा।

केसिया अपने गुथाइला।
मँगिये सेन्दुरा भराइला।
पिया के सुरतिया लाइला।
जियरा हमार हँधेला॥
नैन नीरवा ढरि गैलो॥१॥
बाम्हना के बेटा बोलाइला।
पोथिया एकर खोलाइला॥
साँचे सगुन सुनाइला।
पिया नइखे आइला॥
जोबन हमार बड़ भैल॥२॥
नौआ के छोकड़ा बोलाइला।
पुरुब देसवा पठाइला॥
उत्तर भइके आवेला।
दखिन सुरत लगवलों॥
पच्छिम घरे घरे ढूँढ़लों॥३॥
गुरु हुकुम मनाइला।
साजन घरवा आइला।
खुब खुब भोज बनाइला।
साजन के जेवाँइला॥
राम मदारी गाइला।
लोगन के सुनाइला।॥
दुसमन सार ऊरि गैलो॥४॥

अरे प्रीतम, तुम्हारी बाट जोहते-जोहते दिन बीतता जा रहा है; परन्तु तुम्हारी खबर कुछ नहीं मिल रही है। मैं अपना केश गुँथाती हूँ और माँग में सिन्दूर भराती हूँ। तुम्हारी सुरति मन में आती है। उससे हृदय मेरा बिंध जाता है और नेत्रों से आँसू गिर पड़ते हैं॥१॥

ब्राह्मण के पुत्र को बुलाती हूँ। उससे पोथी खुलवा कर तुम्हारे आगमन का सगुन निकलवाती हूँ। वह सच्चा-सच्चा सगुन सुना देता है। हे पिया, तुम नहीं आते हो। यहाँ मेरी जवानी आ गई।॥२॥

मैं नापित-पुत्र को बुलाती हूँ। उसे तुम्हें ढूँढ़ने के लिए पूर्व-देश भेजती हूँ। वह पूर्व में खोजकर उत्तर देश भी होता हुआ लौट आता है। तब दक्षिण देश में सुरति (ध्यान) लगती है। पश्चिम का तो घर-घर ढूँढ़ ही डाला॥३॥

गुरु के हुक्म को मानती हूँ। साजन घर आते हैं। मैं बढ़िया भोजन बनाती हूँ और तुमको जेंवाती हूँ। 'राम मदारी' गीत गाते हैं और लोगों को सुनाते हैं। मेरे इस सौभाग्य को देखकर दुश्मन सारे (साला) मर रहे हैं॥४॥

सरभंग-सम्प्रदाय के कवि

उत्तर-बिहार के चम्पारन जिले में 'सरभंग' नामक एक तांत्रिक सम्प्रदाय है। इस सम्प्रदाय के अनुयायी अभक्ष्य वस्तुओं का भी भक्षण करते हैं। बनारस जिले में भी इस सम्प्रदाय के मठ हैं। इस सम्प्रदाय में अनेक सन्त-कवि हो गये हैं, जिन्होंने अनेक रचनाएँ भोजपुरी में की हैं। चम्पारन के लोक-साहित्य-मर्मज्ञ विद्वान् पं० गणेश चौबे[1] का कहना है कि इन कवियों के असंख्य गीत लोक-कण्ठ में आज भी बसे हुए हैं। नीचे सरभंगी कवियों का परिचय दिया जा रहा है—

१—भीखम राम

भीखम राम ग्राम माधोपुर (थाना मोतिहारी, जिला चम्पारन) के निवासी थे। आप टेकमन राम कवि के गुरु थे। आपके समय का ठीक अन्दाज नहीं लग सका है। कविताएँ भी अधिक न मिल सकीं। आपका एक पद यहाँ दिया जाता है—

हंसा करना नेवास, अमरपुर में।
चलै ना चरखा, बोलै ना ताँती
अमर चीर पेन्हे बहु भाँती ॥हंसा०॥
गगन ना गरजै, चुए ना पानी
अमृत जलवा सहज भरि आनी ॥हंसा०॥
भुख नाहीं लागे, ना लागे पियासा;
अमृत भोजन करे सुख बासा। हंसा०
नाथ भीखम गुरु सबद बिबेका।
जो नर जपे सतगुरु उपदेसा ॥हंसा०॥

हे हंस (जीव), तुम अमरपुर (परमधाम) में निवास क्यों नहीं करते? वहाँ (जीवन का) चरखा नहीं चलता और धुनका (मृत्यु) की ताँत नहीं बोलती है। वहाँ तो सभी अमरता के चीर अनेकानेक तरह के धारण किये रहते हैं। हे हंस, उस अमरपुर में आकाश का गर्जन तथा मेघ की वर्षा नहीं होती। वहाँ अमृत का जल सहज ही भरकर लाया जाता है। अरे हंस, वहाँ तो भूख नहीं लगती और न प्यास सताती है। वहाँ दिन-रात अमृत का भोजन किया करो और सुख-सम्पन्न निवास में रहा करो। भीखमराम कहते हैं कि गुरु का शब्द ही विवेक है। जो उसको जपता है, वही सतगुरु का उपदेश देता है।

२—टेकमन राम

आप भीखम राम के शिष्य थे। समय का अन्दाज या रचनाओं का पता नहीं लगा है। आप झखरा ग्राम (थाना मोतिहारी, चम्पारन) के निवासी थे। आप इस सम्प्रदाय के प्रमुख कवि थे। आपकी प्राप्त रचनाएँ नीचे दी जाती हैं —

---

१. पं० गणेश चौबे की सहायता से मुझे सरभंग-सम्प्रदाय के अनेक कवियों की जीवनियाँ और रचनाएँ मिली हैं।—लेखक

(१)

समधिन ! भले हो भले, बिअहल बाड़ू की कुआँर। सम० !
माता होई तुहु जग प्रतिपललू, भले हो भले०।
जोइया[1] होइ धन खालू। समधिन ! ०
केकई होई दसरथ के ठगलू, भले हो भले०
रामजी के देलू बनवास। समधिन !०
सीता होई रवनवो के ठगलू, भले हो भले०
लंका गढ़ कइलू उजार, समधिन !०
सिरी टेकमन राम निरगुन गावेले, भले हो भले०
राम भीखम संगे साथ। समधिन० !

हे समधिन, (माया) तुम बड़ी नेक हो। यह तो बताओ, तुम ब्याही हो अथवा अभी क्वाँरी हो। माता बनकर तो तुम जगत् का प्रतिपालन करती हो और पत्नी बनकर धन खाती हो। कैकेयी बनकर तो तुमने दशरथ को ठगा और रामजी को वनवास दिया। फिर सीता बनकर तुमने रावण को ठगा और लंका के गढ़ का सत्यानाश किया। श्री टेकमन राम कहते हैं कि मैं भीखमराम के संग निर्गुण गाता हूँ। कवि ने समधिन का अर्थ माया माना है।

(२)

संत से अन्तर ना हो नारद जी ! सन्त से अन्तर ना०।
भजन करे से बेटा हमारा ग्यान पढ़े से नाती।
रहनी रहे से गुरू हमारा, हम रहनी के साथी।
संत जेवंके तबहीं में जेइलें संत सोए हम जागी।
जिन मोरा संत के निन्दा कइले ताहीं काल होइ लागी
कीरतनिया से बीस रहीले नेहुआ से हम तीस।
भजनानंद का हिरदा में रहिले सत का घर शीश
संतन मोरा अदल सरीरा हम संतन के जीव।
सब संतन से हम रमी रहीले जइसे मखन के घीव।
श्री टेकमन महराज भीखम स्वामी जइसे मखन के घीव ॥

भगवान् देवर्षि नारद से कह रहे हैं। हे नारद ! सन्त से मेरा कोई अन्तर (भेद) नहीं है। जो मेरा भजन करता है, वह मेरा पुत्र है और जो ज्ञान पढ़ता है, वह पौत्र (अत्यन्त प्यारा) है। हे नारद, जो रहन (अच्छी चाल-चलन) से रहता (सदाचारी) है, वह मेरा गुरु है। मैं सदाचार का साथी हूँ। संतों को भोजन कराकर ही मैं भोजन करता हूँ और जब संत सोता है, तब मैं जगकर उसका पहरा देता हूँ। जो मेरे भक्त सन्तों की निन्दा करते हैं, उनका मैं महाकाल हूँ। कीर्त्तन करनेवालों से मैं सदा बीस (प्रसन्न) रहता हूँ

१. जाया, पत्नी।

और नेह करनेवालों (भक्तों) से 'तीस' अर्थात् उससे भी अधिक प्रेम करता हूँ। मैं आनन्द से भजन करनेवालों के हृदय में रहता हूँ। जहाँ सत्य का बोलवाला रहता है, वहाँ मैं सदा उपस्थित रहता हूँ। संत मेरे शरीर हैं और मैं सन्तों का जीव हूँ। मैं सन्तों से वैसा ही रमकर रहता हूँ जिस तरह मक्खन में घी रहता है। टेकमन कवि कहते हैं कि मैं और महाराज भीखम स्वामी वैसा ही मिला हुआ हूँ जैसे मक्खन का घी अर्थात् मैं उनका अनन्य भक्त हूँ।

कुलवा में दगवा बचइह हे सोहागिनि !
दूध से दही, दही से माखन, घीउआ बनके रहिहऽ हे सोहागिनि !
ऊँख से गुड़, गुड़ से चीनी, मिसरी बनके रहिहऽ हे सोहागिनि।
सीरी टेकमन राम दयाकर सतगुरु के, जगवा से नतवा लगइहऽ हे सोहागिनि ॥

अरी सुहागिन, (भक्त की आत्मा) अपने कुल में दाग लगने से बचाना। दूध से दही और दही से मक्खन और मक्खन से घी बनकर रहना अर्थात् दिन-दिन साधना में उन्नति करते जाना। अपने को स्वच्छ बनाती (निखारती) जाना। अरी सुहागिन, ऊख से गुड़ बन जाना, फिर गुड़ से चीनी बनना और चीनी से मिश्री की तरह अपने को स्वच्छ बना लेना। श्री टेकमन राम कहते हैं कि हे सुहागिन, सत गुरु की दया का स्मरण करते हुए मृत्यु से रिश्ता जोड़ना।

बिना भजन भगवान राम बिनु के तरिहैं भवसागर।
पुरइन पात रहे जल भीतर करत पसारा हो।
बुन्द परे जापर ठहरत नाहीं ढरकि जात जइसे पारा हो।
तिरिया एक रहे पतिबरता पतिबचन नहीं टारा हो।
आपु तरे पति को तारे तारे कुल परिवारा हो।
सुरमा एक रहे रन भीतर पिछा पगु ना धारा हो।
जाके सुरतिआ हव लड़ने में, प्रेम मगन ललकारा हो।
लोभ मोह के नदी बहत बा लछ चौरासी धारा हो।
सीरी टेकमन महराज भीखम सामी कोई उतरे संत सुजाना हो।

बिना राम-भजन की सहायता के, इस भव-सागर को कौन तर सकता है ? यद्यपि पुरइन का पत्र जल में फैला रहता है तथापि उसपर जब जल की बूँद पड़ती है तब पारे की तरह ढरक कर गिर जाती है। (उसी तरह से रे मन ! अपनेको तुम इस संसार में निलिप्त रखो।) एक स्त्री जो पतिव्रता होती है और अपने पति के वचन को नहीं टालती, वह स्वयं तो तर ही जाती है पति को भी तारती है और कुलपरिवार को भी तार देती है। (अरे मन, तुम भी वैसा ही हरिभजन में लवलीन हो जाओ)। रण में एक सूरमा होता है जो पीछे पग नहीं रखता और जिसका सारा ध्यान लड़ने के लिए प्रेम-मग्न होकर ललकारता रहता है। (अरे मन, तू भी उसी रण-बाँकुरे की तरह भगवद्-भजन में लगा रह)। इस संसार में लोभ और मोह की नदी बह रही है। चौरासी लक्ष योनियों की

धारा उस लोभ-मोह की नदी में प्रवाहित हो रही है। महाराज भीखम स्वामी के शिष्य श्री टेकमन कहते हैं कि विरला ही कोई सुजान (ज्ञानी) उस नदी को पार करता है।

३—स्वामी भिनक रामजी

संत कवि भिनक रामजी चम्पारन जिले के थे। आपका जन्म-समय, स्थान, रचना-काल आदि ज्ञात नहीं हैं।[1] कुछ रचनाओं के उदाहरण —

(१)

आगि लागे बनवा जरे परबतवा,
मोरे लेखे हो साजन जरे नइहरवा।
आवऽ आवऽ बभना बइठु मोरा अँगना,
सोचि देहु ना मोरा गुरु के अवनवा॥
जिन्हि सोचिहें मोरा गुरु के अवनवा,
तिन्हे देबों ना साजन ग्यान के रतनवा॥
नैना भरि कजरा लिलार भरि सेनुरा,
मोरा लेखे सतगुरु भइले निरमोहिया॥
सिरी भिनक राम स्वामी गावले निरगुनवा,
धाइ धरबों हो साधु लोग के सरनवा॥

वन में आग लगी हुई है, पर्वत जल रहा है। (संसार में वासनाओं की आग लगी है और बड़े-बड़े धीर पुरुष जल रहे हैं।) परन्तु हे साजन, मेरे लिए तो मानों मेरा मायका (ज्ञान-धाम) ही जल रहा है। हे ब्राह्मण देव, आओ, इधर आओ, मेरे आँगन में टुक बैठ जाओ। मेरे गुरु कब आवेंगे, इसको सोचकर जरा बतला दो। अरे! जो मेरे गुरु की आगमन-तिथि को बतायेगा, उसको मैं ज्ञान-रूपी रत्न प्रदान करूँगा। नेत्रभर काजल और माँग भर सिन्दूर रहते भी मेरे लिए मेरे सतगुरु निर्मोही बन गये। वे मेरी सुधि ही नहीं लेते। श्री भिनक राम स्वामी निर्गुण गाते हैं और कहते हैं कि मैं दौड़कर साधु लोगों की शरण पकड़ूँगा।

(२)

केऊ ना जाइ संग साथी बन्दे! केऊ ना०॥
जइसे सती हँसकर बन्दे! ऊ काया जल जाती।
दिन चार राम के भजिले बान्ह का ले जइबऽ गाँठी॥
भाई-भतीजा हिलमिल के बइठे वोही बेटा वोही नाती।
अंत काल के काम ना अइहें समुझि समुझि फाटी छाती॥
जम्हुराजा के पेआदा जब अइले आइ रोके घँट-छाती।
प्राण निकल बाहर हो गइले तन मिल गैले माँटी॥

[1] काशी के दैनिक 'आज' में प्रकाशित चम्पारन-निवासी पं० गणेश चौबे के लेख से।

खाइल पीअल भोग बिलासल ई न जात संघ साथी।
सिरी भिनकराम दया सतगुरु के सतगुरु कहले साँची॥

अरे बन्दे (सेवक), तुम्हारे साथ कोई नहीं जायगा। जिस तरह सती हँस कर (पति के शव के साथ) चली जाती है और काया जला देती है, वैसे ही तुम भी हँस कर राम का भजन कर ले। संसार से चलते समय तू गाँठ बाँध कर क्या ले जायेगा? भाई-भतीजा, सब हिल-मिल कर तुम्हारे साथ बैठेंगे। कोई अपने को बेटा कहेगा और कोई नाती बतायेगा। परन्तु, अन्त काल में कोई काम नहीं आयेगा। तब इसको समझ-समझ कर तुम्हारी छाती पश्चात्ताप की वेदना से फटने लगेगी। जब यमराज का प्यादा आया, और तुम्हारे कंठ और छाती को अवरुद्ध कर दिया तब तुम्हारा प्राण निकल कर बाहर हो गया और शरीर मिट्टी से मिल गया। श्री भिनक राम कहते हैं कि गुरु ने कहा था (कि गुरु की दया ही सब-कुछ है), वह सत्य निकला।

(३)

पिअवा मिलन कठिनाई रे सखिया।
पिअवा मिलन के चलली सोहागिनि धइले जोगिनीया के भेसवा हो।
रहली राँड़ भइली एहवाती सेनुरा ललित सोहाई॥
एह दुलहा के रूप ना देखल दुलहिन चलत लजाई।
सिरी भिनक राम दया सतगुरु के चरण चित लाई॥
त्रिकुटी घाट बाट ना सूझे मोरा बुते चढ़ल ना जाई॥

अरी सखि! प्रियतम से मिलने में बड़ी कठिनाई है। देखो न जोगिन का वेश धारण करके सुहागिन पिया से मिलने के लिए चली। पहले यह वहाँ राँड़ थी, परन्तु अब एहवाती (सधवा) हो गई है। उसके माथे पर सिन्दूर कितना सुन्दर मालूम होता है। अभी उसने इस दुलहे का रूप नहीं देखा है, इससे वह लजा-लजा कर चल रही है। श्री भिनक राम कहते हैं कि सतगुरु की दया से मैं उनके चरणों में चित्त लगा पाया हूँ। अब इस त्रिकुटी-रूपी घाट पर पहुँचकर बाट नहीं सूझती। हे गुरु! मुझे अपने बल से इस घाट पर चढ़ा नहीं जायगा? दया करो कि चढ़ जाऊँ।

(४)

बटिया जोहते दिन रतिया बीती गइले।
राम सुरतिया देखि के ना सतगुरु नैनवा लोभवले।
तेजलीं नइहर लछ लोगवा सासुर राम जोगिनिया बन के ना।
कइली अपना साधु के संघतवा।
सिरी भिनक राम स्वामी गावले निरगुनिया।
राम दरदिया भइले हो सतगुरु रउरा भेजुना कहरीया।

विरही भक्त विरह से व्याकुल हो प्रभु से अपना सन्देश सुना रहा है। सीधी-सादी बातें हैं। सहज रूप से जो भावना उठती है, उसी को वह बिना किसी आडम्बर के प्रभु के सामने रख देता है। कहता है—हे प्रभु, बाट जोहते-जोहते रात-दिन दोनों व्यतीत हो गये;

पर तुम नहीं आये। हे राम, तुम्हारी मूर्त्ति को दिखा कर सत गुरु जी ने मेरे नेत्रों को लुभा लिया। मैं ससुराल जाने के लिए जोगिन का वेश बनाया और अपने मायके के लक्ष-लक्ष लोगों का परित्याग कर दिया। साधुओं की संगति की। परन्तु हे प्रभु, रात-दिन (यानी जवानी और बुढ़ापा) दोनों व्यतीत हो गये और तुम अब तक नहीं आये। श्री भिनक राम स्वामी निर्गुण गाते हैं और कहते हैं कि विरहिणी कहती है कि मेरे हृदय में असह्य वेदना हो रही है; हे सतगुरु! आप पालकी-कहार भेज दें कि मैं जल्द चली आऊँ। हे नाथ, बाट जोहते-ही-जोहते रात-दिन दोनों व्यतीत हो गये।

छत्तर बाबा

आप चम्पारन जिले के संत-कवि थे। आपका समय १६वीं सदी का प्रारंभ या १८वीं का अन्त माना जाता है। आपकी एक रचना[1] नीचे दी जाती है। आप कबीर-पंथी सम्प्रदाय के थे।

देखलीं मैं ए सजनिया सइयाँ अनमोल के।
दसो दुअरिया, लागे केवड़िया मारे सबद का जोर से
सून भवन में पिया निरेखो नयनवा दुनू जोर के।
छत्तर निज पति मिललऽ भर कोर के॥

अरी सजनी, मैंने अपने अनमोल सैयाँ को देख लिया। दसो दरवाजों में किवाड़ लगे हुए हैं। उनपर अनहद शब्द के धक्के जोरों से पड़ रहे हैं। सूने भवन में अपने सैयाँ को, ध्यानमग्न हो, जी-भर देखा। 'छत्तर' कहते हैं कि अहा! मेरा पति मेरी गोद में भरपूर मिला, अर्थात् मैंने अपने पति का जी-भर के आलिंगन किया।

श्री जोगेश्वर दास 'परमहंस'

आपका जन्म-स्थान चम्पारन जिले के 'मधुवन' थाने का 'रूपवलिया मठ' है आपकी रचनाएँ बहुत प्रौढ़ और सुन्दर होती थीं। कहा जाता है कि आपने एक हजार पदों की रचना की थी। आप १६वीं सदी के अन्त में हुए। चम्पारन में आप परमहंस जोगेश्वर दास के नाम से विख्यात हैं।

टूटल पँचरंगी पिंजरवा हो, सुगना ऊड़ल जाय।
सुगनू रहले पिंजरवा हो, सोभा बरनि न जाय॥
उड़त पिंजरवा खाली हो, सब देखि के डेराय॥ १ ॥ टूटल०॥
दसो दरवजवा जर्जरिया हो, लगले रह जाय।
कवन दुआर होइ भगले हो, तनिको ना बुझाय॥ २ ॥ टूटल०॥
सभीनी भइले निरदइया हो, अवघट ले जाय।
सारा रचि भरत पिंजरवा हो, ओ में अगिनी लगाय॥ ३ ॥ टूटल०॥

---

१. चम्पारन-निवासी पं० गणेश चौबे से प्राप्त।—ले०

सिरी जोगेसर दास काया पिंजरा हो, नित चलल लगाय ।
सेहु परले मरघटिया हो, ओ में अगिन धहकाय ॥ ४ ॥ टूटल० ॥

शरीर की क्षणभंगुरता का वर्णन करते हुए कवि कहता है—अरे, पँचरंगी (पाँच तत्त्ववाला) पिंजरा (शरीर) टूट गया। उससे निकलकर सुग्गा (जीव) भागा जा रहा है। जब सुग्गा, पिंजरे में रहता था तब शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता था; किन्तु उसके उड़ते ही पिंजरा खाली हो गया और सब लोग उसे देखकर डरते हैं। दसो दरवाजों में जंजीर लगी ही रह गई। कहीं खुला नहीं। किस द्वार से होकर सुग्गा उड़ गया, यह ज्ञात नहीं हो सका। अरे, सभी हित-मित्र निर्दय बन गये। उस पिंजरे को उठाकर वे श्मशान-भूमि की ओर ले चले। वहाँ सारा (चिता) को रच-रचकर लोगों ने बनाया और फिर उसमें आग लगा दी। श्री जोगेश्वर दास कहते हैं कि मैं भी अपनी जिस काया-रूपी पिंजरे को नित्य धारण किये फिर रहा था, वह आज मरघटिया (श्मशान-भूमि) में पड़ा हुआ है और उसमें अग्नि धधक रही है। इसमें मरण-काल का भयानक दृश्य चित्रित है, जिससे विराग उत्पन्न होता है।

केसोदास जी

केसोदास सन्त-कवि थे। आप चम्पारन जिले के मोतिहारी थाने के 'पण्डितपुर' ग्राम के निवासी थे। आपका मठ बेलवनिया ग्राम (थाना मोतिहारी) में है। आप कबीरपंथी साधु थे। पूर्वोक्त छत्तररामजी कवि आपके गुरु थे। आपकी मृत्यु लगभग ५० वर्ष पहले हुई होगी। आपका जन्म-काल १८४० ई० के लगभग माना जाता है। आपके पद सुन्दर और गम्भीरतापूर्ण होते थे।

(१)

भावे नाहीं मोहि भवनवाँ।
हो रामा, बिदेस गवनवाँ ॥१॥
जो एह मास निरास मिलन भैले।
सुन्दर प्रान गवनवाँ ॥२॥
केसो दास गावे निरगुनवाँ
ठाढ़ि गोरी करें गुनवनवाँ[1] ॥३॥

अरे, मुझे भवन नहीं भाता। मेरे प्रीतम का विदेश-गमन हुआ है। जो इस मास में भी निराशा ही से मिलन हुआ (आशा-पूर्त्ति नहीं हुई), तो निश्चय ये सुन्दर प्राण निकल जायँगे। केसोदास निरगुन गा रहे हैं और गोरी खड़ी-खड़ी गुनावन (सोच) कर रही है।

---

१. ग्रियर्सन साहब ने इस गीत को अँगरेजी-पत्रिका में प्रकाशित किया था।

(२)

आजु मोरा गुरु के अवनवाँ।
जब मैं सुनलों गुरु के अवनवाँ, चंदन लिपलों रे अँगनवाँ।
गगन-मंडल से गुरु मोरा अइले, बाजे अनहद निसनवाँ॥
सिरी पंडितपुरवा में मोरा गुरु गदिया उतरावेला हो रामा॥ आजु मोरा०॥

अरे, आज मेरे गुरु का आगमन है। जब मैंने अपने गुरु का आना सुना तब चन्दन से आँगन को लिपवा लिया। गगन-मंडल से मेरे गुरु आये और अनहद शब्द का धौंसा (निसनवाँ) बजने लगा। श्री पण्डितपुर में गुरु आज अपनी गाड़ी उतार रहे हैं, मेरे गुरु का आज आगमन हो रहा है।

(३)

सुधि कर मन बालेपनवा के बतिया।
दसो दिसा के गम जब नाहीं, संकट रहे दिन रतिया।
बार बार हरि से कौल कइलऽ, बसुधा में करबि भगतिया॥
बालापन बालहिं में बीतल, तरुनी कइके छतिया।
काम क्रोध दसो इन्द्री जागल, ना सूझे जतिया ना पतिया॥
अन्त काल में समुझी परिहें, जब जमु घेरिहें दुअरिया।
देवा देई सबे केउ हरिहें, झूठ होइहें जड़ी-बुटिया॥
केसो दास समुझि के गावले, हरिजी से करेले मिनितिया।
सामबिहारी सबेरे चेतिहऽ, अन्तऽ में केहू ना सँघतिया॥सुधि०॥

अरे मन, अपनी बाल्यावस्था की बातों (गर्भाधान के समय) का स्मरण करो। जब दसो दिशाओं का गम नहीं था और जब दिन-रात संकट-ही-संकट सामने था, तब तुमने बार-बार कौल (प्रतिज्ञा) किया था कि वसुधा में मैं आपकी भक्ति करूँगा। सो हे मन, तुम्हारा बालपन तो खिलवाड़ में बीत गया और जब तरुणाई आई, तब अपने शरीर के उभार में ही तुम भूल गये। काम, क्रोध तथा दसो इन्द्रियाँ जाग्रत हुईं और जाँति-पाँति का विचार छोड़कर तुम पागल बन गये। अरे मन, अब अन्तकाल आया, अब तुम्हें समझ पड़ेगा जब यमराज तुम्हारे घर का दरवाजा घेरेगा। अब देवता और देवी (अर्थात् ओझाई आदि) सब हार जायेंगे और सभी जड़ी-बूटियाँ भी बेकार सिद्ध होंगी। केसोदास इसको अच्छी तरह समझ कर गा रहे हैं और हरिजी से विनय करते हैं। हे श्याम-बिहारी (केसोदास का शिष्य)! सबेरे (पहले ही) से ही चेतो। अन्त में कोई तुम्हारा संगी-साथी नहीं होगा।

तोफा राय

तोफा राय सारन जिले के हथुआ-राज्य तथा अन्य राज्यों के राज-कवि थे। आप उस भाँट-वंश में उत्पन्न हुए थे, जिसमें बहुत अच्छे कवि आपके पूर्व भी हो गये थे। आपकी ख्याति छपरा जिले में अच्छी थी। पुरानी पीढ़ी के लोगों से आपकी रचनाएँ

अधिकतर मिलीं। आप कुँवरसिंह के समकालीन थे। आपने 'कुँअर-पचासा' नामक ग्रन्थ भी लिखा था। जिसके बहुत-से कवित्त लोगों के कंठ से तथा कुछ लिखित भी, मुझे मिले थे। 'कुँअर पचासा' में हिन्दी और भोजपुरी दोनों में वीर-रस की कविताएँ हैं। आप बड़े अक्खड़ स्वभाव के कवि थे और आवभगत में जरा भी कमी हो जाने पर तुरन्त निन्दा की रचना सुना देते थे। आप आशुकवि कहे जाते थे। आपके सम्बन्ध की अनेकानेक ऐसी घटनाएँ उस समय लोगों में प्रचलित थीं कि जिनको सुनकर आपकी प्रतिभा का पता चलता था। 'कुँअर-पचासा' से आपकी कुछ भोजपुरी घनाक्षरियाँ नीचे उद्धृत की जाती हैं। ये बीबीगंज (शाहाबाद) की लड़ाई के सम्बन्ध की हैं। बीबीगंज की लड़ाई में कुँवर सिंह की विजय हुई थी। उस लड़ाई में अँगरेजी-सेना का कप्तान 'विसेंट आयर' था।

(१)

खलबल भइले तब कुँअर सिंह सेना बीच,
बीबीगंज आइ आयर बागी, पर टूटलेनि नू।
तोप आ बन्दूकि उगिले लाल आगि ओने से
त एने टोंटा-हीन ही बन्दूकि लाठी बनलिनि नू॥
आरा आ गांगी के लड़ाई सब सोखि लेलसि,
टोंटा बरुदि जे दानापुर से लवलनि नू।
सेनानी कुँअर त चिन्तित ना भइल रंच
बंक करि नैन सेना जंगल धरवलनि नू॥

बीबीगंज में कुँवर सिंह की सेना में तब खलबली मच गई जब आयर ने आकर बागियों पर हमला किया। उधर से तोपें और बन्दूकें लाल आग उगलने लगीं, किन्तु इस तरफ कुँअर सिंह की सेना में टोंटे-कारतूसों के अभाव के कारण बन्दूकें लाठी का काम दे रही थीं। आरा और गाँगी की लड़ाई में ही सब कारतूस, बारूद आदि समाप्त हो चुके थे। अब सिपाहियों के पास केवल कुछ तोड़ेदार देशी बन्दूकें और भाले-बरछे लड़ाई के लिए बच रहे थे; परन्तु इस विषम अवस्था में भी सेनानी कुँवर सिंह रंचमात्र भी चिन्तित नहीं हुए और नत्रों का इशारा करके सेना को पास के जंगल में ले गये।

(२)

एक एक पेड़ पीछे एक एक बीर ज्वान
नेजा संगीन खाँड़ा गहि छिपि बइठल नू।
दस-दस गोली चले धाँइ-धाँइ घहरे तोप
झूम पानी पड़ि मेघ घहरि लौका लउकल नू॥
भैल घमासान फिरंगी सेना आगे बढ़ति
मार संगीन सुरु होखल नेजा चमकल नू।
बनि आइल रंग तब बीर कुँअर गरजल जब
बिजली अस तरुआरि चमचमाइ लरजल नू॥

सेना के जंगल में पहुँच जाने पर एक-एक पेड़ के पीछे एक-एक जवान वीर नेजा-संगीन, खाँड़ा आदि शस्त्रों के साथ छिपकर बैठ गये। उधर (अँगरेजी-सेना) से गोलियाँ दन-दन चल रही थीं और धायँ-धायँ करके तोपें घहर रही थीं। इधर आकाश से झमा-झम पानी बरस रहा था। मेघ घहर रहे थे और बिजली चमक रही थी। घमासान युद्ध होने लगा और धीरे-धीरे फिरंगी सेना आगे बढ़ने लगी। संगीन की मार शुरू हो गई और भाले-बरछे चमकने लगे। युद्ध में उस समय रंग आ गया, जब वीर कुँवर सिंह ने (घोड़े पर से) गरजना शुरू किया और उनकी तलवार बिजली-सी चमचमाती हुई फिरंगियों की गरदन पर झुकने लगी।

(३)

खप्प करिअसि घुसे लोथि गिरे भूमि थप्प
गोरा सिक्ख कटत देखि आयर दहलल नू।
भूखल बाघ अस वीर भोजपुरी दल
पइल ललकारत हर बम्म बम्म कहल नू॥
देवता देखे लागल जोगिनी भखे लागलि।
गोरन के रक्त लाल पीके पेट भरल नू।
ऊपर अकास गर्जे नीचे बीर कुँअर गर्जे
गोरा फिरंग संग पावस होली खेलल नू॥

तलवारें खप्प-खप्प करके फिरंगियों के शरीर में घुसने लगीं और थप्प-थप्प करके उनके लोथ (शव) एक-पर-एक गिरने लगे। इस तरह गोरों और सिक्खों को कटते देखकर अँगरेज-सेना के सेनानी आयर का दिल दहल उठा। इसी समय भूखे बाघ की तरह वीर भोजपुरी दल ने ललकारते हुए तथा 'हर-हर बम-बम' कहते हुए दुगुने जोश से युद्ध शुरू किया। इस दृश्य को आकाश में देवता विमानों पर बैठकर देखने लगे और जोगिनियाँ गोरों के लाल-लाल गरम-गरम रक्त को दौड़-दौड़कर पीने लगीं तथा इतना पी चुकीं कि उनके पेट भरकर फटने-फटने को हो गये। ऊपर से आकाश गरज रहा था; नीचे वीर कुँवर सिंह गरज रहा था और फिरंगियों के साथ पावस में रक्त की होली खेल रहा था।

(४)

खपाखप छुरी चललि छपाछप मूड़ी कटली
टहकते सोनित के नदी धार बहलि नू।
चमकल उज्जैनी नेजा तीखा दुधारी तेगा।
वीर सिरोमनि कुँअर सेना ललकारल नू॥
इन्द्र डरे भागि गैल जमराज दौड़ि आइल
खप्पर ले डाकिनी नाचे नाच लागलि नू।
झूमत कुँअर बाका वैसे रन बीच जैसे
कोपित सिंह दहाड़त हाथी दल पइठल नू॥

खपाखप छुरियाँ चलने लगीं और छप-छप मस्तक धड़ से अलग होने लगे। टहकते (चमचमाता हुआ ताजा-ताजा) शोणित की नदी तेज धारा के साथ बहने लगी। उज्जैन-राजपूती बरछे तथा दुधारे तेगे चमकने लगे और वीर—शिरोमणि कुँवर सिंह अपनी सेना को ललकारने लगे। ऐसा भीषण युद्ध हुआ कि इन्द्र डर के मारे भाग गये (अर्थात् वर्षा बन्द हो गई)। और, यमराज के दूतों से जब इतनी जल्दी-जल्दी मरते हुए फिरंगियों के प्राण नहीं निकल सके तो स्वयं यमराज को दौड़कर आना पड़ा। (जब जोगिनियाँ रक्त पी-पीकर अघा गईं और अधिक रक्त नहीं पी सकीं तब) डाकिनियों का नया दल खप्पर ले-लेकर दौड़ पड़ा और नाच-नाचकर रक्त पीने लगा इस महाघोर संग्राम के बीच में बाँका मरदाना कुँवर ठीक उसी तरह से झूम रहा था जिस तरह हाथियों के दल में क्रोधी सिंह दहाड़ता हुआ प्रवेश करके झूमता है।

(५)

हारत देखलसि जो आयर चालाक तब
पीछे मे घुमा के दुतरफी वार कैलसि नू।
जंगल के दूनो ओर जंग जुझार छिड़ल
वीर सेनानी दूनों हाथ लोहा फेकलसि नू॥
गजरा मुरई अस कटे लागल गोरा सिक्ख
लोथि प लोथि गिरल ढेरि काटि कैलसि नू।
हार फिरंग होइत गोला ना सहाय होइत
अगर हरकिसुन दगा कुँअर से ना करितस नू॥

इस भीषण युद्ध में जब चालाक आयर ने अपनी सेना को हारते देखा, तब उसने अपनी रिजर्व सेना को जंगल की दूसरी ओर घुमाकर कुँवर सिंह पर पीछे से हमला कर दिया और कुँवर सिंह की सेना पर आगे-पीछे दोनों ओर से दुतरफी वार होने लगा। इस प्रकार से जब जंगल के दोनों तरफ जुझारू जंग छिड़ गया, तब वीर सेनानी कुँवर ने दाँत से घोड़े की रास पकड़कर अपने दोनों हाथों में लोहा (अस्त्र, तलवार, भाला) ग्रहण करके वार करना शुरू किया। गाजर और मूली की तरह गोरों और सिक्खों के सर कटने लगे और लाश-पर-लाश गिरने लगी। कुँवर ने सर काट-काट कर ढेर लगा दिया। कवि कहता है कि इस विषम परिस्थिति में भी फिरंगियों की ही हार होती। उनके ये भीषण गोले कुछ भी सहायक सिद्ध नहीं हो पाते, यदि हरकिसुन सिंह ने कुँवर सिंह से दगा न किया होता।

श्री लक्ष्मीसखी जी

लक्ष्मीसखी भोजपुरी के महाकवि थे। छपरा (सारन) जिले के 'अमनौर' ग्राम में आपका जन्म एक कायस्थ-कुल में हुआ था। आपके पिता का नाम मुंशी जगमोहन

दास था। आपकी मृत्यु संवत् १९७० में मंगलवार, १८ वैशाख को हुई थी। उस समय आपकी आयु ७३ वर्ष की थी।

आप लड़कपन से ही विरक्त रहा करते थे। पढ़े-लिखे नहीं थे। सुन्दर कैथी लिख लेते थे। पहले आपका नाम लक्ष्मीदास था। आपने एक औघड़ साधु से प्रभावित होकर औघड़-पंथ ग्रहण किया। फिर, अपने गुरु के आचरण को देखकर उनसे घृणा करने लगे। वहीं से भागकर टेरुआ (सारन) ग्राम में, शालिग्रामी नदी के तट पर, आकर रहने लगे। यहीं आपका मृत्यु हुई।

गुरु ने क्रुद्ध होकर आपको पकड़ लाने के लिए अपने अन्य शिष्यों को भेजा; पर वे गाँववालों का विरोध करने में सफल न हो सके। टेरुआ में आपने तपस्या की। संवत् १९६२ तक आपको सिद्ध प्राप्त नहीं हो सकी थी। संवत् १९६६ ई० में, माघ मास के बृहस्पतिवार को आपको ईश्वरीय ज्योति के दर्शन हुए। उसके बाद से ही आपने भोजपुरी में रचना करनी शुरू की। उसके पहले आप कविता नहीं करते थे। आप कबीर, सूर और तुलसी के भजन गाया करते थे। ज्योति-प्राप्ति के बाद से कभी-कभी भोजपुरी में छन्द आप-ही-आप आपके मुख से निकल पड़ते थे। पहले तो आपने उधर ध्यान नहीं दिया; परन्तु जब रचना अधिक होने लगी, तब आप लिखने लगे।

चार वर्ष की अवधि में आपने चार ग्रन्थ विविध छन्दों और राग-रागिनियों में लिखे, जिनके नाम हैं—(१) अमर विलास, (२) अमर फरास (३) अमर कहानी और (४) अमर सीढ़ी। इनमें कुल ३५२० छन्द हैं। 'अमर कहानी' में ७७५, 'अमर फरास' में ६८५, 'अमर विलास' में ८७५ और 'अमर सीढ़ी' में ८८५ छन्द हैं। ये रचनाएँ अत्यन्त प्रौढ़ और काव्यगुणों से सम्पन्न हैं तथा सभी भक्ति-मार्ग की हैं। आपने यथार्थ, भयानक और रोचक तीन तरह के भावों की अभिव्यक्ति की है। आपका सखी-मठ आज भी टेरुआ में आजानकी सखी के प्रबन्ध में चल रहा है। आपके सबसे बड़े शिष्य कामता सखी जी हैं, जो छपरा में सखी-मठ स्थापित करके वहीं रहते हैं। आज भी सखी-सम्प्रदाय में लक्ष्मी-सखी के चारों ग्रन्थों की पूजा होती है। सिक्खों के 'ग्रन्थ-साहब' की तरह इन पुण्य ग्रन्थों को भी 'ग्रन्थरामजी' की संज्ञा दी गई है। और 'ग्रन्थरामजी' के नाम से ही मठ की सारी सम्पत्ति है।

आप सखी-सम्प्रदाय में एक दूसरे मत के प्रवर्त्तक थे। आपके सम्प्रदायवाले साड़ी आदि नहीं पहनते तथा खान-पान में छुआछूत का विचार नहीं रखते। आपके शिष्य 'कामता सखी जी' दिगम्बर-वेश में रहते हैं। सखी-मठों में आपके ही भजनों को गा-गाकर शिष्य-मण्डली कीर्त्तन करती है। आपके प्रायः सभी ग्रन्थ भक्तों के द्वारा खण्डशः प्रकाशित कराये जा चुके हैं। आपकी रचनाएँ हिन्दी के अष्टछापी कवियों की रचनाओं की श्रेणी में रखी जा सकती हैं।

कबीर को ही आपने अन्तिम दिनों में आपने गुरु माना था। किसी पौष-पूर्णिमा को ग्रन्थ समाप्त हुआ था। अतः, इसीसे पौष-पूर्णिमा को, आपके सम्प्रदाय में, महोत्सव मनाया जाता है।

चौमासा

अब लागल हे सखी मेघ गरजे चलु अब पिया जी के देप हे।
ओहि रे देसवा में जगमग जोति, गुरुजी दिहले उपदेस हे।
गगन गुफा में ऐगो सुन्दर मूरत देखत लागेला परमेस हे।
रूप अनुप छबि बरनि ना जाला जनु कोटिन उगेला दिनेस हे।
उगली घाम तहाँ आठो पहरा माया-मोह फाटेला कुहेस हे।
जनम-मरन कर छुटेला अनेसा जे पुरुष मिलेला अवधेस हे।
चारू ओर हिरा लाल के बाती हलहल करेला हमेस हे।
उठेला गगन-गगन घन घोर महा धूनी अ्रत भरेला जलेस हे।
लछिमीसखी के सुन्दर पियवा सुनि लेहु पियवा के सनेस हे।
मानुष जनम के चूकल पियवा फिर नहीं लगीहे उदेस हे।

हे सखि, अब मेघ गरजने लगा। चलो, हम अब पिया के देश को चलें। गुरुजी ने उपदेश दिया कि उस देश में जगमग-जगमग ज्योति सदा जलती रहती है। उस गगन-रूपी गुफा में एक अत्यन्त सुन्दर मूर्त्ति है, जो देखने में परमेश्वर जान पड़ती है। उसका रूप अनुपम है और उसकी छवि का वर्णन करते नहीं बनता। ऐसा ज्ञात होता है, मानों कोटि सूर्य उदित हो गये हों। वहाँ धूप आठो पहर निकली रहती है। माया-मोह का कुहरा सदा फटा रहता है। वहाँ जन्म-मरण की आशंका छूट जाती है और अवधेश पुरुष (राम) मिल जाते हैं। वहाँ चारों ओर हीरा और लाल की बत्तियाँ सदा झिलमिल-झलमिल किया करती हैं। वहाँ आकाश में महाध्वनि (की लपट) घनघोर-रूप से उठा करती है। जलेश (इन्द्र) अमृत की वर्षा किया करते हैं। लक्ष्मीसखी कहते हैं कि मेरे प्रियतम बड़े सुन्दर हैं। उनका सन्देश सुन लो। मनुष्य के जन्म में यदि उस प्रिय को पाने से चूक गये, तो फिर आगे उसका पता लगना कठिन है।

(२)

सुन्दर सहज उपाय कहिले, से करू तवन के ना।
सबसे होई रहु छोट बटिया चलु नवन के ना॥ १॥
कइ बेर आइल नियार सखिया पतिया गवन के ना।
अबकी बटल संजोग मिलि लेहु राधारमण से ना॥ २॥
नाहीं त बीतेला बहार सखिया भादो सावन के ना।
जे रह-रह उठेला झकोर आन्धी पानी पवन के ना॥ ३॥
सुखसे आवेला नीन्द पिया संगे सेज फुलवन के ना।
लछिमी सखिया स्वारथ करी लेहु जीवन जनम-मरन के ना॥ ४॥

अरी कामिनी, जी भर के कलोल कर ले। भवन की खिड़कियाँ खुली हुई हैं। अपनी कमर में तलवार बाँध कर पिया से मिलने की तैयारी कर। इसके लिए सुन्दर और सहज उपाय जो मैं कहता हूँ, उसे तू कर। तू सबसे अपने को छोटा बनाकर रह और नम्र होकर मार्ग चल। अरी कामिनी, बुलाने के लिए कई बार नियार (निमंत्रण)

आया और गवना कराने के हेतु कई बार पाती आई। अबकी बार संयोग मिल गया है। तू राधारमणजी से मिल ले। नहीं तो हे सखि, इस सावन-भादो की बहार, जो रह-रह कर आँधी-पानी के रूप में प्रकट हो रही है, बीता जा रही है। पुष्प-शय्या पर प्रीतम के संग लेटने पर सुख की निद्रा आती है। लक्ष्मी सखी कहते हैं, अरी सखी! अपने जीवन और जन्म-मरण का स्वार्थ सिद्ध कर ले।

आरती

(३)

आरती सतगुरु दीन दयाला, जेकरे पर ढरेला तेकर करेला निहाला हो॥
से सहजे-सहजे गगन चढ़ि जाला, आपु-से-आपु उजे खुलेला ताला हो॥
लउकेला सगरे लाले-लाला, जे माया के बंधन छभरी नु जाला हो॥
जगमग-जगमग होला उजियाला दरसेला सुन्दर फरेला कपाला हो॥
छछिमी सखी के सुन्दर पियवा उजे विधना लिखेला मोरे भाला हो॥

आरती सत गुरु दानदयाल का है। जिस पर वह ढल गई, उसी को निहाल कर दिया। वह व्यक्ति सहज रूप से गगन पर चढ़ जाता है और आप-से-आप उसका (अज्ञान और मोह का) ताला खुल जाता है। उसको सवत्र लाल-ही लाल (प्रेम का रंग) दिखलाई पड़ता है। वहाँ जगमग-जगमग उजाला-ही उजाला रहता है और भाग्य का फल सुन्दर रूप से फलने लगता है। लक्ष्मी सखी कहते हैं कि विधि ने मेरे भाग्य में लिखा है, मेरा सुन्दर प्रियतम मुझे मिलेगा।

(४)

जागु-जागु मोरे सुरति-सोहागिन, हरि सुमिरन कर बेरा॥
पियवा बियोगिनो होखना जोगिनी, करिले अलखकर फेरा॥
सात सबेरी भले लागल लगनी, करिले अमरपुर डेरा॥
करि लेहु सजनी सरजुग भंजनी, सुन्दर खसम कर चेरा॥
लछिमी सखी के सुन्दर पियवा देखिले करम कर फेरा॥

अरी मेरी सोहागिन सुरति, (स्मृति) जाग, जाग, हरि का स्मरण करने (जपने) की यह बेला है। अरी जोगिनी, अपने प्रियतम की वियोगिनी बन कर अलख प्रियतम के लिए फेरी शुरू कर। इस बार सबेरे ही लग्न (शुभ मुहूर्त्त) आ गया है। अमरपुर (परलोक) में डेरा कर ले। अरी सजनी, तू सब युगों में भजन कर ले। सुन्दर पति की चेरी बन जा। लक्ष्मी सखी कहते हैं, मुझे तो सुन्दर पिया मिल गया। देखो, करम का फेर इसी को कहते हैं।

भजन

(५)

खुलन चाहे नैया केहु बा सतलोक के जवैया॥
चढ़ब त चढ़ऽ ना त फेरू ना अवैया,
ना त का करबऽ फेरू पाछे पछतैया॥

भव-जल अगम एक नाम के नैया सतगुरू मिलने खेवैया,
त्रिकुटी में घाट लागे गगन उतरैया,
लछिमी सखी पार भैली साहब सरनैया ॥

नाविक (गुरु) यात्रियों (संसारियों) को पुकार रहा है। नाव खुलना चाहती है। अरे, कोई सत् लोक को जानेवाला है? चढ़त हो तो चढ़ो, नहीं तो फिर नाव (हरिनाम) आनेवाली नहीं है। फिर पछता कर क्या करोगे? इस संसार-सागर में अगम जल है। हरि नाम रूपी नौका ही एक मात्र सहारा है। अरे! इस नाव को खेने वाले सत् गुरु जी मिल गये, यह नाम कभी नाव भृकुटी घाट (त्रिकुटी) पर तो लगती है; और गगन (ब्रह्मांड) में पार उतरती है। लक्ष्मी सखी कहते हैं कि मैं इस नाव पर चढ़ कर मालिक की शरण में आकर भव-सागर पार कर गया।

(६)

बारह मासा

लागेला हिरोलवा रे अमरपुर में झूलेला संत सुजान ॥
चलु सखियन सुन्दर बर देखे खोलि लेहु गगन पेहान।
येह पार गंगा ओह पार जमुना बीचे-बीचे सुन्दर भान ॥
चारू ओर उगेला जगमग तारा झलकेला सुन्दर चान।
लछमी सखी के सुन्दर पियवा मिलि गइले पुरुष पुरान ॥
लागेला हिरोलवा रे अवधपुर जे झुलेला राम नरेस।
चलु सखी चलु अब देखन पियवा नीके तरी बाँधी बाँधी केस ॥
एक ओर सीया धनी एक ओर सखिया बीच में बइठेला अवधेस।
सोने कर बरहा रूपन कर पाटी झिलुहा झुलावे ला सेस ॥
लछिमी सखी के सुन्दर पियवा गुरुजी दिहले उपदेस।

अमरपुर में हिंडोला लगा हुआ है और सन्तों का समाज उसपर चढ़कर झूला झूल रहा है। हे सखियो! चलो सुन्दर वर देख आओ। आकाश का पेहान (ढकन) अर्थात् ध्यान-पटल को खोल लो। इस पार गंगा हैं, उस पार यमुना, और बीच में सुन्दर सूर्य्य हैं। (इड़ा और पिंगला के बीच में शान है) चारों ओर जगमग-जगमग तारे उगे हुए हैं और सुन्दर चन्द्रमा झलक रहा है (समाधि-दशा में झलकनेवाले प्रकाशपुंज दीख पड़ते हैं।) उसी स्थान पर लक्ष्मी सखी के सुन्दर पिया, जो पुरातन पुरुष हैं, मिल गये। अवधपुर में हिंडोला लगा हुआ है और राजा रामचन्द्र उसपर चढ़ झूला झूल रहे हैं। अरी सखी! चलो पिया को देखने के लिए। अच्छी तरह बालों को सँवार लो। एक ओर तो सौभाग्यवती सीता हैं और दूसरी ओर सखियाँ हैं, बीच में अवधेश राम बैठे हैं। सोने की रस्सी है, चाँदी की पटरी है और शेषनाग (लक्ष्मण) झूला झुला रहे हैं। लक्ष्मी सखी के सुन्दर प्रीतम हैं। गुरु ने उनको ऐसा ही उपदेश दिया है।

(७)

लागेला हिलोरवा कदम तरे गोआलिनि करत बिहार ॥
एक ओर हम धनी एक ओर राधिका बिचेबिचे नन्दकुमार।
चारु ओर साम घटा सखी गरजे झहर-झहर फुहुकार ॥
बाजेला बंसी उजे बिगेला तान सागरवा के पार।
लछिमी सखी के सुन्दर पियवा जे कत मिलेला करतार ॥

कदम्ब के नीचे हिडोला लगा हुआ है। गोपी विहार कर रही है। एक ओर मैं सुहागिन हूँ और दूसरी ओर राधिका हैं। बीच में नन्द के कुमार श्रीकृष्ण हैं। अरी सखी, चारों ओर काली-काली घटाएँ गरज रही हैं। मेघ बरस रहा है। वंशी बजती है। वह सागर के उस पार तक अपनी तान फेंक रही है। लक्ष्मी सखी कहते हैं कि हमारे प्रीतम तो बड़े सुन्दर हैं। वे कर्तार कहाँ मिलेंगे ?

(८)

नइहर. में मोरा लागेला हिरोलवा जगमग जनक फुलवार।
कइसे चलों लाज सरम कर बतिया पिया मोर अइले ससुरार ॥
एक ओर हम धनी एक ओर सखिया बीचे-बीचे सुन्दर भतार।
चलु सखी चलु सुख करि लेहु सजनी ना त नाटक जाला हार ॥
लछिमि सखी के सुन्दर पियवा देखिलेहु अधम उधार ॥

मेरे मायके में जनक की जगमगाती फुलवारी में हिंडोला लगा हुआ है। मैं वहाँ कैसे जाऊँ ! लाज की बात है। मेरे पिया ससुराल आये हुए हैं। एक ओर मैं बैठती और दूसरी ओर मेरी सखियाँ बैठतीं हैं और बीच में सुन्दर पिया बैठते हैं। अरी सखी, चलो (लाज छोड़कर) हम सुख कर लें। नहीं तो इस संसार रूपी नाटक के खेल में हमारी हार होने जा रही है। लक्ष्मी सखी कहती हैं कि हमारे प्रीतम बड़े सुन्दर हैं। अधमों के उद्धारक उस पिया को तुम देख लो।

(९)

लागेला हिरोलवा गगनपुर जहँवा झूला झूलेला मोरे कंत।
कइसे चलों लाज सरम सखी मोरा ससुर भसुर[1] सभ संत ॥
रात कर डोलिया सुरत कर डोरिया सुन्दर बइठेला महंथ।
चारू ओर ए सखी अदभुत सोभा हीरा लटकेला लटकंत ॥
लछिमी सखी के सुन्दर पियवा पुरुष मिलेला भगवंत ॥

अगमपुर में हिडोला लगा हुआ है। जहाँ मेरे प्रियतम झूला झूल रहे हैं। अरी सखी, मैं वहाँ कैसे जाऊँ ? मुझे लाज लगती है। वहाँ सब संत मेरे ससुर और भसुर हैं। मैं तो रात रूपी डोली में सुरति की डोरी से हिंडोला लगाऊँगी, अर्थात् रात को

१. पति का बड़ा भाई, जेठ।

ध्यान धर कर झूलूँगी। उसी में सुन्दर कंत लेकर बैठूँगी। उसके चारों ओर अद्भुत शोभा होगी और हीरों के तमाम लटकन वहाँ लगे होंगे। लक्ष्मी सखी को सुन्दर पिया के रूप में परम पुरुष भगवान् मिल गये।

(१०)

चल सखी चल धोअे मनवा के मइली।
कथी के रेहिया कथी के घइली। कवने घाट पर सउनन भइली॥
चितकर रेहिया सुरतकर घइली। त्रिकुटी घाट पर सउनन भइली॥
ग्यान के सबद से काया धोअल गइली। सहजे कपड़ा सफेदा हो गइली॥
कपड़ा पहिरि लछुमी सखि आनंद भइली। धोबी घरे भेज देहली नेवत कसइली॥

सखी कहती है—'अरी सखी, चलो मन की मैल धोलें। किस चीज की रेह (सज्जीदार मिट्टी) होगी और किसका घड़ा होगा? किस घाट पर सउनन (सज्जी मिट्टी में कपड़ों को भींगोना) होगा।' पहली सखी उत्तर देती है—'चित्त की तो रेह होगी और सुरति (सुमिरन) का घड़ा बनेगा और त्रिकुटी घाट (ध्यान) पर सौंदन होगा।' अतः दोनों सखियाँ जाकर त्रिकुटी घाट पर ज्ञान के शब्दों से शरीर धोती हैं सहज ही उनका शरीर-रूपी वस्त्र स्वच्छ हो गया। लक्ष्मी सखी कहती हैं, धाए हुए स्वच्छ वस्त्र को पहनकर हमारी सखी आनंद-मग्न हो उठीं। उन्होंने धोबी के घर (गुरु के घर) निमंत्रण की सुपारी भेज दी।

(११)

मानऽ मानऽ सुगना हुकुम हजूरी॥
तन-मन-धन सब मिलि जइहें धूरी।
दूनो हाथे करबे जइसन मिलिहें मजूरी॥
रती भर घाट ना होई मजूरी।
एक दिन मरे के परी काटि काटि खूरी॥
लछुमी सखी कहे अबहूँ ले चेतो।
ना त जम्हू आके मुँहे मुँहे थूरी॥

अरे तोता (आत्मा), तू हुजूरी (सरकारी आज्ञा) को मान। तेरे तन, मन, धन सब एक दिन धूल में मिल जायेंगे। तू दोन हाथों से जैसा कर्म करेगा, वैसी ही मजदूरी भी तुझे मिलेगी रत्ती-भर भी कमी-बेशी मजदूरी मे नहीं होगी। एक दिन तुझे खूरी काट-काट कर (एँड़ी रगड़-रगड़कर) मरना पड़ेगा। लक्ष्मी सखी कहते हैं कि अबसे भी तू चेत जा; नहीं तो यमराज आकर मुँह को खूब थूर (कुचल) देगा।

(१२)

जागिये अवधेस ईस बसिला-हखान मँगवाइये।
जे अबले कछु बनल नाहीं अबहूं ले बनवाइये॥
सुन्दर ऐसो कुटी गगनमंडल में छवाइये।
जे रास वो विलास हथि रैनिया गँवाइये॥

जेमें झुलि-झुलि राम राम-नाम गुण गवाइये।
जे खोआ-खांड़, बरफी लड्डू बइठल-बइठल खवाइये ॥
खुद्दी नाहीं जूरे ताको अमृत से सनवाइये।
भासाक ओ पोसाक छिनि लंगे बैठवाइये ॥
लछिमी सखि के सुन्दर पियवा नाल भरवाइये।
राम नाम ना भजे ताको ठाढ़ करवाइये ॥

यहाँ भगवान् को बढ़ई (कारीगर) के रूप में मानकर लक्ष्मी सखी ने स्तुति की है। हे अवध के मालिक (ईश्वर), जागिए। अब बसुला और रुखानी[1] मँगवाइए। अब तक जो कुछ नहीं बना, उसको आप अब भी बनवाइए। मेरे लिए गगनमंडल में एक सुन्दर कुटी छवा दीजिए। उसमें रास-विलास करके मेरी रात्रि को सानन्द व्यतीत कराइए। उस कुटी में मुझे झूला झुलाकर राम-नाम का गुण गवाइए। खोआ, मिसरी, बरफी, लड्डू, आदि को उस कुटी में बैठे-बैठे मुझे खिलाइए। जिसको खुद्दी (तण्डुल-कण) नहीं जुड़ती हो, उसे अमृत से सना हुआ भोजन दीजिए। वेष-भूषा को छीनकर उसे नग्न बैठाइए; अर्थात् उसके सभी भेद-भावों को मिटाकर अपने में मिलाइए। लक्ष्मी सखी के प्रियतम बड़े सुन्दर हैं। हे प्रियतम, आप मुझसे पूरा नाल भरवा लीजिए; अर्थात नाल उठवा कर कसरत करा लीजिए। जो राम-नाम नहीं भजे, उसे दिन-रात हमेशा खड़ा रखने का दंड दीजिए।

यह छन्द विशुद्ध भोजपुरी का है, परन्तु अन्त के क्रियापद हिन्दी के हैं।

तेगअली 'तेग'

आप बनारस के रहनेवाले मुसलमान कवि थे। आपकी लिखी एक पुस्तक 'बदमाश-दरपण' प्राप्त हुई है[2]। यह पुस्तक कवि की प्रौढावस्था की रचना जान पड़ती है। इसलिए, अनुमान है कि कवि का जन्म उन्नीसवीं सदी पूर्वार्द्ध के अन्त में हुआ होगा।

पुस्तक उर्दू 'शेर' के छन्द में लिखी गई है। आद्योपान्त गजलें हैं। इसको हम तेगअली का भोजपुरी 'दीवान' कह सकते हैं। पश्चिमीय भोजपुरी का शुद्ध रूप इसमें मिलता है। यह एक उच्च कोटि का काव्य है। लाला भगवानदीन कहा करते थे कि काव्य का बहुत प्रौढ़ रूप 'बदमाश-दरपण' में व्यक्त किया गया है। इस पुस्तक की कविता की भोजपुरी में बनारसीपन का पुट अधिक है।

आँख सुन्दर नाहीं यारन से लड़ावत बाटऽ।
जहर क छूरी करेजवा में चलावत बाटऽ ॥१॥

१. बढ़ई का एक औजार, बटाली।
२. काशी-नागरी-प्रचारणी-पुस्तकालय में पुस्तक सुरक्षित है। यह काशी के 'भारत-जीवन' प्रेस से सन् १८६५ ई० में छपी थी।

सुरमा आँखी में नाहीं ई तू छुलावत बाटऽ।
बाढ़[1] दुतर्फी बिछुआ[2] पै चढ़ावत बाटऽ ॥२॥
अत्तर[3] देही में नाहीं तू ई लगावत बाटऽ।
जहर के पानी में तरुआर[4] बुझावत बाटऽ ॥३॥
रोज कह जालऽ कि आइला से आवत बाटऽ।
सात चौदहऽक ठेकाना तू लगावत बाटऽ ॥४॥
सच कहऽ बूटी कहाँ छानलऽ सिंघा राजा।
आज कल काहे न बैठक में तू आवत बाटऽ ॥५॥
तार[5] में बूटी के मिललऽ कि तुहें ले गेलीं।
लामे-लामे[6] जे बहुत सान बुझावत[7] बाटऽ ॥६॥
धैके कोदो[8] तू करेजा पै दरलऽ बरबस।
ई हमरन के भला काहे सुआवत[9] बाटऽ ॥७॥

× ×

भौं चूम लेइला केहू सुन्दर जे पाइला।
हम ऊ हईं जे ओठे पर तरुआर खाइला ॥८॥
चूमीला माथा जुलफी क लट मुहे में नाईला।
संझा सबेरे जीभी में नागिन डसाईला ॥९॥
डंन कैके अपने रोज त रहिला[10] चबाइला।
राजा[11] के अपने खुरमा औ बुंदिया चभाइला ॥१०॥
सौ सौ तरे[12] के मूड़े[13] पै जोखिम उठाइला।
पै राजा तुहें एक बेरी[14] देख जाइला ॥११॥
कहलीं कि काहे आँखी में सुरमा लगावलऽ?
हँस के कहलैं छूरी के पत्थर चटाइला ॥१२॥
पुतरी मतिन[15] रक्खब तुहें पलकन के आड़ में।
तोहरे बदे[16] हम आँखी में बैठक बनाइला ॥१३॥
हम खरमिटाव[17] कैली हाँ रहिला चबाय के।
भँवल धरल बा दूध में खाजा तोरे बदे ॥१४॥
अपने के लोई लेहलीं हाँ कमरी भी बा धईल[18]।
किनलीं[19] हाँ राजा लाल दुसाला तोरे बदे ॥१५॥
अत्तर तू मल के रोज नहायल कर रजा।
बीसन[20] भरल धइल बा कराबा[21] तोरे बदे ॥१६॥

१. शान चढ़ाना। २. छोटा तेगा। ३. इत्र। ४. तलवार। ५. भंग का नशा। ६. लम्बी-चौड़ी डींग। ७. शेखी बघारना। ८. कलेजे पर कोदो दलना = अत्याचार करना। ९. सूआ खोभना, सालना। १०. चना। ११. प्रिय। १२. तरह। १३. शिर। १४. बार, दफा। १५. सदृश। १६. निमित्त। १७. खराई मिटाना = प्रातःकाल मुँह धोकर पहले-पहल कुछ खाकर पानी पीना। १८. रखा हुआ। १९. खरीदा है। २०. बीसों। २१. सुगन्ध-पात्र।

नागिन मतिन[1] त गाले पै जुलफी क बार बाय।
भौं औ बरौनी रामधै[2] बिच्छी क आर[3] बाय ॥१७॥

तरुआर तीर बर्छी और खंजर क धार बाय।
खूनी[4] क हमरे आँख छुरी बा कटार बाय ॥१८॥

एक दू मिट्ठी तू ओठे क कबौ दऽ राजा।
रामधै तेग बहुत दिन से भुखायल बाड़े ॥१९॥

अंगार बोरसी[5] क बाढ़ऽ बनल तू जाड़ा में।
गरम करऽ कबौ हमरो बगल सुनऽत सही ॥२०॥

जब से फंदा में तोरे जुलफी के आयल बाटीं।
रामधै भूल भुलैया में भुलायल बाटीं ॥२१॥

मून-मून[6] आँख तोहें देखीला राजा रामधै।
न त बूटी क नसा बा न उँघायल बाटीं ॥२२॥

साथ परछाही मतिन राजा फिरीला दिन रात।
बन के पुतरी तोरे आँखी में समायल बाटीं ॥२३॥

राजगद्दी बस हमें तेग राजा दे देलैं[7]।
जब कहलें कि तोहरे हाथ बिकायल बाटीं ॥२४॥

रिसी मुनी से भी तोरे बदे बदल बाटी।
न दाना खात हईं औ न पीयत जल बाटीं ॥२५॥

कहे-सुने के ऐ संगी गुरु[8] भयल बाटीं।
ले एक पंछी के चंग पर हम चढ़ल बाटीं ॥२६॥

ऐ राजा देखीला जुलफी के जाल से तोरे।
छुटब न रामधै चिरई[9] मतिन बझल बाटीं ॥२७॥

जेहल में तोड़ली हैं बेड़ी और हथकड़ा डण्डा।
से तोहरे जुलफी के फंदा में हम फसल बाटीं ॥२८॥

पत्थर के पानी आग के बायू के सामने।
जा जा के रजा मूड़ झुकाइला तोरे बदे ॥२९॥

जुल्फी तू अपने हाथे में धैके कसम ई खा।
नागिन डसे हमें जे कभौं तोसे छल[10] करब ॥३०॥

---

१. सदृश। २. राम-शपथ। ३. डंक। ४. सतानेवाला प्रिय व्यक्ति। ५. अंगीठी, गोरसी। ६. आँख मूँद-मूँदकर, ध्यान धर-धरकर। ७. दे दिया। ८. उस्ताद (बनारसी बोली में), और भारी। ९. चिड़िया। १०. दगा, धोखा।

महाराज खड्गबहादुर मल्ल

श्री खड्गबहादुर मल्ल, राज्य मझौली (गोरखपुर) के राजा थे। आप बड़े मधुर प्रकृति के पुरुष थे। सन् १६१० ई० में इलाहाबाद में जो नुमाइश हुई थी, उसी में आग लग जाने के कारण आपका स्वर्गवास वहीं हुआ। आप का उपनाम 'लाल' था। आप हिन्दी और भोजपुरी के बड़े सुन्दर कवि थे। आपने भोजपुरी में 'सुधाबूँद' नामक पुस्तक[1] कजली गीतों में लिखी है। आपकी कजलियाँ बहुत रसोत्पादक हैं। उनकी तारीफ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भी की है। 'सुधाबूँद' के सभी छन्द भोजपुरी में नहीं हैं, कुछ व्रजभाषा के भी हैं। आपकी भोजपुरी-भाषा में पछाहीं भोजपुरी और गोरखपुरिया अवधी का भी पुट है।

(१)

सखी ! बाँसे की बँसुरिया जियरा मारे रे हमार ॥
नीच जाति मोहन-मुँह लागलि, बोले नाहिं सँभार।
लाल अधर रस पान करति है बिख उगिलति निरधार॥ सखी, बाँसे० ॥

(२)

प्यारे ! धीरे से झुलावऽ झोंका सहलो न जाय॥
जसऽ जसऽ पेंग परत इत-उत सों, तस-तस जिया सहराय ॥ प्यारे ! धीरे० ॥

(३)

कैसे झूलें रे हिंडोरा जिनके सैंया परदेस।
औरन के संग प्रीति लगाई, घर के किछु न संदेस ॥ कैसे झूलें० ॥

(४)

तोर पिया बोले बड़ी बोल, मोरी ननदी !
केतनो कहीं तनिको नाहीं माने, झूटे-मूठे करेला ठठोल, मोरी ननदी !
बाँहि पकरि बरबस बिलमावे, लूटेला जोबन अनमोल, मोरी ननदी !

(५)

परदेसिया के प्रीत जइसे बदरा के छाँह ॥
प्रीति लगा के निरबाह करत नहिं, नाहक पकरे बाँहिं ।
लाल चारि दिन नेह लगाके दाग देत जिय माहिं ॥ परदेसिया० ॥

(६)

अबहीं थोरी-सी उमिरिया सेजिया चढ़तो डेराय ॥
बाँह गहत तन थर-थर काँपे, उर पकरत घबराय ।
अंक लगावत लाल बाल, वह बार-बार बलखाय ॥ अबहीं थोरी० ॥

---

1. सन् १८८२ ई० में यह खड्गविलास प्रेस, पटना से प्रकाशित हुई थी।

(७)

अब त छोटकी रे ननदिया कुछ तिरछावे लागलि नैन॥
मुरि[1] मुसकाये लागलि निज तन ताकि-ताकि, करे लागलि कुछु-कुछु सैन।
छिपि-छिपि लाल बाल सखियन से सुने लागलि रस बैन॥ अब त छोट०॥

(८)

पिया निरमोहिया नाहीं आवे रे भवनवाँ रामा,
रहि रहि आवेला झवनवाँ[2] रे हरी!
काहे मोरे अँचरा से तें जोरले रे दमनवाँ[3] रामा,
केहि कारन ले अइले गवनवाँ रे हरी!
चढ़ली जवनियाँ दूजे बहेला पवनवाँ रामा,
तीजे जियरा मारेला सवनवाँ[4] रे हरी!

(९)

आये रे सवनवाँ नाहीं आये मन-भवनवाँ[5] रामा,
जोहते[6] दुखाली[7] दूनो अँखिया रे हरी!
केहू ना मिलावे उलटे मोहे[8] समुझावे रामा,
दुख नाहीं बूझे प्यारी सखिया रे हरी!
केहि विधि जाई उड़ि पिया के मैं पाईं रामा,
उड़लो ना जाये बिना पँखिया रे हरी!

(१०)

पिया बिनु पपिहा की बोली मोसे सहलो ना जाय।
'पीउ कहाँ' कहि बोले पापी एक छन रहलो ना जाय।
लाल भैलन अइसन निरमोही अब कुछ कहलो ना जाय॥ पिया बिनु पपि०॥

(११)

मनभावन बिन रतिया सावन के भयावन भइलो ना॥
बादर गरजे जियरा लरजे, बरजे पपिहा न कोय,
दैया सूनी सेजिया साँपिन-सी भयावनि भइलो ना॥
प्यारी भइली अब तो कूबरी रे सवतिया उनके लेखे[9],
मोरी चढ़ली जवनियाँ हाय अपावन भइलो ना॥

(१२)

माथे दे-दे रोरिया[10] नई-नई गोरिया,
सु हिलि-मिलि गावेली कजरिया॥

१. मुँह मोड़कर। २. मूर्छा, घुमरी। ३. दामन, चादर या अँगरखा का छोर।
४. सावन मास। ५. मनभावन, प्रियपति। ६. बाट जोहना, प्रतीक्षा।
७. दुखती है। ८. मुझे। ९. वास्ते, लिए। १०. रोली का टीका।

मोहनी मूरतिया उठली दूनो छतिया,
लगाये जाली बाँकी रे नजरिया ।।
नाके सोहे मोतिया पहिरे धानी धोतिया,
उजारी डारैं लगली बजरिया ।।

(१३)

उनके मुँहवाँ के उजेरिया देखि, चन्दा छिप छिप जाय ।।
निरखि अलक कारी घुँघुरारी नागिनहू बल खाय ।
लाल लाला के सौंहे[1] बिम्बा फल मुरझाय ।। उनके मुँहवाँ० ।।

(१४)

कलपत बीते सखी मोहे सारी रतिया,
लहरी,[2] लड़िका छयलवा[3] तबो जागेना ।।
मुहवां में चूमों-झूमों ले-ले उनके कोरवा[4],
लहरी अँखिया ना खोले गरवां लागे ना ।।
केतनों विधि सिखाओं समुझाओं,
लहरी कौनो विधि मुरहा[5] रस पागे ना ।।

(१५)

कैसे में बिताओं सखी सावन के महिनवाँ, लहरी सैंया निरमोही परदेसवा ना ।।
गवनवाँ ले आये मोहे घर बैठाये, लहरी, दूबार[6] भइलों एही रे अँदेसवा[7] ना ।।
आपो नाहीं आवै पापी, भेजे नाहीं पतिया, लहरी केहू से पठावे ला सँदेसवा ना ।।

(१६)

कड़कै बिजुलिया धड़कै छतिया मोर जनिया[8]
तापर रिमि-झिमि बरसेला सवनवाँ रे हरी !
भावे ना भवनवाँ पिय बिन आवेला झवनवाँ[9] रामा
सखि कब होइहैं मोरा गवनवाँ रे हरी !
केहू ना सुनावे टोपीवलवा[10] के अवनवाँ रामा
जियरा मारे पूरवा पवनवाँ रे हरी !

(१७)

चमकै रे बिजुलिया, पिया बिन कड़कै मोरी छतिया रामा,
कल ना परेला दिन-रतिया रे हरी !
हमें बिसराय भइले, कुबरी के सँघतिया[12] रामा,
आखिर तो अहिरवा के जतिया रे हरी !

१. सामने । २. कमसिन । ३. कमसिन पति । ४. कोड़, गोद । ५. मूढ़, अरसिक । ६. दुर्बल । ७. चिन्ता । ८. सखि । ६. मूर्च्छा । १०. टोपीवाला (छैला पति) । ११. फटना । १२. संगी-साथी ।

आपु नाहीं आवे पापी भेजे नाहीं पतिया रामा,
कैसे के बिताचो बरसतिया रे हरी !

(१८)

तोरी अँखिया रे नशीली, भौहें चढ़ली कमान
कतुना घायल इत-उत लोटें कतुना तजले परान।
लाल भये कितने दीवाने बकत[1] आन-के-आन[2]
तोरी अँखिया रे नशीली भौहें चढ़ली कमान ॥

पण्डित बेनीराम

आप काशी के रहनेवाले थे। आपका समय हरिश्चन्द्र जी के समय से कुछ ही पूर्व था। आप केवल कजली लिखा करते थे। काशी और मिर्जापुर में कजली गाने की प्रथा बहुत अधिक है और मनचले कवि इस छन्द में अच्छी रचनाएँ करते हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी-भाषा' में कजली छन्द का इतिहास लिखा है जिससे इस छन्द की प्रसिद्धि ज्ञात होती है। उन्होंने आपका भी नाम उद्धृत करके आपकी एक कजली का उदाहरण भी दिया है, जो नीचे उद्धृत है। आपका पता हमें उसी पुस्तक से लगा। आपने काफी रचनाएँ की थीं।

(१)

काहे मोरी सुधि बिसराये रे बिदेसिया !
तड़पि - तड़पि दिन रैना गँवायो रे
काहे मोसे नेहिया लगाये रे बिदेसिया !
अपने तो कूबरी के प्रेम भुलाने रे
मोह लिख जोग पठाये रे बिदेसिया !
जिन मुख अधर अमी रस पाये रे
तिन विष पान कराये रे बिदेसिया !
कहैं 'बेनी राम' लगी प्रेम कटारी रे
ऊधोजी को ज्ञान भुलाये रे बिदेसिया !

बाबू रामकृष्ण वर्म्मा 'बलवीर'

आप काशी के कवि थे। हिन्दी (ब्रजभाषा) में आपने काफी रचनाएँ की थीं। आप 'रत्नाकर' जी के मित्रों में थे। काशी के साप्ताहिक 'भारत-जीवन' के आप सम्पादक थे।

१. बड़बड़ाना। २. और का और, अंड-बंड।

सन् १८६५ ई० में आपने भोजपुरी में तेगअली 'तेग' द्वारा लिखित 'बदमाश दर्पण' का सम्पादन करके प्रकाशित किया था। सन् १६०० ई० में आपने भोजपुरी में 'बिरहा-नायिका-भेद' लिखा और उसे 'भारत-जीवन-प्रेस' से प्रकाशित किया। बिरहा-नायिका-भेद बहुत प्रौढ़ काव्य है। कुछ उक्तियाँ यहाँ दी जाती हैं—

आलम्बन विभाव

लजिया दबावे मनमथवा सतावे मोसे, एको छन रहलो न जाय।
लखि 'बलबिरवा' जमुनवा के तिरवा री हियरा के धिरवा नसाय॥१॥

नायिका

रूपवा के भरवा[१] त गोरी से पयरवा[२] रे सोझवा[३] धरल नाहीं जाय।
लचि-लचि जाला दैया गोरी की कमरिया, जोबनवाँ के बोझवा दबाय॥२॥
तसवा की सरिया में सोने के किनरिया उँजरिया करत मुख जोति।
अगर-बगर[४] जर-तरवा[५] लगल बड़ जगर-मगर दुति होति॥३॥
जोबना उलहिया[६] री नवकी[७] दुलहिया हो गोरा-गोरा गोरी तोरा गाल।
चकवा सरिस तोरा जोबना लसत देह, दिपै मानो सोना के मसाल॥४॥
गोरिया छबीली तोरी अँखिया रसीली भोरी[८] बतिया रँगीली रसखान।
मुख चँदवा बिमल दोउ जोबना-कमल 'बलबिरवा' के जियरा-परान[९]॥५॥

स्वकीया

आज बरसाइत[१०] रगरवा[११] मचाओ जिन नहके[१२] झगरवा उठाव।
अपनो ही बरवा[१३] मैं पूजौं 'बलबिरवा' पीपरवा[१४] पूजन तूही जाव॥६॥

(मुग्धा) अज्ञात यौवना

तैहूँ न बतावे गोइयाँ झूठे भरमावे काहे सवती के मुहवाँ नराज।
मोरी छतिया पै करवा सुख 'बलबिरवा' री अँखिया मुँदत केहि काज॥७॥
भर-भर आवे मोरी अँखिया न जानूँ काहे, देखे के लागल बड़ चाव।
ओहू मोहे छिप-छिप सजनी निहारे 'बलबिरवा' के मतवा बताव॥८॥
बईद-हकीमवा बुलाओ कोइ गुइयाँ, कोई लेओ री खबरिया मोर।
खिरकी से खिरकी ज्यों फिरकी फिरत दुओ, पिरकी उठल बड़े जोर॥९॥

अर्थात्—अरी सखी, तू भी नहीं बताती। तू भी मुझे झूठे ही बहला रही है। मेरी सौत का मुख आज उदास क्यों है? आज क्यों मेरी छाती पर हाथ रखकर सुख से किस काम के लिए बलवीर प्रीतम आँखें मूँद देते थे? मेरी आँखें आज भी भर आती हैं। मैं नहीं जानती कि क्यों उसे देखने के लिए बड़ा चाव हो रहा है। वे भी छिप-छिप-

---

१. भार। २. पैर। ३. सीधा। ४. अगल-बगल। ५. जरी का तार। ६. उभड़े हुए। ७. नई। ८. भोलीभाली। ६. प्राणाधार। १०. वट-सावित्री के पर्व का दिन। ११. रगड़, संघर्ष। १२. नाहक, व्यर्थ। १३. पति और वट-वृक्ष। १४. पीपल का पेड़ और पराया पति।

कर मुझको निहार रहे हैं। री सखी, उस चकोर का मेरे साथ क्या रिश्ता है, बताओ। अरी सखी, किसी वैद्य-हकीम को बुला ले आओ, जो मेरी खबर ले। मुझे दो पिरकी[1] (दो कुच) बड़े जोर की उठ आई हैं। मैं इस खिड़की से उस खिड़की तक फिरकी की तरह (छटपटाकर) दौड़ा करती हूँ।

ज्ञात यौवना

हथ-गोड़वा[2] के ललिया निरख के छुबिलिया मगन होली मनवाँ मँझार।
हेरी-हेरी जोबना निहारे दरपनवाँ में बेरि-बेरि अँचरा उघार ॥१०॥
उठलें जोबनवाँ नैहर के भवनवाँ गवनवाँ भयल दिन चार।
भावे नाहीं गोरिया के गुड़िया के खेल नीक लागे बलबिरवा भतार ॥११॥

फिरलीं रोहनियाँ[3] जोबनवाँ के पनियाँ[4] जवनियाँ बढ़ल घनघोर।
रोवेली सवतिया निरखि के पिरितिया, बढ़त 'बलबिरवा' के जोर ॥१२॥
तोहरी नजरिया री प्राण पियरिया मछुरिया कहेलें कवि लोग।
तोहरा जोबनवा त बेलवा के फल 'बलबिरवा' के हथवा ही जोग ॥१३॥

नवोढ़ा

हथवा पकरि दुओ बहियाँ जकरि पिय, सेजिया बैठावे जस लाग[5]।
झटक-पटक मानो बिजुरी छुटक 'बलबिरवा' के कोरवा से भाग ॥१४॥

विश्रब्ध नवोढ़ा

धुकुर-पुकुर[6] सब अपने छूटल अब, रमे-रमे जियरा थिरान।
सेजिया के भीरी[7] गोरी जाके देवे लागल 'बलबिरवा' के हथवा में पान ॥१५॥

मध्या

बगरे[8] सुतेली मोरी ननदी जिठनियाँ बियहवल दुलहवा में लजाउँ।
रतिया के उठे सैयाँ[9] चोरवा की नैयाँ[10] लाजन धरतिया गरि जाउँ ॥१६॥
लजिया की बतिया ई कैसे कहीं ऐ भौजी जे मोरे-बूते[11] कहलो न जाय।
पर[12] के फगुनवाँ के सियली चोलियवा में, अबो[13] न जोबनवा अमाय[14] ॥१७॥
छतियाँ लगति रस बतियाँ पगति सारी रतियाँ जगति बिध केल।
मैया भैया न सुहावे मनमथवा सतावे मन भावे 'बलबिरवा' के खेल ॥१८॥

परकीया

जनम-जनम कर पुनवाँ[15] के फल मोरे गउरि-गोसाइनि[16] हेरि।
मइया! जोर करवा[17] में माँगो इहे ववरा[18] जे कीजे 'बलबिरवा' की चेरि ॥१९॥

१. फोड़ा। २. हाथ-पैर। ३. रंगत, रोशनी। ४. पानी, शोभा। ५. जैसे ही (बैठाने) लगा। ६. धड़कन, हिचक। ७. निकट। ८. बगल में ही। ६. स्वामी। १०. तरह। ११. मुझसे। १२. गत वर्ष। १३. इस वर्ष। १४. अँटना। १५. पुण्य। १६. स्वामिनी पार्वती। १७. हाथ। १८. वरदान।

गुप्ता परकीया

ननदी जिठनियाँ रिसावें चाहे गोइयाँ मारे मोहिं ससुरा भतार।
बगरे[1] की कोठरी में सूतब न दैया उहाँ, झपटेला मुसवा-बिलार ॥ २० ॥

वचनविदग्धा

सखी न सहेली में तो पड़ली अकेली, मोरी सोने-सी इजतिया बचाव।
हथगोड़वा में मेंहदी लगल 'बलबीर' मोरा, गिरऽल[2] अँचरवा धराव[3] ॥ २१ ॥

रूपगर्विता

मोरी बहियाँ बतावे 'बलबिरवा' सरोजवा, त हरवा गरवा में कि[4] न देत।
जब मुँहवाँ कहला मोर चँदवा सरिस, कहु चँदवै निरखि कि न लेत ॥ २२ ॥

भावार्थ—हे सखि ! वह नायक, मेरी बांहों को कमलनाल कहता है तो उस को क्यों नहीं हार बनाकर अपने गले में डालता है। वह मेरे मुख को चन्द्रमा के समान कहता है तब उससे कहो कि चन्द्रमा को ही देख लिया करे।

प्रोषितपतिका

फुलिहें अनरवा सेमर कचनरवा पलसवा गुलबवा अनन्त।
बिरहा[5] क बिरवा[6] लगायो 'बलबिरवा' सो फुलिहें जो आयो है बसंत ॥ २३ ॥
रजवा[7] करत मोर रजवा[8] मथुरवा में हम सब भइलीं फकीर।
हमरी पिरितिया निबाहे कैसे ऊधो, 'बलबिरवा'[9] की जतिया अहीर[10] ॥ २४ ॥

खंडिता

ओठवा के छोरवा कजरवा, कपोलवा प पिकवा के परली लकीर।
तोरी करनी समुझ के करेजवा फटत, दरपनवाँ निहारो बलबीर ॥ २५ ॥
तोरी लटपट पगिया औ डगमग डेगिया[11] तू अँगिया लगावे मोरे जान।
जावो छावो[12] वोही गेहिया[13] लगावो जहाँ नेहिया, तू जावो बलबिरऊ सुजान ॥ २६ ॥

उत्कंठिता

डगरा[14] के लोगवा से झगरा भइल किधौं बगरा[15] के लोगवा नराज[16]।
सगरा रयन मोहि तकतै बितल बलबिरवा न आयल केहि काज ॥ २७ ॥

१. पास के। २. खिसका हुआ। ३. पकड़ाओ। ४. क्यों। ५. वियोग। ६. पौधा। ७. राज्य। ८. प्रिय (राजा)। ९. बलदेव के भाई श्री कृष्ण। १०. ग्वाला, हृदयहीन। ११. डग। १२. बिराजो, बसो। १३. गेह, घर। १४. रास्ता। १५. पड़ोस। १६. नाराज, असंतुष्ट।

स्वाधीनपतिका

मुखवा निहारे तन-मन तोपे बारे आठो छन रहेला हजूर[1]।
अपने हाथन तोर बरवा सँवारे 'बलबिरवा' त भइल बा मजूर ॥ २८ ॥
प्यारे की पियरिया[2] जगत से नियरिया[3] सुनरिया[4] अनूठी तोरी चाल।
गोरी तोहे कोरवा में अपने बइसवले[5] होला प्यारी 'बलबिरवा' निहाल ॥ २९ ॥

प्रवत्स्यत्-पतिका

दुखवा के बतिया नगीचवो[6] न आवे गुइयाँ[7] हँसी-खुसी रहला हमेस।
बजुआ[8] सरकि[9] कर-कँगना भइल सुनि प्यारे के गवनवाँ[10] बिदेस ॥ ३० ॥

परस्पर भाग्य-वर्णन

लखि बनमाली सब तिरिया[11] सिहाली[12] धन-धन गोरी तोहरा सोहाग।
तोरी-सी पियरिया[13] के गरवा [14]लगावै धन प्यारे 'बलबिरवा' के भाग ॥ ३१ ॥

रूपक

गोरा गोरा रँग हो भभुतवा रमौले मानो सेली[15] लाल ललिया लकीर।
रूपवा के भिखिया पलकिया[16] में माँगे 'बलबिरवा' की अखियाँ फकीर ॥ ३२ ॥
झपझप[17] झपकेलीं[18]सोई मानो गोरिया री झुक-झुक करेली सलाम।
(तोरे) गोड़वा[19] क धुरिया[20] बरौनियाँ से पोछे 'बलबिरवा' क अँखिया गुलाम ॥ ३३ ॥

महाराजकुमार श्रीहरिहरप्रसाद सिंह

महाराजकुमार श्रीहरिहरप्रसाद सिंह शाहाबाद जिले के दलीपपुर ग्राम के निवासी थे। आपके पिता का नाम महाराजकुमार श्रीभुवनेश्वरप्रसाद सिंह था। आपका वंश परमार (उज्जैन) राजपूतों का है। शाहाबाद में परमार (उज्जैन) राजपूत ८११ फसली में, धार नगर (उज्जैन) से, महाराज शान्तनशाह के नेतृत्व में, आये और यहाँ के चेरो और हैहय वंशी राजाओं को परास्त करके उन्होंने अपना राज्य कायम किया। इसी वंश में आपका जन्म हुआ था।

आपकी हिन्दी-रचनाएँ बहुत सुन्दर, प्रौढ़ तथा सरस होती थीं। आपने अपने अल्प जीवनकाल में ही हिन्दी की कविता की पाँच पुस्तकें लिखीं, जिनकी हस्तलिखित प्रतियाँ मिली हैं। प्रथम पुस्तक 'नखसिख' है, जिसके केवल तीन पृष्ठ प्राप्त हैं। दूसरी पुस्तक 'हरिहर शतक' है। इसमें १०० कवित्त और सवैया छन्दों में शिव-पार्वती की स्तुति है। तीसरी पुस्तक 'अस्मरनी या बिस्मरनी' है। इसके कवित्तों में अपने बेकार जीवन-यापन पर पश्चात्ताप है।

इस 'बिस्मरनी' की एक प्रति भोजपुरी में भी है। मालूम होता है, कवि ने प्रथम भोजपुरी में मूल रचना की, फिर उसका उलथा ब्रजभाषा में किया। चौथी पुस्तक 'अस्फुटावली' है। इसमें 'अस्फुट छन्दों' का संग्रह है। पाँचवीं पुस्तक 'षट्पदावली' है। यह अध्यात्म-विषयक है।

हरिहरप्रसाद सिंह को एक पुत्र हुआ जिनका नाम महाराजकुमार गिरिजाप्रसाद सिंह था। वे भी भोजपुरी में ही रचनाएँ करते थे। उन्होंने प्रचलित गीतों के छन्दों में बहुत से गीतों की रचना की थी। पर वे सब आज अप्राप्य हैं।

१ उपस्थित, हाजिर। २. प्यारी, प्रीति। ३. निराली। ४ सुन्दरी। ५ बैठाया। ६. नजदीक। ७. सखि। ८. बाजूबन्द। ९. खिसक कर। १०. गमन। ११. स्त्री। १२. सिहाती है। १३. प्यारी। १४. गला। १५. सूत की झोली। १६. पलकें। १७. ताबड़-तोड़। १८. झपकी लेती हैं। १९. पैर। २०. धूल।

हरिहरप्रसाद सिंह के ग्रन्थों का प्रकाशन होने पर ही उन कविताओं की गणना तथा आपकी प्रतिभा का पता पाठकों को लगेगा। वंश परम्परा की प्रथा के अनुसार अस्त्र-शस्त्र कला तथा घोड़े की सवारी आदि के आप बड़े प्रेमी और ज्ञाता थे। चिड़िया पालने के भी आप शौकीन थे।

आपकी 'बिस्मरनी' का भोजपुरी पाठ नीचे उद्धृत किया जाता है और उसका अर्थ हिन्दी में लिखने के स्थान पर उनकी व्रजभाषावाली रचना ही, प्रत्येक छन्द के नीचे दी जायगी।

कवित्त

(१)

लवलीं ना मन केहू देवन के अराधे में,
सधलीं ना मंत्र-तंत्र तीरथ ना नहैलीं हम,
नाहीं देलीं कान कबो कथा ओ पुरानन में,
एको बेर रुकिके ना हरिगुन गवलीं हम।
लेलीं ना नाम कबो ध्यान कइलीं ना जाम में भी,
ऐसन विधि बाम काम कवनो ना अइलीं हम।
एक प्रभु चरन सरोज रति पवले बिना,
विसय लुभाइ हाइ समय बितवलीं हम ॥१॥

व्रजभाषा

लायो मैं न मन कोऊ देवन के अराधन में,
साध्यो मैं न मंत्र नहिं तीरथ अन्हायो मैं।
दियो मैं न कान कबो कथा औ पुरानन में,
एक बार हूँ न अभिराम गुन गायौ मैं।
लियो मैं न नाम-ध्यान कियो नहिं जाम में,
ऐसी विधि बाम काहू काम हू न आयो मैं।
एक, प्रभु चरन-सरोज रति पाये बिना,
विषय लोभाय हाय समय बितायो मैं ॥१॥

(२)

जपलीं ना जाप सत बरत ना कइलीं कबो,
जोग जग्य दान में ना रति उपजवलीं हम।
छवलीं ना कुटी बन, जल में ना सैन कइलीं,
तापन में तपि के भी तन ना तपवलीं हम।
तिरपित ना कइलीं तर्पन से पितरन के,
देके पिण्ड-दान गया रिन ना चुकवलीं हम।
एक प्रभु चरन सरोज रति पवले बिना,
विषय लुभाइ हाइ समय बितवलीं हम ॥२॥

व्रजभाषा

जप्यो नहिं जाप सत ब्रत को न कियो,
कबो जोग जग्य दान में न रति उपजायो मैं।
छायो न कुटी बन जल सैन हूँ न लियो,
जाय तप तापन में तन को न तपायो मैं।

तृप्त न कियो मैं तर्पनादिक तें पित्रनि को,
देइ पिण्ड दान गया रिन न चुकायो मैं।
एक प्रभु चरन सरोज रति पाये बिना,
विषय लोभाय हाय समय बितायो मैं ॥२॥

(३)

बइठवलीं ना देव कबो मन्दिर न बनवलीं,
चटिया-चटसार के खरच ना चुकौलीं हम।
खोदवलीं ना कूप कबो पंथी पथ जीवन के,
हेत बिसराम घर भी ना उठवलीं हम,
लवलीं ना आराम जे आराम के देवैया जग,
बौली खोदवलीं ना तड़ाग बनववलीं हम।
एक प्रभु चरन सरोज रति पवले बिना,
बिसय लुभाइ हाइ समय बितवलीं हम ॥३॥

व्रजभाषा

थाप्यो मैं न देव कबो मंदिर बनायो नहीं,
नहीं पाठशालन को खरच चुकायो मैं।
खोद्यौ मैं न कूप कबों पंथी पथ जीवन के,
हेत बिसराम पथगृह न उठायो मैं।
लायौ न अराम जे अराम के देवैया जग,
बापी हूँ खुनायो न तड़ाग बनवायो मैं।
एक प्रभु चरन सरोज रति पाये बिना,
विषय लोभाय हाय समय बितायो मैं ॥३॥

(४)

थहलीं बहुत सिंधु खोदलीं बहुत भूमि,
गारि-गारि मूरि रस धातु के गलौलीं हम।
तोरलीं अनेक सिला फोरलीं कनेक गिरि,
ढहली अनेक गढ़ लोभ ललचौलीं हम॥
जतन त कइलीं बहुत कंचन रतन हेतु,
पवलीं ना कुछुओ वृथा बुद्धि के थकवलीं हम।
एक प्रभु चरन सरोज रति पवले बिना।
विषय लोभाइ हाइ समय बितवलीं हम ॥४॥

व्रजभाषा

डोहो मैं बहुत सिन्धु खोद्यो मैं बहुत भूमि,
डारि-डारि मूरि रस धातुहि गलायो मैं।
तोर्यो मैं बहुत सिला, फोर्यो मैं बहुत गिरि,
ढाह्यो मैं बहुत गढ़ लोभ ललचायो मैं॥
जतन कियो मैं बहु कंचत रतन हेतु,
पायो मैं कछू न वृथा बुद्धि ही थकायो मैं।

एक प्रभु चरन सरोज रति पाये बिना।
विषय लोभाय हाय समय बितायो मैं ॥४॥

(५)

पवलीं ना कबो हा बिनोद वर विद्या के,
चौसठों कला में ना एको अपनवलीं हम।
कर्म में बसौली ना उपासना में मन लवलीं,
नाहीं चित्त मात्र सत रूप में टिकवलीं हम॥
लोको ना सधलीं परलोक के ना सधलीं काम,
हाय बृथा पाइ नर-जनम गँववलीं हम॥
एक प्रभु चरन सरोज रति पवले बिना।
बिसय लुभाइ हाइ समय बितवलीं हम ॥५॥

ब्रजभाषा

पायो मैं न कबो विनोद वर विद्या को,
चौसठों कला में हूँ न एक अपनायो मैं।
कर्म में बसायो न उपासना में लायो मन,
नहीं चित्त मात्र सत-रूप में टिकायो मैं॥
लोक को न साध्यो परलोक को न साध्यो काम,
हाय बृथा पाय नर-जनम गँवायो मैं।
एक प्रभु चरन सरोज रज पाये बिना।
बिसय लोभाय हाय समय बितायो मैं ॥५॥

कवि टाँकी

आप गया जिले के भाँट कवि थे। आपका समय उन्नीसवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध था, जब रेलगाड़ी बिहार में पहले-पहल दौड़ी थी।

चलल रेलगाड़ी रँगरेज तेजधारी,
बोझाए खूब भारी हहकार कइले जात बा।
बइमे सब सूबा जहाँ बात हो अजूबा,
रँगरेज मनसूबा सब लोग के सुहात बा॥
कहीं नदी अउर नाला बाँधे जमुना में पुल,
कतना हजार लोग के होत गुजरान बा॥
कहै कवि टाँकी बात राखि बाँधि साँची,
हवा के समान रेलगाड़ी चलि जात बा॥

साहेब दास

आप शाहाबाद जिले के भाँट कवि थे। आपकी भोजपुरी-रचनाएँ भाँटों के कण्ठ में बहुत हैं आपका समय ईस्टइंडिया कम्पनी का राज्य काल था।

कम्पनी अनजान जान नकल के बना के सान,
पवन के छिपाइ मैदान में धरवले बा।

तार देत बार-बार खबर लेत आर-पार,
चेत करु टिकटदार गाड़ी के बोलवले बा ॥
कहेला से करे काज झालर अजबदार,
जे जइसन[1] चढ़नहार ओइसन[2] घर पवले बा ॥
कहे कवि 'साहेब दास' अजब चाल रेल के,
जे जहाँ चाहे ताके तहाँ पहुँचवले बा ॥

रमैया बाबा

रमैया बाबा शाहाबाद जिले के 'डिहरी' गांव में रहा करते थे। ये कीनाराम बाबा के चेलों में से अपनेको कहते थे। आपका मत औघड़-पन्थी था। आपके शिष्य का नाम खुब्बा बाबा था। खुब्बा भी कविता करते थे। रमैया बाबा के भोजपुरी के गीत जन-कण्ठों में आज भी वर्तमान हैं। डुमरांव, शाहाबाद के पचपन वर्षीय 'शिवपूजन साहु' से उनका परिचय और एक गीत के कुछ चरण प्राप्त हुए हैं। आपका समय १९ वीं सदी के अंत और २० वीं के प्रारम्भ का है।

रमैया बाबा जगवा में मूल बा रुपैया ॥
माई कहे ई तऽ[3] बेटा आपन भगिनी कहे संगभैया,
घर के नारि पुरुष[4] सम जाने निति उठि लेत बलैया ॥

परन्तु ये सभी रुपये के अभाव में क्या करती हैं—

माई कहे बेटा ई कइसन[5] बहिनी कहे कइसन भाई।
घर के नारि कुकुर अस जाने निति उठि लेति लड़ाई ॥

श्री बकस कवि

आप शाहाबाद जिले के रहनेवाले थे। आपका समय १९ वीं सदी का उत्तरार्द्ध है, जब रेल बिहार में जारी की गई थी। आपका विशेष परिचय तथा कविताएँ प्राप्त न हो सकीं।

घनाक्षरी

झक-झक करत, चलत जब हक हक,
धक धक करत, धरती धम धमके
कम-कम[6] चले में बाजि रहे झम-झम
छम-छम चले में चमचम चमके
कहे 'बकस' असमान के विमान जात
सोभा उड़ाते, असूले[7] दाम टटके[8]
अइसों में चटक[9] कहीं न देखो अटक[10]
धारी[11] देखि भटके, आपिस पर पटके[12]॥

---

१. जैसा। २. वैसा। ३. यह तो। ४. पति। ५. वैसा। ६. धीरे-धीरे। ७. वसूलती है। ८. ताजा, तुरत ९. फुर्तीला। १०. रुकावट। ११. झंडा। १२. पहुँचाती है।

लछुमनदास

लछुमनदास के गीत तो बहुत-से प्राप्त हैं, पर नाम-ग्राम का ठिकाना नहीं मिला। आपके प्राप्त गीतों में शृंगार और शान्त गीत अधिक मिले हैं। आप शाहाबाद या सारन जिले के निवासी थे।

आपके एक गीत में 'तिलंगा' शब्द का प्रयोग हुआ है जिससे ज्ञात होता है, कि आप सन् १८५७ ई० के राजविद्रोह के समय या उसके बाद तक जीवित थे।

खेमटा

(१)

पनिघटवा[१] नजरिया सटल[२] बाटे[३] ॥ टेक ॥
काली काली पुतरी मिलल एक दिसे[४] , उपरा पलकिया[५] हटल[६] बाटे।
टारे नजर नहीं, हारे गुजरिया,[७] बाँका मँवलिया डटल[८] बाटे ॥
कहेला लछुमन श्री राधे के मनवा, स्यामसुनर से पटल[९] बाटे ॥

पनघट पर श्याम की नजर (सटी हुई) लगी हुई है। काली-काली पुतलियाँ उसी दिशा में लगी हुई हैं और उनके ऊपर की पलकें हटी हुई हैं अर्थात् निर्निमेष श्याम पानी भरती हुई राधा को निहार रहे हैं। श्याम की नजर राधिका की ओर से हटती नहीं और राधिका भी उन्हें एकटक निहारने में हार नहीं मानना चाहतीं। बाँका कृष्ण इस नजर के युद्ध में डटा हुआ है। लक्ष्मणदास कहते हैं कि श्री राधिकाजी का मन श्यामसुन्दर से खूब लग गया है।

(२)

पैंया लागों, सुरतिया दिखाये जा ॥ टेक ॥
एक त जंगल में मोर बोलत बाटे, दूजै कोइलरि करे सोर।
मोरे राजा, अटरिया पर आजा ॥
बिरहा सतावे मदन सारी रतिया, जोबना करेला जोर।
मोरे राजा, नजरिया लड़ाये जा ॥
कहे लछुमन तरसावो न आवो, भइलीं बदनाम होला सोर।
मोरे राजा मुरलिया बजाये जा ॥

हे श्याम मैं! पाँव पड़ती हूँ। अपना रूप तू मुझे दिखा जा। एक ओर तो जंगल में ये मोर बोल रहे हैं और दूसरी ओर यह कोयल शोर मचा रही है। हे मेरे राजा! (इस बरसात में) तू अटारी पर आ जा। मुझे सारी रात तुम्हारा बिरह सताया करता है और मदन ऊपर से परीशान करता रहता है। मेरा यौवन जोर मार रहा है। हे मेरे राजा, तुम एक बार तो आकर मुझसे आँखें लड़ा जाओ। लक्ष्मण कहते हैं कि हे मेरे बालम, अब अधिक न तरसाओ। कृपा करके जल्द आओ। मैं तुम्हारे लिए बदनाम हो गई हूँ। तमाम इस बदनामी का शोर हो रहा है। हे मेरे राजा, जरा आकर तू मुरली भी तो बजा जा।

(३)

तनी देखो सिपाही बने मजेदार ॥ टेक ॥
कोई सिपाही ओ कोई तिलंगा,
कोई सखी साजे ठाट सूबेदार ॥

---

१. पनघट। २. सटा हुआ। ३. है। ४. दिशा, ओर। ५. पलकें। ६. हटा हुआ, विलग। ७. नायिका। ८. डटा हुआ। ९. मेल-मिलाप, खूब पटरी बैठी हुई है।

कोई भुजाली[1] औ कोई कटारी,
कोई दुनाली कसे हर बार ॥
बन-ठन के राधा चलली कुंजन में
चोर धरेली ललकार ॥
लछुमन दास हाथ नाहीं आवत
भागल फिरेला जसोदा-कुमार ॥ तनी देखो० ॥

(गीत में सन् १८५७ ई० के विद्रोह के समय के सिपाहियों का चित्र खींचा गया है।) कवि कहता है—जरा देखो तो ये सिपाही कितने मजेदार हैं। कोई तो सखी-सिपाही है और कोई तिलंगा है, (अँगरेजों की सेना के तैलंगी सिपाही)। कोई सिक्ख सूबेदार के ठाट में सजा है। किसी के हाथ भुजाली है और कोई कटारी से लैस है, तो कोई दुनाली बन्दूक से ही सुसज्जित है। इस तरह से बन ठन कर सैन्य सजाकर राधा व्रज में दधि-माखन के चोर (कृष्ण) को पकड़ने के लिए चली और कुंज में ललकार-ललकार कर चोर (माखन चोर और चित्तचोर) पकड़ना चाहती हैं। पर, लक्ष्मणदास कहते हैं कि यशोदा-कुमार राधा के हाथ नहीं लगता। वह भागता फिरता है (सखियों की सेना को कवि ने अँगरेजी सेना के ढंग पर कितना मजेदार सजाया है।)

(४)

राजा हमके चुनरिया रँगाइ दऽ ॥ टेक ॥
सुरुख[2] चुनरिया जरद[3] हो बूटियाँ,
ओरे-ओरे[4] गोटा-किनारी टँकाइ दऽ ॥
अँगिया अनोखी मदनपुरी सारी
तापर बदामी चदरिया मँगाइ दऽ ॥
'लछुमनदास' मगन जब होखे
तनी एक हँसिके नजरिया मिलाइ दऽ ॥

सुन्दर (वेश्या)

भारत में जब अँगरेजों का राज्य स्थापित हुआ था तब उनके विरुद्ध आवाज उठानेवाले देश-प्रेमियों को बदमाशों की श्रेणी में गणना करके वे जेल भेजवाते थे और फाँसी तक चढ़ा देते थे। कुछ अँगरेजों के दलाल भी थे। उन्हीं दलालों में से मिर्जापुर का एक 'मिसिर' नामक व्यक्ति था। उसने एक भले घर की 'सुन्दर'-नामक कन्या को बलात् पकड़ मँगाया था और उसे वेश्या बनाकर रख लिया था। इधर काशी में 'नागर'-नामक पहलवान अँगरेजों के हर बुरे आचरण और मिसिर-जैसे बदमाशों की हर बुरी हरकत का विरोध कर रहा था। उसने एक दिन मिसिर को भाँग छानने की दावत दी और मिसिर ने भी भोजन का निमन्त्रण दिया। 'ओभल' नामक नाले पर, चाँदनी रात में, दोनों दलों ने भाँग-बूटी छानी और पूरी-तरकारी खाई। भाँग छानकर और भोजन कर लेने पर दोनों दलों में लाठी चलने लगी। मिसिर का दल परास्त हुआ। मिसिर के साथ आई 'सुन्दर'- नामक वेश्या ने नागर से अपनी करुण कहानी सुनाई। 'नागर' ने उसी क्षण अभय दान दिया और उसे अपनी बहन कहा। इस घटना के बाद नागर पर मिसिर ने पुनः आक्रमण किया; पर मिसिर मारा गया। 'दुलदुल' के मेले में भी अँगरेजों के खुशामदी मुसलमानों के ताजिये को 'नागर' ने फाड़ दिया। मुकदमा

१. नेपाली गोरखा सिपाहियों का हथियार। २. सुर्ख लाल। ३. जर्द, पीला। ४. किनारे-किनारे।

चलने पर 'नागर' को कालापानी की सजा दी गई। नागर ने निर्भीक भाव से निर्णय सुना और रोते हुए शिष्यों को सान्त्वना दे 'सुन्दर' वेश्या की जीविका के प्रबन्ध का आदेश दिया। सुन्दर द्वारा रचे भोजपुरी के पदों से जान पड़ता है कि वह प्रतिभाशील कवयित्री थी। लोग जब 'नागर' के मुकदमे का निर्णय सुनाने सुन्दर के पास चले, तब वह सब समझकर गंगा-किनारे 'नाग-घाट' पर बैठी रोकर गा रही थी—

(१)

अरे रामा नागर-नैया[१] जाला कालापनियाँ रे हरी।
सभके त नैया जाला कासी हो बिसेसर[२] रामा,
'नागर' नैया जाला कालापनियाँ रे हरी।
घरवा में रोवैं नागर भाई औ बहिनियाँ रामा,
सेजिया पे रोवे बारी धनियाँ[३] रे हरी।
खुँटिया पै रोवैं नागर ढाल-तरवरिया रामा,
कोनवाँ[४] में रोवै कड़ाबिनियाँ[५] रे हरी।
रहिया[६] में रोवैं तोर संघी और साथी रामा,
नारघाट पै रोवैं कसबिनियाँ[७] रे हरी।
ओझला के नरवा पै भऽइल लड़इया रामा,
अरे रामा चले लागल जुलमीए भाला रे हरी।
मिसिर के संगै बाटे सौ-सौ लाठीबजवा[८] रामा,
हरि-हरि नागर संग बाटे छूरीबजवा[९] रे हरी।
पहर अढ़ाई लाठी-बिछुआ[१०] चलल रामा,
कुंडा अस गुंडा भहरइलें[११] रे हरी।
कहवाँ तूँ छोड़ल नागर ढाल-तरवरिया रामा,
कहवाँ तूँ छोड़ल कड़ाबिनियाँ रे हरी।
'ओझला' पै छोड़लीं साहेब, ढाल-तरवरिया रामा,
नारघाट छोड़लीं कड़ाबिनियाँ रे हरी।
निहुरि-निहुरि[१२] हाकिम बांचेलैं कगदवा रामा,
बड़े साहेब भेजे कालापनियाँ रे हरी।
पुरुब के देसवा से आवै टोपीवलवा रामा,
डेरा डारे सुन्दर के अँगनवा रे हरी।
भरि भरि कुरुई[१३] सोना देबै टोपीवलवा रामा,
नागर-नैया मत लेजो कालापनियाँ रे हरी।
जो मैं जनतीयूँ नागर जइबऽ कालापनियाँ रामा,
तोरे लगे अवतीयूँ बिनु गवनवाँ रे हरी।

१. नाव। २. विश्वेश्वर, विश्वनाथ महादेव। ३. नई दुलहिन। ४. घर का कोना। ५. हाथ का एक हथियार, गोहबंद लाठी। ६. रास्ता। ७. वेश्या। ८. लाठी चलानेवाले। ९. छुरी चलानेवाले। १०. एक हथियार। ११. गिर पड़े। १२. झुक-झुककर। १३. मूँज या बाँस की बनी छोटी डलिया।

'साम' नामक पुरुष और 'सुन्दर' नामक वेश्या का प्रश्नोत्तर—

(२)

इतना आँख न दिखावऽ तनी[1] धीरे बतिआव,
नाहीं हमरे ऐसन पइबू[2] सहरिया में।
बानी[3] सुघर जवान कहना मानो मेरी जान,
रोज फजिरे[4] नहाइले पोखरिया में।
हई[5] ऐसन रसीला भाँग तीनों बेरा[6] पी ला,
मजा लूटीले घुमाके दुपहरिया में।
ऐसन तोहरो के[7] बनाइब, रोज भँगिया छनाइब,
बड़े माजा पइबू घीव के टिकरिया[8] में।
नोट रुपया लेआइब तोहरे हाथ में थमाइब,
जानी[9] गिनऽ-गिनऽ रखिहऽ पेटरिया में।

'बरसाती चाँद', पृ० १२

(३)

आँख रोज हम दिखाइब तोहसे टेढ़ बतिआइब,[10]
नाहीं केहुसे[11] डेराइब हम सहरिया में।
बाड़ सुघर जवान ठीक मुसहर[12] समान,
चूहा मारल करिहऽ रोज तू बधरिया[13] में।
तोहरे ऐसन भँगेरी रोज चाटें हमार एँड़ी,
भोरे आइके हमरे ओसरिया[14] में।
हमें शेखी ना दिखावऽ कोई गैर के भुलावऽ,
तोहरे बजर परे[15] घीव के टिकरिया में।
मोहर - रुपया से नोट गिन्नी बड़ा और छोट,
हमरे भरल बाटे अपने पेटरिया में।

'बरसाती चाँद', पृ० १२

अम्बिकाप्रसाद

बाबू अम्बिकाप्रसाद 'आरा' की कलक्टरी में मुख्तारी करते थे। जब सर जार्ज ग्रियर्सन साहब आरा में भोजपुरी का अध्ययन और भोजपुरी-कविताओं का संग्रह कर रहे थे, तब आप काफी कविताएँ लिख चुके थे। आपके बहुत-से गीतों को ग्रियर्सन साहब ने अँगरेजी-पत्रिकाओं में प्रकाशित भी कराया था। आपकी कविताओं के कुछ उदाहरण भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी ने भी अपनी 'हिन्दी-भाषा' नामक पुस्तक में दिये हैं। आपके परिचय के सम्बन्ध में उसमें इतना ही संकेत है कि "मुंशी अम्बिका प्रसाद, मुख्तार, फौजदारी और कलक्टरी, जिला शाहाबाद; मालिक हिस्सेदार, मौजा अपहर, परगना गोआ, जि० सारन कृत भजनावली से।" इससे पता चलता है कि आप तो रहनेवाले शाहाबाद के थे; पर

१. जरा-सा, तनिक। २. पाओगी। ३. हैं, हूँ। ४. भोर में। ५. हैं। ६. बेला। ७. तुमको भी। ८. मीठी टिकरी (मिठाई)। ९. प्यारी। १०. बातचीत करेंगी। ११. किसी से। १२. एक जाति का नाम। १३. बधार—बस्ती से बाहर का खेत-मैदान। १४. ओसारा, बरामदा। १५. वज्र पड़े।

आपकी जमींदारी 'सारन' जिले में भी थी और आपने 'भजनावली'-नामक कविता-पुस्तक की रचना की थी जिससे हरिश्चन्द्रजी ने तीन-चार कविताएँ उद्धृत की थीं।

(१)

पहिले गवनवाँ पिया माँगे पलँगिया चढ़ि बोलावेले हो।
ललना पिया बान्हें टेढ़ी रे पगरिया[1] त मोरा नाहीं भावे[2] रे॥
एक तो मैं अंगवाँ[3] के पातर[4] दूसरे गरभ सेई[5] रे।
ललना तीसरे बाबा के दुलरुई[6] वेदनवा कइसे[7] अँगइबि[8] रे॥
सासु मोरा सुतलि ओसरवा, ननद गजओबरि[9] रे,
ललना सइयाँ मोरे सुतेले अटरिया त कइसे के जगाइबि रे॥
पान फेंकि मरलो सजन के से अवरू[10] लवंग फेंकि रे,
ललना सभ अभरन फेंकि मरलो तबहुँ नाहीं जागे ले रे॥
सासु मोरी आवेली गावइत[11] ननदी बजावइत[12] रे,
ललना सइयाँ मोरे हरखित होखे ले, मोहरा लुटावेले रे॥
'अम्बिका प्रसाद' सोहर गावेले, गाइके सुनावेले रे,
ललना दिन-दिन बाढ़ो नन्दलाल, सोहरवा मोहि भावेले रे।

निम्नलिखित झूमर को हरिश्चन्द्रजी ने अपनी 'हिन्दी-भाषा-नामक' पुस्तक में उद्धृत किया है। इसे ग्रियर्सन साहब ने भी उद्धृत किया।

झूमर

(२)

मारत बा[13] गरियावत[14] बा
देखऽ इहे करिखहवा[15] मोहि मारत बा॥१॥
आँगन कइलों[16] पानि भरि लइलों[17]
ताहु ऊपर लुलुआवत[18] बा॥२॥
कत[19] सौतिन के माने माई
हमरा गँवहीं[20] बनावत बा॥३॥
ना हम चोरिनी, ना हम चटनी[21]
झुठहू अछरँग[22] लगावत बा॥४॥
सात गदहा के मार मोहि मारे
सूअर अस घिसिआवत[23] बा॥५॥
देखहु ऐ मोरे पार-परोसिनि
गाई पर गदहा चढ़ावत बा[24]॥६॥

---

१. पगड़ी। २. अच्छा लगना। ३. शरीर। ४. क्षीण। ५. गर्भ का सेवन करना। ६. दुलारी। ७. किस तरह। ८. सहूँगी। ९. चुहानी, रसोई घर। १०. और। ११. गाती। १२. बजाती। १३. है। १४. एक प्रकार की गाली। १५. मुँहझौंसा, कालिख लगा हुआ, कलंकी। १६. आँगन साफ किया। १७. ले आई। १८. भिड़क करके लजवाना। १९. कहाँ। २०. गाँव की गँवारिन। २१. चटोर। २२. कलंक। २३. घसीटता है। २४. 'गाय पर गदहा चढ़ाना' भोजपुरी मुहावरा।

पियवा गवाँर कहल नहि बूझत
पनियाँ में आगि लगावत बा[1] ॥७॥
हे अम्बिका तुही बूझ करऽ अब
अचँरा उड़ाई[2] गोहरावत[3] बा ॥८॥

नीचे का गीत उस समय रचा गया था, जब बिहार की कचहरियों में उर्दू-लिपि के स्थान पर नागरी लिपि के प्रयोग की सरकार द्वारा घोषणा हुई थी।

(३)

हुकुम भइल सरकारी, रे नर सीख नगरिया।
जामिनि लिपि जी से देहु दुराई ॥१॥
ले पोथी नित पाठ करऽ अब
जामिन पुस्थ[4] देहु पैसरिया[5] ॥२॥
जबले नागरि आवत नाहीं
कैथी अच्छर लिख कचहरिया ॥३॥
धन मंत्री परजा हितकारी
अम्बिका मनावत राज बिक्टोरिया ॥४॥

(४)

रोइ रोइ पतिया[6] लिखत सब सखिया,
कब होइहें तोहरी अवनवा[7] रे हरी ॥
कवन ऐसन चुक भइलि हमरा से
तेजि हमें गइलीं मधुबनवा रे हरी ॥
प्रीति के रीति कछुहू नाहिं जानत
हवऽ[8] तू जाति अहीरवा रे हरी ॥
पिछली प्रीति याद कर अब का
कहि गइले कुबुजा भवनवा रे हरी ॥
'अम्बिका प्रसाद' दरस तोहि पइतीं
छोड़ितीं न रउरी[9] चरनिया रे हरी ॥

(५)

मोरा पिछुअरवा[10] लील रँग खेतवा,
बलमु हो, लील रँग चुनरी रँगादऽ ॥
चुनरी पहिरइ तऽ जाड़ा मोरे लगले,
बलमु हो, सलवा-दुसालवा ओढ़ादऽ ॥
सलवा-दोसलवा से गरमी छिटकली,
बलमु हो, रसे-रसे बेनिया[11] डोलादऽ ॥
बेनिया डुलवइत बँहिया मुरुकली[12],

१. भोजपुरी मुहावरा। २. आँचर उड़ाना (बेइज्जत करना)—भोजपुरी मुहावरा। ३. जोर से पुकारना। ४. पसारी। ५. पसारी, जो कागज की पुड़िया में सामान बेचता है। ६. चिट्ठी। ७. आगमन। ८. हो। ९. आपकी। १०. घर के पीछे। ११. छोटा पंखा। १२. मोच खा गई।

बलमु हो, पटना के बैदा बोलादऽ ॥
बैदा जे माँगेला साठि रुपइया;
बलमु हो, तनि एका मोहरा भँजादऽ ॥
मोहरा भँजवइत जियरा निकलले,
बलमु हो, मेहरी भइली जियरा के काल ॥

कवि बदरी

आपका परिचय इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं प्राप्त हो सका कि आप जनप्रिय कवि थे। आपका ग्राम तथा समय ज्ञात नहीं है। आपकी निम्नलिखित कविताएँ प्रकाशित संग्रहों से ली गई हैं। आपकी रचना प्रौढ होती थी।

झूमर

(१)

बेली बन फूले चमेली बन फूले ताहि[1] फूले
गूँजे-गूँजे रे भँवरवा रे ताहि फूले ॥१॥
लोभी भँवरवा फिरत जंगलवा नया रस खोजे
खोजे रे भँवरवा, नया रस खोजे ॥२॥
तेरो रंग श्याम मोर[2] गइले मधुबनवाँ कुबरी से
लोभे लोभे रे भँवरवा कुबरी मे ॥३॥
कारे कुवँर के परतीत हमें नाहीं
मानों मानों रे भँवरवाँ पीरीत हमें नाहीं ॥४॥
कर जोरि बिनय करत 'बदरी' तनी[3] न्यारे रहू
न्यारे रहु रहु रे भँवरवा, न्यारे रहु ॥५॥

(२)

कहवाँ जे जनमले[4] कुवँर कन्हइया हरि झुमरी।
कहवाँ जे बाजत बधइया खेलत हरि झुमरी ॥१॥
मथुरा में जनमले श्री यदुरइया हरि झुमरी।
गोकुला में बजत बधइया खेलत हरि झुमरी ॥
कौन बन मोहन चरावे धेनू गइया हरि झुमरी।
कौन बन बाजेला बँसुरिया खेलत हरि झुमरी ॥
बृन्दाबन कान्हा गइया चरावे हरि झुमरी।
कुंज बन बाजेला बँसुरिया खेलत हरि झुमरी ॥४॥
केकरा संग कान्हा दिन दुपहरिया खेले हरि झुमरी।
केकरा मोहेले[5] अधि-रतिया, खेलत हरि झुमरी ॥
ग्वालन सँग खेले कांधा दिन दुपहरिया हरि झुमरी।
गोपिन मोहेले अधरतिया खेलत हरि झुमरी ।५॥
धन भाग नन्द-जसोदा जी मइया हरि झुमरी।
बदरी हरषि गुन गावे खेलत हरि झुमरी ॥७॥

---

१. उस। २. मेरे। ३. जरा-सा। ४. पैदा हुए। ५. मोहते हैं।

विश्वनाथ

आपका परिचय अज्ञात है, किन्तु आपके दो गीत श्री कृष्णदेव उपाध्याय कृत 'भोजपुरी ग्राम-गीत' के दूसरे भाग में मिले हैं। अनुमानतः आपका जन्म-स्थान बलिया जिले में था।

(१)

सइयाँ मोरे गइले रामा पुरबी बनिजिया[१]।
से लेइ हो अइले ना, रम-बेंदुली[२] टिकुलिया ॥
से लेइहो अइले ना ॥१॥

टिकुली में साटि रामा बइठलीं[३] अटरिया।
से चमके लागे ना, मोरे बेंदुली टिकुलिया ॥
से चमके लागे ना ॥२॥

घोड़वा चढ़ल आवे राजा के छोकड़वा[४]।
से धड़के लागे ना, मोरे कोमल करेजवा ॥
से धड़के लागे ना ॥३॥

खोलु-खोलु धनिया आरे[५] बजर-केवरिया[६]।
से आजु तोरा ना, अइले सइयाँ परदेसिया ॥
से आजु तोरा ना ॥४॥

कहे 'विश्वनाथ' धनि[७] हवे तोर भगिया।
से छुम-छुम बाजे ना, द्वार खोलत पैंजनिया ॥
से छुम-छुम बाजे ना ॥५॥

(२)

बँसहा[८] चढ़ल सिव के अइले बरिअतिया राम।
डेराला जिअरा, अँगवा[९] लपेटले बाड़े[१०] साँप ॥
ऐ डेराला जिअरा ॥१॥

अंगवा भभूत[११] सोभे गले मुण्डमाला राम।
डेराला जिअरा, नागवा छोड़ेले फुफुकार ॥
ऐ डेराला जिअरा ॥२॥

मन में विचारे 'मैना' गउरा[१२] अति सुन्दर राम।
डेराला[१३] जिअरा, बरवा मिलेले बउराह[१४] ॥
ऐ डेराला जिअरा ॥३॥

नारद बाबा के हम काही[१५] रे बिगड़लीं[१६] राम।
डेराला जिअरा बरवा[१७] खोजेले बउराह ॥
ऐ डेराला जिअरा ॥४॥

---

१. पूर्व देश में व्यापार करने के लिए। २. छोटी बिन्दुली। ३. बैठी। ४. छोकरा, पुत्र। ५. रे, अरे। ६. वज्र के समान मजबूत किवाड़। ७. धन्य। ८. शिव का वाहन बैल। ९. शरीर में। १०. लपेटे हुए हैं। ११. विभूति, भस्म। १२. पार्वती। १३. भय खाता है। १४. अड़बंगी, नशाबाज। १५. क्या। १६. बिगाड़ा है। १७ वर दुल्हा।

अइसन बउरहवा से हम 'गउरा' ना बिश्रहबो राम।
डेराला जिश्ररा, बलु[1] 'गउरा' रहिहैं कुंश्रार ॥
ऐ डेराला जिश्ररा ॥५॥
कहत 'विश्वनाथ' तनि भेखवा बदलि दऽ राम।
डेराला जिश्ररा, नइहरा के लोग पतिश्रास[2] ॥
ऐ डेराला जिश्ररा ॥६॥

रघुवंशजी

आपका भी परिचय नहीं मिला। आपके प्राप्त गीतों से ज्ञान होता है कि किसी याचक (भाट या पँवरिया)-कुल में आपका जन्म हुआ था।

भादो रैन अँधिश्ररिया जिया, मोरे तड़पेला ढेर,
ललना गरजि-गरजि देव बरिसेले दामिनि चमकेलि रे ॥
सूतल[3] बानी[4] कि जागल सामी[5] उठि बइठहु रे ॥
ललना हम धनि बेदने[6] बिश्राकुल, देह मोरी श्रइँठेलि[7] रे ॥
सुनु-सुनु धनियाँ सुलछनि[8], दूसर जनि गुनवहु[9] रे,
ललना धीरे-धीरे बेदना निवारहु, 'कंस' जनि सुनेइ रे ॥
श्राधी रैन सिरानिहु[10] त रोहिनी तुलानिहु[11] रे,
ललना जनम लिहलें जदुनन्दन बिपति भुलानिहु रे ॥
मने मन देवकी श्रानँदेली, बंधन छुटलहु रे,
ललना हरि जे लिहले[12] अवतार करम[13] 'कंस' फुटलहु रे ॥
याचक जन 'रघुबंश' सोहर इहे गावेले रे,
ललना हरिहर-चरन मनावहु, परम पद पाइश्रहु रे ॥

सुखदेवजी

आप शाहाबाद जिले के किसी ग्राम के निवासी थे। आप हरिशरण के शिष्य थे। आपके सम्बन्ध में विशेष जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी। एक साधु से आपके दो गीत मिले, जो नीचे उद्धृत हैं—

(१)

समुझि परी[14] जब जइबऽ कचहरी[15]।
कुछु दिना झुललन गोद-हिंडोलवन, कुछु ना खेश्राल करी।
'भानुमती' के बदन निरेखल मानों मनोरमा बनी खड़ी,
ई तन पवलऽ[16] बड़ा भाग से खालऽ[17] पशु-पंछी-मछरी।
ई सब खाड़[18] घेरि पथ लेइहैं जइब जब जम-नगरी।

१. बल्कि। २. विश्वास करें। ३. सोये। ४. हैं। ५. स्वामी। ६. वेदना, प्रसव-पीड़ा में। ७. (नस-नस में) ऐंठन। ८. शुभ लक्षणवती। ९. समझो, सोचो। १०. बीतने पर। ११. उपस्थित होने पर। १२. लिया। १३. भाग्य। १४. पड़ेगा। १५. यमराज के दरबार में। १६. पाया। १७. खा लो। १८. खड़े होकर।

समुझी परी जब जइब कचहरी ॥
खाइल पीअल लेल देल कागज बाकी सब निकसी
धरमराज जब लेखा लीहन[1] लोहा के सोटवन मार परी,
आगे-पीछे चोपदार धइलेइ मुगदर जम के फाँस परी,
अगिन-खंभ में बाँधि के रखिहें, हाजिरजामिनी[2] कोई ना करी।
आज्ञा 'गुरु-शरण' हरि कहल कहे, 'सुखदेव' सुन भैया साधो,
पल छन बीती तब घरी प घरी ॥
समुझि परी जब जइबऽ कचहरी ॥

(२)

आइल जमाना खोटा साधो, आइल जमाना खोटा,
भेडुआ[3] खावै दूध-मलाई, लगे भाँग के घोंटा।
साधु-संत के चाना दुरलभ, भरल केउ[4] कबहीं जल-भर लोटा,
वेश्या पहिने मलमल खासा लागलि किनारी-गोटा।
पतिबरता के लुगरी[5] दुर्लभ पहिने फटहा मोटा,
जोगी जती तपसी संन्यासी जेकर ढील लंगोटा[6]।
भाव भजन कुछ मरम[7] न जाने, झूठे बढ़ावे झोंटा,
बेमरजाद चललि सब दुनिया, का बड़का का छोटा।
कहे 'सुखदेव' सुनो भाई साधो उलटा चलिहें जम के सोटा।
ए साधो आइल जमाना खोटा ॥

राम अभिलाष

आपके जन्म-स्थान तथा समय इत्यादि का परिचय प्राप्त नहीं है। आपके दो गीत गोरखपुर जिले से प्राप्त हुए थे। अतः आप गोरखपुर जिले के निवासी होंगे।

(१)

पइयाँ में लागु[8] तोरे भैया रे सोनरवा गहनवाँ[9] बिचवा[10]।
हमरे लिखु हरी[11] के नइयाँ[12] गहनवाँ बिचवा।
बेंदिया नकाशी[13] वोही ब्रज के छयलवा[14] जसनवा[15] बिचवा।
वोही जसोदा के ललनवा जसनवा बिचवा।
बाजूबन माली, बेसर लिखु वंशीवलवा।
कंगनवा बिचवा, पाऊँ कान्हा दरसनवा[16]।
मेखला मुरारी नन्द, लगइबो साकड़वा[17] बिचवा।
श्याम सुन्दर सपनवा।
'राम अभिलाष' हमरे आँखि के समनवाँ[18] धेयनवा बिचवा।
रहे राधे रूपवा सजनवा[19] धेयनवा[20] बिचवा।

१. लेंग। २. जमानत। ३. वेश्या का समाजी। ४. कोई। ५. पुरानी फटी साड़ी। ६. लगोंट ढीली होना, ब्रह्मचर्य-भंग। ७. रहस्य। ८. पइयाँ में लागु=पैर पड़ती हूँ। ९. आभूषण। १०. मध्य में। ११. कृष्ण-रूपी पति। १२. नाम। १३. बेल-बूटेदार। १४. छैल-छबीला। १५. एक प्रकार का आभूषण जो बाँह में पहना जाता है। १६. दर्शन। १७. एक प्रकार का आभूषण जो पैर के तलवे के ऊपर और हथेली के ऊपर पहना जाता है। १८. सामने। १९. सुन्दर नायक। २०. ध्यान के।

(२)

गोरे गोरे गाल पर गोदनवा गोदाले गोइयाँ[1] ना।
मोतियन से मँगिया गुँथाले वारी धनिया, लगाले गोइयाँ ना॥
सुन्दर सुरूख[2] नयनवा, लगाले गोइयाँ ना।
मथवा टिकुलिया बिंदी, दँतवा में मिसिया[3] छिपाले गोइयाँ ना॥
रेशम चोलिया जोबनवा, छिपाले गोइयाँ ना।
'राम अभिलाष' प्यारी करी के सिंगरवा लगलि गोइयाँ ना।
अपने सइयाँ के गोहनवा[4] लगलि गोइयाँ ना॥

रज्जाक

आप आजमगढ़ जिले के 'मुबारकपुर' ग्राम के मजदूर-कवि थे। आपने नीति विषयक बहुत सुन्दर रचनाएँ की हैं। आप बहुत गरीब थे और घसियारे कवि मिट्ठू के गुरु थे। आपकी निम्न लिखित रचना परमेश्वरी लाल गुप्त के 'भोजपुरी का साहित्य सौष्ठव'-नामक लेख से प्राप्त हुई है। आपके शिष्य का 'दयाराम का बिरहा' नामक प्रबन्ध-काव्य संवत् १९२० के फाल्गुन में समाप्त हुआ। अतः आपका समय भी उनसे २०-२५ वर्ष पूर्व माना जा सकता है।

बड़ि नीकि[5] हउ मोरी माता हो गरमिया।
देहलु कुछ दिन चिन्ता मोरी बिसार॥
चिथड़ा से तनवा कइसे ढकबै हो मइया।
आवे जाड़ा दुसमनवाँ हमार॥
हमरे ले नीक ऊ त[6] हउवे भिखमँगवा।
जे सोवत होइहैं दूनो टँगिया[7] पसार॥
भादो के अन्हरिया में पनिया में भीजों।
तउने पै[8] जरत बाटे पेटवा हमार॥

शिवशरण पाठक

आप पकड़ी ग्राम (चम्पारन) के निवासी थे। आप भोजपुरी में अच्छी कविता करते थे। आपका समय सन् १९०० ई० के लगभग है।

चम्पारन में नीलहों का बहुत अत्याचार था। ये लोग बेतिया के महाराज की जमींदारी के मोकरीदार थे। उनके अत्याचार से तंग आकर आपने महाराजा के दरबार में एक पद पढ़ा था और नीलहों से रक्षा करने की प्रार्थना की थी। बेतिया के महाराज स्वयं एक कवि थे और उनके दरबार में कवियों का आदर होता था। अतः इनके पद को सुनकर नीलहों के अत्याचार का उन्हें ज्ञान हुआ। महाराज ने उन नीलहों से क्षुब्ध होकर उन्हें चम्पारन से खदेड़ने की विफल चेष्टा की थी।

राम नाम भइल भोर गाँव लिलहा[9] के भइले।
चँवर[10] दहे[11] सब धान गोंएड़े[12] लील[13] बोअइले[14]॥
भइ भैल आमील[15] के राज प्रजा सब भइले दुखी।
मिल-जुल लूटे गाँव गुमस्ता हो पटवारी सुखी॥

---

१. चिरसंगिनी। २. सुर्ख। ३. दाँत रँगने का काला या लाल मसाला। ४. गोद, बगल। ५. अच्छी। ६. वह तो। ७. पैर। ८. उस पर भी। ९. नील की खेती करानेवाले अंगरेज। १०. गहरे खेत, जहाँ पानी जम जाता है। ११. बह गये। १२. गाँव के पास के खेत। १३. नील। १४. बीज डाला गया। १५. सरकारी कारिन्दा, अमला।

असामी नाँव पटवारी लिखे, गुमस्ता बतलावे।
सुजावल[१] जी जपत[२] करसु, साहेब मारन धावे॥
थोरका[३] जोते बहुत हेंगयावे[४], तपर ढेला थुरावे[५]।
कातिक में तैयार करावे, फागुन में बोअवावे[६]॥
जइसे लील दुपता[७] होखे, वोइसे लगावे सोहनी[८]।
मोरहन[९] काटत थोर दुख पावे, दोजी[१०] के दुख दोबरा[११]॥
एक उपद्रव रहले-रहल दोसर उपद्रव भारी।
सभे लोग से गाड़ी चलवावे सभे चलावे गाड़ी॥
ना बाचेला[१२] ढाठा[१३]-पुआरा[१४], ना बाचेला भूसे।
जेकरा[१५] से दुख हाल कहीला, से मारेला घूसे॥
होइ कोई जगत में धरमी, लील के खेत छोड़ावे।
बड़ा दुख बाम्हन के भइले, दूनो साँझ कोड़वावे[१६]।
सभे लोग तो कहेला जे काहे ला दुख सहऽ।
दोसरा से दुख नाहीं छूटे, तऽ महाराज से कहऽ॥
महाराज जी परसन[१७] होइहें छनहीं में दुख छूटी।
काली जी जब किरपा करिहें, मुँह बयरी[१८] के टूटी॥
नाम बड़ाई गावत फिरब, रह जइहें अब कीरित[१९]।
कि गाँव लीलहा से छूटे, ना त मिले बीरित[२०]॥

कवि हरिनाथ

आपके समय और जन्म-स्थान का पता नहीं लग सका। सम्भवतः आप शाहाबाद जिले के सन्त कवियों में एक थे। शाहाबाद में आपके गीत अधिक गाये जाते हैं। आपकी हिन्दी-रचनाएँ भी मिलती हैं। आपने एक गीत में अपनेको याचक कहा है। इससे ज्ञात होता है कि शायद आपका जन्म भाट कुल में हुआ हो। हरिनाथ नाम के एक हिन्दी कवि भी शाहजहाँ के समय में हो चुके हैं।

(१)

भोरे उठि बनवाँ के चलले मोहनवां, से आगे कइलन[२१] हे।
लालन गइया रे बछरुआ[२२], से आगे कइलन हे॥१॥
लाल-लाल फूल-पाती अहिरा के जतिया, से बाँध लेलन हे
मोहन बाँकी रे पगरिया[२३], से बाँध लेलन हे॥२॥
कर लेले बसिया[२४] मोहन रंग-रसिया[२५], से अधर धरि हे
राग टेरे रे हजरिया[२६], से अधर धरि हे॥३॥

१. तहसीलदार २. जब्त। ३. थोड़ा। ४. हेंगा दिलवाता है। ५. फोड़वाता है। ६. बीज डलवाता है। ७. दो पत्तेवाला अंकुर। ८. खेत निराने का काम। ९. फालतू घास-पात। १०. जड़ में फूटी दोहरी टहनी। ११ दोहरा, दुबारा, दुगना। १२. बचता है। १३. मकई-बाजड़े का सूखा डंठल। १४. पुआल। १५. जिससे। १६. खेत कोड़वाता है। १७. प्रसन्न। १८. दुश्मन १९. कीर्ति। २०. जीविका-वृत्ति। २१. कर लिया। २२. बछड़ा। २३. पगड़ी। २४. वंशी। २५. रसिक। २६. देहाती गीत का भेद।

सुनत स्रवनवाँ बिकल भइले मोरे मनवाँ, से मोह लेलन है
प्यारे बाँके रे गुजरिया[१], से मोह लेलन है ॥४॥
कसि लेली चीरवा[२] जमुनवाँ के तीरवा से से चली भइली है
नागरि लेइके गगरिया, से चलि भइली है ॥५॥
जन 'हरिनाथ' भेंटि गइले गोपीनाथ से मे भऊँआ कसि[३] है
मारे बाँके रे नजरिया, से भऊँआ कसि है ॥६॥

(२)

सूतल रहली में अपने भवनवाँ, जगाई दिहले रे,
मन-मोहन रतिया जगाई दिहले रे ॥१॥
हँसि-हँसि बहियाँ झिकझोरे रंगरसिया, सुनावे मोही रे,
मधुरसवा के बतिया[४] सुनावे मोहीं रे ॥२॥
खिल रही कुंज बन अरु नव रतिया, देखन चलूँ रे,
तरुवर लतिया[५] देखन चलूँ रे ॥३॥
जन 'हरिनाथ' लाल मेरे मन बतिया, पियारे लागे रे,
ए अहिरवा के जतिया, पियारे लागे रे ॥४॥

सोहर

(३)

आनन्द घर-घर अवध नगर नौबत बाजत हो,
ललना बढ़ि अइले हिया मे हुलास सुमंगल साजत हो ॥१॥
रघुकुल कमल दिनेस अवध में उदय लेलन हो,
ललना खिली गइल जस सब लोक सुनत मन मोद भइल हो ॥२॥
गगन मगन मन सुरन सुमन बरसावत हो,
ललना हरखि सोहागिन मंगल अवरू सोहर गावत हो ॥३॥
कौसिला के गृह सिरीराम भरत केकई घरे हो,
ललना जनमे लखन रिपुसूदन सुमित्रा तन बहरइलन[६] हो ॥४॥
गुरुजन लगन बिचारत, ग्रह अनुसारत हो,
ललना त्रिभुवन-पालक बालक कहि नाहि पारत[७] हो ॥५॥
बहुत दिनन सिव पूजल देवता मनावल हो,
ललना एक सुअन फल माँगल चौगुन पावल हो ॥६॥
रामजी के कमलबदन लखि नृप हिया हरखल हो,
ललना हुलसत पुलकत गात नयन जल बरखत हो ॥७॥
परम हठीली अलबेली बारी डगरिन[८] हठ कइले हो,
ललना केउ देले हार अमोल, कंगना केकई देली हो ॥८॥
रघुबर चरन-सरोज सेवन 'हरिनाथ' लेलऽ हो,
ललना छूटि गइल जाचक[९] नाम अजाचक मन भइल हो ॥९॥

गीत के शब्दार्थ और भावार्थ दोनों स्पष्ट हैं।

---

१. नायिका। २. वस्त्र ३. भौंहें कसना (भोजपुरी मुहावरा), भौंहें तिरछी करना। ४. बात। ५. लता
६. बाहर आये (जन्म लिया)। ७. वर्णन करते पार नहीं लगता है। ८. चमारिन, प्रसूति-धात्री। ९. भाट, चारण।

हरिहरदास

आपका भी परिचय अज्ञात ही है। फिर भी इतना निश्चय है कि आप सन्त-कवि थे और शाहाबाद की विशुद्ध भोजपुरी भाषा ही आपकी कविता की भाषा है। अतः आप इसी जिले के निवासी होंगे, ऐसा अनुमान किया जाता है।

सोहर
(१)

अवध में बेदने[१] बेआकुल रानी कौसिला रानी हो,
ललना हलचल मचलऽ महल में से डगरिन बोलावहु हो ॥१॥
चढ़िय पलकिया डगरिन आइल चरन पखारल हो.
ललना नौमिए तिथि मधुमास सुकलपच्छ आइल हो ॥२॥
मध्य दिवस नहीं सीत न घाम सुभग ऋतु हो,
ललना अभिजित नखत पुनीत से राम जनम लिहले हो ॥३॥
नंदी मुख स्राध कइलें अवधपति आनँद भइले हो,
ललना तन में न सकहिं समाय हुलस से जनावल[२] हो ॥४॥
भूपति मोहर लुटावत पाट[३]-पितम्बर हो,
ललना चीर लुटावत रानी जड़ित मनी भूखन हो ॥५॥
बाजे बधइया पुर गानतऽ किनर नट नाचहिं हो,
ललना नाचहिं त्रिया करि गान तऽ लागेले मनोहर हो ॥६॥
घर-घर देहिं सब दान अवधपुर सोभित हो,
ललना लागे सभ लोग से सम्पदा लुटावन हो ॥७॥
केसर उड़त नभ अवरु गुलाल, फुलेल लगावल हो,
ललना सुमन बरख सुर जूथ से विनय सुनावल हो ॥८॥
जे यह गावहिं सोहर वो गाइके सुनावहिं हो,
ललना 'हरिहरदास' सुख पावहिं संसय नसावहिं हो ॥९॥

सोहर
(२)

देखि कुसित[४] मुख जसोदा के चेरिया बिलखि पूछे हो।
ललना सोचि कहहु केहि कारन मुख तोर झाँवर[६] हो ॥१॥
जस जस चेरिया पूछन लागे तस तस दुःख बढ़े हो।
ललना, चेरिया त चतुर सयानी खबर देलसि[७] नन्द जी के हो ॥२॥
सुन चेरिया-बत सोहावन बड़ मनभावन हो।
ललना जह तँह भेजलन धावन सबहीं बोलावन हो ॥३॥
केहू लेले पंडित बोलाय से केहू लेले डगरिन हो।
ललना बइठेले पंडित सभा बीच डगरिन महल बीच हो ॥४॥
पंडितजी करिले विचार हरखि मनवाँ हँसि बोले हो।
ललना इहे हवे दुस्ट-अधिराज[८] दूजे जग-पालक हो ॥५॥
जसोदाजी पीड़ितऽ भवनवाँ बिकल से पलँग लोटे हो।
ललना, धड़कि-धड़कि करे छतिया कि कब बीती रतिया ई हो ॥६॥

---

१. वेदना, प्रसव-पीड़ा। २. विदित कराया। ३. रेशमी वस्त्र। ४. मलिन, कृश। ५. दासी। ६ उदास, निष्प्रभ। ७. दिया। ८. दुष्टों के शासक।

सुभ घड़ि सुभ दिन सुभ रे लगन धनि[1] हो।
ललना, प्रगट भइले नन्दलाल आनँद तीनू लोक भइले हो ॥७॥
हरखि हरखि सुर मुनि देव बरसावे सुमन बहु हो।
ललना, जे सुख बरनी ना सारदा से कहीं केहि बिधि हम हो ॥८॥
बाजहिं बाजन अपार नगर सुख बड़ी भइले हो।
ललना जेही कर जस मन भावन देखल मे वोही छन हो ॥९॥
ललना, नाचहिं गुनी जन अवरु[2] युवती[3]गन हो।
ललना, लूटहिं सदन भण्डार हुलसि मन हो ॥१०॥
भर भर थार सोबरन[4] देत मानिक मुकुता मे हो।
ललना, नन्द आनन्द होइ दिहले चरन गहि पण्डित हो ॥११॥
गहि भगवन्त सुत हरि-पद हरखि से हिय बीच हो।
ललना, जनम सुफल फल पाई जे गाई[5] चरित इहे हो ॥१२॥

मिट्टू कवि

आप आजमगढ़ जिले के गूजर जाति के घास गढ़कर जीविका चलानेवाले अनपढ़ कवि थे। आपके गुरु पूर्वकथित रज्जाक मियाँ थे। आपके पिता का नाम हंसराज था। आपकी तथा अन्य आजमगढ़ी कवियों की भाषा का रूप भोजपुरी का पश्चिमी रूप है। बिरहा छन्द में आपके दो प्रबन्ध-काव्य 'दयाराम का बिरहा' और 'हंस-संवाद' परमेश्वरी लाल गुप्त[6] से मिले हैं। 'दयाराम का बिरहा' की कथा का सारांश इस प्रकार है —

"दयाराम नामक एक बहादुर 'गूजर' अपनी स्त्री द्वारा आभूषण माँगने पर कोई दूसरा चारा न देख चोरी द्वारा द्रव्योपार्जन करने के लिए अपनी माँ और बहन से विदा माँगता है और उनके मना करने पर भी परदेश जाता है। नदी पार रेती पर दिल्ली की शाहजादी की सेना थी। दयाराम उसके लश्कर के साथ लड़कर उसे परास्त करता है और शाहजादी की धन-दौलत सब लेकर उसको पवित्र छोड़ देता है। शाहजादी दिल्ली जाती है। वहाँ से शाहजादा जाफर दयाराम को गिरफ्तार करने के लिए आता है। वह मित्र का स्वांग रचकर दयाराम को अपने दरबार में बुलाता है। जब दयाराम वहाँ गया तब उसे खिला पिला कर जाफर ने बेहोश कर दिया, और गिरफ्तार कर दिल्ली ले गया दिल्ली में हाथी और शेर के सामने दयाराम को छोड़ दिया गया। किन्तु, उसने दोनों को अपने पराक्रम से जीत लिया। तब प्रसन्न हो दिल्ली के शाहजादे ने उसको दिल्ली के किले का किलादार बना दिया। कुछ दिनों बाद जब छुट्टी ले वह अपने घर आने लगा तब मिर्जापुर के नवाब 'जाफर' ने उसे अपने यहाँ एक रात के लिए मेहमान बनाया और भोजन में जहर दे दिया। दयाराम ने अपनेको मरता हुआ समझ अपनी तलवार से जाफर के समूचे परिवार को मौत के घाट उतार दिया। बाद में वह खुद भी मर गया।

"उसकी मौत की खबर जब उसके घर पहुँची, तब उसका लड़का 'टुन्नू' आसपास के गूजरों को बुलाकर मिर्जापुर के लिए रवाना हुआ। वहाँ जा उसने जाफर को मार डाला और उसका सर काट कर अपनी माता के सामने ला रखा। यह खबर जब दिल्ली के शाहजादे को मिली तब उसने टुन्नू को बुलाया और दयाराम की जगह पर रहने के लिए कहा। पर टुन्नू उसे ठुकरा कर घर चला आया।"

१. धन्य। २. और। ३. युवतियों का समूह। ४. सुवर्ण। ५. गायेगा। ६. भूतपूर्व सहायक सम्पादक, दैनिक 'आज' (काशी)।

कई पृष्ठों में यह कहानी सुन्दर बिरहा छन्द में कही गई है। कहीं-कहीं कवि की प्रतिभा ने बहुत सुन्दर उड़ान ली है। अन्त में कवि ने अपना परिचय दिया है।

(१)

कहै मिट्ठू अब अराम करऽ सरदा माँई,[१]
हमहूँ त जाँई अब चुपाय[२]
कइलू बड़ दया हमरे पर मेहरबनिया,
गाय गइलीं माता 'दयाराम' के कहनियाँ,
माई मोरी सभा में बचाय लेहलू पनिया,[३]
हमहूँ न जाई अब चुपाय,
दयाराम कै कड़खा सुनाय देहलीं मैया,
अब कर तू अराम घर जाय।
भइल खतम दयाराम कै बिरहवा—
अब अपने घरे जइहऽ मीत।
संवत् उनइस सै बीस के फगुनवाँ,
राति अन्हरिया[४] रहलि मंगर कै दिनवाँ,
हंसराज के बेटा 'मिट्टू' हउवें गुजरवा,
'रज्जक' के चेला गइले 'पंडी'[५] कै बजरवा,
अपने अपने घर जइब मीत,
हम त हईं घसियारा ए भइया,
नाहीं जानीं ढंग गावे केनी गीत॥

इसके अनुसार इनकी इस रचना का समय संवत् १९२०, फाल्गुन, कृष्ण पक्ष, मंगलवार है। 'हंस का गीत' विरह-रूपात्मक प्रबन्ध-काव्य है। घास छीलते समय बादल उमड़े और कवि को विरहानुभूति हुई। फलस्वरूप इस प्रबन्ध-काव्य का सृजन हुआ। एक नायिका ने विरह-सन्देश अपने प्रियतम के पास, जो कलकत्ता में रहता है, हंस द्वारा भेजा है। कथानक का सारांश इस प्रकार है—

एक विरहिणी नायिका अपनी करुण कथा हंस से कहती है और अपना करुण संदेश पति के पास ले जाने के लिए प्रार्थना करती है। हंस मखदूम देवता के दरवाजे पर सिर टेककर बहुत अनुनय-विनय करता है और देवता से उस परदेशी का पूरा पता जान लेता है। वह उड़ता हुआ वहाँ पहुँचा, जहाँ नायक भेड़ के रूप में एक पेड़ के नीचे बँधा हुआ था। हंस ने उसकी स्त्री की सारी विरह-कथा कह सुनाई। परदेशी ने भी अपने न आने का कारण हंस से बताया। उसे एक बंगालिन ने भेड़ बनाकर बाँध रखा था। तब हंस उसके बन्धन को खोल मखदूम की कृपा से उसे पंछी बनाकर उड़ा ले भागा। बंगालिन उसे न पाकर बहुत दुःखी हुई। जब वे दोनों अपने गाँव के निकट पहुँचे तब वह आदमी बन गया और दोनों घर गये। अपने पति को बहुत दिनों के बाद देखकर नायिका फूली न समाई। उसने अपने बिछुड़े प्रियतम का बहुत आदर-सत्कार के साथ स्वागत किया और हंस के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। वह थके माँदे पति के लिए झटपट बिस्तर तैयार कर उसे सोने को ले गई और पैर दाबते हुए अपनी विरह-व्यथा सुनाने लगी।

'दयाराम का बिरहा' से—

पत्नी के वाग्वाण से विद्ध होकर दयाराम चोरी-डकैती करके धनोपार्जन करना निश्चित करता है और इस यात्रा पर प्रस्थान करने के लिए माता से विदा माँगता है।

१. शारदा माता। २. चुप। ३. पानी, इज्जत। ४. अँधेरी। ५. स्थानविशेष का नाम।

(१)

हथवा त जोरि के बिनती करे 'दयाराम'।
मोरी मानवा तू 'दिहलू'[1] मोर जनमवाँ।
का दो[2] त लिखले होइहें हमरे करमवाँ[3],
कतहूँ में जइबों मोर बचिहें नाहीं जानवाँ[4]।
माता बकसऽ आपन जोर॥
अपने दिल में माता करि लेहु सबुरवा[5]।
नाहीं जनमले हो मोर पूत॥

घर का त्याग करते हुए पुत्र को कुकर्म से रोकते हुए उसकी माता ने उत्तर दिया—

(२)

जवने दिनवाँ के लागि हम पललों हो बेटा,
घरवा हो बइठल दिन रात॥
सात सोरी[6] के तो दूधवा हम पिअवलीं,
तेलवा बुकउवा[7] हम तोह के लगवलीं,
घमवा[8] बतसवा[9] से मैं तोहके बचवलीं,
कहि के बबुआ में हँकिया[10] लगवलीं,
घरवा बइठल हो दिन रात॥
हमरी पमरिया[11] छोड़ि के बीच घरवा[12] में,
तजि के जालऽ ओकरे[13] बात॥

जब दयाराम शराब पिलाकर बेहोश करके दिल्ली के किले में लाया गया और वहाँ उसे होश हुआ तब का वर्णन—

(३)

तब भइल बिहान दयाराम गुजरवा के
हो उतरि गइली शराब।
तोरी डाले बेड़िया मसकि[14] दिहलसि कड़िया,
झटकि करिहइया[15] के फेंके सिकड़िया
उतरि ओकरि[16] शराब॥
नाहीं जनलो जाफर दगवा[17] कमइबे[18]
नहीं सार[19] केनी[20] करि देतीं खराब॥
कहे 'दयाराम' अबहिं त केतनों के मरबो,
अइहें मउअतिया[21] तबे जइहें रे मोरी जान।
केहू दुनिया में बचि नाहीं जाई।
जेमे जेकर लिखल होई मीटे संग जाई
तब जइहें रे मोरी जान।

१. दिया। २. क्या (कौन-सी चीज)। ३. भाग्य। ४. जान। ५. सब्र। ६. सौरी। ७. उबटन। ८. धूप। ९. [illegible]। १०. हाँक, पुकार। ११. पामर, भाग्यहीना। १२. गृह। १३. उसीकी। १४. मसका दिया। १५. कमर। १६. उसकी। १७. दगा। १८. उपार्जन करोगे। १९. साला। २०. को। २१. मौत।

(१)

'हंस-गीत' से—

कहे मिट्ठू सुरसती के मनाय के[1]
कछु हमहूँ के दे तू गियान[2]
लगली बदरिया छिलत रहलें घसिया[3]
आइल दिलवा[4] में तब फेकें एक बतिया,
बिरहा बनावे मिट्ठू दिनवा वो रतिया,
हमहूँ के दे तू गियान ॥
गोरी के बलमुआ छवले बा[5] परदेसवा,
में उन्हीं के करो ए बयान ॥
गरजे बादल तड़पे बिजुलिया
गइल पियवा हो परदेस ॥
अंग-अंग देहिया त गोरिया के टूटे[6]
छतिया पर जोबना बिना पिया के सूखे,
बिना पियवा दरदिया ओकर कइसे छूटे,
गइल पियवा हो परदेस ॥
बन के जोगिनियाँ ढूँढ़तो पियवा के मैं
जो कहीं पइतो[7] सनेस[8] ॥

(२)

गोरी रहे उमिर[9] के थोरी[10]
जोहे बालम की आस ।
जोहेले आस ओकर लागल बा अनेसा[11]
मारे सोकियन[12] के ओकर फाटेला करेजा
गइल छितराय[13] हो गइल रेजी-रेजा[14]
जोहि बालम की आस ॥
फूल कुम्हलाइ जात बा बेइल[15] के,
कहिया[16] भँवरा अइहें पास ॥

जोगनारायण 'सूरदास'

जोगनारायण 'सूरदास' की एक रचना पण्डित गणेश चौबे (बँगरी, चम्पारन) से प्राप्त हुई । रचना को देखने से ज्ञात होता है कि कवि की प्रतिभा प्रखर थी और उन्होंने काफी रचनाएँ की होंगी। चौबेजी को यह बारहमासा गोरखपुर जिले में प्राप्त हुआ था। इसकी भाषा भी गोरखपुरी भोजपुरी से मिलती-जुलती है। अतः जोगनारायण गोरखपुर जिले के रहनेवाले होंगे, ऐसा अनुमान स्वाभाविक है ।

१. वन्दना करके । २. ज्ञान । ३. घास । ४. दिल । ५. बसा हुआ है । ६. अंग-टूटना, कामोद्रेक जनित अँगड़ाई । ७. पाती । ८. सँदेसा । ९. उम्र । १०. छोटी, (कमसिन) । ११. अन्देसा । १२. शोक । १३ विवर्ण (छिन्न-भिन्न) । १४. नीचकौम की गरीबनी । १५. बेला फूल । १६. किस दिन ।

प्रथम मास असाढ़ हे सखि साजि चलले जलधार हे।
एहि प्रीति कारण सेत बाँधल सिया उदेश[1] सिरी राम हे॥
सावन हे सखि सबद सुहावन रिमझिम बरसत बुन्द हे।
सबके बलमुआ रामा घर-घरे अइले हमरो बलमु परदेस हे॥
भादो हे सखि रैन भयावन दूजे अन्हरिया ई रात हे।
ठनका ठनके रामा बिजुली चमके मे देखि जियरा डेराय हे॥
आसिन हे सखि आस लगावल आस ना पुरलऽ हमार हे।
कातिक हे सखि पुन्न महीना करहु गंगा असनान हे।
सब कोइ पहिरे रामा पाट-पितम्बर[2] हम धनि[3] गुदरी पुरान हे॥
अगहन हे सखि मास सुहावन चारो दिस उपजल धान हे।
चकवा-चकैया रामा खेल करत हे से देखि जिया हुलसाय हे॥
पूस हे सखि ओस परि गइले भींजी गइले लम्बी-लम्बी केस हे।
चोलिया भींजले जे करबि की हम जोबना[4] मिले अनमोल हे॥
माघ हे सखि ऋतु बसंत आइ गइले जड़वा के रात हे।
पिअवा रहितन रामा जो कोरवा[5] लगइतों कटत जाड़ा ई हमार हे॥
फागुन हे सखि रंग बनायो खेलत पिया के जे संग हे।
ताहि देखी मोर जियरा जो तरसे काउ ऊपर डारूँ रंग हे॥
चैत हे सखि सभ बन फूले, फुलवा फूले जे गुलाब हे।
सखि फूले सभ पिया के संगे हमरो फूल जे मलीन हे॥
बैसाख हे सखी पिया नहीं आवे बिरहा कुहकत मेरी जान हे।
दिन जो कटे रामा रोवत-रोवत कुहुकत बिते सारी रात हे॥
जेठ हे सखि आये बलमुवा पूरल मन के आस हे।
सारी दिन सखि मंगल गावति रैन गँवाये पिया संग हे॥
'जोग नरायन' गावे बारहमास मित्रा जो लेना बिचार हे।
भूल-चूक में मे माफ कीजै पुर गइल बारह मास हे॥

बीसू

बीसू जी शिवमूरत के शिष्य थे। शिवमूरत जी कौन थे और उनका घर कहाँ था, यह अभी अज्ञात ही है। बीसू जी का भी परिचय वैसे ही अज्ञात है। सन् १६११ ई० के पूर्व की छपी 'बिरहा-बहार' नामक एक चार पृष्ठ की पुस्तिका मिली है। पुस्तिका पर १६११ ई० मालिक के नाम के साथ लिखा हुआ है। 'बिरहा बहार' के प्रकाशक हैं—बसन्त साहु बुकसेलर (चौक बनारस) और मुद्रक हैं—सिद्धेश्वर स्टीम प्रेस, बनारस। बिरहा के मुखपृष्ठ पर लिखा है—'शिवमूरत के शिष्य बीसू कृत'। बीसू जी के बिरहे सचमुच सुन्दर उतरे हैं।

१. खोज (उद्देश्य)। २. पीताम्बर वस्त्र। ३. सुहागिन। ४. चढ़ती जवानी के स्तन। ५. क्रोड़, गोद।

'बिरहा-बहार' से

पहिले मैं गाइला अपने गुरू के जौन[१] गुरू रचलन जहान।
जोइ गुरू रचलन जहान सुरसतिया॥
बैठीं माई जीभा पर गाइब दिन-रतिया। जोई गुरू रचे जहान।
पानी से गुरू पिन्डा सँवारे अलखपूरी नवीन॥१॥
सोनवा में मिलल बाय[२] सोहगवा ए गोरिया। कंचन में मिलल बाय कपूर।
पतरि तिरियवा[३] मिलल जाय अपने बलम से।
जैइसे पाठ में मिलल बाय मकलूब[४]॥२॥
छोटकि ननदिया मोर माने ना कहनवाँ सुतेले[५] अँगनवा में रोज।
सोना ऐसन जोबना माटि में मिलवलस[६] मारत बाय कुअरवा[७] के ओस॥३॥
दँतवा में मिसिया सोहत बाटे गोरिया के मथवा में टिकुली लीलार।
चढ़ली जवानी तू तो गइलू बजरिया तोरा जोबना[८] उठल बाय जिउमार[९]॥४॥
तैं गावत बिरहवा आवेले सरदरवा में सुनलऽ करिला तोरि बोल।
जब तू अइबो मोरि दुवरिया मैं हँसि के केवँरिया[१०] देबै खोल॥५॥
दिने सुतेला रात घुमेला दुलहा करेला जंगरवा[११] के ओट[१२]।
रात परोसिन मोहे मरलीन मेहनवाँ[१३] काहे न लड़िकवा बाय होत॥६॥
इहे मिठी-बोलवा[१४] उजड़लस[१५] मोर टोलवा मीठी मीठी बोलिया सुनाय।
एहि बुजरी[१६] तो मोर भइया के बिगरलस[१७] धानी में डुपटवा[१८] रँगाय॥७॥
बाजूबन्द तोरे डन्ड[१९] पर सोहै नाक नथिया बाय, गले टीक[२०]।
पाँच रंग चोली सोहे, तोरे मसवा[२१] गाल के सोहे बीच॥८॥
जिरवा[२२] की नाईं तोरि फुफुति[२३] बतसिया मुनरि[२४] की नाईं तोरी आँख।
उड़ि गइलन अचरा झलकि गइले जोबना, जैसे उगल बाय दुजिया के चाँद॥९॥
दया धरम नाहीं तन में ए गोरिया नाहीं तोरे अँखिया में शील।
उठत जोबनवाँ तू गइलु बजरिया के मुदई बाय के हित॥१०॥
छींकत घरिला[२५] उठावे बारि धनियाँ ओके[२६] दहिने ओर बोलेला काग।
कि तोरे फूटीहें माथे कै घरिलवा कि मिलिहैं नन्हवे[२७] के यार॥११॥
अमवा की डरिया बोले ना कोइलिया मुगना बोले ना लखराव[२८]
सवति के गोदिया में बोले मोर पियवा मोसे इहे दुख सहलो न जाय॥१२॥
सगरों[२९] बनारस चरिके[३०] ए मुनी तू कोनवाँ[३१] में कइलू[३२] दूकान।
दूधवा मलइया मोरे ठेंगे[३३] से न बिकिहैं तनि अँखिया लड़वले से काम॥१३॥

१. जिस। २. है। ३. स्त्री। ४. सीधा और उलटा दोनों ओर से पढ़नेपर समान ही होनेवाला शब्द। ५. सोती है। ६. मिला दिया। ७. आश्विन मास। ८. स्तन। ९. जानमारू। १०. किवाड़। ११. देह। १२. बचाव। १३. ताना। १४. मधुर बोलनेवाला। १५. उजाड़ दिया। १६. एक प्रकार की गाली जो सिर्फ स्त्रियों के लिए है। १७. बरबाद किया, बदचलन बना दिया। १८. दुपट्टा। १९. भुजदण्ड। २०. चन्द्रहार। २१. मासा। २२. जीरा (मसाला)। २३. नीवी। २४. अंगूठी। २५. घड़ा। २६. उसके। २७. बचपन। २८. सड़क के दोनों ओर के लगे पेड़। २९. सब जगह। ३०. विहार करके। ३१. किनारे। ३२. किया। ३३. ठेंगे-से (भोजपुरी मुहावरा), बला से।

महादेव

शाहाबाद जिले के महादेव सिंह 'घनश्याम' अथवा 'सेवक कवि' से भिन्न यह दूसरे महादेव हैं। आपका निवासस्थान बनारस है। आपका विशेष परिचय ज्ञात नहीं हो सका। आपके गीत 'पूर्वी तरंग'[१] नामक संग्रह-पुस्तिका से मुझे मिले हैं। गीतों से ज्ञात होता है कि आपको पशु-पक्षियों का अच्छा ज्ञान था। आपका समय १९ वीं सदी का अन्त होगा, ऐसा अनुमान है।

पूर्वी दोहादार

(१)

सुनऽ मोरे सैयां मोरी बुध[२] लड़कइयाँ[३] हमें मँगाई देता ना,
सामासुन्दर एक चिरइयाँ[४] हमें मँगाई देता ना ॥१॥
बहुत दिना से चिरई पर मन लागल बाय हमार,
अँगन हरेवा[५] हारिल[६] खातिर तोहने कहूँ तिखार[७],
एक जीयाई[८] देता ना सुगना[९] राम-नाम लेने को,
एक जीआई देता ना ॥२॥
मोरे भुजंगा[१०] नित उठ बोले राम-नाम गोहराय,
सदिया[११] लाल[१२] की सुन के बोली दिल मोरा लहराय,
लाल लियाई देता ना। रखबै पिंजड़ा में जोगा के,[१३]
लाल लिआई देता ना ॥३॥
मोरवा मस्त मगन होय नाचे पर अपना फैलाय,
नाचत-नाचत पैर जो देखे दिल ही में मुरझाय,
मोरवा कवना बखत नाचे हमें दिखाई देता ना,
हमें दिखाई देता ना ॥४॥
'महादेव' मोरे बारे[१४] बलमू दिल के अरमान मेटाव,
जवन गवने माँगू हम चिरई चट ले हमें लिआव,
जा के ले अइबऽ[१५] कि नाहीं हमें बताई देता ना,
हमें बताई देता ना ॥५॥

(२)

सूतल रहलीं ननदी की सेजरिया, जीव डेराई गइले ना।
देखली सैयाँ के सपनवाँ, जीव डेराई गइले ना ॥१॥
चिहुँकि के धइलीं अपनी ननदी के अँचरवा, दिल घबड़ाई गइले ना।
ब्याकुल भइले मोर परनवाँ, दिल घबड़ाई गइले ना ॥२॥
एक तो अकेली दूजे सखिया ना सहेली, जीव लजाई गइले ना।
रस रस मोर ननदिया जीव, लजाई गइले ना ॥३॥
बिना रे सजनवाँ सूना लागे घर-अँगनवाँ, दुखवा नाहीं गइले ना।
उठते छतिया पर जोबनवाँ, दुखवा नाहीं गइले ना ॥४॥

---

१. प्रकाशक—ठाकुर प्रसाद गुप्त, बुकसेलर, बनारस। २. बुद्धि। ३. लड़कपन। ४. पक्षी। ५. हारिल पक्षी का एक भेद। ६. एक पक्षी। ७. तिबारा। ८. जीविका, जीने का साधन। ९. तोता। १० एक पक्षी-विशेष। ११. लाल पक्षी का एक भेद। १२. एक पक्षी। १३. जुगोकर। १४. नौजवान। १५. ले आओगे।

सपने में सइयाँ मोरा आयके 'महादेव' हमें जगाई गइले ना।
नहीं देखलीं भर नयनवाँ, हमें जगाई गइले ना ॥५॥

बेचू

बेचू भी बनारस के १६ वीं सदी के अन्त के कवियों में से थे। आपकी रचनाएँ बनारसवालों के कण्ठ में आज भी हैं। आपका एक गीत उक्त 'पूर्वी तरंग' नामक संग्रह-पुस्तिका से प्राप्त है।

पूर्वी

लिया के[1] गवनवां रजऊ[2] छोड़ने भवनवाँ, पिया परदेसिया भइले ना।
सूनी करऽ गइले सेजरिया, पिया परदेसिया भइले ना ॥ टेक ॥
कवने सगुनवाँ भइया देहले गवनवाँ बड़ी फजिहतिया[3] कइले ना।
लाके अपने पिया बखरिया[4], बड़ी फजिहतिया कइले ना ॥१॥
सूनी बा बखरिया रजऊ कइले हो सफरिया, मोर दुरगतिया[5] कइले ना।
टिकले सवतिन की नगरिया मोर दुरगतिया कइले ना ॥२॥
चोलिया के बनवा[6] तड़कै[7] साँझ वो बिहनवाँ, सुरहा[8] नाहीं अइले ना।
धुमिल हो गइली नजरिया, सुरहा नाहीं अइले ना ॥३॥
करे मोने घतिया[9] हो री 'बेचू' खुरफतिया[10], पिया जुदाई कइले ना।
करके सवतिन संग लहरिया[11], पिया जुदाई कइले ना ॥४॥

खलील और अब्दुल हबीब

खलील और अब्दुल हबीब दो मुसलमान शायर गुरु शिष्य थे। ये दोनों बनारस के ही थे और इनका समय भी १६ वीं सदी का अन्त कहा जा सकता है। बनारस या मिर्जापुर के अखाड़ों में से किसी अखाड़े से आप दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध था। इन दोनों नामों से दो गीत 'पूर्वी तरंग' नामक संग्रह-पुस्तिका में मिले हैं।

खलील की रचना—

पूर्वी दोहादार

बेर-बेर सइयाँ तोहसे अरज लगवलीं, पिया बनवाई देता ना।
हमके पोर-पोर गहनवाँ, पिया बनवाई देता ना ॥ टेक ॥

कड़ा मिली करनाल में रजऊ पूना मिली पौजेब ॥
नथिया तोहसे नागपुर के, अबकी सैयाँ लेब।
पिया लियाई देता ना, छल्ला के छपरा में खनवाँ
पिया लियाई देता ना ॥ १ ॥

१. लिवा लाकर। २. राजा (पति)। ३. बेइज्जती। ४. गृह। ५. दुर्गति। ६. बन्द। ७. टूटे। ८. निर्मोही ९. घात। १०. खुराफात। ११. विहार।

कलकत्ता में बने करधनी, मुनरी महमदाबाद।
बाजू मिलेला बरदवान में, करलऽ सैयाँ याद॥
पिया मँगवाई देता ना, पटना शहर के बढ़िया पनवा
हो मँगवाई देता ना॥ २॥
पहुँची बिकै पंजाब में प्यारे, सिकरी सोनपुर यार।
बिरिया[1] पहिरब बंगाल के नवे, हम करबई प्यार॥
पिया ढरवाई देता ना, जाके ईजानगर अभरनवाँ
पिया ढलवाई देता ना॥ ३॥
झुलनी लिया दऽ झाँसी जाके, नथुनी मीली नेपाल।
'खलील' तोहसे अरज करत हौं, पूरा करो सवाल॥
तनि समुझाई देता ना, हबीब मानिहे तोहरा हो कहनवा
तनि समुझाई देता ना॥४॥

अब्दुल हबीब की रचना-

पूर्वी दोहादार

सुनो मोरे सइयां, तोहसे कहलीं कई दैयाँ, हम नइहरवा जइबै ना।
अब तो आगइलें सवनवाँ, हम नइहरवा जइबै ना॥ टेक॥
सावन में सब सखिया हमरी करके खूब तइयारी।
झूम-झूमके कजरी गावें पहिन-पहिन के सारी॥
जाके हमहूँ गइबै ना, हमरा लागल बा धियनवाँ।
जाके हमहूँ गइबै ना॥ १॥
नहिं मानब अबकी ए सैयाँ, नइहरवाँ हम जाब।
ना पहुँचइबा गर हमके तो, मरब जहर के खाव।
सइयाँ जान गवइबै ना, अपनी तज देबै हो परनवाँ
सइयाँ जान गँवइबै ना॥२॥
भादो में भोर इब्राहीम बोलवाये अपने पास।
अब्दुल हबीब कहत हमरी पूरी करऽ सोहाग॥
तोहरी बड़ गुन गइबै ना।
करवै खलील के बखनवाँ, तोहरी बड़ गुन गइबै ना॥ ३॥

घीसू

'घीसू' कवि का परिचय अज्ञात है। आपकी रचना मिर्जापुरी कजरी[2] नामक संग्रह-पुस्तिका में मिली है। आप मिर्जापुर के कवि थे। समय भी १६ वीं सदी का अन्त था।

(१)

गोरिया गाल गोल अनमोल, जोबनवाँ तोर देखाला ना।
नीरंग छिपा जाय सरस साँचेका ढाला ना।
कठिन कड़ाहट कमठपीठ नहिं पटतर वाला ना॥

१. कान का एक आभूषण। २. प्रकाशक—दूधनाथ प्रेस, सलकिया, हवड़ा।

कुन्त कीरते अधिक कलस केचन तेवाला ना।
कहने घीसू चित चोराय चकई चौकाला ना॥

(२)

तोसे लगल पिरितिया प्यारी, मोसे बहुत दिनन से ना।
हम आशक बाटीं तोहरे पर, तन-मन-धन से ना।
घायल भइलीं हम तोहरे, तीखे चितवन से ना॥
हमें छोड़के प्रीति करेलू तू लड़कन से ना।
कहते 'घीसू' कबों तऽ मिलबू कौनो फन से ना॥

धीरू

धीरू भी बनारस के रहनेवाले कवि थे। आपका भी समय १६ वीं सदी का अन्त था। आपकी रचना 'मिर्जापुरी कजरी' नामक संग्रह पुस्तिका में मिली है, जो नीचे दी जाती है—

कजरी

बाटे[1] बड़ी चतुर खटकिनियाँ पैसा मुस के लेला ना।
धरे नरंगी कपरा पर कलकतिया केला ना॥
घूमे चउकपुर[2] नयना सौदा हँसके देला ना।
शाम-सुबह दुपहरिया आवे तीनों बेला ना॥
'धीरू' कहे हमहू से लेले एक अधेला ना॥३६॥

रसिक

एक रसिकजन नाम के कवि पहले भी हो चुके हैं। पता नहीं, आप वही हैं अथवा दूसरे। आपकी भाषा से ज्ञात होता है कि आप 'शाहाबाद' अथवा 'बलिया' जिले के रहनेवाले थे। डुमरांव के एक 'रसिक' नामक कवि हिन्दी के भी कवि हो गये हैं, जिनकी एक छपी पुस्तक देखने को मिली थी। आप वही 'रसिक' कवि हैं, या दूसरे यह भी नहीं कहा जा सकता। आपकी तीन रचनाएँ उक्त 'पूरा तरंग' नामक पुस्तिका में मिली हैं, जिनमें दो नीचे उद्धृत हैं—

(१)

फूल लोढ़े अइलों में बाबा फुलवरिया अँटकि रे गइली ना,
फूल-डारी रे चुनरिया अँटकि रे गइली ना॥
कैसे छुड़ावों काँटा गड़लऽ अँगुरिया मे फटि रे गइली ना,
मोरा चोलिया केसरिया, मे फटि रे गइली ना॥
संग की सखी सब भुललीं डगरिया भटकि रे गइली ना॥
'रसिक' बलमू लेहू खबरिया भटकि रे गइली ना।
ये हो माया रे नगरिया, भटकि रे गइली ना॥

---

१. है। २. सब तरह से ठीक (सजग)।

(२)

पिया मोर गइलें रामा हुगली सहरवा से लेइ अइले ना
एक बंगालिन रे सवतिया से, लेइ रे अइले ना ॥
तेगवा जे साले रामा घरी रे पहरवा, सवतिया साले ना ।
उजे आधी-आधी रतिया, सवतिया साले ना ।
सवती के ताना मोहिं लागेला जहरवा, कहरवा[1] डाले ना,
मोरा कसकत छतिया, कहरवा डाले ना ॥
'रसिक' बलमू[2] अब भइले रे निठुरवा से, बोले-चाले ना ॥
पिया मोसे मुख बतिया, मे बोले-चाले ना ॥

चुन्नीलाल और गंगू

चुन्नीलाल का नाम बनारस शहर के बूढ़ों में अब भी आदर के साथ लिया जाता है। आप वहां के मशहूर शायरों में से थे। आपके शिष्य गंगू थे। चुन्नीलाल की रचना तो अभी नहीं मिल पाई है; पर गंगू जी की रचना प्राप्त है। 'पूरा तरंग' नामक संग्रह पुस्तिका में आपका एक पूर्वी गीत है, जिसे नीचे उद्धृत किया जा रहा है। इसमें चुन्नीलाल गंगू नाम आया है। 'चुन्नीलाल' का नाम 'गंगू' ने अपने गुरु के रूप में रखा है।

मथवा पर हथवा देके झँखेलिन[3] गुजरिया[4], पिया घर नाहीं अइले ना
कइले[5] हमरे संग में घतिया[6], पिया घर नाहीं अइले ना ॥ १ ॥
बिरहा सतावे मोहीं चैन नहीं आवे, करम[7] मोर फूटी गइले ना ।
हम पर अइले हो बिपतिया, करम मोर फूटी गइले ना ॥ २ ॥
उमगलि जोबनवां मोरा माने ना कहनवाँ, दुखवा भारी भइले ना ।
फसौले[8] पिया के मोरे सवतिया, दुखवा भारी भइले ना ॥ ३ ॥
सूना लागेला बखरिया[9] नाहीं भावेला सेजरिया[10] ।
हमसे कइलेना चुन्नी लाल गंगू घतिया ना ॥ ४ ॥

काशीनाथ

आपकी कविता की भाषा विशुद्ध भोजपुरी है। अतः आपका भी जन्म-स्थान किसी विशुद्ध भोजपुरी-भाषी जिले में होगा। आपका समय तथा अधिक परिचय अज्ञात ही है। आपकी एक रचना 'मिर्जापुरी कजरी' नामक संग्रह-पुस्तिका में मिली है, जो नीचे उद्धृत है—

अँखिया कटीली गोरी भोरी[11] तोरी सुरतिया रामा,
हरि चितवन मारेलू कटरिया रे हरी ।
पतरी कमरि[12] तोरी मोहनी मुरतिया रामा,
हरि-हरि लचकत चढ़ेलू अटरिया रे हरी ॥

---

१. कहर—विपत्ति । २. बलमू—वल्लभ । ३. झँखती है, चिन्ता करती है । ४. नायिका । ५. किया । ६. घात, धोखा । ७. भाग्य । ८. वशीभूत कर लिया । ९. हवेली । १०. शय्या । ११. भोली । १२. कमर, कटि ।

धानी चुन्दरिया पहने ठाढ़ हो खिरिकिया रामा,
हरि-हरि ताकि-ताकि मारेलू नजरिया रे हरी ।
'काशीनाथ' जोहे नित तोहरी डगरिया रामा,
हरि-हरि जबसे देखले प्यारी तोर सुरतिया रे हरी ॥

बटुकनाथ

'बटुकनाथ' के गीतों की वर्णन-शैली देखकर ज्ञात होता है कि ये बनारस के ही किसी कजरी-अखाड़े के कवि थे। इनके गीत बड़े रसीले हैं। भाव तथा भाषा भी बहुत चुलबुली है। 'बाँका छबीला गवैया'[1] नामक पुस्तक में इनके गीत मुझे मिले, जो नीचे दिये जाते हैं—

कजली

(१)

गोरी करके सिंगार चोली पहिरे बूटेदार
जिया मारेली गोदनवाँ गोदाय के, नयनवाँ लड़ाय के ना ॥ १ ॥
बनी है सूरत कटीली गोल, बोल मीठी मीठी बोल
मोर फँसौले जाली मनवाँ मुसकाय के, नयनवाँ लड़ाय के ना ॥ २ ॥
पतरी कमर, झुनुकती चाल, लटके गालों पै बाल
जादू डालेली जोबनवाँ देखाय के, नयनवाँ लड़ाय के ना ॥ ३ ॥
जिस दम जालू तू बाजार घायल करेलू कितने यार
रखि तू जुलुमी[2] के अँचरवा में छिपाय के, नयनवाँ लड़ाय के ना ॥ ४ ॥
पहिर कुसुम रंग तन सारी, प्यारी मान बात हमारी
रहि तू 'बटुकनाथ' के गरवाँ लपटाय के, नयनवाँ लड़ाय के ना ॥ ५ ॥

(२)

सखी से कहे नहीं घर बालम आलम चढ़ी जवानी में ।
कैलस जोर-जुलुम अब जोबन मस्त दीवानी में ॥
कारी घटा घन-घोर बिजुरिया चमके पानी में ॥
'बटुकनाथ' से कर साथ एसन जिन्दगानी में ॥ १ ॥

बच्चीलाल

आप बनारस के मशहूर मुकुन्दी भाँड़ के पुत्र थे। मुकुन्दी भाँड़ शायर छन्नूलाल के शिष्य थे। मुकुन्दी भाँड़, मलदहिया (बनारस छावनी) के रहनेवाले थे। मुकुन्दी लाल, उनके गुरु छन्नू लाल तथा बच्ची तीनों बनारस के अति प्रसिद्ध कवि भैरोदास के अखाड़े के शिष्य थे। बच्ची लाल की लिखी एक पुस्तिका 'सावन का सुहावन ढंगा'[3] मिली है। कवि ने एक कजली के अन्त के चरणों में अपने अखाड़े के आदि गुरु 'भैरो दास' के सम्बन्ध में लिखा है—

---

१. प्रकाशक—शिरोजी लाल बुकसेलर, आदमपुरा, बनारस सिटी। २. जुल्म करनेवाला। ३. इसे गुल्लू प्रसाद बुकसेलर, कचौड़ी गली, बनारस ने बटुकनाथ प्रेस, कबीर चौरा, बनारस में छपवाया था।

"राही हो गये शायर पुराना, है ये भैरो का घराना।
उनको जाने जमाना हिन्दू मुसलमान बलम् ॥"

आपकी रचना उसी पुस्तिका से उद्धृत की जाती है जो सास-पतोहू की लड़ाई और पति से फरियाद के रूप में है। पति ने जो जवाब दिया है, वह तो खड़ी बोली में है; पर सास-पतोहू का झगड़ा भोजपुरी में है। भाँड़ों की नाट्य-कला का प्रदर्शन इस पद्यात्मक नाटक में कितना कलात्मक है, यह इन पदों से ज्ञात हो जायगा—

पति से

कहीला तोसे तीरवार[१]! सुनऽ पती जी हमार।
हमसे माई[२] तोहार झगड़ल करलीन ॥
खुराफात मचावें, चमकावें, अइठावें[३],
रोज रोज जियरा डाहल[४] करलीन ॥ टेक ॥
गउवाँ[५] की कुल नारी। घरवां आवे पारा-पारी[६]
समझावे सब हारी, नहीं माने कहना ॥
धम-धम[७] मारे लात, जो मैं बोलूँ कुछु बात।
जियरा मोर घबरात, कइसे होई रहना।
बीत गईल अकुलाय तोह से कहीं बिलखाय।
पछताय पछताय के चलावें बेलना।
छौंक-छौंक[८] के ताने लोटा।
धैंके अइठें[९] मोर झोंटा[१०],
लोटवा से कूँचे[११] लीन जवन मोरा गहनाँ ॥
जब देखे तोर सकल, तब करलीन नकल,
पटिया[१२] पर पड़ल कहँरल[१३] करलीन ॥

जगन्नाथ रामजी

आपने गांधीजी के चर्खे पर भी सुन्दर रचनाएँ की हैं। आप बनारस के वर्त्तमान मशहूर कवियों में एक हैं; क्योंकि बुद्धूजी आदि आधुनिक व्यक्तियों का जिक्र आपकी रचना में आया है। रचनाओं से ज्ञात होता है कि कविता-रचना में आप अपने प्रतिद्वन्द्वियों से लोहा लेते हैं। कुछ नये तर्ज के गीतों के उदाहरण आपकी रचनाओं से नीचे दिये जाते हैं—

पूर्वी विहाग

सत्याग्रह में नाम लिखाई, सइयाँ जेहल छौले[१४] जाई,
रजऊ[१५] कइसे होइहैं ना,
ओही जेहल के कोठरिया रजऊ कइसे होइहैं ना ॥ १ ॥
गोड़वा[१६] में बेड़िया, हाथ पड़ली हथकड़िया,
रजऊ कइसे चलिहैं ना
बोझा गोड़वा में जनाई[१७], रजऊ कइसे चलिहैं ना ॥ २ ॥
घरवा तो सइयाँ कुछ करते नाहीं रहले, अटवा कइसे पिसिहैं ना,
भारी जेहल के चकरिया[१८] उहवाँ कइसे पिसिहैं ना ॥ ३ ॥

१. जीवन-नैया पार लगानेवाला=घटवार। २. माता। ३. ऐंठती है। ४. तपाना। ५. गाँव। ६. बारी-बारी से। ७. धम-धम की आवाज। ८. उछल-उछलकर। ९. ऐंठती है। १०. माथे का केश। ११. कुचलती है। १२. खाट की पाटी। १३. कराहती है। १४. वास करना। १५. राजा, प्रियतम। १६. पैर। १७. मालूम पड़ेगा। १८. जाँत, चक्की।

घरके जेवनवाँ[1] उनका नीको[2] नाहीं लागे
उहवाँ कइसे खइहैं ना,
जव[3] के रोटिया, घासि के सगवा[4] उहवाँ कइसे खइहैं ना ॥ ४ ॥
मखमल पर सोवे उनकर निंदिया नाहीं आवे
उहवाँ कइसे सोइहैं ना,
सइयाँ कमरा[5] के सेजरिया, उहवाँ कइसे सोइहैं ना ॥ ५ ॥
'जगरनाथ' बुद्ध सत्याग्रह में नाम लिखइहैं,
जेहल उनहूँ जइहैं ना,
भारत माता के कारनवाँ, जेहल उनहूँ जइहैं ना ॥ ६ ॥
रजऊ कइसे होइहैं ना, ओही जेहल के कोठरिया
रजऊ कइसे होइहैं ना ॥ ७ ॥

बिमेसर दास

आप बक्सर (शाहाबाद) के भक्त कवि कुंजनदास के शिष्य थे। कुंजनदास का लिखा, अवधी और भोजपुरी-मिश्रित व्रजभाषा में छपा हुआ एक काव्य ग्रन्थ प्राप्त हुआ है। बिसेसर दास के भी भोजपुरी गीत 'भ्रमर-तरंग' नामक भोजपुरी-पुस्तक में प्राप्त हुए हैं, जिनमें से एक यहाँ उद्धृत है—

(१)

जो मधुवन से लवटि कान्हा अइहें हरखि पुजबों ना,
गिरिजा तोरा हो चरनवाँ, हरखि पुजबों ना ॥
मेवा पकवान फल फूल ही मिठाई, मुदित होइ ना,
मैया तोहिके चढ़इबों हो ॥ मुदित होइ० ॥
अच्छत चन्दन गौरा बेलपतिया सुमन हार ना,
लेइ पुजबों तोर चरनियाँ ॥ सुमन हार ना० ॥
'कुंजन दास' के एक दास हो 'बिमेसर' विनय करे ना,
सीस नाइ हो गुजरिया। विनय करे ना ॥

जगरदेव

जगरदेव जी के तीन गीत यहाँ उद्धृत किये जाते हैं[6]। आपका परिचय अज्ञात है। अनुमान है कि आप शाहाबाद जिले के हैं; क्योंकि आपकी भाषा विशुद्ध भोजपुरी है।

(१)

स्वामी मोरा गइले हो पुरुब के देसवा से देइ गइले ना।
एक सुगना खेलौना, से देइ गइले ना ॥
खाय के माँगे सुगना दूध-भात खोरिया[7], से सुते के माँगे ना
दूनों जोबना के बिचवा, से सुते के माँगे ना ॥
आधि-आधि रतिया सुगा पछिले पहरवा[8], से कुटके[9] लागे ना।
मोरी चोलिया के बन्दवा से कुटके लागे ना ॥
एक मन होला सूगा भुइयाँ से पटकति, दूसर मनवा ना ॥
'जगरदेव' स्वामी का खेलौना, दूसर मनवा ना ॥

१. भोजन। २. अच्छा। ३. जौ। ४. साग। ५. कम्बल। ६. श्री गणेश चौबे (चम्पारन) से प्राप्त। ७. खोरा, कटोरा। ८. पहर। ९. कुतरना, काटना।

(२)

मुड़वा[1] मींजन[2] गइलो बाबा का सगरवा[3] से गीरी गइले ना।
तीनपतिया[4] झुलनिया से गीरी गइले ना॥
कोठवा पर पूछेला लहुरा[5] देवरवा से केहि रे कारन ना।
भउजी मुँहवा सुखायल से, केहि रे कारन ना॥
पनवा बिना ना मोरा मुँहवा सुखायल, झुलनी बिना ना॥
तजबे आपनऽ परनवा झुलनिया बिना ना॥
मोरा पिछुअरवा[6] हाँ मलहवा बेटउआ[7], से खोजी देउ ना।
मोर नइहर के झुलनिया से खोजी देउ ना॥
एक जाल लवलीं, दूसर जाल लवलीं से तीसरी जलिया ना।
फँसलि आवे मोरी झुलनिया से तीसरी जलिया ना॥
झुलनी के पाय खुसीआली[8] मन भइली से चलत भइली ना।
'जगरदेव' स्वामी के भवनवाँ से चलत भइली ना॥

(३)

जब से छयलवा मोरा छुअले लिलरवा[9], सपनवा भइले ना।
मोरा नइहर-अँगनवाँ सपनवा भइले ना॥
तोहरे करनवाँ छैला माई-बाप तेजलीं, से तेजी देहलीं[10] ना॥
अपने नइहर के रहनवाँ,[11] से तेजी देहलीं ना॥
हाँ रे मोरे सैयाँ मैं परूँ तोरी पैयाँ[12], से दिनवाँ चारि ना।
हमके जायेदऽ नइहरवा से दिनवाँ चारि ना॥
अबहीं उमर मोरा बारी[13] लरिकइयाँ[14], से मिटि रे जइहें ना।
'जगरदेव' दिल के कसकवा से मिटि रे जइहें ना॥

जगन्नाथ राम, धुरपत्तर और बुद्धू

बनारस में 'शहवान' शायर का भी एक कजरी-गान का अखाड़ा था। इस कवि के कई शिष्य हो गये हैं जो नये-नये तर्जों से कजली की रचना करके कजली के दंगलों में बनारसवालों को प्रसन्न किया करते थे। इस अखाड़े के प्रसिद्ध शिष्यों में बुद्धू, धुरपत्तर तथा जगन्नाथ राम के नाम उल्लेखनीय हैं। इनकी अपनी-अपनी रचनाओं की अनेक पुस्तिकाएँ हैं। सन् १९३० ई० के लगभग इनका रचना-काल है; क्योंकि जगन्नाथ राम की रचना में १९२१ ई० और १९३० ई० के सत्याग्रह-आन्दोलनों का वर्णन है। मुझे 'पूर्वी का पीताम्बर'[15] नामक पुस्तिका मिली है, जिसमें इन तीनों कवियों के गीत संगृहीत हैं। एक गीत में दो या तीनों कवियों के नाम आ गये हैं।

पूर्वी दोहादार

(१)

जबसे बलमुवाँ गइलै एको पतिया ना भेजलैं, पिया लोभाई गइलै ना
कवनो सौतिन के रंजरिया, पिया लोभाई गइलै ना॥ टेक॥
जबसे सइयाँ छोड़ के गइलै, भेजे नहीं सनेस।
कामदेव तन जोर करतु हैं, दे गए कठिन कलेस॥

---

१. माथा। २. मल-मलकर धोना। ३. जलाशय। ४. तीन पत्तीवाली। ५. छोटा तथा रसिक। ६. मकान के पीछे। ७. बेटा। ८. खुशी। ९. छुअले लिलरवा (भोजपुरी मुहावरा) सिन्दूरदान, (ब्याह)। १०. छोड़ दिया। ११. रहना। १२. परूँ मैं तोरी पैयाँ—पैर पर गिरती हूँ। १३. कमसिन। १४. लड़कपन। १५. प्रकाशक—मैवालाल एण्ड कम्पनी, कचौड़ीगली बनारस।

सइयाँ बेदरदी भइलें ना हमरी लेहलें ना खबरिया
सइयाँ बेदरदी भइलै ना ॥ १ ॥
तड़प-तड़प के रहूँ सेज पर, लगे भयावन. रात।
जोबन जोर करें बिनु सइयाँ, ई दुख सहल न जात ॥
कोई बिलमाई लेहली ना, गइले बँगाले नगरिया
कोई बिलमाई लेहली ना ॥ २ ॥
आप पिया परदेस सिधारे, छोड़ अकेली नार।
पिया रमे सौतिन घर जाके, हमके दिया बिसार ॥
पिया बिसारी गइलै ना बइठल जोहीला[1] डगरिया
पिया बिसारी गइलै ना ॥ ३ ॥
दिल की अरमा दिल में रह गई, करूँ मैं कवन उपाय।
गम की रात कटत ना काटे, सोच सोच जिव जाय ॥
पिया खुवारी[2] कइलै ना लिहलै हमसे फेर नजरिया
पिया खुवारी कइलै ना ॥ ४ ॥
'शहवान' उस्ताद है हमरे, दिया ज्ञान बतलाय।
जगरनाथ बुद्धू का मिसरा, सुन मन खुसी हो जाय ॥
आज सुनाई गइलै ना, गाके सुन्दर तरज कजरिया,
आज सुनाई गइलै ना ॥ ५ ॥

(२)

अँखिया लड़वलू हमके छुरिया पर चढ़वलू मोरी भउजी।
मउतिया हमार मोरी भउजी ॥
करके सिंगरवा अब पहिनलू कजरवा, मोरी भउजी।
टिकुली सोहले मजेदार, मोरी भउजी ॥१॥
चललू डगरिया तिरछी फेरत नजरिया, मोरी भउजी।
घूमे जालू सगरे[3] बजार, मोरी भउजी ॥२॥
नकिया क टुनकी[4] तोहरे गाले पर के बुनकी[5] मोरी भउजी।
करेलू कतलऽ[6] कई हजार, मोरी भउजी ॥३॥
गुंडन का मेला लागे, करेलू झमेला मोरी भउजी।
दूनों जूनऽ चले तरवार, मोरी भउजी ॥४॥
कहे ले बुद्धू हँसके रहऽ रात बसके, मोरी भउजी।
पूरा करऽ पुरपत्तर के करार मोरी भउजी ॥
भइली मउतिया[7] हमार, मोरी भउजी ॥५॥

रसिकजन

आपका परिचय अप्राप्त है। आप अपने समय के जनप्रिय भक्त कवि थे। आपके 'राम-विवाह' के गीत मिलते हैं। आपकी एक रचना 'श्री सीताराम-विवाह'[8] से उद्धृत की जाती है—

अवध नगरिया से अइले बरिअतिया, ए सुनु सजनी,
जनक नगरिया भैले सोर, ए सुनु सजनी ॥

---

१. जोहती हूँ (बाट जोहती हूँ)। २. जिल्लत। ३. सब जगह। ४. नाक की कील या लौंग। ५. छोटी बिन्दी। ६. कत्ल। ७. मौत। ८. प्रकाशक—भार्गव-पुस्तकालय, गायघाट, बनारस।

बाजवा के शब्द सुनी पुलके मोरा छतिया ए सुनु सजनी,
रोसनी के भयल बा अँजोर, ए सुनु सजनी ॥
सब देवतन मिलि अइलें बरिअतिया, ए सुनु सजनी,
बाजन[1] बाजेला घनघोर, ए सुनु सजनी।
परिछन चललीं सब सखिया सहेली, ए सुनु सजनी,
पहिरली लहँगा पटोर[2], ए सुनु सजनी ॥
कहत 'रसिक जन' देखहु सुनर बर, ए सुनु सजनी,
सुफल मनोरथ भैले मोर, ए सुनु सजनी ॥

लालमणि

लालमणि का परिचय प्राप्त नहीं हो सका। आपके चार गीत 'बड़ी प्यारी सुन्दरी वियोग' यानी 'बिदेसिया'[3] नामक पुस्तिका में मिले हैं। यह पुस्तिका सन् १६३२ ई० में प्रकाशित हुई थी। आपकी रचना की भाषा से पता चलता है कि आप सारन अथवा शाहाबाद जिले के निवासी थे।

पूरबी

(१)

अइले फगुनवाँ सैंया नाहीं मोरे भवनवाँ से देवरवा मोरा,
होरी बरजोरी मोसे खेले रे देवरवा मोरा ॥ टेक ॥
भरि पिचुकारी मारे, हिया बीच मोरे रे देवरवा मोरा,
हथवा घुंघट बीच डाले रे देवरवा मोरा ॥ १ ॥
अबीरऽ गुलाल लावै हँसि-हँसि गलवा रे देवरवा मोरा,
जोबना मरोरे बहियाँ ठेले रे देवरवा मोरा ॥ २ ॥
निठुर लालमणि माने ना कहनवाँ रे देवरवा मोरा,
करे मोरे चोलिया में रेले[4] रे देवरवा मोरा ॥ ३ ॥

(२)

जियरा मारे मोरि जनियाँ[5] सो तोरी बोलिया।
कुसुमी ओढ़निया बीचे जरद किनरिया कसी रे चोलिया,
हा रेसमी तोरी छतियाँ, कसी रे चोलिया ॥ १ ॥
पिहकेलू[6] जनियाँ कोइलिया की नइयाँ[7] अजब बोलिया,
हा लगे रे मोरे हियरा अजब गोलिया ॥ २ ॥
चलु-चलु प्यारी चलु हमरी नगरिया फनाऊँ डोलिया[8],
मानो हमरी बचनियाँ फनाऊँ डोलिया ॥ ३ ॥
लागी गइली प्यारी मोरे तोहे पे धियनवाँ[9] हमारी टोलिया[10],
लगिहें 'लालमणि' छतिया हमारी टोलिया ॥ ४ ॥

(३)

मैना[11] भजु आठो जमवाँ[12] तूँ हरि-हरि ना ॥टेक०॥
तजि देहु मैना माया-कपट-करनवाँ[13] से धरि लेहु ना,
मैना स्वामी पै धियनवाँ से धरि लेहु ना ॥

१. बाजे। २. रेशमी वस्त्र। ३. प्रकाशक—कर्मधन-पुस्तकालय, नखास चौक, गोरखपुर; मुद्रक—प्रिंटिंग प्रेस, गोरखपुर। ४. हाथ घुमेड़ना। ५. जानी, प्यारी। ६. कुहुकती हो। ७. नाईं, सदृश। ८. जबरदस्ती डोली पर चढ़ा लूँगा। ९. ध्यान। १०. टोला, मुहल्ला। ११. पक्षी (मन)। १२. आठो याम (अहर्निश)। १३. कपट करना।

जेहि दिन अइहैं मैना कउल-कररवा[1] से धरि-धरि ना,
तोरा तोरी[2] गरदनवाँ से धरि धरि ना ॥२॥
कहत लालमणि मानि ले कहनवाँ से घरी-घरी[3] ना,
बोले मैना हरिनमों से घरी-घरी ना ॥३॥

(४)

तोरी बिरही बँसुरिया करेजवा साले ना ॥टेक०॥
जेहि दिन आयो कान्हा हमरी नगरिया, मोहनियाँ डाल्यो ना,
कीन्हों हँसि-हँसि बतियाँ मोहनियाँ डाल्यो ना ॥१॥
सुनो मोरी सखिया मैं जोहति डगरिया बँसुरिया वाले ना,
कहवाँ गैले मोरा कान्हा बँसुरिया वाले ना ॥२॥
जब सुधि आवे कान्हा तोहरी सुरतिया, करेजवा घाले ना,
ओही बिरहा के बोलिया, करेजवा घाले ना ॥३॥
स्याम लालमणि सुधि बिसरेला से परल्यूँ पाले[4] ना,
तोहरे बरबस कान्हा से परल्यूँ पाले ना ॥४॥

(५)

हमके राजा बिना सेजिया से नाहीं भावे ना ॥टेक०॥
जाहि दिन सैयाँ मोरा ले अइलें गवनवाँ से नाहीं आवे ना,
सैंया हमरी सेजरिया से नाहीं आवे ना ॥१॥
बिन रे बलम कैसे सूतों मैं सेजरिया से नाहीं आवे ना,
हमरे नैनवा में नींदिया से नाहीं आवे ना ॥२॥
नाहीं नीक लागे हमके कोठवा-अटरिया अँधेरी छावे ना,
बिनु पिया के भवनवाँ अँधेरी छावे ना ॥३॥
सुनहु लालमणि आवो मोरा सेजिया, से नाहीं पावे ना,
सुख सेजियाँ गुसइयाँ से नाहीं पावे ना ॥४॥

(६)

हमरा लाइ के गवनवाँ बिदेसवाँ गइले ना ॥ टेक० ॥
केतिकों[5] मैं लिखि-लिखि पतियाँ[6] पठवलों से नाहीं अइले ना,
निरमोही मोर सजनवाँ से नाहीं अइले ना ॥१॥
उमड़ी जोबनवाँ, मोरा न माने कहनवाँ[7] से बेदनवाँ[8] भइले ना,
हमरे हिया के भितरवाँ, बेदनवाँ भइले ना ॥२॥
कवन बिगरवा[9] तोरा कइलूँ विधि-ब्रह्मा, अभागिन कइले ना,
अब से कवने रे करनवाँ अभागिन कइलें ना ॥३॥
बरु[10] मैं कुमारी होतीं बाबा जी के घरवाँ, से नाहक धइले ना,
हथवा-बहियाँ[11] सजनवाँ से नाहक धइले ना ॥४॥

१. कौल-करार (मृत्यु की निश्चित तिथि)। २. तोड़ देगा। ३. घड़ी-घड़ी। ४. पाला पड़ना-काम पड़ना। ५. कितना भी। ६. पत्र। ७. कहना, उपदेश। ८. वेदना। ९. बिगाड़, शत्रुता, अपराध। १०. बल्कि। ११. हाथ-बाँह धरना = पाणि-ग्रहण करना।

'लालमणि' लागूँ पैयाँ,[1] आ जाओ मोरी, सेजियाँ से काहे देले ना,
हमके कठिन कलेसवा, से काहे देले ना ॥५॥

(७)

सैयाँ नहाये में कासी गइलूँ, गरहनवाँ हेराई[2] गइलूँ ना,
बाबा भोला के नगरियाँ, हेराई गइलूँ ना ॥ टेक० ॥
कासी हो सहरिया, धनि[3] रे बजरिया लोभाई गइलूँ ना,
लाग्यूँ निरखे अटरिया, लोभाई गइलूँ ना ॥१॥
जेतनी जे रहलिन मोरे सँग की सहेलिया, बिहाई[4] गइलूँ ना
हमसे छुटि गइले सँगवा बिहाई गइलूँ ना ॥२॥
जाये के 'नकास',[5] सो में गइलूँ धुन्धराज,[6] से भुलाई गइलूँ ना,
ओही नीची ब्रह्मपुरिया,[7] भुलाई गइलूँ ना ॥३॥
बाबा हो बिसेसर जी के सांकरी वा गलिया, दबाई गइलूँ ना,
मोरी फाटि गइली चोलिया, दबाई गइलूँ ना ॥४॥
'लालमणि' रहलें मोरा नान्हें के मिलनियाँ[8] से आई गइलूँ ना,
उन्हुँके सँगवाँ नगरियाँ से आई गइलूँ ना ॥५॥

(८)

होरी खेले मधुबनवाँ, कन्हैया दैया[9] ना ॥ टेक० ॥
दहिया रे बेचन गइलूँ ओही मधुबनवाँ कन्हैया दैया ना,
लाग्यो हमरे गोहनवाँ[10] कन्हैया दैया ना ॥१॥
अबिर-गुलाल लीन्हें जमुदा ललनवाँ कन्हैया दैया ना,
लावै मलि-मलि गलवा कन्हैया दैया ना ॥२॥
भरि पिचुकारी मोरे सारी बीच मारे, से कन्हैया दैया ना,
हमरा भेंवे रे[11] जोबनवाँ कन्हैया दैया ना ॥३॥
निठुर 'लालमणि' माने ना कहनवाँ कन्हैया दैया ना,
लावे हँसि हँसि गरवाँ, कन्हैया दैया ना ॥४॥

मदनमोहन सिंह

आप डबढ़िया (नगरा, बलिया) निवासी बाबू महावीर सिंह के पुत्र थे। वि० संवत् १६२८ में पैदा हुए थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा काशी में हुई थी और फारसी से ही आपने मिडिल की परीक्षा पास की थी। संवत् १६८६ वि० तक आप बलिया की कलक्टरी-कचहरी में काम करते रहे। आप बड़े अध्ययनशील और विद्याप्रेमी थे। आपकी लिखावट अच्छी नहीं होती थी; अतः कठिनता से पढ़ी जाती है। आपने भोजपुरी के छन्दों में महाराणा प्रताप की जीवनी लिखी है। हिन्दी में भी आपकी कई पुस्तकें हैं। जैसे—श्रीमद्भागवत का पद्यानुवाद, स्वामी दयानन्द की जीवनी, शक्तिविजयचलीसा आदि।

१. पैंया लगना=पाँव पड़ना। २. भूल गई। ३. धन्य। ४. बिछुड़ गई। ५. काशी के एक महल्ले का नाम। ६. ढुंढिराज गणेश। ७. काशी के एक महल्ले का नाम। ८. बचपन का यार। ९. भय और आश्चर्यसूचक शब्द (आह दैव)। १०. पीछे या साथ लगना। ११. भिगोता है।

(महाराणा प्रताप की जीवनी से)

बिरहा

(१)

गढ़ चितउर[1] कर बीरता सुनहु अब कहब सटीक बेबहार।
राउजी रतनसेन पदुमिनि रनियाँ साह अलादीन[2] सरदार॥
पदुमिनि रनिया के सुनि सुघरैया[3]।
साह चितउर महँ आयल[4] पहुनइया[5]॥
सिसवामहल[6] देखि रानी परछहियाँ।
रनवा[7] से मेल करि डालि गलबहियाँ॥
जब साह कहँ राना डेरा पहुँचवले।
जेलखाना भेजि साह हुकुम सुनवले॥
देइके पदुमिनी के जाई करो रजवा[8]।
ना तो खपि[9] जइहें तोर तनवा[10] के ठटवा[11]॥

(२)

पदुमिनि रनियाँ सनेसवा[12] भेजाइ देली छ सौ अइहें डोलिया-कहार।
सखिया सहेलियन सँगवा ले अइबो[13] होइ जइबो[14] बेगम तोहार॥
बनले बीर राजपूत डोलिया-कहँरवा।
छिपि गइले बारह सइ डोली में सवरवा[15]॥
गोरवा-बादल चले, चले सरदरवा।
जाइ पहुँचे राना जी के डेरा के नियरवा[16]॥
पहुँचे साह सिविर में डोला पदुमिनियाँ।
कटे लागे माथ वीर खरग सेननिया[17]॥
भागी साह फउदि[18] छोड़ाइ लेले रनवा।
लेइ अइलें गढ़ पर बाजत निसनवा[19]॥
बीरता कहत परइ नहिं पार[20]॥

कवि सुरुजलाल

आपका जन्म-स्थान सारन जिले में बिजईपुर ग्राम है। आपके पद खड़ीबोली, भोजपुरी और फारसी में पाये जाते हैं[21]। आपके भोजपुरी के गीत जनकण्ठ में बहुत सुनने को मिलते हैं। जनरुचि के वे अनुकूल भी हैं। अपने गाँव के परिचय में आपका एक पद है, जिसमें लिखा है कि हमारे गाँव के कायस्थ लोग हिन्दी, फारसी और अँगरेजी जानते हैं और ब्राह्मण लोग बड़े ज्ञानी हैं। अनुमान है कि आप उन्नीसवीं सदी के अन्तिम भाग में हुए होंगे। और २०वीं के शुरू तक जीवित थे।

---

१. चित्तौर गढ़। २. अलाउद्दीन खिलजी ३. सुन्दरता। ४. आया। ५. आतिथ्य के लिए। ६. शीशे का महल। ७. राणा। ८. राज्य। ९. समाप्त। १०. शरीर। ११. ठटरी। १२. संदेशा। १३. ले आऊँगी। १४. हो जाऊँगी। १५. घुड़सवार, योद्धा। १६. नजदीक, निकट। १७. सेना और सेना के सरदार। १८. फौज। १९. नगाड़ा। २०. पार नहीं लगता। २१. सुरुज जी के पद चम्पारन के पं० गणेश चौबे जी को एक कविता-संग्रह में प्राप्त हुए, जो लगभग ५० वर्ष के पुराने हैं।

चैत

(१)

सपना देखीला बलखनवाँ[1] हो रामा कि सइयाँ के अवनवाँ ॥ टेक ॥
पहिल-ओहिल[2] सइयाँ अइले अँगनवाँ हम ले जाईं जलपनवाँ[3] हो रामा
कि सइयाँ के अवनवाँ[4] ।
बोलत-बतियावत कुछुक घरी बीते, खात-खियावत पनवाँ हो रामा
कि सपना देखीला सइयाँ के अवनवाँ ॥
पुरुबी साड़ी जरद किनारी, अवरू[5] ले अइले कँगनवा हो रामा
कि सपना देखीला सइयाँ के अवनवाँ ॥
'सुरुज' चाहलें गरवा[6] लगावल, कि खुली गइले पलक-पपनवाँ[7] हो रामा
कि सपना देखीला सइयाँ के अवनवाँ ॥

(२)

छैला[8] सतावे रे चइत की रतिया हो रामा,
आरे सुतलों में रहलीं पँलगिया आरे सून[9] सेजरिया[10] हो रामा ।
कि सपना में देखि हो साँवली सुरतिया हो रामा ॥ छै० ॥
आरे चिहुँकि[11] में ब्याकुल हमहूँ सगरी[12] रइनिया[13] हो रामा ।
कि कतहुँ[14] ना पावोरी[15] मोहनी मुरतिया हो रामा ॥ छै० ॥
अँगवा में भभूतिया[16] रमइबो[17] अब होइबो जोगिनिया हो रामा ।
कि सइयाँ देखावे री झूठि पिरितिया हो रामा ॥ छै० ॥
आगे ललिता चन्द्रावली सखियाँ सब गोपिया सवतिया हो रामा ॥
रामा सैंया लोभइले हो कुबरी सवतिया हो रामा ॥ छै० ॥
आरे छोड़बो में सिर के सेनुरवा हो फोरबो संख-चूड़िया[18] हो रामा ॥
कि सइयाँ बिना रे होइबो में सतिया हो रामा ॥ छै० ॥
आरे 'सुरुज' कुंजन में गइले सइयाँ परनिया[19] हो रामा ।
कि छुटी गईल दिल के कुफुतिया[20] हो रामा ॥ छै० ॥

होली

(३)

राम लखन सीरी जनक-नंदनी सरजू तीर खेलत होरी ।
राम के सोभे कनक पिचकारी लछुमन सोभे अबीर झोरी ॥
राम से लखन संग सीता हरखित होत खेलत होरी ।
केथिन[21] के उ जे[22] रंग बनावे केथिन बीच अबीर घोरी ॥
बालू के उजे रंग बनावे, सरजू माहीं अबीर घोरी ।
देखत नर सोभा छवि उनकी चकित होइ खेलत होरी ॥
'सुरुज' येह फगुआ गावत, करत बिनती दोउ[23] कर जोरी ।
हे रघुनाथ कोसिलानंदन, संकट दूरि करहुँ मोरी ॥

---

१. अटारी । २. पहले-पहल । ३. नाश्ता, जलखई । ४. आगमन । ५. और । ६. गले लगाना । ७. पपनी (आँख का पलक) । ८. सुन्दर प्रियतम । ९. सूनी । १०. शय्या । ११ चौंक कर । १२. सारी । १३. रात । १४. कहीं । १५. पाता हूँ । १६. विभूति, भस्म । १७. रमाऊँगी, लेपूँगी । १८. शंख की बनी चूड़ियाँ (सधवा स्त्री का आभूषण) १९. प्राणप्यारा । २०. कुफ्त, कुढ़न । २१. किस चीज की । २२. उ=वह; जे=जो (वह जो) । २३. इसका भोजपुरी रूप 'दूनो' होता है ।

अम्बिकादत्त व्यास

आप भारतेन्दुकालीन साहित्यसेवी विद्वानों में श्रेष्ठ माने जाते थे। आपका जन्मस्थान जयपुर था, पर आपका परिवार काशी में रहा करता था। आपके पिता का नाम दुर्गादत्त व्यास था। आपका जन्म चैत्र शुक्ल अष्टमी संवत् १६१५ में हुआ था। आप भोजपुरी में भी कविता करते थे।[१] आप बिहार प्रदेश के भागलपुर, छपरा आदि स्थानों में सरकारी जिला-स्कूलों के हेड पंडित वर्षों रह चुके थे। आप 'सुकवि' नाम से कविताएँ करते थे।

कजली

(१)

कवन रंग बैंनवाँ, कवन रंग सैनवाँ, कवन रंग तोरा रे नयनवाँ ॥
छैल रंग बैनवाँ, मदन रंग सैनवाँ, पै अलस रंग तोरा रे नयनवाँ ॥
मीठे मीठे बैनवाँ, झटक भरे सैनवाँ, पै जियरा मोरा तोरा रे नयनवाँ ॥
अमृत नयनवाँ, मद के सैनवाँ, पै जहर के तोरा रे नयनवाँ ॥
'सुकवि' आज कहाँ रहलू जनियाँ अटपट बैनवाँ सैनवाँ रे नयनवाँ ॥

(२)

रानी बिक्टोरिया के राज बड़ा भारी रामा।
फइल गइले सब संसरवा रे हरी ॥
जहाँ देखो तहाँ चले धुआँकस[२] रामा।
चारो ओर लागल-बाटे तरवा[३] रे हरी ॥
गाँव-गाँव बनल बाटे भारी असपतलवा रामा।
घर-घर घूमै डाक्टरवा रे हरि।
सहर-सहर में बनल इसकुलवा रामा।
लरिका पढ़ावैं मस्टरवा रे हरी ॥
जगह जगह में पुलिस बाटै फैलल रामा।
रामा फैसला करेले मजिस्टरवा रे हरी ॥
एक ठो पइसवा में, चिठी लगल जाय रामा।
दूर-दूर जाला अखबरवा रे हरी ॥
घरे-घरे अब तो लगल बा कुमेटी[४] रामा।
बजेला थपोड़ी[५] सब सहरवा रे हरी ॥
कितने तो हिन्दू होई गइलें अँगरेजवा रामा।
मेहरारू[६] ले के करेले सफरवा रे हरी ॥
'सुकवि' कहत चिरंजीव महरानी रामा।
इहे राज बाटै मजेदरवा रे हरी ॥

शिवनन्दन मिश्र 'नन्द'

आप शाहाबाद जिले के बक्सर सबडिवीजन के 'सोनबरसा' ग्राम के निवासी थे। आप अच्छे विद्वान्, कवि और लेखक थे। आपके पिता का नाम पं० सत्यनारायण मिश्र था। आप हिन्दी, मैथिली, बँगला और भोजपुरी चारों भाषाओं में कविता करते थे। आपकी पुस्तकें खड्गविलास प्रेस

१. काशी पेपर-स्टोर्स बुलानाला (काशी) द्वारा प्रकाशित 'कजली-कौमुदी' में इस युग के कवियों की भोजपुरी रचनाएँ काफी मिलती हैं। २. रेलगाड़ी। ३. तार (टेलीग्राफ)। ४. कमिटी, समिति। ५. हाथ की ताली, थपड़ी। ६. पत्नी।

(पटना) से प्रकाशित हुई है। आपने मैथिली भाषा में सुन्दर काण्ड रामायण और लीलावती की टीका लिखी थी। आपने हिन्दी में 'द्रौपदी-चीर-हरण' 'कसर गुलबहार', 'प्रह्लाद' और 'हरिश्चन्द्र नाटक' लिखे थे। सन् १६१३ ई० में गुमला (राँची) में लिखित आपकी एक भोजपुरी रचना मुझे आपके पुत्र श्रीकमला मिश्र 'विप्र' से प्राप्त हुई। 'विप्र' स्वयं भोजपुरी के उदीयमान कवि हैं। आपकी मृत्यु २ फरवरी, सन् १६२० ई० में ६० वर्ष की आयु में हुई।

पूर्वी राग

समय[1] रूप[2] रुपइया लेइके, अइलीं हम बजरिया[3] हो,
बेसाहे[4] खातिर ना कुछु नीमऽनऽ[5] सउदवा[6] हो,
बेसाहे खातिर ना० ॥
घुमत-घुमत इहाँ गाँठि[7] दुबरइली[8] हो,
फिकिरिया[9] लगली ना भारी भइले माथे के मोटरिया[10] ॥
बेसाहे खातिर ना० ॥
चमके बजरिया बीचे लाहागाँ कचुइयाँ[11] हो
भोरावे[12] खातिर ना० ॥
बेसाहे खातिर ना० ॥
नीमन जोहत[13] 'नन्द' बीतली उमिरिया हो,
उलटि के देखऽना उर में निरमल सोनवा[14] हो,
उलटि के देखऽ ना० ॥
बेसाहे खातिर ना० ॥

बिहारी

आप जाति के अहीर थे। आपके समय का अन्दाज १०० वर्ष पूर्व है। आपका निवास वैसे तो बनारस के पास किसी ग्राम में था, पर आपके जन्म के सम्बन्ध में कोई आपको 'बदायूँ' जिले का कहता है और कोई 'मिर्जापुर' जिले का। आपने लोरकी खूब गाई है। आपकी रचनाएँ कवित्त और सवैयों में भी मिलती हैं। आपकी एक रचना मुझे महादेवप्रसाद सिंह 'घनश्याम' के 'भाई विरोध नाटक'[15] में मिली है—

होत ना दिवाल कहूँ बालू के जहान बीच,
पानी के फुहरा[16] चाहे सौ दफे कइला से ॥
चाहे बरिआर[17] केहू कसहूँ[18] सजाय करी।
खल के सुभाव कबो छूटत ना डँटला[19] से ॥
भोथर[20] दिमाग होत बड़का बुधागर[21] के।
कहलहु ना छोड़ी जिद मार चाहे मरला[22] से ॥
कहत 'बिहारी' मन समुझि बिचार करि,
कुकुर के पोंछ सोझ[23] होत नाहीं मड़ला[24] से ॥

---

१. जीवनकाल। २. शरीर। ३. दुनिया-रूपी बाजार। ४. खरीदना। ५. अच्छा। ६. सौदा। ७. पूँजी। ८. कम हुई। ९. फिक्र। १०. गठरी। ११. कंचुकी, चोली १२. भुलवाने। १३. खोजते हुए। १४. सुवर्ण (ब्रह्म)। १५. प्रकाशक—ठाकुरप्रसाद बुकसेलर, कचौड़ीगली, बनारस। १६. पोताई, पोचारा। १७. बलवान्। १८. किसी तरह। १९. डाँटने-फटकारने से। २०. कुन्द, चपाट। २१. बुद्धि-आगर—बुद्धिमान्। २२. मारने। २३. सीधा। २४. जोर-जोर से सहलाने से।

खुदाबक्स

आप बनारसी कजरीबाज भैरो के समकालीन कवि थे। 'भैरो' से आपकी कजली की प्रतिद्वन्द्विता खूब चलती थी। आप जाति के मुसलमान थे। इन लोगों की होड़ में पहले तो अच्छी-अच्छी रचनाएँ सुनाई जाती थीं; पर अन्त में ये लोग गाली-गलौज पर उतारू हो जाते थे। कभी कभी लाठी भी चल जाती थी। अश्लीलता उस समय पराकाष्ठा पर पहुँच जाती थी। आपके गीत प्रकाशित करने योग्य नहीं हैं।

मारकंडे दास

मारकंडे दास गाजीपुर के रहनेवाले थे। आपके पिता का नाम गयाप्रसाद था। बनारस में भी एक मारकण्डे जी थे, जो जाति के ब्राह्मण और सोनारपुरा महल्ला के पास 'शिवाला घाट' के रहनेवाले थे, जिन्होंने भांडों की मण्डली भी कायम कर ली थी। पता नहीं, दोनों एक ही व्यक्ति थे या दो।

गाजीपुर के मारकण्डे दास द्वारा रचित 'सावन फटाका'[1] नामक कजली की पुस्तिका मुझे प्राप्त हुई है। इसमें २६ कजलियाँ हैं, जो अधिकांश भोजपुरी में हैं और अन्त में हरिश्चन्द्र का एक सवैया है तथा पृ० २६ पर जहाँगीर नामक कवि की दो और पृ० २७ से २६ तक शिवदास कवि की ४ कजलियाँ भोजपुरी में हैं और पृ० ३०–३१ पर अन्य दो कवियों की खड़ी बोली की रचनाएँ हैं। अन्त में महेस और मोती की भोजपुरी में ४ और २ कजलियाँ हैं। जो पुस्तक मुझे मिली है, वह उसका पाँचवाँ संस्करण है। मारकण्डे जी का समय १९ वीं सदी का अन्त और २० वीं सदी का प्रारम्भ माना जाता है। आपकी रचनाएँ सुन्दर और प्रौढ़ तथा भाषा बनारसी भोजपुरी है।

(१)

गनपत चरन सरन में तोहरो हमपर करउ दया तूँ आज।
आठसिद्धि नवनिधि के दाता, सकल सुधारेलाऽ काज। गनपत०।
विघिन हरन बा नाम तोहरो सरबगुनन के साज। गनपत०।
मारकण्डे दास खास तव किंकर राख लेहु मम लाज।
गनपत चरन सरन में तोहरो ॥१॥

(२)

जोबना भइल मतवाल, वारी[2] ननदी ॥टेक॥०
पिया निरमोहिया सवत सँग रीझे भेजे नहीं तनिक हवाल वारी ननदी।
आधी आधी रतिया पछिले[3] पहरवा, लहरे करेजवा में आग वारी ननदी।
ऐसी निरमोहिया के पाले हम पड़लीं कब तक देखबि हम चाल[4] वारी ननदी।
कहे मारकण्डे दूसर कर जैबे[5] छुट जैहें सबदिन के चाल वारी ननदी ॥२॥

(३)

जरा नैके[6] चलू तू जानी[7] जमाना नाजुक बाटे[8] ना।
गोरे गाल पर काला गोदनवा चमकत बाटे ना।
जरा नैके० ॥

१. ईश्वरीप्रसाद बुकसेलर, चौक, पटना सिटी द्वारा प्रकाशित और सत्यसुधाकर प्रेस में ठाकुरप्रसाद मिश्र द्वारा मुद्रित है। २. नई उम्र की। ३. पिछले। ४. चाल-चलन, चालढाल। ५. दूसर कर जैबे=दुसरा पति करके चली जाऊँगी। ६. नम्र होकर। ७. प्यारी। ८. है।

भौंहें कमान अस खंजर-सी झलकत बाटे ना।
मार झपटे कहैं देख के गुण्डा छटकन[1] बाटे ना ॥
जरा नैके० ॥८॥

शिवदास

शिवदासजी का परिचय अब तक अज्ञात है। परन्तु, आपकी रचनाएँ प्रौढ़ हैं। हिन्दी के अतिरिक्त आपने भोजपुरी में भी रचनाएँ की थीं। आपकी चार कजलियाँ मुझे पूर्वोक्त 'सावन-फटाका' नामक संग्रह पुस्तक में मिलीं। आपका समय १६ वीं सदी का उत्तरार्द्ध और बीसवीं सदी का प्रारम्भ कहा जायगा।

(१)

नाहीं लागे जियरा हमार नइहर में ॥ टेक ॥
एक तो बिकल बिरहानल जारत दूजे बहै बिसम बयार नइहर में ॥
कासे कहूँ दुख-सुख की बतियाँ बैरी भइले आपन पराय नइहर में।
बिन बालम मोहि नेक न भावत भूखन भवन सिंगार नइहर में ॥
कवि शिवदास मोरे पिया के मिलावो दाबि रहीं चरन तोहार नइहर में ॥

दिलदार

आप शायद बनारस के ही रहनेवाले कवि थे और किसी कजली के अखाड़े के शिष्य थे। आपकी भाषा बनारसी भोजपुरी ही है। 'सावन-फटाका' में आपकी दो कजलियाँ हैं।

कजरी

कल्हियाँ[2] झलक देखाय चल गइलू रतियाँ कहाँ बितवलू[3] ना ॥
बसन गुलाबी धानी पहिने हमें फँसवलू[4] ना ॥ कल्हियाँ० ॥
कलबल में बलखाय के जनिया[5] छलबल कइलू ना ॥ क० ॥
नैन लड़ाके धन सब खाके दुसमन भइलू ना ॥ क० ॥
कहे 'दिलदार' प्यार ना कइलू, हँसी करवलू ना ॥ कल्हियाँ० ॥५८ ॥*

भैरो

आप बनारस के रहनेवाले थे। अरदली बाजार में आपका घर था। आप जाति के राजपूत थे; किन्तु आपका प्रेम एक हेलिन से हो जाने के कारण आपने उसे घर में रख लिया। इससे आप हेला (हलालखोर, भंगी) कहे जाने लगे। आप अपने समय में बनारस के मशहूर घड़ीसाज थे। अरदली बाजार में ही आपकी घड़ी की दूकान थी। आप बनारस के मशहूर कवियों में एक थे। बनारस के कजली के अखाड़ों में, प्रधान अखाड़ा आपका ही था। आपके प्रधान शिष्य दो थे—लल्तर सिंह और द्वारिकाप्रसाद उर्फ भिंगई। आपके अखाड़े में शिष्यों की दो परम्पराएँ हो चुकी हैं।

१. फिसलना (छेड़खानी करना)। २. कल, गत दिवस। ३. व्यतीत किया। ४. फँसाया। ५. प्राणप्यारी।
* 'गणिका' नायिका से उसकी बेवफाई का वर्णन नायक कर रहा है।

लल्लर सिंह की मृत्यु अभी सन् १६४७ ई० में हुई है। इससे आपके समय का अन्दाजा १६ वीं शताब्दी का अन्त और २० वीं शताब्दी का आरंभ है। आपके राजनीतिक गीत और निर्गुण भजन हिन्दी तथा भोजपुरी में खूब गाये जाते थे। कजली तो मशहूर ही थी। आपने काव्य-शास्त्र का अध्ययन भी किया था और चित्र बन्ध काव्य आदि भी करते थे। आप इतने नये-नये तर्जों में रचना करते थे कि उससे आपकी ख्याति और अधिक बढ़ गई। आपने अपनी मृत्यु के पूर्व अपनी सभी रचनाओं को इकट्ठा किया और दशाश्वमेध घाट पर उनकी पूजा की तथा गंगा में उन्हें बहवा दिया। जो कुछ रचनाएँ शिष्यों को कण्ठस्थ थीं, वे ही आज प्रचलित हैं। लल्लर सिंह आपकी मृत्यु के बाद अखाड़ा के गुरु हुए और उनके शिष्य पलटूदास हुए जो आज जीवित हैं। लल्लर सिंह, द्वारिकाप्रसाद (झिंगई) और पलटूदास आपके प्रधान शिष्य थे। पलटूदास की कई पुस्तकें छपी हैं।

(१)

गोरकी[1] दू भतार[2] कइलसि आके ससुररिया में, दिल्ली सहर बजरिया में ॥१॥
हम सब के जुन्हरी[3] बजरा[4], उनका माखन अंडा चाहीं।
बीरन के हाथों में भयवा तिरंगा झंडा चाहीं॥
कइसन[5] मजा उड़त बा भारतबरस नगरिया में, दिल्ली सहर बजरिया में ॥२॥
हम सब के पसरो[6] भर नाहीं, उनका भर-भर दोना चाहीं।
हम सब के बा[7] छान्हे-छप्पर[8] उनका बँगला कोना चाहीं।
हम सब के बा कागज[9] तामा[10], उनका चाँदी सोना चाहीं।
अइसन[11] अत्याचारी राजा के, मुँहवा पर डंटा कोड़ा चाहीं।
अपने बनति बा गोरकी, हमके करिया[12] बनावति बा।
हमरे जूटन खा-खा के, लन्दन तक मालिक कहावति बा।
हमरे मारे खातिर भयवा[13] गन मशीन लगावति बा।
अपने बाल-बच्चन के चाँदी, कवर[14] खिलावति बा।
भारत के लूट, महल ले गइल भरल पेटरिया[15] में, दिल्ली सहर बजरिया में ॥३॥
आके दू भतार कइलसि[16] गवर्नमेन्ट जिन्ना मिस्टर।
दूनो के खूबे लड़वलसि[17] कइलसि अत्याचार जबर।
जब देखलसि[18] बुढ़उ बाबा[19] के भागल[20] लन्दन के अन्दर।
'भैरो' बना के गाना गावे नई लहरिया[21] में, दिल्ली सहर बजरिया में ॥४॥

ठुमरी

पिया छवले[22] परदेस, भेजले पाती ना सँदेस
मोरा जिया[23] में अनेस[24] सुनु मोरी सजनी॥
पिया आइल[25] हमार, लेके डोलिया कहार,
पुजल[26] कउल-करार[27] सुनु मोरी सजनी॥

१. गोरी स्त्री, अँगरेजी-सरकार। २. पति। ३. एक। ४. एक प्रकार का मोटा अन्न। ५. कैसा। ६. पसर-भर, हाथ में अँटने भर अन्न। ७. है। ८. फूस का झोंपड़ा। ९. नोट। १०. पैसा। ११. ऐसा। १२. काला (आदमी)। १३. भाई। १४. कवल, कौर। १५. पिटारी। १६. किया। १७. लड़ाया। १८. देखा। १९. गांधी जी। २०. भाग गया। २१. तर्ज। २२. वास किया। २३. हृदय। २४. चिन्ता, अंदेसा। २५. आया। २६. पूरा हुआ। २७. वादा।

करके सोरहो सिंगार, डोली चढ़ली कहार,
चललीं ससुरा[1] की ओर सुनु मोरी सजनी ॥
गोरी रोवेली[2] जोर जोर कइली[3] सखी से दीदार[4],
छुटल नइहर के दुआर, सुनु मोरी सजनी * ॥
भैरव कहत पुकार नइहर रहना दिन चार,
आखिर जाना ससुराल सुनु मोरी सजनी ॥

कजली निर्गुन

चेत चेत बारी धनिया[5] एक दिन सासुर[6] चलना ॥टेक॥
जेह दिन पियवा[7] भेजी सनेसवा देसवा[8] होइहें सपना ।
अपना होइहें सब दुसमनवा जब लेइ चलिहें सजना ॥१॥ चेत चेत० ॥
परान परोसिन कह दुलहिन बइठइहें पलना ।
ले के चलिहें चार कहरवा होइहें बन रहना ॥२॥ चेत चेत० ॥
माल-मता सब छीन मिली फुलबन के गहना ।
गज भर देइहें लाल चुनरिया तोहरे तन के ढकना[9] ॥३॥ चेत चेत० ॥
नइहर नगरी चल समुझि गोइयाँ मान कहना ।
कहले 'भैरो' बन कुलवन्ती पिया घर होइहें चहना ॥४॥ चेत चेत० ॥

जिस दिन प्रियतम सन्देशा भेजेगा, उस दिन यह देह-रूपी देश स्वप्न हो जायगा अर्थात् छूट जायगा। उस दिन जब साजन प्रियतम तुमको ले चलेगा, यहाँ के सभी अपना कहलानेवाले हित-मित्र, माँ बाप तुम्हारे दुश्मन हो जायगें। पड़ोसिन और सखियाँ सभी दुलहिन बना कर तुमको अरथी रूपी पलना पर बैठा देंगी और चार कहार उस अरथी को उठाकर ले चलेंगे। तुमको वन में अर्थात् श्मशान में रहना होगा। मालमता सब छीन लिये जायेंगे और केवल धूल(चिता-भस्म) के गहने पहना दिये जायेंगे। एक गज की लाल चुनरी कफन तुम्हारे तन को ढकने के लिए दी जायेगी। हे गोइयाँ (हे सहेली), मेरा कहना मान ले। समझ-बूझकर नइहर रूपी नगरी में चल। भैरो कवि कहते हैं कि हे बारी धनि, तुम अपने को कुलवन्ती (कुल के मान-मर्यादा के अनुसार बरतनेवाली साध्वी स्त्री) बना लो, तब प्रियतम के घर तुम्हारी चाहना होने लगेगी।

कजली

लख चौरासी से बचना हो भजलेऽ मनवाँ सीताराम ।
बिना भजन उद्धार नहीं माटी के देहियाँ कउने काम ॥ टेक ॥
ते भी नर्क में पड़ल रहसि[10] जब करत रहसि[11] इसवर-इसवर
हमें निकालऽ जल्दी से मैं करिबों सुमिरन आठ पहर ।
जनम पौते ही[12] लिपट गये ते माया के बस होकर ।
ओह दिन के तोहे खबर नहीं जे मालिक[13] से अइले[14] कहकर ।
ओह बादा के भूल गये जब देखे यहाँ पर गोरा चाम[15] ॥ १ ॥
बालापन ते खेल गँववले[16] चढ़के गोद मतारी[17] के ।
जवानी में खूब मजा उड़ौले सँग में सुन्दर नारी के ।

---

१. ससुराल। २. रोती है। ३. किया। ४. आँख, साक्षात्कार। * इस गीत का लौकिक अर्थ के अतिरिक्त आध्यात्मिक पक्ष भी है। ५. कमसिन युवती, यहाँ आत्मा से तात्पर्य है। ६. ससुराल (परलोक)। ७. पति (परमात्मा)। ८. देश (दुनिया देश)। ९. आच्छादन (कफन)। १०. पड़ा रहा। ११. करता रहा। १२. पाते ही। १३. परमात्मा। १४. आया। १५. सुन्दरी नारी। १६. गंवाया। १७. माता।

बूढ़ भये कफ छेंकि लेल[1] थूकत बैठ दुआरी[2] के।
राम नाम नहिं मुख से निकसत फूलत साँस उभारी[3] के।
कहूँ यार नहीं अब का करब धोखा में बीतल उमर तमाम ॥ २ ॥
उहाँ[4] के मंजिल बड़ा कड़ा बा कसके बाँध कमर ले तू।
तोरे वास्ते लगल हाट जे चाहे सौदा कर ले तू।
पाप-पुन्न दूनो बीछल[5] बा समझ के गठरी भर ले तू।
जे में तेरा होय फायदा, ओह के गहके[6] धर ले तू।
मगर दलालन[7] से मत मिलिहऽ नहीं त हो जैबऽ बदनाम ॥३॥
अंत समय जब काल गरासल[8] बाप-बाप चिचिआने[9] लगे।
माल मता सब छूटल जात अब हम दुनिया से जाने लगे।
भैरो कहे अस प्रानी के हो मिलना मुश्किल सुरधाम ॥४॥

ललर सिंह

ललर जी भैरो जी के शिष्य थे। आप भैरो जी की कजली के अखाड़े के प्रधान शिष्यों में से थे। आप जाति के राजपूत थे। आपके शिष्य पलटूदास जीवित हैं। आज भी इस अखाड़े का बोलबाला बनारस में है। ललर की कजली बनारस में बहुत प्रसिद्ध है। आपका समय १९वीं सदी का अन्त और २०वीं सदी का पूर्वार्द्ध था। आपकी निम्नलिखित रचना आपके शिष्य पलटूदास से भैरो के भजनों के साथ प्राप्त हुई है। आप बहुत सुन्दर कविताएँ करते थे। अपनी लयदारी के लिए आप विख्यात थे।

(१)

घेर लेले ले ग्वाल बृन्दाबन छैल अगारी[10] से।
माँगत बा दधि के खेराज[11] ब्रिजराज आज ब्रिजनारी से ॥
रोज-रोज छिप-छिप के दहिया बेंचि-बेंचि कर जाती हव।
दान-दही के देली ना अब तक कइसन[12] सब मदमाती हव ॥
मिल गैलू[13] आजु मोका[14] से त ऐंठि बतियाती हव।
सब दिन के दे दान कान्ह कहते बृखभान-दुलारी से ॥

(२)

बोललि सखिया सुनऽ कान्ह यदि ज्यादा उधम मचइबऽ[15] तूँ।
कह देबि जा कंस राजा से फिर पीछे पछतइबऽ तूँ ॥
कहल मानिलऽ ना अगर जो दहिया छीन गिरवलऽ तूँ।
साँच कहीला नन्द जसोदा समेत बाँधि के जइबऽ[16] तूँ ॥
फयलवले बाड़ऽ जाल-चाल चलते गूजरी[17] गँवारी से ॥२॥

१. रूँध दिया। २. दरवाजा। ३. उभड़ कर ४. परलोक। ५. बिछा हुआ है। ६. अच्छी तरह। ७. माया-प्रपंच फैलाने-वाले। ८. ग्रस लिया। ९. चिल्लाने लगे। १०. आगे से। ११. मालगुजारी। १२. कैसा। १३. गया। १४. मौके से, संयोगवश। १५. मचाओगे। १६. जाओगे। १७. नारी।

(३)

कहल कृस्न हम समझ लेल हाँ तुम सब के बा जे-जे चाल ।
दधि-माखन के करऽ बहाना बेंचऽ हीरा मोती लाल ॥
रेसम चोली के भीतर दू बाँधि गठरिया होइ निहाल ।
धोखा दे-दे जालू हटिया बेच के आवऽ करऽ कमाल ॥
देखा दऽ दू गोल खोल के चोली पारा-पारी[१] से ।

(४)

रिस भरि के ग्वालिन बोललि बस अब ना बात बनावऽ तूँ ।
मुँह सँभाल के बोल करऽ अब मत मठोल[२] मसकावऽ[३] तूँ ॥
कब से दानी हरि भइलऽ तूँ साफ-साफ समुझावऽ तूँ ।
केह-केह[४] से दान लेलऽ[५] हा सब खाता खोल दिखावऽ तूँ ॥
बार-बार काहे रार करऽ तूँ ललकार के खारा-खारी[६] से ।

(५)

कहे गूजरी 'हटो जान[७] देव' मन मोहन हँस भुजा बढ़ाय ।
सिर से अथरी[८] उतार लेल सब, देख ग्वालिनी रही चुपाय ॥
मनसा[९] पूरा भइले सभके 'घड़ीसाज' कह गइल सुनाय ।
मस्त मास पावस में माठ[१०]-दधि-लीला दे छंद सुनाय ॥
'ललर सिंह' कर जोरि कहे, लागी लगन बिहारी से ।

रूपकला जी

रूपकला जी उच्च कोटि के महात्मा थे। आपके प्रभाव से हजारों पथभ्रष्ट भ्रान्त नास्तिकों ने भगवान् की सत्ता स्वीकार करके सन्मार्ग का अवलम्बन किया, हजारों दुराचारियों के जीवन सुधर गये। श्रीरूपकलाजी पर आरम्भ से ही भगवत्कृपा रही। आप जिस आश्रम में रहे, उसके नियम का तत्परता से पालन किया और उसी में अपनी उन्नति की। तीस वर्षों तक बिहार-प्रान्त में शिक्षा-विभाग में उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर रहे। आप सखी-भाव से रामजी की भक्ति करते थे। चौवन वर्ष की उम्र में आपने सरकारी पद का परित्याग किया। आप अयोध्या में रहते थे। आपके गुरु हंसकला जी थे। वि० संवत् १९८८ में पौष शुक्ला एकादशी को तीन बजे दिन में, अयोध्या में आपका साकेतवास हुआ। आपका जन्म सारन जिले में हुआ था। आपकी 'भक्तमाल' की टीका परम प्रसिद्ध है। आपका पूरा नाम श्री भगवानप्रसाद सीतारामशरण था। आप हिन्दी के भी अच्छे लेखक थे।

आरती

साजि लेली[११] भूषन सँवारी लेली बसन से हाथ लेली री ।
कनक थार आरती से हाथ लेली री ॥
ओढ़ी-पहिरी सुन्दरी, सहेली सखी सहचरी, ओही[१२] बीचे री ।
से विराजे श्रीकिसोरीजी[१३] ताही बीचे री ॥

---

१. बारी-बारी से। २. दहेड़ी। ३. फोड़ना, मसकाना। ४. किस-किस से। ५. लिया है। ६. खरापन के साथ। ७. जाने दो (रास्ता छोड़ो)। ८. दहेड़ी। ९. अभिलाषा। १०. मट्ठा। ११. लिया। १२. उसी। १३. सीताजी।

मिथला जुवति गन गावेली मुदित मन, साथ लेली री।
ए सामग्री गौरी पूजन से साथ लेली री॥
हरियर[1] फुलवरिया ललिता गिरजा-बरिया[2] सखिन बीच री।
ले बिराजे श्रीकिसोरीजी सखिन बीचे री॥
सियाजी के पूजा से प्रसन्न भइलीं गौरी जी असीस देलीं री।
मे सुफल मनकामना, असीस देलीं री॥
'रूपकला' गावेली श्री स्वामिनी बुझावेली, बिनु जोगे-जापे री।
ए प्रीतम प्रेम पावेली, बिनु जोगे-जापे री॥

द्वारिकानाथ 'झिंगई'

श्री द्वारिकानाथ 'झिंगई' जाति के बरई पनेरी (तमोली) थे। आपकी पान की दूकान चुंगी-कचहरी के सामने बनारस में आज भी है। आपका लड़का उस दूकान को आज भी चला रहा है। आप 'भैरोजी' के परम प्रिय शिष्य थे। आपकी भोजपुरी रचनाएँ बहुत सुन्दर और प्रौढ होती थीं। विषय अधिकतर धार्मिक होता था। आप अच्छे योगाभ्यासी भी थे। आप कजली और अनेकानेक तर्ज के गीत अधिक लिखते थे। आपने कजली-छन्द में रामायण का पूरा किष्किंधाकाण्ड भोजपुरी में लिखा था। आप चित्रबन्धकाव्य की रचना करने में सिद्धहस्त कवि थे। आपकी रचनाएँ आपके पुत्र के पास आज भी वर्त्तमान हैं। आपकी मृत्यु १६३७ ई० के लगभग में हुई थी। आपके पुत्र का नाम शंकरप्रसाद उर्फ छोटक तमोली है। आपकी रचनाएँ प्राप्त नहीं हो सकीं।

दिमाग राम

आपके गीत 'भ्रमर-तरंग'[3] में मिले हैं। जान पड़ता है कि आप बनारस के आस-पास के मस्ताने कवि थे। आपके इस उद्धृत गीत को पचास वर्ष पूर्व मैं जोगीड़ा के नाच में सुन चुका हूँ। आज भी यह गाया जाता है। इससे आपका समय २०वीं सदी का आरंभ है।

(१)

कौना मास बाबा मोरा फूले करइलिया[4] से,
कौना मास पसरले[5] डार करइलिया, से कौना मासे॥
सावन मास बाबा मोर फूले करइलिया से,
भादो मास पसरले डार करइलिया।
जैसे-जैसे बाबा मोरा फूले करइलिया से
तैसे-तैसे ननदी होजइबों जुआन[6] करइलिया॥
बाबा नाहीं मानेले भैया नाहीं मानेले॥
भौजी मोरा रखली निआर[7] करइलिया।

१. हरी-भरी। २. बाड़ी, मन्दिर। ३. * प्रकाशक—बैजनाथप्रसाद बुकसेलर, राजादरवाजा, बनारस। ४. करैला। ५. फैलता है। ६. जवान। ७. निमंत्रण, वधू के लिए ससुराल से बुलाहट। (भोजपुरी में 'निआर' शब्द का भाव है, वह सामान—साड़ी, चूड़ी, सिन्दूर, मिठाई आदि—जो वधू को बुलाने के लिए ससुराल और मायके से भी भेजा जाता है; इसीलिए उसके साथ 'रखना' क्रिया लगी हुई है, जिसका अर्थ है—स्वीकृति)।

पहिले-पहिले हम गवना[1] जे गइलीं,
सेजिया रचलीं[2] बनाय करइलिया ॥
हमहूँ जे सुतलीं लाली रे पलँगिया,
कुबजा[3] सुतेला[4] खरिहान करइलिया।
खीचड़ी पकाय हम ले गइलीं खरिहनियाँ,
से रहरी[5] में बोलेला हुँड़ार[6] करइलिया ॥
गोड़ तोरा लागीला हुँड़रा रे भइया,
कुबजा के ले जा घिसिआइ[7] करइलिया।
गावत 'दिमाग राम' यही रे झुमरिया,
से टूटी जैहें तोहरो गुमान[8] करइलिया ॥

(२)

कवन रंग मुँगवा[9] कवन रंग मोतिया, कवन रंग हे ननदी तोर भैया ॥
लाल रंग मुँगवा, सफेद रंग मोतिया, साँवल रंग हे भौजी मोरा भैया ॥
कान सोभे मोतिया, गले सोभे मुँगवा, पलंग सोभे हे ननदी तोर भैया ॥
टूटि जैहें मोतिया, छितराइ[10] जैहें मुँगवा, रूसि जैहें हे भौजी मोरा भैया ॥
चुनी लेबों मोतिया, बटोरि[11] लेबों मुँगवा, मनाइ लेबों हे ननदी तोर भैया ॥

इस गीत में ननद-भौजाई की रस-भरी हास्य से परिपूर्ण वार्त्ता में कितनी शोखी और चुलबुलाहट है ?

(३)

जाही दिन सइयाँ मोरा छुवले लीलरवा[12],
से ताही दिन ना, नैहर भइले रे दुलमवाँ[13]।
गोड़ लागी पैयाँ परूँ सैयाँ रे गोसइयाँ।
से दिनवा चारी हम जैहों ना नइहरवा[14] ॥
गंगा बढ़ि अइले जमुना बढ़ि[15] अइले।
से कौना बिधि ना ॥
धनियाँ उतरबि पारवा, से कवना बिधि ना ॥
काटबों में केरा थम[16] बाँधबों में बिरिया[17],
से वाही चढ़ी ना सैंया उतरबि पारवा ॥
जब तूहूँ जइबू[18] धनियाँ अपनी नइहरव।
से हम अइबों ना अपनी ससुररिया[19] ॥
जब तूहूँ अइबऽ सैयाँ मोरा नइहरवा।
उफिल[20] देबो ना, बोरसी[21] चारो-अगिया[22]॥
उफिल देबों ना ॥
जब तूहूँ उफिलबू धनियाँ 'बोरसी के अगिया,
से हँसे लगिहें ना मोर साली-सरहजिया ॥

१. द्विरागमन। २. सजाया । ३. निगोड़ा, हृदयहीन। ४. सोता है। ५. अरहर का हरा-भरा खेत। ६. भेड़िया। ७. घसीटकर। ८. घमंड। ९. मूँगा। १०. बिखर जायगा। ११. एकत्रित कर लूँगी। १२. लिलार छूना=सिन्दूर-दान करना। १३. दुर्लभ। १४. मायका। १५. बाढ़ से उमड़ आई। १६. केले का स्तंभ। १७. बेड़ा। १८. जाओगी। १९. ससुराल। २०. उझल दूँगी। २१. गोरसी, अँगीठी। २२. चारो तरफ आग

मोती

आप मिर्जापुर के कवि थे। वहाँ के कजली के किसी एक अखाड़े के शिष्य थे। आपका समय १६वीं सदी का अन्त और २०वीं सदी का प्रारंभ है। आपकी तीन कजलियाँ पूर्वोक्त 'सावन-फटाका' नामक संग्रह-पुस्तक में प्राप्त हैं। आपकी रचनाएँ 'कजली-कौमुदी' में भी हैं।

कजली

पिया सूते[1] लेके सवतिया कैसे कटिहें ना।
बिरह-अगिन तन जरत जिया दुख कैसे घटिहें[2] ना॥
निस दिन की मोर हाय-हाय बिपतियाँ कैसे हटिहें ना।
कहा मोती मोसे[3] तोसे[4] मन कैसे पटिहें ना॥

मतई

आपका नाम बनारस और मिर्जापुर दोनों शहरों में कजली-गायकों में प्रसिद्ध है। आपकी रचनाओं का संग्रह 'मिर्जापुरी घटा' नामक संग्रह में मिला है। आपके समय का अनुमान २० वीं सदी का प्रारम्भ है। आपकी रचना में मिर्जापुर-अंचल की भोजपुरी की पूरी छाप है। 'मिर्जापुरी घटा' नामक उक्त संग्रह-पुस्तिका से आपकी रचनाएँ उद्धृत की जाती हैं—

कजली

(१)

अब नाहीं बृज में ठेकान बा, जिया उबियान[5] बा ना।
दही बेचने में आई कान्हा रार मचाई,
मोसे मांगत जोबनवाँ क दान बा
जिया उबियान बा ना॥ अब नाहीं०॥ १॥
मुरली मधुर बजाई, चितै चित लीहेनि चोराई,
मारत तिरछी नजरिया क सान[6] बा
जिया उबियान बा ना॥ अब नाहीं०॥ २॥
मोरे नरमी कलाई, धरकर मुरकाई
प्यारे मनमोहन सबै देखान[7] बा,
जिया उबियान बा ना॥ अब नाहीं०॥ ३॥
अइसन ढीठ कन्हाई, उन्हे लाज न आई,
अइसन 'मतई' के दिल में समान बा,
जिया उबियान बा ना॥ अब नाहीं०॥ ४॥

(२)

जुआ छोड़ मोर राजा, मान ऊ[8] बतिया ना।
कौड़ी लेआई बुराई माल जैहें सब बिलाई[9]
तब त मारल-मारल फिरबऽ[10] दिन-रतिया ना॥जुआ०॥

---

१. सोता है। २. घटेगा। ३. मुझसे। ४. तुमसे। ५. ऊबा हुआ। ६. सैन, इशारा। ७. दर्शनीय। ८. वह। ९. नष्ट। १०. मारे-मारे फिरोगे।

राजा नल अजमाई अपना हड्डी की बनाई—
कौड़ी[१], उनकर भी गँवाई जजतिया[२] ना ॥ जुआ० ॥
घरे माल नाहीं पाउब, बाहर ताला चटकाउब[३],
चोरी करे बदे[४] होई तोर नियतिया[५] ना ॥ जुआ० ॥
पीआ पकड़ि जब जइबऽ सजा साल भर के पइबऽ,
तब तो 'मतई' लगइहैं आपन घतिया[६] ना ॥ जुआ० ॥

(३)

गइल रहिउँ नदी तीर, उँहा रहल बड़ा भीर,
कंगन खोय गयल माफ करऽ कसूर बलमू।
न जानी ढील रहा पेच,[७] न जानी लिहेसि कोई खेंच,
आप जे करीं से है अब मंजूर बलमू ॥ कं० ॥
एक त बुधि लड़कैयाँ, न जानत रहिउँ सइयाँ,
चैंया[८] ऐसन लगलेन[९] मिरजापुर बलमू ॥ कं० ॥
हार गइयूँ हेर-हेर[१०] वासे[११] भयल बड़ा देर,
ना मिलल न रहल उहाँ झूर[१२] बलमू ॥ कं० ॥

रसीले

रसीलेजी की रचना मुझे 'सावन-दर्पण'[१३] संग्रह-पुस्तिका में मिली है। दूसरी पुस्तिका, जिसमें आपकी रचनाएँ हैं—'झूलन-प्रमोद संकीर्त्तन'[१४] है। अतः आपका समय १६३७ ई० के पूर्व है। आपकी रचना की भाषा बनारसी भोजपुरी है। अतः बनारस जिले में अथवा बनारस नगर में ही आपका निवास-स्थान होगा। आप बनारसी कजली के अखाड़े के प्रसिद्ध गायक माने जाते हैं।

कजली

(१)

ऐसे मौसिम में मुलायम जियरा धड़-धड़-धड़कै ना।
दमकि दमकि दामिनि दईमारी तड़ तड़ तड़कै ना॥
झूमि झूमि झुकि काला बदरवा कड़-कड़ कड़कै ना।
सुनि-सुनि मोर-पपीहन की धुनि जोबना फड़कै ना।
कहत 'रसीले' नेह लगाके कहवाँ खड़कै[१५] ना ॥ १ ॥

---

१. जुए का पासा। २. सम्पत्ति, जायदाद। ३. ताला तोड़ना। ४. वास्ते। ५. नीयत, ईमान। ६. दाँव, घात। ७. कल। ८. चाँई, उचक्का। ९. पीछे लगना। १०. ढूँढ़-ढूँढ़ कर। ११. उससे। १२. भारन-झूरन। १३. 'उपन्यास-दर्पण' के मालिक श्री बनारसी वर्मा (काशी) द्वारा प्रकाशित, सन् १९३७ ई० का, दूसरा संस्करण। १४. प्रकाशक—कन्हैयालाल-कृष्णदास, श्री रमेश्वर प्रेस, दरभंगा, सन् १९२८ ई० का संस्करण। १५. खिसकना।

(२)

गरजे बरसे रे बदरवा पिया बिनु मोहि ना सोहाय।
अरे पपिहरा कोकिला, नीलकंठ अलि मोर।
नाचि नाचि कुहुकन लगे, हरखि-हरखि चहुँ ओर॥
दम दम दमके रे दामिनियाँ, नैना झिपि झिपि जाय॥१॥
शीतल पवन सुगंध लै, बहै धरै ना धीर।
मदन सतावै री सखी, करूँ कौन तदबीर॥
ऊँची-ऊँची रे जोबनवाँ, चोलिया चादर ना सोहाय॥२॥
कहत रसीले का करीं अंग-अंग फहरात।
रैन अँधेरी देखि के, रहि रहि जिया घबरात॥
ऐसे मौसिम में कन्हैया, घरवा अजहूँ नाहिं आय॥३॥

मानिक लाल

मानिक लाल भी बनारस के ही किसी कजली के अखाड़े के शिष्य थे। आपका समय भी २० वीं सदी का प्रारम्भ है। आप के गीत मुझे 'सावन का गुलदस्ता' नामक संग्रह-पुस्तिका से प्राप्त हुए।

कजली

(१)

हरवा गढ़ दऽ[1] सेठजी[2] हाली[3] गरवा[4] बाटे खाली[5] ना॥टेक॥
एक चीज पहिले दे देताऽ सोनवाँवाली ना[6]॥
पत्ता[7] झुमका औ लटकनवा कान की बाली ना॥
बहुत दिना टरकउलऽ[8] अब तूँ सुनबऽ गाली ना॥
मानिकलाल सुन इनकर बतिया छन्द निराली ना॥

(२)

कहिया देबऽ[9] सेठजी चिजिया[10] दुलहा मोर कोहायल[11] बाय॥टेक॥
नकिया में के मोर लवँगिया, वाहू हेरायल[12] बाय॥
छल्ला मुँदरी और करधनी सब बन के आयल बाय॥
देख-देख सौतिन के घरवा जाके लोभायल बाय॥
मानिकलाल कहैं धीरज धरहु सब नगिचायल[13] बाय॥

(३)

गोरिया तोरे बदन पर गोदना आला चमकत बाटे ना॥
जूही चमेली फुलेल लगैलू[14] गमकत बाटे ना॥
हार हुमेल[15] नाक में नथिया लटकत बाटे ना॥
कहै 'मानिक' राह में छैला तरसत बाटे ना॥

१. बना दो। २. सोनार। ३. जल्दी। ४. गला। ५. सूना। ६. सोने की। ७. एक गहना। ८. टरकाया। ९. दोगे। १०. चीज (गहना)। ११. क्रुद्ध है। १२. भूल गया है। १३. नजदीक है (बनकर तैयार हो चला है)। १४. लगाया। १५. गले का एक गहना।

रूपन

रूपन जी बनारस के ही कजली-गायकों में से एक थे। आपका समय भी २०वीं सदी का प्रारम्भ था। आपकी एक कजली 'सावन का गुलदस्ता' संग्रह-पुस्तिका से मुझे मिली है। उसी पुस्तिका से नीचे की कजली उद्धृत है। अन्य रचनाएँ विभिन्न संग्रह-पुस्तिकाओं में से उद्धृत हैं।

कजली

(१)

सुगना[1] बहुत रहे हुसियार बिलइया[2] बोलत बाटे[3] ना[4] ॥
इधर-उधर से आपन घतिया[5] खोजत बाटे ना ॥
कबों पड़े गफलत की निंदिया, जोहत[6] बाटे ना ॥
ऐ मन मुरुख चेत जलद तूँ सोवत बाटे ना ॥
कहे 'रूपन' धर ध्यान देख अगोरत[7] बाटे ना ॥

(२)

जुआ खेलेलन[8] बलमुआ[9] सारी रतिया ना ॥
बलमा मिलल बा जुआरी, कैसे कहूँ मैं पुकारी ॥
गोइयाँ[10] फूटी गइली मोरी किसमतिया ना ॥जुआ०॥
गहना गइलन[11] सब हार, हमसे कहे दे उतार।
अपने नकिया से भुलनियाँ तीनपतिया[12] ना ॥जुआ०॥
केतनो उनके समुझावे, बतिया एको नाहीं भावे।
गोइयाँ कऽइसे के बची हुरमतिया[13] ना ॥जुआ०॥
कहे 'रूपन' से गोरी, कहना मान पिया मोरी।
नाहीं एक दिन होइहैं तोहरो सँसतिया[14] ना ॥

(३)

पिया तजके[15] हमें गइले परदेसवा ना।
गये हमसे करके घात[16], सुनऽ सौतिन के साथ,
नाहीं भेजलऽ जबसे गइले सन्देसवा ना ॥पिया०॥
नाहीं कल[17] दिन रात, जबसे चढ़ल बरसात,
कब अइहैं मोहिं ऐही[18] वा अन्देसवा[19] ना।
झींगुर बोले झनकार, सुनके पपिहा पुकार,
गोइयाँ बढ़ गइले जिगर में कलेसवा ना ॥पिया०॥
गोरिया कहै समझाय, बलमा से दऽ हमें मिलाय,
'रूपन' नाहीं तो हम धरबै[20] जोगिन भेसवा[21] ना ॥पिया०॥

१. जीव। २. बिल्ली (मृत्यु)। ३. है। ४. गीत का टेक; पाद-पूर्त्ति के लिए दिया जाता है। ५. घात, दाँव। ६. खोजना, प्रतीक्षा करना। ७. रखवारी करना (मृत्यु घेरा डाले हुई है)। ८. खेलते हैं। ९. पति (वल्लभ)। १०. सखी। ११. गये। १२. तीन पत्तोंवाली (झुलनी)। १३. हुरमत, इज्जत। १४. साँसत, यन्त्रणा। १५. त्याग करके। १६. धोखा। १७. चैन। १८. यही है। १९. अंदेशा, चिन्ता। २०. धारण करूँगी। २१. संन्यासिनी का वेश।

फणीन्द्र मुनि

आपके दो सोहर-गीत मुझे 'बड़ी गोपालगारी' नामक संग्रह-पुस्तिका में मिले हैं। गीत की भाषा और उसके तर्ज से अनुमान होता है कि आप बनारस कमिश्नरी के किसी जिले के रहनेवाले थे। समय भी १६वीं सदी का अन्त है।

सोहर राम अवतार चैत नौमी

जाँचत अज महादेव अनादि, जन्म लेले हो ललना।
दशरथ गृह भगवान कौसिल्या गर्भ अइले हो ललना॥
मुदित नृपति सुनि कान बसिष्ठ के भवन गइले हो ललना।
ललना करहू गर्भ-विधान यथा श्रुति रचि-रचि हो ललना॥
करत परस्पर मंगल गर्भ दिन पूजल[1] हो ललना।
बढ़त गर्भ अस चन्द तबै रानि पियर[2] भइली[3] हो ललना॥
सब ग्रह भइले अनुकूल नछत्र पुनर्बसु हो ललना।
चैत सुदी भइले नौमी प्रगट हरि तन धरे हो ललना॥
मुदित भये नरनाह बोलावत भूसुर हो ललना।
हँसि हँसि बोले डगरिनियाँ[4] चितै मुखरानी हो ललना॥
देहु न तुम उर-हार तबै नार[5] काटब हो ललना।
अलख निरंजन रूप हँसत मुख बावत हो ललना॥
कौसिला जी गोद खेलावत छीर पिआवत हो ललना॥
संकर ध्यान लगावत वेद श्रुति गावत हो ललना।
निर्गुन ब्रह्म स्वरूप आँगन महँ धावत हो ललना॥
मगन मुदित मन देव गावत फूल बरसावत हो ललना।
ललना भक्त बछल भगवान 'फणीन्द्र मुनि' गावत हो ललना॥

सोहर कृष्ण अवतार जन्माष्टमी

भादों रैन भयानक चहूँ दिसि घन घेरे हो ललना।
सुभ रोहिनी तिथि अष्टमी अद्भुत लाल भइले हो ललना॥
क्रीट मुकुट घनश्याम कुण्डल सोहे कानन हो ललना।
संख चक्र गदा पद्म चतुर्भुज रूप किये हो ललना॥
गदा पानि महँ राजे भृगु पद उर सोहे हो ललना।
बिहँसि बोले भगवान पूर्व बरदान तोह के हो ललना॥
जो तुम कंस से डरहु जसोदा पहँ धरि आओ हो ललना॥
छुटि गइले बन्धन जंजीर तो खुलि गईले फाटक हो ललना।
बसुदेव हरि लिये गोद पहरु[6] सब सोई गईले हो ललना॥
बिहँसि बोलत महाराज तात जनि डरपहु हो ललना।
ले चलो जमुना तूँ पार कमर नहिं भींजहिं[7] हो ललना॥
यह सुनि के बसुदेव जी सूप लेई आवत हो ललना।
जसोदा के घर बजत बधाई 'फणीन्द्र मुनि' गावत हो ललना॥

१. पूरा हो गया। २. पीली। ३. हुई। ४. चमारिन। ५. नाल। ६. पहरेदार। ७. भींगना।

भागवत आचारी

आपकी रचनाएँ लोक-कंठों में और संग्रह-पुस्तिकाओं में खूब मिलती हैं। आपका नाम सारन और चम्पारन जिले[1] में अधिक है। इससे अनुमान किया जाता है कि आप इन्हीं दोनों जिलों में से किसी एक जिले के रहनेवाले थे। आपकी दो रचनाएँ मुझे 'सीताराम-विवाह'[2] नामक पुस्तिका में मिली हैं। आपका समय लगभग १६ वीं सदी का अन्त है। आप आचारी सन्त कवि थे। गीत से जान पड़ता है कि आप राम के भक्त और विवाह-झाँकी के उपासक थे।

मंगल-पद : धुरछक

सोरहो सिंगार करी सखिया चलि गैली,[3] सुनु हे सजनी० ॥
धुरछक[4] के विधि करे आज ॥ टेक ॥
पाँच सखिया पाँच कलसा धरि लिहली,[5] सुनु हे सजनी० ॥
ऊपर से पल्लव बिराज ॥ १ ॥
गावत-बजावत जनवासा में गैली, सुनु हे सजनी० ॥
जहाँ रहे श्री रघुराज ॥ २ ॥
राजा दसरथ जी असर्फी काढ़ी दिहले, सुनु हे सजनी० ॥
जुग-जुग बाढ़े महराज ॥ ३ ॥
'भागवत आचारी' धुरछक गावे, सुनु हे सजनी० ॥
खुशी भैले सखिन-समाज ॥ ४ ॥

शायर महादेव

शायर महादेव बनारस के कजली के एक अखाड़े के उस्ताद थे। आपका रचना काल २० वीं सदी का प्रारंभ अनुमित है। आपकी एक कजली पूर्वोक्त 'कजली-कौमुदी' से उद्धृत की जाती है—

कजली

झूला झूलैं नन्दलाल, संग राधा गुजरी।
कहैं राधा जी पुकार, पेगैं मारऽ सरकार ॥
उड़ै पगिया तोहार, मोरी उड़े चूनरी।
सुनके कृष्ण मुरार, मानेऽ बतिया हमार ॥
बाजे मुरली तोहार, हम गाईं कजरी।
झींगुर बोले चारों ओर नाचे बनवा में मोर ॥
रास अजब रचावेऽ, 'महादेव' के तरसावेऽ।
ऐसन बाँसुरी बजावेऽ ओढ़ि काली कमरी ॥

नरोत्तमदास

आप बनारस के कवि थे और आपके भक्ति-रस के भजन तथा कजली और गीत गायक-मण्डली में बहुत गाये जाते थे। आपकी एक कजली 'कजली-कौमुदी' से नीचे उद्धृत है—

कजली

हमको सावनऽ में मेंहदी मँगादऽ बलमू।
हाली[6] बगिया में जाय लावऽ टटका तोराय[7]।

---

१. चम्पारन-निवासी पं० गणेश चौबे से केवल आपके नाम का पता चला था। २. संग्रहकर्त्ता—भूपनारायण शर्मा कथावाचक और प्रकाशक—भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, बनारस; विक्रम-संवत् २००७ में प्रकाशित। ३. चली। ४. विवाह में द्वारपूजा के बाद बरातियों के लिए रसद भेजने के साथ निमंत्रण देने की प्रथा। ५. रख लिया। ६. शीघ्र। ७ तोड़कर।

छोटी ननदी के हाथ पिया दऽ बलमू ॥
तोहसे कइली तकरार, लागल जियरा हमार।
देवरानी से कहके रचा दऽ[1] बलमू ॥
होई जियरा मगन, तोह से कहबे सजन।
आके गोड़वा[2] के मेंहदी छोड़ा दऽ बलमू ॥
तोहे फुरसत हो जो कम, कहऽ लाईं जाके हम।
खाली होवऽ तऽ[3] टिकुली[4] लगा दऽ बलमू ॥

कैद

कैद काशी के कवि थे। आप 'शेखा शायर' के कजली के अखाड़े के शिष्य थे। आपके समय में काशी में 'कन्हई' और 'छोटे विश्वनाथ' थे। आपमें और इन दोनों से कजली का दंगल होता था। निम्नोक्त गीत की रचना आपने इसी दंगल में की थी, जिसका पुरुष की ठठोलीवाला अंश आपके सम-सामयिक 'गूदर' कवि का रचा हुआ है। विपक्षी दल में कन्हई और छोटे विश्वनाथ तथा बड़ी पियरी के कवि थे।

कैद जी बड़े मनचले कवि मालूम होते हैं। अनुमान है कि आप सन् १९२५ ई० तक रहे होंगे। आपकी रचना, 'सावन का भूकम्प'[5] नामक संग्रह-पुस्तिका से, नीचे दी जाती है। पुरुष-स्त्री के प्रश्नोत्तर के रूप में आपने बहुत सुंदर तरह से शृंगार-सम्बन्धी नोक-झोंक की बातें लिखी हैं—

औरत का जवाब : झूमर

माटी मिलऊ[6] तोहार, लेबै[7] जुलफी उखार
हमसे करबऽ छेड़खानी कजरिया[8] में ॥ टेक ॥
तोहरे अइसन[9] हजार, करें नोकरी हमार।
काहे आग लगल[10] तोहरी नजरिया में ॥
चौक—गारी अइसन सुनाइब[11] कबों लगवाँ[12] न आइब,
माहामाई[13] परे तोहरे चुनरिया में।
हैकल हसुली हुमेल देबै ठउना[14] ले ठेल,
लात मारब चार पनवाँ-सिकरिया[15] में ॥
चोली पटने के दूर मोर तलवा के धूर[16],
तोरे चाकी मारे[17] चाँदी के कटोरिया में।
दूध हलुआ मलाई, खोवा बरफी मिठाई,
भरसाई[18] परे तोहरे ओसरिया[19] में।
उड़ान—तोसक तकिया तोहार हमरे लेखे[20] कतवार[21],
कबों कहूँ न जाइब बारादरिया[22] में ॥

१. पिसी हुई मेंहदी से हाथ और पैर में बिन्दु-चित्र बनवा दो। २. पैर। ३. फुरसत हो तो। ४. माथे की चमकीली बिन्दी। ५. प्रकाशक—गुल्लूप्रसाद केदारनाथ, बुकसेलर (बनारस)। ६. माटी मिलना=मरना। ७. लूँगी। ८. कजली का मेला। ९. पैसा। १०. आग लगना=जलना (तिरस्कार-सूचक मुहावरा)। ११. सुनाऊँगी। १२. पास, समीप। १३. महामारी। १४. पैर। १५. एक गहना। १६. तलवे की धूल (मुहावरा)=तुच्छातितुच्छ। १७. चाकी मारना (मुहावरा) =बिजली गिरे। १८. भरसाई परे=भाँड़ में झोंकना (मुहावरा)। १९. ओसारा। २०. लिए। २१. कूड़ा। २२. बैठकखाना।

चौक—कोर[1] रोज हम देखाइब तौसे टेढ़ बतिआइब,
नाहीं केहुसे डेराइब[2] हम सहरिया में।
बाटऽ सुघर जवान ठीक मूसहर समान,
तोड़ल कइलो[3] नित सिंघाड़ा तू पोखरिया में।
तोरे अइसन भँगेड़ी चाटे तरवा[4] ओ एँड़ी,
हमरे रोज रोज आय के ओसरिया[5] में।
हमसे सेखी न देखावऽ कोई और के बुलावऽ,
तोरे बजर पड़े[6] घी के टिकरिया[7] में।

उड़ान—मोहर रुपया ओ लोट[8] घीन्नी[9] बड़ा और छोट,
हमरे भरल बाटे अपने पेंटरिया में।

चौक—खेला केतनो तू खेलऽ करब तोहसे न मेल,
हम आप घूमें आइब फुलवरिया में।
जूही चम्पा ओ नेवारी हमरे लागल बा दुआरी[10],
बेला फूलेला बीचे कियरिया में।
मन चली जो हमार लेब झुलुआ डलाय[11],
झूलब देवरा के गोहने[12] लहरिया में।
काहे हमरी जवानी तोहे जहर बा बुझानी[13],
जिन[14] नजर लगाये तू उमीरिया में।
अइसे जोबना हमार रही टेकुआ[15] के धार,
तोहे रोजे ललचइबे बजरिया में।

चौक—तोहे एतना छकाइब गली-गली में घुमाइब,
तोहें धेला पर न रखबै नोकरिया में।
कबों रुख ना[16] मिलाइब तोहें ठेउनी[17] चटाइब,
लात मारब जब अइबऽ, गोड़तरिया[18] में।
जाय हमरी बलाय तोरे गोहने भुलाय[19],
परे बजर के मार मोटरिया[20] में।
'सेखा शायर' के घराना जाने सकल जमाना,
'कैद' गावेलन[21] कजरिया हुनरिया[22] में।

भगेलू

आपकी प्राप्त रचना के आधार पर अनुमान होता है कि आप कोई निर्गुण-पंथी सन्त कवि थे। अनुमान होता है कि आप बनारस के ही कवि थे। आपकी एक रचना मुझे 'सावन का भूकम्प' नामक संग्रह-पुस्तिका में मिली है, जो नीचे उद्धृत की जाती है—

---

१. कोर दिखाना=धत्ता बताना। २. डरूँगी। ३. तोड़ा करो। ४. पैर का तलवा। ५. ओसारा। ६. वज्र पड़ना (मुहावरा)=नष्ट होना। ७. एक मिठाई। ८. नोट। ९. गिन्नी। १०. द्वार पर। ११. झूला डलवा लूँगी। १२. गोद। १३. मालूम पड़ता है। १४. नहीं। १५. सूआ। १६. रुख मिलाना=नजर बराबर करना (मुहावरा)। १७. पर। १८. खाट का पयताना। १९. भूलकर मेरी बला भी तुम्हारी गोद में नहीं जायगी। २०. गठरी। २१. गाते हैं। २२. कला के साथ (कलापूर्ण ढंग से)

कजली (मिर्जापुरी)

नइहरे में रहलू[1] खेललू गुड़हाँ[2] मउनिया[3]।
मउजिया[4] मारे तानारे साँवलिया ॥१॥
सीखलू न सहूर[5] कैसे जइबू[6] ससुररिया।
करबू[7] का बहाना रे साँवलिया ॥२॥
कुसुमी[8] चुनरिया[9] धूमिल कइलवलू[10]।
लगी कइसे ठेकाना[11] रे साँवलिया ॥३॥
पाँचो[12] पिया से मुख मोड़ के गुजरिया।
तू भइलू बेगाना रे साँवलिया ॥४॥
कहले 'भगेलू' गुन नइहरे में सीखा[13] होई।
पिया[14] घर जाना रे साँवलिया ॥५॥

[इस गीत में संसार को नैहर, परलोक को ससुराल, शरीर को चूनरी और परमात्मा को पिया कहा गया है।]

अजमुल्ला

अजमुल्ला बनारस के शायर थे। आप शायद 'भगेलू' के अखाड़े के शिष्य थे।

कजली (गगरी झूमर)

करके सोरहों सिंगार बार[15] ककही[16] से झार[17],
पानी घटवा भरन गोरी जालू गगरी।
खूब सीना उठल लाल चोली मखमल कमाल,
बल[18] रहिया[19] में खाला[20] कमर पतरी ॥टेक॥
गाल कुनरू[21] मीसाल चलै झूमत के चाल,
करे जियरा बेहाल फेर-फेर[22] पुतरी[23]।
घायल करती हजार मारे नैनों का मार,
तलवार लीनो[24] नैना बनाये गुजरी।
चले चमक[25] के गोरी अबहीं उमर के थोरी,
डालि कँधवा पर लीहले रेशम के रसरी[26]।
छालटी[27] के नमस्तीन[28] लाख रंग के रंगीन,
तीनदीन्हा[29] पहिन के गोरी चली चूनरी।
जल्दी कुअना[30] पर जाय डोरी घड़ा में फसाय,
मुसकाय यारन से लड़ावे नजरी।

१. रहीं। २. गुड़िया। ३. लड़कपन में खेलने के लिए बाँस या सींक की छोटी-गहरी डलिया। ४. मौजें। ५. शऊर। ६. जाओगी। ७. करोगी। ८. कुसुम रंग की (गोरी)। ९. चुनरी (देह)। १०. कराया। ११. ठेकाना लगना, काम बनना (मुहा.)। १२. पंचतत्त्व। १३. सीखना संभव है। १४. परमात्मा। १५. केशपाश। १६. कंघी। १७. सँवारकर। १८. लचक। १९. राह। २०. बल खाता है। २१. बिम्बफल। २२. नचा-नचाकर। २३. आँख की पुतली। २४. लिया। २५. नाच के साथ। २६. रस्सी। २७. एक प्रकार का रंगीन चिकना वस्त्र। २८. नीमास्तीन। २९. धराऊँ (कपड़ा)। ३०. कुँआ।

झाके-झुकि[१] यार नार सीना उघार,
जैसे बरछी के धार ले करैला मस्करी[२]।
टुपुर-टुपुर[३] बतिआवे[४] यार बातन में रीझावे,
जिधर हँस मुसकावे, यार जावे पसरी[५]॥
डसे आसिक के जीगर मारे कसके नजर,
भर-भर के जदुइया[६] चलावे गुजरी॥
तार[७] अँगिया जड़ाय[८] मांग पटिया फराय[९],
लाल टीका लगाय नकीया में बेसरी[१०]॥
धन करती हलाल[११] जीयरा[१२] के भइ काल,
भाल बेंदी लगाय पोर-पोर[१३] मुनरी[१४]॥
नखड़ा करके नीत नार करैं केतनन बीमार,
यार केतनन के गयल परान नीसरी[१५]॥

रामलाल

रामलाल जी के जन्म-स्थान का पता तो नहीं लग सका, किन्तु आपका एक पूर्वी गीत जो 'पूर्वी तरंग' में प्राप्त हुआ है, उसकी भाषा से ज्ञात होता है कि आप बनारस के ही कवि थे। बनारस शहर के नहीं, तो जिले के अवश्य थे।

पूर्वी

ओढ़ के सिलिक[१६] की चदरिया जालू[१७] बाबू की बजरिया
अलबेली बन के ना मारेलू[१८] नयनवाँ के बान हो अलबेली बन के ना ॥टेक॥
अँखिया तोर बाटे[१९] राजा अमवाँ के फरिया[२०],
अलबेली बन के ना लेहलू[२१] छयलन के जान हो अलबेली बन के ना ॥२॥
गोरे गाल पर काला गोदनवाँ झुलनियाँ झोकेदार[२२] हो
अलबेली बन के ना काहे करेलू[२३] परेशान हो अलबेली बन के ना ॥३॥
तारकसी के अँगिया में जोबनवाँ नोकेदार हो अलबेली बन के ना,
रख लेतू[२४] हमरो अरमान हो अलबेली बन के ना, ॥४॥
रामलाल छैला से अब कहेलिन गुजरिया हो अलबेली बन के ना,
गावा[२५] अब पुरुबिया के तान हो अलबेली बन के ना ॥५॥

पन्नू

अनुमान है कि आपका जन्म-स्थान बनारस अथवा मिर्जापुर है। आप वहीं के किसी कजली के अखाड़े के शिष्य थे। आपकी रचनाएँ, दूधनाथ प्रेस (सलकिया, हवड़ा) से छपी, 'मिर्जापुरी कजरी' नामक पुस्तिका में हैं। उसीसे नीचे के गीत उद्धृत हैं—

१. ताक-झाँककर। २. मसखरी। ३. मनोहारी वचन। ४. बातचीत करती है। ५. गिर जाना, ढेर हो जाना। ६. जादू। ७. तार। ८. जड़ाना=सलमा-सितारा लगाना। ९. माँग की पाटियाँ सँवारकर। १०. नाक में मोती का बेसर। ११. नाश (जिबह)। १२. जीवन। १३. अंग-अंग। १४. एक आभूषण। १५. निकल गया। १६. सिल्क (रेशम)। १७. जाती हो। १८. मारती हो। १९. है। २०. फाँक, फारी (आधा टुकड़ा)। २१. लेती हो। २२. झूलनेवाली। २३. करती हो। २४. रख लेती। २५. गाओ।

कजली

(१)

गोरिया ना माने कहनवाँ[१] मोरे भवनवाँ जाला ना ॥
बाजूबन्द हुमेल हसुली पहिरे भाला[२] ना ॥
छाड़ा[३] छागा[४] औ कड़ा[५] पैंजनी बिछुवा[६] माला ना ।
पीताम्बर की सारी पहिरे चादर आला[७] ना ॥
कहैं 'पन्नू' देख सुरतिया भये बेहाला[८] ना ॥

(२)

अगवाँ[९] बोलत रहली[१०] जनियाँ, अब काहे छुटकत[११] बाटू[१२] ना ।
पाँवके अन्दर छाड़ा खूब छुमकावत बाटू ना ।
चढ़ी जवानी जोर तोर है चमकत बाटू ना ।
नैनन से नैन लड़ाके जुलुमी[१३] दमकत बाटू ना ।
'पन्नू' कहे चढ़त पलँगिया झटकत[१४] बाटू ना ॥

देवीदास

आप प्रौढ कवि ज्ञात होते हैं। जनता में आपके गीतों का आदर है। गीत की भाषा से ज्ञात होता है कि आप बनारस के ही रहनेवाले थे। आपके गीत भोजपुरी की संग्रह-पुस्तिकाओं में पाये जाते हैं। 'बाँका छबीला गवैया' नामक पुस्तिका में आपकी निम्नलिखित 'चैती' मिली है—

चैती

नाजुक बलमा[१५] रे रतिया नहिं आवे हो रामा ॥
एक तो मोरी चढ़ली जवानी दूजे बिरहा सतावे हो रामा ॥
चैतवा की गरमी नींदिया ना आवे हो रामा ॥
'देवीदास' जिया[१६] ना मानै केतनों समुझाये हो रामा ॥
नाजुक बलमा हो रामा० ॥

भग्गूलाल और बुझावन

ज्ञात होता है भग्गूलाल और बुझावन दो कवि थे। सम्भवतः भग्गूलाल गुरु हों और बुझावन उनके शिष्य। भग्गूलाल का नाम हमें बनारस के अच्छे कवियों में बताया गया था। पर उनका, पता अधिक नहीं चला। यह ज्ञात हुआ कि वे बनारस के एक कजली के अखाड़े के मशहूर शायर थे। बुझावन का भग्गूलाल का शिष्य होना बहुत निश्चित है। पुरातन प्रथा चली आती है कि अपनी गुरु-परम्परा का नाम अपने नाम के पहले कवि रखते थे। 'पूर्वी तरंग' में इनके निम्नांकित दो गीत हैं—

१. कहना। २. भला, अच्छा। ३. पैर का गहना। ४. पायजेब। ५. पैर का गहना। ६. पैर की अँगुलियों का गहना। ७. श्रेष्ठ। ८. बेचैन। ९. पहले। १०. रहीं। ११. इधर-उधर करना। १२. हो। १३. जुल्म करनेवाला। १४. संकोच में पड़ना। १५. वल्लभ, पति। १६. हृदय।

पूर्वी विहाग

(१)

बोलियो के गोलिया लागल।
भागल मोर सुगनवाँ[१] जाके फँसि हो गइलें ना।
काहू टोनहिन[२] के टोनवाँ[३] में जाके फँसि हो गइलें ना।
अबहीं तो रहलें बोलत डोलत[४] अँगनवाँ कहवाँ निकसि हो गइलें ना॥
अँखिया ढँकल नकल जनु कइलें कहाँ निकसि हो गइलें ना॥
जनलीं[५] नाहीं मरमिया[६] उड़िहैं दूसरे के भवनवाँ केहुकै बसि हो गइलें ना॥
हमरी सून नगरिया भइलीं केहु बसि हो गइलें ना॥
लेईके हिरामन[७] आपन खेललीं सहेलिया हमरे धसि हो गइलें ना॥
दिल पर ठोरवा[८] के निशनियाँ[९] हमरे बसि हो गइलें ना॥
'भग्गूलाल' बूझावन कतहूँ लाये ना सोहावन अइसन धसि हो गइलें ना।
बिरहा बान करेजवा मरलू[१०] अइसन धसि हो गइलें ना॥

(२)

काली तोर पुतरिया बाँकी तिरछी रे नजरिया हो अलबेली बनके ना।
मारलू करेजवा में बान हो अलबेली बनके ना॥ टेक॥
चढ़ल बा जवानी धानी ओढ़लू चदरिया हो अलबेली बनके ना॥ १॥
छोटी छोटी छतिया[११] ता पै पतली रे कमरिया हो अलबेली बनके ना।
खालू नित मगहिया[१२] बीड़ा पान हो अलबेली बनके ना॥ २॥
दाँते के बतिसिया चमके पउवाँ[१३] के मेंहदिया हो अलबेली बनके ना।
काहे लेलू[१४] छैलन के परान हो अलबेली बनके ना॥ ३॥
'भग्गूलाल' कहें जानी[१५] मानऽ तू कहनवाँ हो अलबेली बनके ना।
मिलि के मिटावऽ तूँ अरमान हो अलबेली बनके ना॥ ४॥

बिहारी

आप आजमगढ़ जिले के कवि हैं। आपकी कविता में पश्चिमी भोजपुरी का रूप देखने को मिलता है। जो पाण्डुलिपि श्री परमेश्वरी लाल गुप्त से कवि मिट्ठू जी के प्रबन्ध-काव्य की मिली थी, उसीमें आपके भी १२ बिरहे हैं, जिनमें से एक उदाहरण नीचे दिया जा रहा है—

(१)

फिर तुम सुमिरला[१६] मन वोही[१७] मालिक[१८] के
जेत गजब पिंजड़ा[१९] गढ़ि देय।
वोही मलिकवा के काहे ना भजेलू[२०],
जेकर[२१] जोति हउवे[२२] अगम-अपार॥
ऐ भाव भजन गुन गाय लइ[२३] हो बन्दे तुम
भाव भजनगुन गाय ल तुम।

---

१. तोता (प्रियतम)। २. टोना करनेवाली, जादूगरनी। ३. जादू-टोना। ४. चलता-फिरता। ५. जाना, समझा। ६. मम, भेद। ७. तोते का नाम (मन का हीरा)। ८. ठोर, चोंच (अधर)। ९. चिह्न। १०. मारा। ११. स्तन। १२. मगही पान। १३. पाँव। १४. लेती हो। १५. प्राण-प्यारी। १६. सुमिरन कर लो। १७. उसी। १८. परमात्मा। १९. शरीर। २०. भजते हो। २१. जिसकी। २२. है। २३. गान कर लो।

ऊपर वोह[1] मालिक पर धर धियनवाँ
जेकर भेजलका[2] अइला[3] तुम।
जो जो कइला तवने[4] फलवा नाहीं फलेला[5]
साफ दिलवा के राखा तुम।
जब दिल चाहे पार उतरिहा[6],
लैस[7] करै जनि जइहा[8] तुम।
कहे 'बिहारी' गुरु साम के चेला,
हे जगदम्बा दया करा तुम॥

श्रीकृष्ण त्रिपाठी

आप रसरा (बलिया) के रहनेवाले हैं। आपकी कई पुस्तिकाएँ छपी हैं। 'पूर्वी दिलबहार'[9] नामक पुस्तिका चार भागों में प्रकाशित है। इसमें आपकी रचनाएँ संगृहीत हैं। कुछ रचनाएँ उक्त पुस्तिका से नीचे उद्धृत हैं—

पूर्वी

(१)

राधेजी की सँगवाँ रामा सखिया हो सलेहरी[10]से हिलि हो मिलि ना।
जमुना जाली असननवाँ से हिलि हो मिलि ना॥
जबहीं सखिया रामा कइली हो असननवाँ से चीर हो लेके ना।
काँधा[11] चढ़ले कदमवाँ से चीर हो लेके ना॥
गोड़ तोर लागी रामा काँधा हो बटवरवा[12] से देइ हो देवऽ ना।
हमरी देह के बसतरवा से देइ हो देवऽ ना॥
जबहीं चीर हम देबों हो सहेलिया से चलि हो आवे ना।
सखी, हमरो हो डगरिया[13] से चलि हो आवे ना॥
कइसे आवों काँधा! तोहरी हो डगरिया से हम हो धनिया ना।
जमुना में उघारी[14] से हम हो धनिया ना॥
कहैं 'श्रीकृष्ण त्रिपाठी' सुनि हो लेबू सखिया से निगिचा[15]जाके ना।
सखिया लेई आवऽ चीरवा हो निगिचा जाके ना॥

(२)

गगरी लेके ना राधे जाली[16] जमुना के तिरवाँ॥ टेक॥
सात पाँच सखिया रामा राधे जी के सँगवा से हिलि हो मिलि ना।
जमुना जाली जलवा भरने से हिलि हो मिलि ना॥
ओनिया[17] से आये रामा कृष्ण हो कन्हैया से धइ[18] हो ले ले[19] ना।
रामा नरमी कलइया से धइ हो ले ले ना॥
छोड़ु-छोड़ु काँधा रामा हमरी हो कलइया से टूटि हो जइहें ना।
अबहीं आल्हर[20] बा कलइया से टूटि हो जइहें ना॥

---

१. उस। २. भेजा हुआ। ३. आया। ४. वही। ५. फलता है। ६. पार उतर जाना। ७. भोग-विलास। ८. जाना। ९. प्रकाशक—गुल्लूप्रसाद केदारनाथ बुकसेलर, कचौड़ीगली, बनारस सिटी। १०. सहेली (जिससे गुप्त सलाह की जाय, दिल की बात कही जाय)। ११. कन्हैया, कृष्ण। १२. बटमार, रास्ते में लूट लेनेवाला। १३. डगर, रास्ता। १४. नंगी। १५. नजदीक। १६. जाती है। १७. उधर। १८. पकड़। १९. लिया। २०. नाजुक (अल्हड़)।

कहे 'श्रीकृष्ण त्रिपाठी' मानि हो जइबू सखिया से पुजाइ[1] हो लिहे ना।
कांधा मन के अहकिया[2] से पुजाइ हो लिहे ना॥

(३)

दधि बेचे चलली रामा बृन्दाबन की खोरिया[3] से काँधा रोके ना।
रामा हमरी डगरिया से काँधा रोके ना॥
धइके कलइया काँधा धइले हो मटुकिया[4] से लेइ हो ले ले ना।
रामा हमरो ऊ दधिया से लेइ हो ले ले ना॥
कुछु उजे[5] खइले रामा कुछु हो गिरवले से गेडुली[6] हमरे ना।
रामा जमुना में दहऽअवले[7] से गेडुली हमरे ना॥
देखली कांधा राम तोहरी हो ढिठइया[8] से जाइके कहबो ना।
काँधा कंस के दरबरवा से जाइके कहबो ना॥
होत ही फजीर[9] काँधा चढ़िहे हों हथकड़िया से खियाल[10] हो अइहें ना।
काँधा तोहरी ढिठइया से खियाल हो अइहे ना॥
कहे 'श्रीकृष्ण त्रिपाठी' सुनि हो लेबू सखिया से काहो करिहें ना।
रामा कंस निरमोहिया से काहो करिहें ना॥
उहो[11] त हऽवें सखिया राम आवतरवा से कंस का होइहें ना।
रामा इनहीं से नासवा से कंस का होइहें ना॥

शायर शाहवान

शाहवान मुसलमान शायर तो जरूर थे, पर बनारस के कजरी के अखाड़ों के कवियों में कई के गुरु भी थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा में कई कवियों ने अच्छी उन्नति की। जगरनाथ राम आपके प्रसिद्ध शिष्य थे। आप बनारस के ही रहनेवाले ज्ञात होते हैं। 'बाँका छबीला गवैया'[12] से निम्न-लिखित गीत उद्धृत है—

पूर्वी

पुरुब मत जाओ मोरे सइयाँ।
वोहीं रे पुरबवा की बाँकी बँगलिनियाँ।
जदुआ डारि रखिहें मोरे रामा रे ॥पुरुब०॥
लामी-लामी[13] केसिया[14] बड़ी-बड़ी अँखियाँ रे
पनिया भरइहें[15] मोरे रामा रे ॥
'शाह' कहें बंगाले की नारी
आवे नाहीं देइहें मोरे रामा रे ॥पुरुब०॥

गूदर

गूदर कवि काशी के महल्ला 'छोटी पियरी' के रहनेवाले थे। आप 'शेखा शायर' के अखाड़ के कवि थे। आपका समय १९२५ ई० के पूर्व का है। आपकी रचनाओं की एक संग्रह पुस्तिका मुझे

१. पूरा करना। २. लालसा। ३. गली। ४. दही की मटकी। ५. वह जो। ६. बिड़ई (पात्र रखने के लिए कपड़े या तिनके की बनी गोल वस्तु।) ७. बहवा दिया। ८. ढिठाई। ९. सुबह। १०. याद, स्मृति। ११. वह। १२. प्रकाशक—शिजोरीलाल बुकसेलर, आदमपुरा, बनारस सिटी। १३. लम्बी-लम्बी। १४. केशपाश। १५. पानी भरावेंगी, गुलाम बनावेंगी।

मिली है, जिसका नाम है 'सावन का सवाल', और जो राजनारायण गिरि (बाबू बाजार, खिदिरपुर) द्वारा प्रकाशित है। कैद, कन्हई आदि कवियों की रचनाएँ भी उसी में आई हैं। उसी पुस्तक से कुछ रचनाएँ यहाँ दी गई हैं—

सुमिरनी

दोउ कर जोरके सौ सौ बार, सावन में अबकी[१] साल हमार।
अरजिया[२] लगल भवानी से, आज सुन साँवर गोरिया॥
चौक—कोई सुमिरेला सेस महेस, कोई पूजेला गौरी गनेस।
करे कोई भजन बढ़ाके केस, फिरे कोई बदल के भेस।
हमें आसा महरानी से आज सुन साँवर गोरिया॥
भरोसा कोईके नाहीं बाय[३], जगत जननी होहू सहाय।
पुकारत हई बनके असहाय, खबरिया ले तू माता आय।
पिघलत[४] बा आरत बानी में आज सुन साँवर गोरिया॥
प्रगट भई बन काली, अरिनन[५] पर काढ़के भुजवाली[६]।
जोगिन देत संग ताली, कहलू अष्ट भुजावाली।
युद्ध असुरन सानी[७] ते आज सुन साँवर गोरिया॥
आइ सहीं आज मोरि मइया, लगा दे पार आके नइया।
भेजेलन 'गूदर' हरदइयाँ[८] दया कर दे तू एहि ठइयाँ[९]।
छुटै होरी-हलकानी[१०] से आज सुन साँवर गोरिया॥

होरी लाल

होरी लाल, गूदर और कैद कवि के गुरु भाई तथा 'शेखा शायर' के अखाड़े के शिष्य थे। आपकी रचना का समय १६१५ ई० से पहले का है, जब बनारस आदि शहरों में मादक वस्तुओं का प्रयोग बहुतायत से होता था। आपका गीत गूदर-कृत पूर्वोक्त 'सावन का सवाल' नामक संग्रह-पुस्तिका में आया है, जो नीचे दिया जाता है—

कजली

पिया मदक सवादे[११] सुनऽ सखिया ना ॥टेक॥
ले अफीम तोला भर चुरवे[१२] कोठा के ऊपर।
तेमे ऊपर मे मिलावे बबूर[१३]-पतिया ना॥
मेरु[१४] गवरइया[१५] मँगाय, लेनन गोनरी[१६] बिछाय।
सइयाँ छिटवा[१७] लगावे सारी रतिया ना॥
जिस दम सेज पर हमरे आवे पिनिक[१८] ले और जमुहावे[१९]।
बोले नाहीं बोलाये, सूते मूँद अँखिया ना॥

---

१. इस बार। २. अर्ज, प्रार्थना। ३. है। ४. द्रवीभूत होती हैं। ५. शत्रुओं। ६. भुजाली, कटारी। ७. बराबरी करनेवाले। ८. प्रतिबार, हर दफा। ६. जगह। १०. परेशानी। ११. स्वाद लेने का चस्का लग गया है। १२. पकाता है। १३. बबूल। १४. बड़ा। १५. मिट्टी का हुक्का। १६. गोनर की चटाई। १७. जल का छींटा देना। १८. अफीम के नशे में मौज से बोलना। १६. जँभाई लेता है।

हमके मदन सतावै बेसी[1], चाहीं होय मोकदमा पेसी[2] ।
'होरी' यह नशा में भइलें पिया रखिया[3] ना ॥

चन्द्रभान

चन्द्रभान शाहाबाद जिले के रहनेवाले कवि हैं। आपका समय १६१५ ई० के पूर्व का है। आपकी रचना की भाषा भोजपुर के इलाके की ठेठ भोजपुरी है। कहीं-कहीं खड़ी बोली का भी पुट है । आपकी रचनाएँ कवि तेजू राम द्वारा संगृहीत और प्रकाशित 'रँगीली दुनिया' नामक पुस्तिका में, मुझे मिली हैं--

दुनियाँ के बिगड़ल[4] रहनिया[5] हो दीनबन्धु !
दुनियाँ के बिगड़ल रहनियाँ ॥टेक॥
नारी प्यारी अधर्मी बनावे, माई कहावे बैरिनियाँ[6]
बाप बेचारे को लाखों नतीजा[7], दिन भर भरावेले पनियाँ[8] ॥१॥
सास-ससुर को सतावेले बहुअर[9], अपने बनेले बिसनियाँ[10] ।
बुढ़वा के दें लात-घुस्सा घसटले, बुढ़िया के मारे चुहनियाँ[11] ॥२॥
बाबाजी बनियाँ के चीलम चढ़ावे, रोटी बनावे बभनियाँ[12]
उनका भला राम कैसे करेंगे, ब्राह्मण दबावे चरनियाँ[13] ॥३॥
देखो ए लोगों जमाना के खूबी, घरवा में रोवेले जननियाँ[14] ।
लौंडा पर मरता है सारा जमाना, ब्राह्मण ओ[15] छत्री ओ बनियाँ ॥४॥
सुहबत-सराफत हजारों को देखा, गोदी सुलावे डोमिनियाँ[16] ॥

शायर निराले

आप बनारस के कवि थे और कजली के किसी अखाड़े के उस्ताद थे। आपका समय भी १६१० ई० के आस-पास है। आपकी रचनाएँ 'कजली कौमुदी' में प्राप्त हैं, जिनमें एक नीचे उद्धृत है—

कजली

हरि-हरि कवने करनवाँ[17] कान्हा जल में समाना रे हरी ।
गेंदवा के बहनवाँ[18] सब सखा के समनवाँ[19] रामा ।
अरे रामा कालीदह में कूद पड़े भगवाना रे हरी ॥
नाग नाथ आये सुर सुमन झर लाये[20] रामा ।
अरे रामा सुनके खबर कंस बहुत घबड़ाना रे हरी ॥
बाँसुरी बजावे मोहिनी रूप दरसावे रामा ।
अरे रामा लीला अपरम्पार कोई नहीं जाना रे हरी ॥

१. अधिक । २. मुकद्दमे की पेशी (एक अश्लील मुहावरा) । ३. भस्म, राख (तुच्छ) । ४. बिगड़ा हुआ । ५. रहन-सहन । ६. वैरी, दुश्मन । ७. दुर्दशा । ८. पानी भरवाना=सेवा-टहल कराना (मुहावरा) । ६. वधू, पतोहू । १०. शौकीन (विलासिनी) । ११. रसोई-घर के चूल्हे के पास की जगह । १२. ब्राह्मणी । १३. चरण । १४. पत्नी । १५. और । १६ चापबाजिन । १७. कारण । १८. बहाना । १६. सामने । २०. झड़ी लगा दी ।

नाग-नागनी बिदा कीन्ह सिर चरण रख दीन्हा रामा।
अरे रामा पिवे जमुन-जल करे बखनवाँ[1] रे हरी ॥
कहे 'निराले' समझावे जो हरि-गुन गावे रामा।
अरे रामा राधेश्याम जप, काहे के अलसाना[2] रे हरी ॥

रसिक किशोरी

आपकी रचनाएँ हिन्दी और भोजपुरी दोनों भाषाओं में प्राप्त हैं। 'सावन दर्पण'* संग्रह-पुस्तिका में आपकी रचनाएँ प्राप्य हैं। अतः आपका समय १९२५ ई० के पूर्व का माना जायगा। निवासस्थान भी बनारस के आस-पास कहा जा सकता है। आपकी रचनाएँ प्रौढ़ और भावपूर्ण होती थीं। एक उदाहरण—

कजली

नाहीं मानो बतियाँ तोहार मिठबोलवा[3] ॥टेक॥
तोरी मुँह देखे की पिरितिया[4] संवलिया।
कसके[5] करेजवा[6] हमार मिठबोलवा ॥
'रसिक किशोरी' रस-बस इत[7] आवत।
नित-नित करत करार[8] मिठबोलवा ॥

जगेसर

आप अपने समय के अच्छे कवि थे। आपकी रचना 'मिर्जापुरी कजरी' नामक संग्रह-पुस्तिका में मिली है। आपकी भाषा में मिर्जापुरी का पुट है। आपका एक गीत 'सावन-दर्पण'* में भी है।

कजली

अइले[9] सवनवाँ घर नाहीं रे सजनवाँ[10] रामा।
हरी-हरी देखे बिन तरसे[11] मोर नयनवाँ रे हरी ॥
हमके भुलले[12] ऐसे भइले[13] निरमोहिया रामा।
हरी-हरी जाय बसे कूबरी[14] के भवनवाँ रे हरी ॥
रतिया अंधेरी घेरी बिजुली चमके रामा।
हरी-हरी गरज सुनावेला[15] गगनवाँ रे हरी ॥
सूनी रे सेजरिया पर तड़फेलू[16] अकेली रामा।
हरी-हरी नाहीं माने जुलमी[17] मोर जोबनवाँ[18] रे हरी ॥

---

१. यशोगान करना। २. आलस्य करना। * प्रकाशक—बनारसीप्रसाद वर्मा, 'उपन्यासदर्पण'-कार्यालय, काशी; द्वितीय संस्करण, सन् १९३७ ई०। ३. मीठी बोली बोलनेवाला (चिकनी-चुपड़ी बातें करनेवाला)। ४. तुम्हारी प्रीति केवल मुँह देखे की (सामने होने पर की) है। ५. कसकता है, टीसता है। ६. कलेजा। ७. इधर। ८. वादा। * लेखक—कृष्णलाल; प्रकाशक—'उपन्यास-दर्पण'-कार्यालय, काशी। ९. आया। १०. प्रियतम, स्वजन। ११. तरसता है। १२. भूल गये। १३. हो गये। १४. कुरूपा सौत। १५. सुनाता है १६. तड़पती हो। १७. जुल्म करनेवाला। १८. यौवन।

कहेले 'जगेसर' पियवा नाहीं घरे अइले रामा।
खाई बिख तजब[1] परनवाँ[2] रे हरी॥

देवीदास

अनुमान है कि आप गाजीपुर अथवा बलिया जिले के थे। आपकी रचना को देखकर ही ऐसा अनुमान किया जाता है। आपका समय १६२५ ई० के पूर्व का होगा। आपकी रचनाएँ हमें 'मिर्जापुरी कजरी' तथा 'सावन-दर्पण' में मिली है—

कजली

जिन[3] जइहो[4] मोरे राजा[5] तू बजरिया[6] में।
सवत[7] तोहे लेइहें बोलाय चढ़ि जइहो मोरे राजा तू नजरिया[8] में।
सावन की बहार मारे बिरहा-कटार तरसइहो[9] मोरे राजा तू बजरिया में।
लागी तोरी आस कहे मानो 'देवीदास' रहि जाओ मोरे राजा तू अंटरिया[10] में।

भगवानदास 'छबीले'

आप 'द्विजबेनी' कवि के शिष्य थे तथा बनारस के रहनेवाले थे। आपकी ध्रुपद, धमार आदि रागों में बँधी रचनाओं की पुस्तिका वि० सं० १६६६ में प्रथम बार भारत जीवन प्रेस (काशी) में मुद्रित हुई थी। यह पुस्तिका हिन्दी में है। एक-दो भोजपुरी गीत भी हैं। इसी पुस्तक से आपका परिचय मिला। भोजपुरी रचनाएँ अन्य संग्रहों में भी प्राप्त हुई हैं। उपर्युक्त 'मिर्जापुरी कजली', में भी आपकी रचना के उदाहरण मिले हैं। 'सावन दर्पण' में भी आपकी रचनाएँ संगृहीत हैं।

कजली

(१)

सावन घन गरजे रे बालमुआँ[11] ॥टेक॥
हमरे पिया जाले परदेसवा कोई नहीं बरजे[12] रे बालमुआँ।
कहत 'छबीले' छैल, पति[13] राखो तनिक मोरी अरजे[14] रे बालमुआँ॥

(२)

जोबना[15] पै तोहरे[16] बहार साँवर गोरिया[17]।
मोतियन हार गले बिच झलके।
अँगिया सलोनी बूटेदार साँवर गोरिया॥
कहत 'छबीले' गोरी चढ़ली[18]-जवनिया[19]।
जिया तरसावलू[20] हमार साँवर गोरिया॥

श्री केवल

आपके दो छन्द मुझे चम्पारन-निवासी श्री गणेश चौबे से प्राप्त हुए हैं। आपके छपरा या मोतिहारी के निवासी होने का अनुमान किया जाता है।

१. त्याग दूँगी। २. प्राण। ३. नहीं। ४. जाना। ५. प्रियतम। ६. हाट-बाजार। ७. सौत। ८. नजर पर चढ़ना (मुहावरा)। ६. तरसोगे। १०. अटारी, अट्टालिका। ११. वल्लभ, पति। १२. मना करना। १३. पत रखना—लाज रखना। १४. अर्ज, बिनती। १५. यौवन। १६. तुम्हारे। १७. श्यामा सुन्दरी। १८-१६. उभरी हुई जवानी। २०. ललचाती हो।

चैत

भोला त्रिपुरारी भइले मतबलवा हो राम ।
आरे[1] जेही[2] के सीस पर गंगा बिराजे
सोहेला[3] चन्द्र भालवा[4] हो राम ॥
कि सोइ भोला हो पहिरे मुंडमलवा हो राम ।
आरे अँगवा में भभूति[5] रमवले
अँगवा[6] बड़ बेआलवा[7] हो राम ॥
करवा[8] जगवले[9] हो डँवरु[10] तिरसुलवा[11] हो राम ।
गँजवा-धतुरवा[12] चबावे निगले भंगगोलवा[13] हो राम ।
घूमत फिरे सगरे[14] बनवा हो राम ॥
आरे गजवा तुरँगवा छाड़ि के
बा रथवा-बिमनवा हो राम
सँगवा लगवले हो बुढ़वा बयलवा[15] हो राम ॥
आरे जोगी बीन बजावे गावे आरे भूतवा हो राम।
कि 'केवल' डरपि[16] गये भोला सरनवा[17] हो राम ॥

केशवदास

आप कबीरपंथी साधु थे। आप चम्पारन जिले के मोतिहारी थाने के पंडितपुर ग्राम के निवासी थे। बीसवीं सदी के आरम्भ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पद सुन्दर और गम्भीर होते थे। यह कवि अभी आगे खोज की अपेक्षा करता है।

चैतार

(१)

भावे[18] नाहिं मोहि भवनवाँ[19] ।
हा रामा, बिदेस गवनवाँ[20] ॥१॥
जो एह मास निरास मिलन भए
सुन्दर प्रान गवनवाँ[21] ॥२॥
'केसोदास' गावे निरगुनवाँ
ठाढ़ि गोरी करे गुनवनवाँ[22] ॥३॥

(२)

सुधि कर मन बालेपनवा[23] के बतिया[24] ।
दसो दिसा के गम[25] जब नाहीं, संकट रहे दिन-रतिया ॥

१. गीत का टेक। २. जिसके। ३. शोभता है। ४. ललाट। ५. विभूति, भस्म। ६. आगे, सामने। ७. व्याल, सर्प। ८. करमें; हाथ में। ९. बजाते हैं। १०. डमरू। ११. त्रिशूल। १२. गाँजा और धतूर। १३. भंग का गोला। १४. सर्वत्र। १५. बैल। १६. डरकर। १७. शरण में। १८. अच्छा लगना। १९. घर, भवन। २०. विदेश-गमन। २१. प्राण-विसर्जन। २२. गुनावन, चिंता। २३. बचपन। २४. बात। २५. ज्ञान, चिन्ता।

बार बार हरि से मिल कहलऽ[१] बसुधा में करबि भगतिया[२] ॥
बालापन बाल ही में बीतल, तरुनी[३] कड़के छतिया[४] ।
काम क्रोध दसो इन्द्री जागल[५] ना सूझे जतिया[६] वा पतिया[७] ॥
अन्त काल में समुझि परिहें[८] जब जमु[९] घेरिहें दुअरिया[१०] ।
देवा-देई सभे केउ हरिहें, झूठ होइहें जड़ी-बुटिया[११] ॥
'केसोदास' समुझि के गावेले[१२] हरिजी से करेले मिनितिया[१३] ।
साम बिहारी सबेरे चेतिहऽ, अन्तस में[१४] केहूना[१५] संघतिया[१६] ॥

रामाजी

आप सारन जिले के ग्राम सरेयाँ, (डाकघर हुसेनगंज, थाना सिवान) के रहनेवाले सन्त गृहस्थ कवि थे। आप राम के बड़े भक्त थे। तमाम घूम-घूम कर रामजी का कीर्त्तन किया करते थे। आपके पुत्र अब भी हैं। आपकी रचना भोजपुरी और खड़ीबोली दोनों में हुआ करती थी। सन् १६२६-३० ई० में आपके संकीर्त्तन की बड़ी धूम थी। आप की मृत्यु १६३० और १६४० ई० के बीच हुई।

'कल्याण' के 'सन्त-अंक' में आपका जिक्र किया गया है। आपके गीत भोजपुरी गीतों के संग्रहों में पाये जाते हैं। भूपनारायण शर्मा की रचनाओं के संग्रह में भी आप की भोजपुरी रचनाएँ हैं। आपकी कोई रचना उदाहरण के लिए नहीं मिली।

राजकुमारी सखी

आप शाहाबाद जिले की कवयित्री थीं। आपके गीत अधिक नहीं मिल सके। फिर भी, आपकी कवि-प्रतिभा का नमूना इस एक गीत में ही मिल जाता है। आपका समय बीसवीं सदी का पूर्वार्द्ध अनुमित है। निम्नलिखित गीत चम्पारन निवासी श्री गणेश चौबेजी से प्राप्त हुआ—

गोड़[१७]तोही[१८]लागले बाबा[१९]हो बढ़इता[२०]से आहो रामा[२१]
धनवाँ-मुलुक[२२] जनि ब्याहऽ हो रामा।
सासु मोरा मरिहें गोतिनि[२३] गरिअइहें[२४] से आहो रामा
लहुरि[२५] ननदिया[२६] ताना मरिहें हो रामा।
राति फुलइबो[२७] रामा दिन उसिनइहे[२८] से आहो रामा
धनवा चलावत[२९]घामे[३०]तलफबि[३१]हो रामा।
चार महीना बाबा एहि तरे[३२] बितिहें से आहो रामा

१. कहा। २. भक्ति। ३. जवानी। ४. छाती कड़कना (मुहावरा)=कामोत्तेजन होना। ५. उत्तेजित होती है। ६-७. जात-पाँत। ८. पड़ेगा। ९. यम। १०. द्वार। ११. जड़ी-बूटी=दवा-दारू। १२. गाता है। १३. बिनती। १४. अन्त समय में। १५. कोई भी नहीं। १६. साथी। १७. गोड़ लागिले=प्रणाम करती हूँ। १८. तुमको। १९. पिता। २०. बढ़न्ती-वाला, ऐश्वर्य-सम्पन्न। २१. गीत का टेक। २२. धान उपजनेवाला मुलुक। २३. जेठानी-देवरानी। २४. गाली देंगी। २५. छोटी-प्यारी। २६. ननद, पति की बहन। २७. (धान को पानी में) फुलाऊँगी। २८. (पानी में का भिगोया धान आग की आँच पर) उबालूँगी। २९. उबालने के बाद धान धूप में पसार दिया जाता है और थोड़ी-थोड़ी देर पर उसे सुखने के लिए हाथ से नीचे-ऊपर फेरना पड़ता है। ३०. धूप में। ३१. तलफूँगी, जलूँगी। ३२. इसी तरह।

खाये के माड़गिल भतवा[1] हो रामा।
'राजकुमारी सखी' कहि समझावे आहो रामा
बिना सहुरे[2] सब दुखवा हो रामा ॥ *

बाबू रघुवीर नारायण

आप सारन जिले के 'नयागाँव' नामक ग्राम के निवासी हैं। उसी जिले के छपरा-नगर में आपका जन्म सन् १८८४ ई० में, ३० अक्टूबर को हुआ था। जिस समय आप छपरा-जिला स्कूल में पढ़ते थे, उस समय वहाँ साहित्य-महारथी प० अम्बिकादत्त व्यास अध्यापक थे। उनसे आपकी कवि-प्रतिभा को बड़ा प्रोत्साहन मिला। बिहार के भारत-प्रसिद्ध विद्वान् पण्डित रामावतार शर्मा से भी आपने उसी स्कूल में शिक्षा पाई थी। स्कूल में ही आप हिन्दी, अँगरेजी तथा भोजपुरी में कविता करने लगे थे। पटना कालेज में पढ़ते समय आप अँगरेजी में बहुत अच्छी कविता करने लगे। अँगरेज प्रोफेसरों ने आपकी अँगरेजी-कविता को बहुत सराहा था। बी० ए० पास करने के बाद आप पूर्णियाँ जिले के 'बनैली'-नरेश राजा कीर्त्यानन्द सिंह के प्राइवेट सेक्रेटरी हुए। बिहार के प्रसिद्ध महात्मा श्री सीतारामशरण भगवानप्रसाद जी 'रूपकला' की प्रेरणा से आप हिन्दी में भी कविता करने लगे। आरा-निवासी बाबू शिवनन्दन सहाय से आपने व्रजभाषा में कविता करना सीखा था; किन्तु अँगरेजी और हिन्दी की कविताओं से अधिक आपकी भोजपुरी कविताएँ प्रसिद्ध हुई। आपका सबसे प्रसिद्ध भोजपुरी गीत 'बटोहिया' है, जो २० वीं सदी के आरंभ में दक्षिण-अफ्रिका, मॉरिशस और ट्रिनीडाड तक के प्रवासी भारतवासियों में लोकप्रिय हो गया था। सन् १९५२–५३ ई० में बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से आपको डेढ़ हजार रुपये का वयोवृद्ध साहित्यसेवी सम्मान पुरस्कार मिला था। आपके सुपुत्र श्री हरेन्द्रदेव नारायण, बी० ए० ने, जो हिन्दी के भी प्रतिभाशाली कवि हैं, 'कुँअर सिंह' नामक काव्य भोजपुरी में लिखा है। आपकी मृत्यु सन् १९५५ ई० में हुई थी।

बटोहिया

सुन्दर सुभूमि भैया भारत के देसवा[3] से मोरे प्रान बसे हिम-खोह[4] रे बटोहिया[5] ॥
एक द्वार घेरे[6] राम हिम-कोतवालवा[7] से, तीन द्वार सिंधु घहरावे[8] रे बटोहिया ॥
जाहु-जाहु भैया रे बटोही हिन्द देखि आउ, जहवाँ कुहँकि कोइलि[9] बोले रे बटोहिया ॥
पवन सुगन्ध मन्द अगर[10] गगनवाँ[11] से, कामिनी बिरह-राग गावे रे बटोहिया ॥

१. माँड़ मिला हुआ गीला भात। २. शऊर, शील-स्वभाव।। * शाहाबाद जिले में दक्षिण और उत्तर दो खंड हैं। बीच में ईस्टर्न रेलवे की लाइन है। लाइन के दक्खिन धानवाला क्षेत्र है और लाइन से उत्तर गंगा-तट पर गेहूँ-चना का क्षेत्र है। यह गीत रचनेवाली कवयित्री उत्तर-खंड की जान पड़ती है। वह अपने पिता से कहती है कि दक्खिन-क्षेत्र में हमारा विवाह मत करो, नहीं तो धान कूटना पड़ेगा। किसी-किसी गीत में दक्षिणी क्षेत्र की लड़की भी उत्तर-खण्ड में विवाह न करने के लिए पिता से कहती है; क्योंकि वहाँ, इसको चक्की चलानी पड़ेगी। ३. देश। ४. हिमाचल की कन्दरा। ५. भारतीय अथवा प्रवासी यात्री। ६. घेरे हुए है। ७. हिमालय-रूपी पहरेदार। ८. गरजता है। ९. कोकिल। १०. अगुरु नामक सुगन्धित धूप। ११. आकाश।

बिपिन अगम घन सघन बगन[1] बीच, चम्पक कुसुम रंग देवे रे बटोहिया ॥
द्रुम बट पीपल कदम्ब निम्ब आम वृक्ष, केतकी गुलाब फूल फूले रे बटोहिया ॥
तोता तूती बोले रामा बोले भँगरजवा[2] मे, पपिहा के पी-पी जिया साले रे बटोहिया ॥
सुन्दर सुभूमि भैया भारत के देसवा मे, मोरे प्रान बसे गंगा धार रे बटोहिया ॥
गंगा रे जमुनवाँ के झगमग[3] पनियाँ मे, सरजू झमकि[4] लहरावे रे बटोहिया ॥
ब्रह्मपुत्र पंचनद घहरत[5] निसि-दिन, सोनभद्र मीठे स्वर गावे रे बटोहिया ॥
अपर अनेक नदी उमड़ि-घुमड़ि नाचे, जुगन[6] के जदुआ[7] जगावे[8] रे बटोहिया ॥
आगरा प्रयाग काशी दिल्ली कलकतवा मे, मोरे प्रान बसे सरजू तीर रे बटोहिया ॥
जाउ-जाउ भैया रे बटोही ! हिन्द देखि आऊ, जहाँ ऋषि चारो बेद गावे रे बटोहिया ॥
सीता के बिमल जस राम-जस कृष्ण-जस, मोरे बाप-दादा के कहानी रे बटोहिया ॥
व्यास बालमीक ऋषि गौतम कपिल देव, सूतल अमर के जगावे रे बटोहिया ॥
रामानुज रामानन्द न्यारि प्यारी रूपकला, ब्रह्म-सुख-बन के भँवर रे बटोहिया ॥
नानक कबीर गौर[9] संकर श्री राम कृष्ण, अलख के गतिया बतावे रे बटोहिया ॥
बिद्यापति कालीदास सूर जयदेव कवि, तुलसी के सरल कहानी रे बटोहिया ॥
जाउ-जाउ भैया रे बटोही हिन्द देखि आऊ, जहाँ सुख झूले धान खेत रे बटोहिया ॥
बुद्धदेव पृथु बिक्रमार्जुन सिवाजी के, फिरि-फिरि हिय सुध आवे रे बटोहिया ॥
अपर प्रदेस देस सुभग सुघर बेस, मोरे हिन्द जग के निचोड़ रे बटोहिया ॥
सुन्दर सुभूमि भैया भारत के भूमि जेहि, जन 'रघुबीर' सिर नावे रे बटोहिया[10] ॥

महेन्द्र मिश्र

आप सारन जिले के 'मिश्रवलिया' ग्राम (नैनी, छपरा) के रहनेवाले थे। आप मामूली पढ़े-लिखे व्यक्ति थे। आप रसिक मनोवृत्ति के प्रेमी जीव थे। आपके गीतों का प्रचार छपरा और आरा की वेश्याओं ने भोजपुरी जिलों में खूब किया है। वास्तव में आपके गीत बहुत सरस, सुन्दर और प्रेममय होते थे। जाली नोट बनाने के अपराध में आपको एक बार सजा भी हो गई थी। सन् १६२० ई० के लगभग आपकी कविताएँ शाहाबाद, छपरा, पटना, मोतिहारी आदि जिलों मे खूब प्रेम से गाई जाती थीं। आपने अनेक तर्जों के गीतों की रचना की है। आपकी कविताओं के दो-एक संग्रह भी छप चुके हैं। आपकी तीन प्रकाशित रचनाओं ('मेघनाथ-वध', 'महेन्द्र-मंजरी' और कजरी-संग्रह') का पता मिला है। आपने रामायण का भोजपुरी में अनुवाद भी किया था, जो अबतक आपके वंशजों के पास है।

(१)

नेहवा[11] लगाके दुखवा दे गइले[12] रे परदेसी सइयाँ[13] ॥टेक॥
अपने त गइले पापी, लिखियो ना भेजे पाती[14],
अइसे[15] निठुर स्याम हो गइले रे परदेसी सइयाँ।
बिरहा जलावे छाती, निंदियो ना आवे राती,
कठिन कठोर जियरा हो गइले रे परदेसी सइयाँ।

१. बाग। २. भृङ्गराज पक्षी। ३. जगमग (निर्मल)। ४. झकोरे के साथ। ५. गरजता है। ६. युगों का। ७-८. जादू-जगाना=मोहिनी डालना (विशेषताओं को याद दिलाता है)। ६. गौरांग चैतन्य महाप्रभु। १०. यह कविता 'रघबीर पत्र-पुष्प' नामक प्रकाशित पुस्तक से उद्धृत है। ११. स्नेह। १२. दे गये। १३. स्वामी, प्रियतम। १४. चिट्ठी। १५. ऐसे।

कहत 'महेन्दर' प्यारे सुनऽहो परदेसी सइयाँ,
उड़ि-उड़ि भँवरा[१] रसवा ले गइले हो परदेसी सइयाँ ॥

(२)

भूमर

अवध नगरिया से अइली बरिअतिया[२] सुनु एरे[३] सजनी[४],
जनक नगरिया भइले सोर[५] सुनु एरे सजनी ॥
चलु-चलु सखिया देखि आईं बरिअतिया, सुनु एरे सजनी,
पहिरऽ न[६] लहरा-पटोर[७] सुनु एरे सजनी ॥
राजा दसरथ जी के प्रान के अधरवा[८] सुनु एरे सजनी,
कोसिला के अधिक पिआर, सुनु एरे सजनी ॥
कहत 'महेन्दर' भरि देखिले नयनवा, सुनु एरे सजनी,
फेर नहीं जुटी[९] संजोग, सुनु एरे सजनी ॥

देवी सहाय

आप शिवभक्त कवि थे और आपकी रचनाएँ बहुत मधुर हुआ करती थीं। आपकी कजली का उदाहरण प्रो० बलदेव उपाध्याय (काशी-विश्वविद्यालय) ने 'कजली-कौमुदी' की भूमिका में दिया है। आपकी भोजपुरी रचनाएँ प्राप्त नहीं हो सकीं। एक ही उदाहरण मिला—

सोहे न तोके[१०] पतलून साँवर-गोरवा[११] ।
कोट, बूट जाकेट, कमीज क्यों,
पहिनि[१२] बने बैलून साँवर-गोरवा ॥

रामवचन द्विवेदी 'अरविन्द'

आप देवघर-विद्यापीठ के साहित्यालंकार हैं। आप के पिता का नाम पं० रामअनन्त द्विवेदी है। आपका जन्म-स्थान दुबौली (नीयाजीपुर, शाहाबाद) है। आप हिन्दी की भी कविताएँ लिखते हैं। आप अपने कई हिन्दी-गद्य-लेखों के लिए पुरस्कृत हो चुके हैं। अपनी भोजपुरी कविता के लिए भी आपको स्वर्ण पदक मिला है। हिन्दी में आपकी कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। आपका 'गाँव के ओर' नामक भोजपुरी कविता-संग्रह प्रकाशित है।

(१)

लड़ाई के ओर

दुसमन देस के दबावे खाती[१३] आवत बाटे[१४],
उठ भइया उठऽ अब देर ना लगाईंजा[१५] ॥
लड़े-भीड़े में तो हम सगरे[१६] प्रसिद्ध बानी[१७],
आवऽ ई[१८] बहादुरी लड़ाई में देखाईंजा[१९] ॥
लाठी लीहीं[२०], सोटा लीहीं, काता[२१] औ कुदारी लीहीं,
हाथ में गँड़ासा लीहीं आगे-आगे धाईंजा[२२] ।
हमनी[२३] के टोली देखि थर-थर जग काँपे,
पानी में भी आवऽ आज आग धधकाईंजा[२४] ॥

---

१. भ्रमर । २. बरात । ३. अरे । ४. सखी । ५. धूम-धाम, शोर । ६. लो । ७. कामदार साड़ी । ८. आधार । ९. संयोग जुटना (मुहावरा)=सुअवसर । १०. तुम्हें । ११. अँगरेजी ठाट-बाट के हिन्दुस्तानी । १२. पहन कर । १३. खातिर, वास्ते । १४. है । १५. लगावें, करें । १६. सर्वत्र । १७. हैं । १८. यह । १९. दिखलावें । २०. लें, धारण करें । २१. छोटी कटारी । २२. दौड़ें । २३. हम लोग । २४, धधका दें, प्रज्वलित करें ।

भीम अरजुन द्रोन हमरे इहाँ[1] के रहन[2],
हमनी भी आज महाभारत रचाइंजा।
महावीर भीम बनी, हनूमान धीर बनीं,
पारथ गँभीर बनी, परले[3] मँचाइंजा॥
तेगा तलवार बान किरिच बन्दूक लेइ[4],
धम-धम-धम-धम रन ओर जाइंजा॥
सामने जे आवे ऊ तऽ सरग[5] सिधावे[6] बस,
छप-छप रुण्ड-मुण्ड काटि के गिराइंजा॥
राना परताप वीर सिवाजी वो सेरसाह,
झाँसीवाली रानी के तो ध्यान जरा लाइंजा॥
लवकुस लइकन मे सीखीं जा बहादुरी वो,
अभिमनु जुवक मे बिहु[7] तोरि आइंजा॥
घोड़ा हहनात बाटे, लोहा झझनात बाटे,
झंडा फहरात बाटे, कदम बढ़ाइंजा॥
डंटा मिले, खंता[8] मिले, तलवार भाला मिले,
जेहि हथियार मिले मे हि लेके धाइंजा॥
गंगा मे पबीतर[9] वो जमुना मे निरमल,
सुन्दर सुभूमि पर दाग ना लगाइंजा॥

(२)

गाँव के ओर

जाहाँ-जाहाँ देखऽ ताहाँ-ताहाँ गाँवबासी लोग,
डेढ़-डेढ़ चउरा[10] के खिंचड़ी पकावता।
मेल-जोल के न बात कतहीं[11] देखात बाटे[12],
सब कोई अपने बेसुरा राग गावता[13]॥
एक दूसरा के न भलाई सोचतारे[14] कोई,
सब कोई अलगे ही डफली बजावता।
मेल वो मिलाप देख पाईले[15] जाहाँ भी कहीं,
करीले[16] चुगुलखोरी भाई के लड़ाईले[17]॥
दूसरा भाई के जब सुनीले बिआह-सादी,
जहाँ तक बनेला बिघिन[18] पहुँचाईले।
अपना कपारे[19] जब परेला[20] बिआह कभी,
घर-घर जाके सिर सबके नवाईले[21]॥
दूसरा में अस-तस[22] अपना में रथ-अस[23],
चलीले मगर नाहीं केहू से चिन्हाईले[24]॥
झूठ के करीले साँच, साँच के करीले झूठ,
तबो हम दुखिया के मुखिया कहाईले॥

१. हमारे यहाँ। २. थे। ३. प्रलय। ४. लेकर। ५. स्वर्ग। ६. सिधारे, गये, स्वर्ग-सिधारना (मुहावरा)=मर जाना। ७. व्यूह। ८. खनित्र (जमीन खोदने का औजार)। ९. पवित्र। १०. चावल (डेढ़ चावल की खिचड़ी पकाना)। ११. कहीं। १२. है। १३. गाते हैं। १४. सोचता है। १५. पाता हूँ। १६. करता हूँ। १७. लड़ाता हूँ। १८. विघ्न। १९. सिर पर। २०. पड़ता है। २१. नवाता हूँ। २२. ऐसा-वैसा। (सुस्त)। २३. रथ की तरह तेज। २४. पहचान में आता हूँ।

एक-दूसरा के खान-पान के छोड़ावे खाती[1],
एड़ी से पसीना हम चोटी ले चढ़ाई ले।
छोट-मोट गाँव बा हमार पर ओकरो में[2],
गोल बधँवाके[3] हम सब के जुझाई ले॥

भिखारी ठाकुर

भोजपुरी के वयोवृद्ध कवि 'भिखारी ठाकुर' पहले शाहाबाद जिले के निवासी थे; पर अब उनका गाँव गंगा के कटाव में पड़ कर सारन जिले में चला आया है। उनके गाँव का नाम कुतुपुर है। वे बहुत कम पढ़े-लिखे हैं। लड़कपन में वे गायें चराया करते थे। जब सयाने हुए, तब अपना जातीय पेशा करने लगे—हजामत बनाने लगे। वे खड़गपुर (कलकत्ता) जाकर अपने पेशे से जीविका उपार्जन करने लगे। वहीं पर रामलीला देखने से उनके मन में नाटक लिखने और अभिनय करने का उत्साह हुआ। उन्होंने भोजपुरी में 'बिदेसिया' नामक नाटक लिखा। उसका अभिनय इतना लोकप्रिय हुआ कि उसे देखने के लिए हजारों दर्शकों की भीड़ होने लगी। वे खड़गपुर से जगन्नाथपुरी भी गये थे। वहाँ उनके मन में तुलसीकृत रामायण पढ़ने का अनुराग उत्पन्न हुआ। 'रामचरितमानस' को वे नित्य पढ़ा करते थे। उसी ग्रन्थ के बराबर पढ़ते रहने से कविता लिखने की प्रेरणा हुई। उनकी भोजपुरी कविता में अनुप्रास के साथ शृंगार, करुण आदि रसों का अच्छा परिपाक हुआ है। उन्होंने कई नाटक समाज-सुधार-सम्बन्धी भी लिखे हैं। उन्होंने एक नाटक-मण्डली भी संगठित की है, जिसके आकर्षक अभिनय की धूम भोजपुरी-भाषी जिलों में बहुत अधिक है। भोजपुरी के सुविस्तृत क्षेत्र की जनता पर उनके नाटकों का अद्भुत प्रभाव देखकर अँगरेजी सरकार ने उन्हें रायसाहब की उपाधि दी थी और प्रचार-कार्य में भी उनसे सहायता ली थी। राष्ट्रीय सरकार से भी उनको पदक और पुरस्कार मिल चुके हैं। आकाशवाणी में भी उनके अभिनय और गीत बड़े चाव से सुने जाते हैं। भोजपुरी में प्रकाशित उनकी रचनाएँ निम्नांकित हैं—(१) बिदेसिया, (२) भिखारी-शंका-समाधान, (३) भिखारी चउजुगी, (४) भिखारी जयहिन्द खबर, (५) नाई-पुकार, (६) कलियुग बहार, (७) बिरहा-बहार, (८) यशोदा-सखी-संवाद, (९) बेटी-वियोग, (१०) विधवा-विलाप, (११) हरि-कीर्त्तन, (१२) भिखारी भजनमाला, (१३) कलयुग बहार-नाटक, (१४) बहरा-बहार, (१५) राधेश्याम-बहार, (१६) घीचोर-बहार, (१७) पुत्रवध नाटक, (१८) श्रीगंगास्नान, (१९) भाई विरोध, (२०) ननद-भौजाई, (२१) नवीन बिरहा, (२२) चौवर्ण पदवी, (२३) बुढ़ साला का बयान आदि।*

(१)

छछनवलऽ[4] जिअरा बाबू[5] मोर,
रस के बस मतवाल भइल[6] मन, चढ़ल जवानी जोर॥
दिनो रात कबो कल ना परत बा[7], गुनत-गुनत[8] होत भोर॥
छछनवलऽ जिअरा ०॥१॥
बाल-बिरिध[9] एक संग कई दीहल[10], पथल[11] के छाती बा तोर।
कहत 'भिखारी' जवानी काल बा, मदन देत झकझोर॥
छछनवलऽ जिअरा ०॥२॥
—('बेटी-वियोग' से)

१. खातिर, वास्ते। २. उसमें भी। ३. गोल बाँधकर=दल बनाकर। *इन सब पुस्तकों के प्रकाशक हैं—श्री दूधनाथ। पुस्तकालय एण्ड प्रेस, ६३ सूतापट्टी, कलकत्ता। ४. तरसाया, तड़पा-तड़पाकर ललचाया। ५. बाप, पिता। ६. हुआ। ७. पड़ता है। ८. सोचते-सोचते। ९. वृद्ध। १०. कर दिया। ११. पत्थर।

(२)

चलनी[१] के चालल[२] दुलहा सूप के झटकारल[३] हे।
दिअँका[४] के लागल बर दुआरे[५] बाजा बाजल हे॥
आँवा के पाकल[६] दुलहा झाँवा[७] के झारल[८] हे।
कलछुल[९] के दागल बकलोलपुर[१०] मे भागल[११] हे॥
सासु के अँखियाँ में अन्हवट[१२] बा छावल[१३] हे।
आइ के[१४] देखऽ बर के पान चभुलावल[१५] हे॥
आम लेखा[१६] पाकल[१७] दुलहा गाँव के निकालल[१८] हे।
अइसन बकलोल[१९] बर चटक[२०] देवा[२१] के भावल[२२] हे॥
मउरी[२३] लगावल दुलहा जामा पहिरावल हे।
कहत 'भिखारी' हउवन[२४], राम के बनावल[२५] हे॥

—('बेटी-वियोग' मे)

(३)

गवना कराइ[२६] सैंया घर बइठवले[२७] से,
अपने लोभइले[२८] परदेस रे बिदेसिया॥
चढ़ली जवनियाँ बैरन[२९] भइली[३०] हमरी मे,
के मोरा हरिहें[३१] कलेस रे बिदेसिया॥
दिनवाँ बितेला सइयाँ बटिया[३२] जोहत तोर,
रतिया बितेला जागि-जागि रे बिदेसिया॥
घरी राति गइले[३३] पहर राति गइले से,
धधके करेजवा में आगि रे बिदेसिया॥
अमवाँ मोजरि गइले[३४] लगले टिकोरवा[३५] से,
दिन-पर-दिन पियराय[३६] रे बिदेसिया॥
एक दिन बहि जइहें जुलमी बयरिया[३७] से॥
डाढ़ पात जइहें भहराय[३८] रे बिदेसिया॥
भभकि[३९] के चढ़लीं मैं अपनी अँटरिया से,
चारों ओर चितवों चिहाइ[४०] रे बिदेसिया॥

---

१. छलनी। २. चाला हुआ (छलनी में आटा चालने पर चोकर बाहर निकल जाता है। दुलहे का मुँह भी चोकर की तरह रुखड़ा है)। ३. फटका हुआ (सूप से फटकने पर अन्न में से कूड़ा-कचरा निकल जाता है, दुलहे की सूरत वैसी ही है।) ४. दीमक (दुलहे के चेहरे में दीमक लगने का भाव है, शीतला के गहरे और घने दाग पड़ जाना)। ५. द्वार। ६. पका हुआ (कुम्हार के आँवा में पकने पर मिट्टी के बर्तनों में जैसे लहसन का दाग पड़ जाता है, वैसे ही दुलहे के बदन में धब्बे हैं।) ७. पककर काली हुई ईंट। ८. झाड़ा हुआ आँवा से मजने पर देह में जैसा रुखड़ापन आ जाता है, वैसा ही दुलहे का रुखड़ा शरीर है। ९. कलछी। १०. बकलोलपुर=बौड़मों और गँवारों का गाँव। ११. भागा हुआ—अर्थात्, इस दुलहे का गुजर बेवकूफों में भी न हो सका। १२. अँधेरा। १३. छाया है। १४. आकर के। १५. चबा-चबाकर मुह में घुलाना। १६. सदृश। १७. पका हुआ (पका आम=महावृद्ध मरणासन्न)। १८. निकाला हुआ, खदेड़ा हुआ। १९. बे-शऊर। २०. चटकीला। २१. लड़की का बाप। २२. अच्छा लगा। २३. मौर। २४. है। २५. बनाया हुआ (राम का बनाया, व्यंग्यपूर्ण मुहावरा)। २६. कराकर। २७. बैठाया। २८. लुभा गया। २९. दुश्मन। ३० हुई। ३१. हरण करेंगे। ३२. बाट, राह (बाट जोहना=प्रतीक्षा करना)। ३३. बीत गई। ३४. मुँजराना, मंजरी प्रस्फुटित होना। ३५. आम का छोटा टिकोला। ३६. पियराना, रंग चढ़ना। ३७. बयार (जुल्मी हवा=आँधी)। ३८. भ्रष्ट हो जायगा, गिर जायगा। ३९. चिन्ता-ज्वाला से व्यग्र होकर। ४०. चौंककर। (अन्तिम पंक्तियों में रसाल-वृक्ष से कामिनी के तन की तुलना है। मंजरी से यौवन के प्रस्फुटन का, टिकोला से छाती उठने का, पियराने से जवानी की लाली चढ़ने का, आँधी से कामोत्तेजना के झकोरे का और डाल-पात गिरने से पथभ्रष्ट हो जाने का संकेत है।)

कतहू न देखों रामा सइयाँ के सुरतिया से,
जियरा गइले मुरझाइ रे बिदेसिया ॥
—('बिदेसिया' नाटक से)

(४)

मकइया[१] हो ! तोर गुन गुँथव[२] माला ॥
भात मे तरत भव, लावत गरीब लव,[३] पूरा-पूरा पानी दिश्राला[४] ॥टेक॥
भुँजा[५] भरि झोरी झारी[६] जहँतहँ खोरी-खारी[७] खात बाड़न[८] बाल गोपाला ॥
धन[९] हऽ धनहरा[१०] ढाठा[११] खाले लगहर[१२] नाठा,[१३] लेंढ़ा[१४] घोनसारी[१५] में झोंकाला[१६] ॥
सातू-मरचाई-नून खइला[१७] मे सूखेला[१८] खून, साधू लेखा[१९] रूप बनी जाला ॥
दारा[२०] गूर[२१] दही मन, कृष्ण कृष्ण कहीं-कहीं, मुँहवाँ में माजा[२२] बुझाला[२३] ॥
भुट्टा-भगवान मे बिमान खास आई जात, मन बैकुण्ठे चलि जाला[२४] ॥
करत 'भिखारी' खेला सूरदास[२५] जइहन मेला, गंगा तीरे बहुत बोआला ॥
मकइया हो ! तोर गुन गुँथव माला ॥
—('भिखारी-भजन-माला' से)

दूधनाथ उपाध्याय

आपका जन्म हरिछपरा (बलिया) में हुआ था। आप 'रामचरितमानस' और बँगला 'कृतबास-रामायण' के बड़े अनुरागी थे। आपके पिता पं० शिवरतन उपाध्याय थे। आपने एक बार गोरक्षा के आन्दोलन उठाया था, जिसका प्रबल प्रभाव केवल बलिया जिले में ही नहीं, अन्य भोजपुरी जिलों में भी पड़ा था। उन्हीं दिनों आपने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'गो-विलाप-छन्दावली' की रचना चार भागों में की थी। उसकी भाषा ठेठ भोजपुरी है। देहात की जनता में आपकी रचनाएँ बड़ी प्रभावशालिनी सिद्ध हुई हैं। आप बड़े अच्छे वक्ता भी थे। आपने 'हरे राम पचीसी', 'हरिहर शतक', 'भरती का गीत', 'गो-चिट्ठकी-प्रकाशिका' आदि पुस्तकों की भी रचना की है। आप सरल, बोलचाल के शब्दों में दुरूह और गहन विषयों को सुन्दरतापूर्वक व्यक्त कर देने में बड़े प्रवीण थे। *

आजि कालिह[२६] गइया के दसवा[२७] के देखि-देखि
हाइ हाइ हाइ रे फाटति बाटे छतिया।
डकरि-डकरि डकरति बाटे राति-दिन,
जीभिया निकालि के बोलति बाटे बतिया[२८]।
ताहू पर हाइ निरदइया[२९] हतत[३०] बाटे,
गइया का लोहू[३१] मे रँगत बा धरतिया।
अगवाँ[३२] के दुख-दुरदसवा[३३] के सोचि-सोचि,
कोटि जुग नियर[३४] बीतति बाटे रतिया ॥१॥

---

१. मकई, भुट्टा। २. गूँथूँगा (गुणगान करूँगा)। ३. लव लगाना=नेह लगाना। ४. दिया जाता है (मकई का भात सींझने समय बहुत पानी सोखता है)। ५. चबेना। ६. झोली की झोली। ७. गली-गली में। ८. हैं। ९. धन्य। १०. मकई के पौधे में से निकली हुई मंजरी, जो धान की बाल की तरह होती है। ११. मकई के पौधे का डंठल। १२. दुधार गाय-भैंस। १३. बिसुखी हुई गाय-भैंस। १४. मकई के दाने निकाल लेने के बाद, जो खुखड़ी बचती है। १५. भाड़, जिसमें सूखे पत्ते झोंककर अन्न भूनने के लिए बालू गरम की जाती है। १६. झोंका जाता है। १७. खाने से। १८. सूखता है १९. सदृश। २०. मकई की दलिया। २१. गुड़। २२. मजा। २३. मालूम पड़ता है। २४. चला जाता है। २५ जन्मांध। * 'बलिया के कवि और लेखक' पुस्तक के आधार पर—लेखक। २६. आज-कल। २७. दशा। २८. बात। २९. निर्दय। ३०. वध करता है। ३१. लहू। ३२. अगले युग। ३३. दुर्दशा। ३४. सदृश।

हमनी का सब केहू गइया का दुखवा के,
तनिको तिरिनवो[1] नियर ना गनत बानी[2]।
रात-दिन कठिन-कठिन दुख देखि-देखि
आगा-पाछा बतिया के कुछुना सोचत बानी॥
आजि-काल्हि हम खइला-खइला बिनु मूअतानी[3],
अगवाँ त एहु से[4] कठिन दुख देखतानी।
सिरी रघुनाथ जी हरहु[5] दुख गइया के,
हमनी का दुख के समुन्दर डूबत बानी॥२॥

माधव शुक्ल

पं० माधव शुक्ल हिन्दी के प्रतिष्ठित कवि थे। आप प्रयाग के निवासी थे। आपका पूरा परिचय 'कविता-कौमुदी' के दूसरे भाग में छपा है। आपके पिता का नाम पं० रामचन्द्र शुक्ल था। आप वीर रस के अच्छे अभिनेता थे। आपकी भोजपुरी में इलाहाबाद की बोली की झलक है। आपके 'महाभारत' नाटक (पूर्वार्द्ध) में एक भोजपुरी सोहर मिलता है। वह नीचे दिया जाता है—

सोहर

जुग जुग जीवें तोरे ललना[6], झुलावें रानी पलना[7], जगत सुख पावइं[8] हो।
बजै नित अनन्द बधैया[9], जियें पाँचौ[10] भैया, हमन कहँ मानइं हो।
धन धन कुन्ती तोरी कोख[11], सराहैं सब लोक, सुमन बरसावइं[12] हो॥
दिन दिन फूलरानी[13] फूलें, दुआरे हाथी झूलें, सगुन[14] जग गावइं हो॥

राय देवीप्रसाद 'पूर्ण'

आपका पूर्ण परिचय 'कविता कौमुदी' (भाग द्वितीय) में प्रकाशित है। आप कानपुर के निवासी बड़े प्रसिद्ध वकील और हिन्दी के यशस्वी सुकवि थे। आप स्वनामधन्य आचार्य महावीर-प्रसाद द्विवेदी के परम मित्र थे। आपकी एक भोजपुरी रचना 'कविता कौमुदी' के दूसरे भाग से यहाँ दी जाती है। इसमें उत्तर-प्रदेश की भोजपुरी का पुट है—

बिरहा

अच्छे-अच्छे फुलवा बीन रे मलिनियाँ[15] गूँधि लाव नीको-नीको[16] हार।
फुलन को हरवा गोरी गरे[17] डरिहौं[18] सेजिया माँ होय रे बहार॥
हरिभजना—करु गौने कै साज॥
चैत[19] मास की सीतल चाँदनी रसे-रसे[20] डोलत बयार।
गोरिया डोलावै बीजना[21] रे पिय के गरे बाहीं डार॥
हरिभजना—पिय के गरे बाहीं डार॥

१. तृण। २. गिनते या समझते हैं। ३. मरते हैं। ४. इससे भी। ५. हरण करो। ६. बच्चा। ७. पलना, झूला ८. पाता है। ६. आनन्द-बधावा। १०. पंच पाण्डव। ११. गर्भ (कुक्षि)। १२. बरसाते हैं। १३. फूल के समान सुकुमार रानी। १४. मंगल-गीत। १५. मालिन। १६. अच्छे-अच्छे। १७. गले में। १८. डालूँगा। १६. चैत्र मास। २०. मन्द-मन्द। २१. व्यजन, पंखा।

बागन माँ कचनरवा फूले बन टेसुआ[१] रहे छाय।
सेजिया पै फूल झरत रे जबही हँसि-हँसि गोरी बतराय[२]॥
हरिभजना—हँसि-हँसि गोरी बतराय।
हर बर साइति[३] सोधि[४] दे बह्मनवा[५] भरनी[६] दिहिसु बरकाय[७]।
पाछे रे जोगिनिआँ[८] सामने चँदरमा गोरिया का लावहुँ लेवाय॥
हरिभजना—गोरिया का लावहुँ लेवाय॥
कोउ[९] रे पहिनै मोतियन माला, कोउ रे नौनगा हार॥
गोरिया सलोनी मैं करौं रे अपने गरे का हार॥
हरिभजना—अपने गरे का हार॥
आमन कूकै कोइलिया[१०] रे मोरवा करत बन सोर।
सेजिया बोलै गोरिया रे सुनि हुलसै[११] जिय मोर॥
हरिभजना—सुनि हुलसै जिय मोर॥
काहे का बिसाहौं[१२] रंग पिचकरिया काहे धरौं अबिरा[१३] मँगाय॥
होरी[१४] के दिनन माँ गोरी[१५] के तन माँ रंग रस दुगुन दिखाय॥
हरिभजना—रंग रस दुगुन दिखाय॥
अबहीं बुलावौ नौवा[१६] बरिया[१७] अबहीं बुलावहु कहार।
गोरी के गवन की साइति आई करि लाउ डोलिया तयार॥
हरिभजना—करि लाउ डोलिया तयार॥

शायर मारकण्डे *

मारकण्डेजी ब्राह्मण थे। बनारस के सोनारपुरा मुहल्ले में शिवालाघाट के रहनेवाले थे। आपने नृत्य कला में काफी ख्याति प्राप्त की थी। आपकी कजलियाँ मशहूर थीं। आपने विदूषक-मण्डली भी कायम कर ली थी। आपके अखाड़े की शिष्य-परंपरा अब भी है। आपकी मृत्यु सन् १९४० ई० में हुई थी। आपकी कविता की भाषा बनारसी भोजपुरी है।

(१)

कजली

चरखा मँगइबै[१८] हम, सइयाँ से रिरिआयके[१९], अलईपुरा[२०] पठायके ना।
काते राँड़ पड़ोसिन घर में, संझा-सुबह और दोपहर में,
हमको लजवावे गान्धी की बात सुनायके, ऊँच नीच समुझायके ना॥
हमहू कातब कल से चरखा एक मँगाय के, रुई घर धुनवाय के ना
रखबे[२१] सूत स्वदेशी कात, मानब गान्धी जी की बात॥
गोइयाँ[२२] बढ़ी सूत पहिनब,[२३] आपन बिनवाय[२४] के,
चरखा रोज चलाय के ना॥

१. टेसू (पलाश) का फूल। २. बातें करती है। ३. शुभ घड़ी। ४. शोध दो। ५. ब्राह्मण, पंडित। ६. भद्रा। ७. बचा कर। ८. योगिनी सुखदा वामे=यात्रा के समय जोगिनी का पीछे या वामभाग में रहना शुभ है और चन्द्रमा का सामने या दाहिने रहना सुखद है। ९. कोई। १०. कोयल। ११. हुलसता है, प्रसन्न होता है। १२. खरीदूँ। १३. अबीर। १४. होली। १५. सुन्दरी। १६. नाई, हजाम। १७. बारी (एक जाति)। * 'मारकंडेदास' नामक एक कवि का परिचय रचनाओं के उदाहरण-सहित, इसी पुस्तक के १८८ पृष्ठ पर दिया गया है। दोनों भिन्न जान पड़ते हैं; क्योंकि शायर मारकंडे ने राष्ट्रीय भाव की कविता लिखी है।—लेखक। १८. मँगाऊँगी। १९. हठ करके। २०. बनारस के एक मुहल्ले का नाम, जिसमें अधिकतर जुलाहे रहते हैं। २१. रखूँगी। २२. साथी। २३. पहनूँगी। २४. बुनवाकर।

कुरता लइकन के सीअइबे,[1] बाकी सइयाँ के पहिरइबे।
अपनी धोती पहनब धानी रंग रँगाय के, चलब फिर अठलायके ना॥
केहू तरह बिताइब आज, कल से हमहू लेब सुराज।
कजरी 'मारकण्डे' की गाय, पीउनी घरे बनाय के ना॥

(२)

का सुनाईं हम भूडोल के बयनवा[2] ना।
हो बयनवा ना, हो बयनवाँ ना॥ टेक॥
जबकी[3] आयल तो भूडोल, गैल पृथ्वी जो डोल।
हीले लागल[4] सारे सहर[5] के मकनवाँ ना॥
जेहिया[6] अमावस के मान, रहलें कुम्भ के असनान।
वोही रोज पापी आयल[7] तूफनवा ना॥
करके आयल हर-हर-हर, गिरल केतनन[8] के घर।
जबकी डोल गइलैं घर औ अगनवाँ ना॥
सहर दरभंगा अउर मुंगेर, भइलैं मुजफ्फरपुर में ढेर।
चौपट कइलस[9] लेके अनगिनती मकनवाँ ना॥
मिली काहे के मिजाज[10] कहत 'मारकण्डे' महराज।
अब तो आय गइले हे सखी! सवनवाँ[11] ना॥*

रामाजी

आप सारन जिले के ग्राम सरेयाँ (डा० हुसेनगंज, थाना सिवान) के रहनेवाले सन्त गृहस्थ कवि थे। आप राम के बड़े भक्त थे। तमाम घूम घूम कर रामजी का कीर्त्तन किया करते थे। आपकी रचना भोजपुरी और खड़ीबोली दोनों में हुआ करती थी। सन् १९२९-३० ई० में आपके संकीर्त्तन की बड़ी धूम थी। आपकी मृत्यु ३० और ४० ई० के बीच कभी हुई। 'कल्याण' के 'सन्त-अंक' में आपका जिक्र किया गया है। आपकी कुछ रचनाओं में अवधी भोजपुरी का मिश्रण है। 'श्री रामजन्म बधैया', और 'सीताराम-विवाह-संकीर्त्तन' † नामक पुस्तिका से निम्नलिखित गीत उद्धृत किये जाते हैं—

(१)

सोहर

मचिया[12] बैठल रानी कोसिला बालक मुँह निरखेली[13] हे।
ललना मेरा बेटा प्रान के आधार; नयन बीच राखबि[14] हे॥
कोसिला का भैले श्री रामचन्द्र, केकई का भरत[15] नु हे।
ललना लछुमन-सत्रुहन सुमित्रा का, घर-घर सोहर हे॥
गाई[16] के गोबर मँगाइ के, अँगना लिपाइल[17] हे।

---

१. सिलाऊँगी। २. वर्णन। ३. जिस समय। ४. डगमगाने लगा। ५. नगर। ६. जिस दिन। ७. आया। ८. कितनों का। ९. किया। १०. मिजाज मिलना (मुहावरा)=चंचल चित्त की स्थिति का पता लगना। ११. श्रावण मास (सावन की बहार आने पर भी भूकम्पध्वस्त स्थानों के लोगों के मन में उल्लास नहीं है।) * सन् १९३४ ई० की १४ जनवरी को, माघ-संक्रान्ति के दिन, बिहार में भीषण भूकम्प हुआ था, उसी का वर्णन है। † दोनों पुस्तिकाओं का प्रकाशक—भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, बनारस। वि० सं० २००७ प्रकाशन-काल। १२. एक आदमी के बैठने-भर की छोटी-सी खाट। १३. देखती हैं। १४. रखूँगी। १५. पादपूर्त्यर्थक शब्द। १६. गाय। १७. लीपा गया।

ललना गज मोती चौका[1] पुरइल[2], कलसा धराइल हे ॥
पनवा[3] ऐसन बतुआ पातर सुपरिय[4] ऐसन दुरहुर[5] हे।
ललना फुलवा ऐसन सुकुमार, चन्दनवा[6] ऐसन गमकेला[7] हे ॥
'रमा' जनन के सोहर गावेले[8] गाई के सुनावेले[9] हे।
ललना जुगजुग बाढ़े एहवान[10] परम फल पावेले हे ॥

(२)

तिलक-मङ्गल-गान

आजु अवधपुर तिलक अइले[11] ॥ टेक ॥
पाँच बीरा[12] पान, पचीस सुपारी, देत दुलहकर हाथ ॥
पीतरंग धोती जनक पुरोहित, पहिरावत[13] हरषत[14]।
चौका चन्दन पुरि[15] बैठे सुन्दर दुलहा, सबमें सुन्दर रघुनाथ ॥
साल दोसाली जड़ित कनकमनि, बसन बरनी नाहिं जात।
कान में कनक के कुण्डल सोभे, क्रीटमुकुट सोभे माथ ॥
नरियल चन्दन मंगल के मूल, देत असर्फि सुहाथ।
दही पान लेई जनक पुरोहित, तिलक देत मुसकात ॥
देवगन देखि सुमन बरसावत[16] हरष न हृदय समाय[17]।
'रामा' जन यह तिलक[18] गावे, बिधि[19] बरनी नहीं जाय ॥

चंचरीक

'चंचरीकजी' भैंसाबाजार (गोरखपुर) के रहनेवाले हैं। आपका पूरा नाम ज्ञात नहीं हो सका। आपकी रची हुई 'ग्राम गीतांजलि' नामक पुस्तक का द्वितीय संस्करण मिला है। यह हितैषी प्रिंटिंग वर्क्स (बनारस) द्वारा सन् १९३५ ई० में छपी थी। यह पुस्तक २०८ पृष्ठों की है। इसमें राजनीतिक जागृति के विभिन्न विषयों के ग्राम गीत हैं। सोहर, झूमर, जँतसार, विवाह, गाली आदि सभी तरह के गीत इसमें हैं। आपने इन गीतों की रचना सन् १९२५ से १९३२ ई० तक की अवधि में की थी। इस पुस्तक का परिचय लिखते हुए पं० रामनरेश त्रिपाठी ने आपकी बड़ी प्रशंसा की है। इस पुस्तक के सम्बन्ध में देश के महान् नेताओं ने भी प्रशंसात्मक सम्मति प्रकट की है।

चचरीक जी ने अपने गीतों के विषय में स्वयं लिखा है—'मैंने प्रथम संस्करण के प्रकाशित होने के पहले इस 'गीत जलि' के दो चार गीत नमूने के तौर पर महामना पं० मदनमोहन मालवीय और श्रद्धेय डा० भगवानदास जी को सुनाये थे, जिन्हें सुनकर मालवीयजी का गला करुणा के मारे भर आया। पर, श्रीभगवान दास जी तो इसे सम्हाल नहीं सके। अनेक व्यक्तियों के सामने उनकी आँखों से सावन भादो की झड़ी लग गई। मेरी भी आँखें डबडबा आईं। श्रद्धेय भगवानदासजी ने खुले तौर पर कहा कि जो रस मुझे इन गीतों में मिला, वह बड़े काव्यों में भी नहीं मिला।'

१-२. चौका पुरना=मंगल-कर्म में जमीन को गोबर से पोतकर तण्डुलचूर्ण से चित्रित करना। ३. ताम्बूलपत्र। ४. सुपारी, पूँगीफल। ५. चंचल। ६. चन्दन। ७. सुगन्ध देता है। ८. गाते हैं। ९. सुनाते हैं। १०. नारी का सुहाग। ११. आया। १२. बीड़े। १३. पहनाते हुए। १४. प्रसन्न होते हैं। १५. पूर करके। १६. बरसाते हैं। १७. समाता है। १८. विवाह के पहले वर-पूजन-विधि। १९. तैयारी, आयोजन।

(१)

सोहर

जेहि घर जनमे ललनवाँ[१] त ओहि घर धनि-धनि[२] हो।
रामा, धनि-धनि कुल-परिवार, त धनि-धनि लोग सब हो॥
बँसवा के जरिया[३] जनमई बाँस तऽ रेड़वा के रेंड़ जनमइ[४] हो।
रामा, देवी कोखिया[५] जनमें देवतवा, त देसवा के करम जागवइ हो॥
होनहर बिरवा के पतवा चीकन भल लागइ हो[६]।
रामा, पुतवा के ओइसन[७] ललनवा[८] निरखि मन बिहसत हो॥
देहु-देहु सखिया असीस, ललन हुँवा[९] चूमहु हो।
रामा, गोदिया में लेइ लपटावहु, हियरा जुड़ावहु हो॥
भारत जननी के बनिहें सेवकवा, त मोर पूत होइहहुँ हो।
रामा, अस पूत जुग जुग जीयें तहर[१०] हम असीसत हो॥

(२)

सोहर

कोसिला के गोदिया में राम, कन्हैया जसोदा के हो॥
रामा, साँवर बरन भगवान, त पिरथी[११] के भार हरले हो॥
जननी के कोखिया में मोता[१२], तिलक[१३], लाला[१४], देसबन्धु[१५] हो॥
रामा, गाँधी बाबा, बल्लभ[१६], जवाहिर तऽ देसवा के भाग जगले हो॥
कमला[१७], सरोजनि[१८], अस देवी, तऽ घर-घर जनमइ हो॥
रामा, राखि लिहलीं देसवा के लाज, तऽ धनि धनि जग भइलें[१९] हो॥
बहुअर[२०] के कोखिया में सन्तति, ओइसहि[२१] जनमहि हो॥
रामा, कुल होखे अब उजियर[२२], बधइया[२३] भल बाजइ हो॥
धनि-धनि बहुअरि भगिया[२४], तऽ अस जनमब सन्तति हो॥
रामा, देखि देखि पुतवा के मुँहवा, तऽ हियरा[२५] उमड़ि आइ हो॥

मन्नन द्विवेदी 'गजपुरी'

श्रीमन्नन द्विवेदी का जन्म स्थान गजपुर (पो० बाँसगाँव, गोरखपुर) था। आपके पिता हिन्दी के कवि पं० मातादीन द्विवेदी थे। गजपुरीजी हिन्दी के अच्छे कवि थे। आप भोजपुरी के भी बड़े सुन्दर कवि थे। आप भोजपुरी रचनाएँ 'मोछिंदर नाथ' के उपनाम से लिखा करते थे। आपके जोगीड़ा गीत भी बहुत प्रसिद्ध थे। आपकी 'सरवरिया' नामक भोजपुरी कविता पुस्तक आई० सी० एस्० परीक्षा के पाठ्यक्रम में थी। आपका परिचय कविता-कौमुदी के द्वितीय भाग में प्रकाशित है।

(१)

खुब्बे[२६] फुलाइल बा[२७] सरसो ओढ़ने बाटे सेमर लाल दुलाई[२८]।
बारी[२९] में कोइलि[३०] बोलनिआ[३१], महुआ[३२] के टपटप देन सुनाई॥

---

१. बच्चा। २. धन्य-धन्य। ३. जड़, मूल। ४. जनमता है। ५. गर्भ, कुक्षि। ६. होनहार बिरवान के होत चीकने पात (कहावत)। ७. वैसे। ८. लड़का। ९. पैदा हुआ। १० तुम्हारे। ११. पृथ्वी। १२. मोतीलाल नेहरू। १३. लोकमान्य तिलक। १४. लाला लाजपतराय १५. देशबन्धु चितरंजनदास। १६. सरदार वल्लभभाई पटेल। १७. श्रीमती कमला नेहरू। १८. श्रीमती सरोजिनी नायडू। १९. हुआ। २०. वधू। २१. वैसी ही। २२. उज्ज्वल। २३ बधावा। २४. भाग्य। २५. हृदय। २६. खूब, अच्छी तरह। २७. फूली हुई है। २८. हलकी-नफीस रजाई। २९. फुलवारी, उपवन। ३०. कोकिल। ३१. कूकती है। ३२. मधूक वृक्ष।

के मोरा झाँझ मृदंग बजाई आ[१] के संग झूमिके झूमरि[२] गाई।
के पिचकारी चला-चला मारी आ के अँगना[३] में अबीर उड़ाई॥

(२)

आवऽ ई त[४] घर आपन बा का दुआरे खड़ा हो सँकोचत बाटऽ।
का घर के सुध आवतिआ[५] बा खम्हिया[६] मे खड़ा होके सोचत बाटऽ॥
मान जा बात हमार कन्हैया चलऽ हमरे घर भीतर आवऽ
नींद अकेले न आवतिआ कहनी[७] कहिहऽ कुछ गीत सुनावऽ॥

(३)

काटि कसइली[८] मिलाइ के चूना तहाँ हम बैठि के पान लगाइब[९]॥
फागुन में जो लगी गरमी तोहके[१०] अँचरा[११] मे बयार डुलाइब॥
बादर जो[१२] बरसे लगिहें तोहके बछरू[१३] घरवा में बन्हाइब[१४]।
भीजि[१५] के फागुन के बरखा[१६] तोहँके हम गाके मलार सुनाइब॥

(४)

जाये के कइसे[१७] कहीं परदेसी रहऽ भर-फागुन[१८] चइत[१९] में जइहऽ[२०]॥
चीठी लिखा के तुरन्त पठइहऽ तिलाक[२१] हऽ[२२] जो हमके भुलवइहऽ[२३]।
चार महीना घरे रहिहऽ[२४] बरसाइत[२५] का पहिले चलि अइहऽ॥
धानी दुपट्टा ओढ़ा हमके तुहुँ[२६] सावन में झुलुआ झुलवइहऽ॥*

सरदार हरिहर सिंह

आप चौंगाईं (शाहाबाद) के निवासी हैं। आपने सन् १६२१ ई० के आन्दोलन में असहयोग किया था। तब से आज तक काँगरेस के सेवक रहे। दो बार विधान सभा के सदस्य रह चुके हैं। आपकी भोजपुरी-रचनाएँ सुन्दर होती हैं। राष्ट्रीय कविता सुन्दर लिखते हैं। आपके कई राष्ट्रीय गीत जन-आन्दोलन के समय भोजपुरी जिलों में खूब प्रचलित थे।

(१)

महात्मा गांधी के प्रति

धीरे बहु धीरे बहु पछुआ[२७] बेअरिया[२८]
घमवा[२९] मे बदरी[३०] करहु रखवरिया[३१]।
जुग-जुग जोहे जेहि जगत पुरातन
धरती पर उतरेला पुरुष सनातन
नाहीं बड़ए[३२] संख-चक्र, नाहीं गदाधारी
नाहीं हउवे[३३] दसरथ-सुत धनुधारी,
कान्हे[३४] पट पीत नाहीं, मुरली अधर नाहीं

१. और। २. एक प्रकार का लोकगीत। ३. आँगन, प्रांगण। ४. यह तो। ५. आती है। ६. खंभा, स्तम्भ (खंभे से लगकर खड़ा होने का मतलब—ठिठककर संकोच में पड़ जाना।) ७. कहानी। ८. सुपारी। ९. लगाऊँगी, बनाऊँगी। १०. तुमको। ११. अंचल। १२. यदि। १३. गाय का बछड़ा, गोवत्स। १४. बँधवाऊँगी। १५. भींगकर। १६. वर्षा। १७. कैसे। १८. फाल्गुन मास-भर। १९. चैत्र मास। २०. जाओगे। २१. शपथ। २२. है। २३. बिसार देना। २४. रह जाना। २५. वर्षा ऋतु। २६. तुम्हीं। २७. पश्चिमी। २८. वायु। २९. धूप, घाम। ३०. बादल। ३१. रक्षक। ३२. है। ३३. है। ३४. कन्धे पर। *यह कविता आरा नगर (बिहार) से प्रकाशित मासिक 'मनोरंजन' के प्रथम वर्ष के एक अंक में छपी थी।

साक्य-रजपूत[1] नाहीं, बनल भिखारी।
अबकी[2] अजब रूप धइले गिरधारी॥

(२)

राष्ट्रीय गीत

चलु भैया चलु आजु सभे जन हिलिमिलि
सूतल[3] जे भारत के भाई के जगाईंजा[4] ॥१॥
अमर[5] के कीरति, बड़ाई दादा कुँअरसिंह[6] के,
गाइ-गाइ चलु सूतल जाति के जगाईंजा ॥२॥
देसवा के बासिन[7] में नया जोस भरि-भरि,
मुलुक[8] में आजु, नया लहर चलाईंजा ॥३॥
मियाँ, सिख, हिन्दू, जैन, पारसी, कृस्तान मिलि,
लाजपत के खूनवा के बदला चुकाईंजा[9] ॥४॥
सात हो समुन्दर पार टापू में फिरंगी[10] रहे,
उन्हुका[11] के चलु उनका घरे पहुँचाईंजा[12] ॥५॥
गाँधी अइसन जोगी भैया जेहल[13] में परल[14] बाटे,
मिलि-जुलि चलु आजु गाँधी के छोड़ाईंजा ॥६॥
दुनिया में केकर[15] जोर गाँधी के जेहल राखे,
तीस कोटि[16] बीच चलु अगिया लगाईंजा[17] ॥७॥
ओही अगिया जरे भैया जुलुमी फिरंगिया से,
उन्हुका के जारि फिर रामराज लाईंजा[18] ॥८॥
गांधी के चरनवा के मनवा में धियान धरि,
असहयोग-व्रत चलु आजु सफल बनाईंजा ॥९॥
बघवा का पंजवा में माई[19] हो परल बाड़ी,[20]
चलु बाघ मारि आजु माई के छोड़ाईंजा ॥१०॥
बिपति के मारल भाई पड़ल जा बेहोस होके,
माई दुखवे-खातिर[21] चलु गरदन कटाईंजा ॥११॥
राज लिहले[22] पाट लिहले धरम के नास कइले,
चलु अब फिरंगिया से इजति बचाईंजा ॥१२॥
तीस कोटि आदमी के देवता[23] जेहल राखे,
उन्हुका के चलु ओकर[24] मजवा[25] चखाईंजा ॥१३॥

परमहंस राय

आप 'हरप्रसाददास जैन-कॉलेज' (आरा) के वाणिज्य-विभाग के अध्यक्ष हैं। आप शाहाबाद जिले के बालबाँध ग्राम (समराँव, पीरो) के निवासी हैं। आपकी रचनाएँ बड़ी सुन्दर होती हैं।

१. बुद्धदेव। २. इस बार। ३. सोया हुआ। ४. हमलोग जगावें। ५. अमर सिंह (कुँवर सिंह के भाई।) ६. सन् १८५७ के सिपाही-विद्रोह के नेता। ७. बसनेवाले। ८. मुल्क, देश। ९. हमलोग चुकावें। १०. अँगरेज ('फॉरेन्' अँगरेजी शब्द से बना जान पड़ता है, जिसका अर्थ विदेशी है।) ११. उनको। १२. हमलोग पहुँचा दें (खदेड़ दें।)। १३. जेलखाना। १४. पड़े हुए हैं। १५. किसका। १६. भारत के तीस करोड़ निवासी। १७. आग लगावें—विद्रोह भड़कावें। १८. हमलोग लावें। १९. भारतमाता। २०. पड़ी हुई है। २१. दुःख के वास्ते। २२. ले लिया। २३. गांधीजी को। २४. उसका। २५. मजा चखाना—अच्छी तरह बदला चुकाना।

आप संस्कृत और हिन्दी के छन्दों में भोजपुरी कविता लिखने के अभ्यस्त हैं। आपके कविता पाठ का ढंग इतना सुन्दर, मधुर और सरस है कि सुनकर श्रोता मुग्ध हो जाते हैं। आप शाहाबाद जिला-भोजपुरी-साहित्य-सम्मेलन के अध्यक्ष हो चुके हैं। आप विदेश-यात्रा भी कर चुके हैं।

गाँव के ओर

चलीं[1] जा आज गाँव के किनार[2] में किआर[3] में।
खेसारी[4] बूँट[5] मटर[6] से भरल-पूरल[7] बधार[8] में॥
पहिनले बाटे[9] तोरिया[10] बसंती रंग चुनरिया।
गुलाबी रंग मटर फूल सोभेला किनरिया[11]॥
उचकि-उचकि[12] के तीसी रंग चोलिया[13] लजात बा।
सटल[14] खेसारी नील रंग लहँगवा[15] सोहात बा॥
ई गोर-गोर गहुमवा[16] संवरका[17] बूँट संग में।
उतान[18] होके हिलत देखि नयनवा जुड़ात बा॥
झमाठ[19] आम पेड़ के उपरकी[20] डाल पर बइठ।
ई नीलकंठ[21] दूर से न तनिक[22] हू चिन्हात[23] बा॥
इहाँ-उहाँ बबूल आदि पेड़ के अलोत[24] में।
ऊ नील गाइ[25] चौंकि भागि खेत ओर जाति बा॥
जहाँ-तहाँ सियार घूमि कनखी से निहारि के।
न जाने कहाँ पलक मारते में ही परात[26] बा॥
ई कान्ह[27] पर टिकास[28] भर के गोल-गोल बाँस राखि।
फाग में बसंत छाड़ि चैत राग छेड़ते बा॥
ऊ काम-धाम छोड़ि बीनि-बीनि आम के टिकोर[29]।
एक सुर से कू कू कहि कोइलिया के चिढ़वते बा॥
बहार फगुनहट[30] के बा लुटानि बा जवानिया।
इ धन्य बा देहात रे अगाध प्रेम नैहरा[31]॥

महेन्द्र शास्त्री

आप छपरा जिले के रहनेवाले संस्कृत के विद्वान् हैं। सारन जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के आप प्रमुख कार्य्यकर्त्ता हैं। आप भोजपुरी के बड़े प्रेमी और कवि हैं। आपकी एक काव्य पुस्तिका 'आज की आवाज' नाम से प्रकाशित हुई है। इसमें आपकी भोजपुरी और हिन्दी रचनाओं का संग्रह है। 'आज की आवाज' से कुछ भोजपुरी रचनाएँ उद्धृत की जाती हैं—

१. हमलोग चलें। २. बस्ती के पास। ३. बस्ती की सीमा पर। ४. एक प्रकार का मोटा अन्न। ५. चना। ६. एक प्रकार का अन्न। ७. भरा-पूरा, सम्पन्न। ८. खेतों का मैदान। ६. पहने हुए है १०. सरसों। ११. पाढ़। १२. आश्चर्यमय होकर। १३. अंगिया, चोली। १४. सटी हुई। १५. लंहगा। १६. गेहूँ। १७. श्यामल। १८. पीठ के बल तनकर। १९. डाल-पात से खूब घना। २०. सबसे ऊपरवाली। २१. एक पक्षी, जिसका दर्शन दशहरे के दिन शुभ माना जाता है। २२. जरा भी। २३. पहचान में आना। २४. आड़ में। २५. नीलगाय—एक जंगली जानवर। २६. भागता है। २७. कन्धे पर। २८. ललाट के ऊपरी हिस्से के प्रमाण तक। २९. आम का टिकोला। ३०. वासन्ती बयार। ३१. मायके का।

इहे बाबू भैया

कमैया[1] हमार चाट जाता, इहे बाबू-भैया[2] ॥
जेकरा आगा[3] जोंको[4] फीका, ऐसन ई कसैया[5]
दूहल जाता[6] खूनो[7] जेकर[8] ऐसन हमनी गैया ॥
अंडा-बच्चा, मरद-मेहरी[9] दिन-दिन भर खटैया[10],
तेहू[11] पर ना पेट भरे चूस लेला चैंया[12] ॥
एकरा बाटे गद्दा-गद्दी हमनी का चटैया,
एकरा बाटे कोठा कोठी, हमनी का मड़ैया ॥
जाड़ो[13] ऊनी, एकरा खाहूँ के[14] मलैया,
हमनी का रात भर खेलाइले[15] जड़ैया[16] ॥

रामविचार पाण्डेय

आप बलिया के भोजपुरी कविरत्न हैं। आपकी भोजपुरी जिलों में बड़ी ख्याति है। बलिया में आप डॉक्टर हैं। आपने 'कुँअरसिंह' नामक नाटक भोजपुरी में लिखा है। यह नाटक बहुत सुन्दर और रंगमंच के लायक है। आपकी भाषा ठेठ भोजपुरी और मुहावरेदार है। आधुनिक भोजपुरी कवियों में आपका स्थान बहुत ऊँचा है। कविता पाठ से आप श्रोताओं को मंत्र-मुग्ध कर देते हैं।

अँजोरिया

टिसुना[17] जागलि सिरीकिसुना[18] के देखे के तऽ
आधी रतिये राधा उठि अइली गुजरिया[19] ॥
चान निअर[20] मुँह चमकेला राधिका जी के
चम चम चमकेले जरी के चुनरिया ॥
चकमक चकमक लहरि उठावे ओमें[21]
मधुरे-मधुर डोले कान के मुनरिया[22] ॥
गोखुला[23] के लोग एहि[24] देखि के चिहइले[25] कि
राति में अमावसा के उगली अँजोरिया[26] ॥१॥
फूल के सेजरिया पर सूतल[27] कन्हैया जी
सपना देखेले कि जरत[28] दुपहरिया।
ओकरे[29] में हमरा के राधिका खोजत बाड़ी[30]
पेड़ नइखे रुख[31] नइखे जरत बा कगरिया[32] ॥
कहताड़ी[33] 'धावऽ कृष्ण ! धावऽ कृष्ण ! आजा-आजा
हमके देखा दऽ तनी[34] गोखुला नगरिया ॥

---

१. कमाई, आमदनी। २. पढ़े-लिखे सफेदपोश लोग। ३. सामने। ४. जोंक भी। ५. कसाई। ६. दूहा जाता है। ७. रक्त भी। ८. जिसका। ९. स्त्री। १० खटते हैं (कठोर परिश्रम करते हैं)। ११. उस पर भी। १२. चाईं, उचक्का। १३. जाड़े में। १४. खाने के लिए भी। १५. झेलते हैं। १६. जूड़ी बुखार। १७. तृष्णा। १८. श्रीकृष्ण। १९. सुन्दरी। २०. सदृश। २१. उसमें। २२. मणि-कुण्डल। २३. गोकुल। २४. यह। २५. चौंक उठे। २६. चाँदनी। २७. सोया हुआ। २८. जलती हुई। २९. उसमें। ३०. खोजती हैं। ३१. वृक्ष। ३२. कगार, नदी-तट। ३३. कहती हैं। ३४. तनिक।

'अइलीं राधे ! अइलीं राधे !' कहि जे उठले तऽ
एने[1] फूलल कमल, ओने[2] चढ़ल अँजोरिया ॥२॥
हमके बोलावलीतू[3] तूँ अइलू हा[4] कइसे हो
बड़ी राधा ! सावनि चढ़लि बा अन्हरिया ॥
कंसवा के राकस घूमत बड़वार[5] बाड़े
गोकुला में कबे-कबे[6] होति बाड़े चोरिया ॥
सभ के ठगे लऽ[7] कृष्ण ! हमके भोराव[8] जनि[9]
हाथ हम जोरीले[10] करीले[11] गोड़धरिया[12] ॥
हृदया में जेकरा[13] तऽ तूँ ही बसल बाड़ऽ[14]
ओकरा[15] खातिर ई[16] अन्हरिया[17] बा अँजोरिया ॥३॥

प्रसिद्धनारायण सिंह

आप चितबड़ा गाँव (बलिया) के निवासी हैं। आपका जन्म वि० सं० १९६० में हुआ था। आपके पिता का नाम बाबू जगमोहन सिंह था। आप इस समय बलिया के एक प्रतिष्ठित मुख्तार और विनम्र जन-सेवक हैं। विद्यार्थी जीवन से ही आपको कविता से अनुराग है। देश के स्वतन्त्रता संग्राम में आपको दो बार कठोर कारावास का दंड मिला। सन् '४२ की क्रान्ति के महान् बलिदानों का वर्णन करते हुए आप ने 'बलिया बलिहार' नामक काव्य ग्रन्थ की रचना की है। यह भोजपुरी काव्य का अनूठा ग्रन्थ है। आपकी भोजपुरी कविताएँ बड़ी ओजस्विनी और भक्तिपूर्ण हैं। इस ग्रन्थ की भूमिका कवि की श्रद्धांजलि के रूप में इस प्रकार है—

श्रद्धांजलि

लुटा दिहल[18] परान[19] जे,[20] मिटा दिहल निसान[21] जे।
चढ़ा के सीस देस के, बना दिहल महान जे ॥१॥
जने-जने जगा गइल[22], नया नसा पिला गइल।
जला-जला सरीर के, स्वदेस जगमगा गइल ॥२॥
पहाड़ तोड़ि-तोड़ि के, नदी के धारि मोड़ि के।
सुघर डहरि[23] बना गइल, जे काँट-कूस[24] कोड़ि[25] के ॥३॥
कराल क्रान्ति ला गइल,[26] ब्रिटेन के हिला गइल।
बिहँसि के देस के धजा गगन में जे खिला[27] गइल ॥४॥
अमर समर में सो गइल, कलंक-पंक धो गइल।
लहू के बूँद-बूँद में, विजय के बीज बो[28] गइल ॥५॥
ऊ[29] बीज मुस्करा उठल, पनपि के गहगहा उठल।
बिनास का बिकास में, वसंत लहलहा उठल ॥६॥

---

१. इधर। २. उधर। ३. बोला लेतीं। ४. आई हो। ५. भयानक। ६. कभी-कभी। ७. ठगते हो। ८. भुलवाओ, बहलाओ। ९. नहीं। १०. जोड़ता हूँ। ११. करता हूँ। १२. पाँव पकड़ना। १३. जिसके। १४. बसे हो। १५. उसके। १६. यह। १७. अँधेरी रात ही। १८. लुटा दिया। १९. प्राण। २०. जिसने। २१. चिह्न, अस्तित्व। २२. जागृत कर गया। २३. मार्ग। २४. कुश-कंटक। २५. खोदकर। २६. लाया। २७. अन्तिम ऊँचाई तक फहरा दिया। २८. वपन कर गया। २९. वह।

कली-कली फुला गइलि, गली-गली सुहा[1] गइलि ।
सहीद का समाधि पर, स्वतंत्रता लुभा गइलि ॥७॥
चुनल[2] सुमन सँवारि के, सनेह-दीप बारि[3] के ।
चलीं, उतारे आरती, सहीद का मजारि[4] के ॥८॥

(२)

विद्रोह

जब सन्तावनि[5] के रारि[6] भइलि, बीरन के बीर पुकार भइलि ।
बलिया का 'मंगल पांड़े[7]' के, बलिवेदी पे ललकार भइलि ॥१॥
'मंगल' मस्ती में चूर चलल, पहिला बागी मशहूर चलल ।
गोरन[8] का पलटनि का आगे, बलिया के बाँका शूर चलल ॥२॥
गोली के तुरत निसान[9] भइल, जननी[10] के भेंट परान भइल ।
आजादी का बलिवेदी पर, 'मंगल पांड़े' बलिदान भइल ॥३॥
जब चिता-राख चिनगारी से, धुधुकत[11] तनिकी[12] अंगारी से ।
सोला[13] नकलल, धधकल, फइलल,[14] बलिया का क्रान्ति-पुजारी से ॥४॥
घर-घर में ऐसन आगि लगलि, भारत के सूतल भागि[15] जगलि ।
अंगरेजन के पलटनि सगरी,[16] बैरक बैरक[17] से भागि चललि ॥५॥
बिगड़लि बागी पलटनि काली,[18] जब चललि ठोंक आगे ताली[19] ।
मचि गइल रारि, पड़ि गइलि[20] स्याह, गोरन के गालन के लाली ॥६॥
भोजपुर के तप्पा[21] जाग चलल, मस्ती में गावत राग चलल ।
बाँका सेनानी कुँवर सिंह, आगे फहरावत पाग[22] चलल ॥७॥
टोली चढ़ि चलल जवानन के, मद में मातल मरदानन[23] के ।
भरि गइल बहादुर बागिन से, कोना-कोना मयदानन[24] के ॥८॥
ऐसन सेना सैलानी ले, दीवानी मस्त तूफानी ले ।
आइल रन[25] में रिपु का आगे, जब कुँवर सिंह सेनानी ले[26] ॥९॥
खच-खच खंजर तरुवारि[27] चललि, सगीन, कृपान, कटारि चललि ।
बर्छी, बर्छा का बरखा से, बहि तुरत लहू के धारि चललि ॥१०॥
बन्दूक दगलि दन्-दनन् दनन्, गोली दउरलि[28] सन्-सनन्-सनन् ।
भाला, बल्लम,[29] तेगा, तब्बर,[30] बजि उठल उहाँ[31] खन्-खनन् खनन् ॥११॥
खउलल[32] तब खून किसानन के जागल जब जोश जवानन के ।
छक्का छूटल अंगरेजनि के, गोरे-गोरे कपतानन के ॥१२॥
बागी सेना ललकार चललि, पटना-दिल्ली ले[33] झारि[34] चललि ।
आगे जे आइल राह रोक, रन में उनके सहारि चललि ॥१३॥
बैरी के धीरज छूटि गइल, जनु[35] घड़ा पाप के फूटि गइल ।
रन से सब सेना भागि चललि, हर ओर मोरचा टूटि गइल ॥१४॥

१. सुहावनी हो गई । २. चुने हुए । ३. प्रदीप्त करके । ४. समाधि । ५. सन् १८५७ ई० । ६. लड़ाई । ७. इतिहास में मंगल पाण्डेय ही सर्वप्रथम सिपाही-विद्रोह का झंडा ऊँचा करनेवाले माने जाते हैं । ८. गोरों की, अँगरेजों की । ९. लक्ष्य., वार । १०. भारतमाता । ११. धीरे-धीरे सुलगती हुई । १२. छोटी-सी, जरा-सी । १३. अंगार, शोला । १४. फैल गया । १५. भाग्य । १६. समस्त । १७. फौजी छावनी । १८. हिन्दुस्तानी पलटन । १९. ताल ठोंककर । २०. पड़ गई । २१. टप्पा, इलाका, प्रदेश । २२ पगड़ी, साफा । २३. मर्दानों की, वीरों की । २४. मैदानों का । २५. रण । २६. लेकर । २७. तलवार । २८. दौड़ी । २९. बर्छी । ३० एक प्रकार का परशु । ३१. वहाँ । ३२. उबल पड़ा । ३३. तक । ३४. समूह । ३५. मानों ।

तनिकी-सा[1] दूर किनार रहल, भारत के बेड़ा पार रहल।
लउकत[2] खूनी दरिआव[3] पार, मंजलि के छोर हमार रहल ॥१५॥

(३)

बापू के अन्तिम दर्शन

दुखियन के तन-मन-प्रान चलल।
जब तीस जनवरी जाति[4] रहलि, सुक[5] के संझा[6] मुसुकाति रहलि।
दिल्ली में भंगी बस्ती के, धरती मन में अगराति[7] रहलि॥
जन-जन पूजा-मयदान[8] चलल ॥१॥

तनिकी[9] बापू के देरि[10] भइलि, पूजा में अधिक[11] अबेरि[12] भइलि।
अकुलाइलि आँखि हजारनि गो[13] बिछि राह बीच बहुबेरि[14] गइलि॥
तब भक्तन के भगवान चलल ॥२॥

बजि पाँच सुई कुछ घूमि चललि,[15] बदरी जब लाली चूमि चललि।
तब छितिज-छोर से बिपति-नटी, जग-रंगमंच पर झूमि चललि॥
बनि साधु तहाँ सइतान[16] चलल ।३॥

चुप चरन मंच का ओर चलल, नंगा फकीर चितचोर चलल।
पूजा का सान्ति-सरोवर में, छन में आनन्द-हिलोर चलल॥
अनमोल मधुर मुसुकान चलल ॥४॥

नतिनिन[17] पर दूनों[18] हाथ रहल, चप्पल में दूनों लात रहल।
धपधप धोती, चमचम चसमा, चद्दर में लिपटल गात रहल॥
हरिपद में लागल ध्यान चलल ॥५॥

पग पहिला सीढ़ी पार चलल, तबले[19] नाथू[20] हतिआर[21] चलल।
पापी का नीच नमस्ते पर, बापू के प्यार-दुलार चलल॥
बनि लाल नील असमान चलल ॥६॥

जुटि हाथ गइल अभिवादन में, उठि माथ गइल अहलादन में।
अपना छाती के बजर बना जमदूत बढ़ल आगे छन में॥
पिस्टल के साधि निसान चलल ॥७॥

मन राम नाम में लीन रहल, तन सीढ़ी पर आसीन रहल।
मनु-मंदिर में बलिबेदी पर, बलि-बकरा बधिक-अधीन रहल॥
कहि राम, सरग[22] में प्रान चलल ॥८॥

जननी के जीवन लाल चलल, दुखियन के दीन-दयाल चलल।
थर-थर-थर धरती काँपि उठलि, भारत-भीतर भुंइचाल[23] चलल॥
जन-जन पर बिस के बान चलल ॥९॥

जग जेकर प्रेम-समाज रहल, बिन ताज सदा सिरताज रहल।
मुट्ठी-भर हड्डी में जेकर[24], कोटिन के लिपटल[25] लाज रहल॥
सब के मन के अरमान चलल ॥१०॥

१. जरा-सा। २. दीख पड़ता हुआ। ३. रक्तमयी गंगा (हाथी पर गंगा पार करते समय बाबू कुँवर सिंह की बाँह में गोरों की गोली लग गई थी, इसलिए उन्होंने अपनी तलवार से उसे काटकर गंगा को भेंट कर दिया, जिससे वे सकुशल पार हो गये और गंगा लाल हो गई।) ४. बीत रही थी। ५. शुक्रवार। ६ संध्या। ७. प्रसन्न होती थी। ८. प्रार्थना का मैदान। ९. जरा-सी। १०. विलम्ब। ११. कुछ ज्यादा। १२. वेला बीत जाने पर। १३. हजारों की संख्या में। १४. बहुत बार। १५. (घड़ी की सुई) आगे बढ़ चली। १६. हत्यारा (गोडसे)। १७. पौत्रियाँ। १८. दोनों। १९. तब तक। २०. नाथूराम गोडसे। २१. हत्यारा। २२. स्वर्ग। २३. भूकम्प। २४. जिसके। २५. लिपटा हुआ।

ऊ[1] एक अकेल अनन्त रहल, ऊ आदि रहल, उ अन्त रहल।
सिख, हिन्दू, मुसलिम, ईसाई, अल्ला, ईसा, भगवन्त रहल॥
सब के संगम असथान चलल ॥११॥

शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' या 'गुरु बनारसी'

आप काशी के रहनेवाले हैं। आप एम्० ए० पास हैं और दैनिक सन्मार्ग' के सम्पादक रह चुके हैं। इसके पूर्व आप कई पत्रों का सम्पादन कर चुके हैं। आजकल हरिश्चन्द्र कालेज (काशी) में हिन्दी के प्रोफेसर हैं। आप हिन्दी और भोजपुरी में कविता बहुत सुन्दर करते हैं। आपकी भोजपुरी रचनाएँ 'तरंग' आदि पत्रिकाओं में काफी प्रकाशित हैं। आप उर्दू के छन्दों में भी भोजपुरी रचना करते हैं। आप हास्य रस की रचना भी बहुत सुन्दर करते हैं। आपकी भोजपुरी कविता की सबसे बड़ी खूबी यह है कि उसकी भाषा या शैली पर हिन्दी का प्रभाव नहीं दिखाई पड़ता। वह अपना प्रकृत रूप आद्योपान्त बनाये रहती है—

(१)

तांडव नृत्य

सुरुज करोर गुन तेज पाय फूल[2] गैल
चमक त्रिसूल गैल[3] सैल पर चम-चम।
उड़ल जटाक जाल, गजखालऊ धुआँ अस
कुआँ अस धरती धसक गइल धम्म-धम्म॥
टूटल अकास, अउर[4] जुटल समुन्द्र सात
फुटल पहाड़ हाड़ चूरचूर घम्म घम्म।
डम्म-डम्म डमरु डमक गैल चारों ओर
सोर भैल घोर हर हर-हर बम्म-बम्म ॥१॥

× × ×

लगलिन[5] झाँके सब देवी देउता के संग
भंग के तरंग रंग आज कुछ चोखा बाय[6]।
लाखन बरिस के बाद देखब तमासा ई[7],
आसा ई लगाय यच्छ[8] झाँकत झरोखा बाय[9]।
किनेर[10] पुकार कीने[11] के ई बनावल हौ
दूर-दूर देखे, पास जाये जिन धोखा बाय।
ताकत[12] सुरेस बाटे, भागत गनेस बाटे,
नाचत महेस बाटे भेस ई अनोखा बाय ॥२॥

(२)

लाचारी

न रखिये[13] रमउलीं[14], न अँखिये लड़उलीं[15]।
'गुरु' जिनगी[16] कऽ मजा कुछ न पउलीं[17]॥
कबों[18] रामकऽ नाँव[19] लेहलीं[20] न मन में॥
न रामा[21] क सूरत रचउलीं[22] नयन में॥

---

१. वह। २. फैल गया, विकसित हो गया। ३. गया। ४. और। ५. लगीं। ६. है। ७. यह। ८. यक्ष। ९. फाड़कर। १० किन्नर। ११. किया। १२. देखते हैं। १३. राख, भस्म। १४. रमाया। १५. लड़ाई। १६. जिन्दगी। १७. पाया। १८. कभी। १९. नाम। २०. लिया। २१. रमणी। २२. रचाया, सजाया, बसाया।

भवन में न रहलीं, बिहरलीं न बन में ।
न मेले में जमलीं, न रमलीं हो रन में ॥
हमेसा बखत[1] मार के मन बितउलीं ॥
'गुरु' जिनगीकऽ मजा कुछ न पउलीं ॥
तबेला[2] रहल न, तबेले में रहलीं ।
मिलल धार जब जौन तब तौन बहलीं ।
न सुनलीं केहू कऽ केहू के न कहलीं ।
केहूके सतउलीं[3], केहूके न सहलीं[4] ॥
न टीकै लगउलीं[5], न टीकै गढ़उलीं[6] ।
'गुरु' जिनगीक मजा कुछ न पउलीं ॥

डा० शिवदत्त श्रीवास्तव 'सुमित्र'

आपका जन्म संवत् वि० १९६३ में हुआ। आप बलिया जिले के 'शेर' ग्राम के रहनेवाले हैं। आपके जीवन का अधिक समय बिहार में ही व्यतीत हुआ है। आप इस समय बसडीह तहसील (बलिया) में डाक्टरी कर रहे हैं। आप खड़ी और भोजपुरी दोनों ही बोलियों में कविता करते हैं। आपकी कविताएँ अधिकतर हास्यरस और स्वतंत्र विचार की होती हैं—

कवि सब के अस इज्जति भारी, ढेला ढोवत फिरसु उधारी[7] ।
परम स्वतंत्र न पढ़ले पिंगल, झण्डी लाल तो डाउन सिंगल ।
अस सुराज इ लिहलसि[8] चर्खा, घूसखोरी के कइलसि[9] बर्खा ।
कृषि-विभाग अस मिलते दानी, सरगो[10] के ले बितते[11] पानी ।
दिहले[12] एक तो लिहले[13] सावा, बोवते धान तो फूटल लावा[14] ।
कालिज में जब गइले बबुआ[15], अटके[16] लागल घर के सतुआ[17] ।
बाहर गोल्डेन घड़ी कलाई, ढेला[18] फोरसु घर पर भाई ।
चाहसु बीबी आवे सहरी[19] लेइके घूमीं डहरी-डहरी[20] ।
खर्च एक के तीनि बढ़ाई, कीनसु[21] सीजर[22] और सलाई ।
कालिज के जे अइली दासी[23], दीहली सासु के पहिले फाँसी ।
तजि चोकर ओ अखरा[24] रोटी, घसकल[25] अँचरा लटकल[26] चोटी ।
करसु उपाय अब नर्स बनेको, जाहि मरद बहु, पूत न एको ।
डाक्टर फरके[27] देसु दवाई, दिन दिन भइली सूखि खटाई ।
नित सूई ले सूतसु घामा[28], असरा[29] में की होइबि[30] गामा[31] ।
जस-जस सूई कइलसि धावा, तासु दुगिन[32] चढ़ि रोग दबावा ।
अस रँग-रूप बदलली बीबी, मुँह में खून गिरवलसि[33] टी० बी० ।

१. वक्त, समय, जीवन के क्षण। २. अस्तबल। ३. सताया। ४. सहन किया। ५. टीका लगाना—चन्दन का टीका लगाना। ६. टीका गढ़ाना—माँग में पहनने का आभूषण गढ़ाना। ७. उधार ढेला ढोना (मुहावरा)—फालतू काम में मुफ्त खटना। ८. किया। ९. किया। १०. स्वर्ग, आकाश। ११. ले बीते। १२. दिया। १३. लिया। १४. लावा फूटना=सुखार (अकाल) या घाम पड़ने से धान का जल जाना। १५. दुलारा लड़का। १६. अटकने लगा। १७. सत्तू। १८. ढेला फोड़ना (मुहावरा)=कठोर परिश्रम करना। १९. शहर की, नागरी। २०. रास्ते-रास्ते। २१. खरीदता है। २२. कैंची मार्का सिगरेट। २३. सेवा करनेवाली पतोहू। २४. सूखी रोटी। २५. खिसका हुआ। २६. लटका हुई। २७. अलग से। २८. धूप में। २९. आशा। ३०. होऊँगी। ३१. विश्व का प्रसिद्ध भारतीय पहलवान। ३२. दुगना। ३३. गिरा दिया।

परल-परल[1] अब ताकथु[2] खिर्की[3], मूसर[4] से पचि[5], भइली सिर्की[6]।
आखिर बकरी आइल दुआरी[7], फरलसि[8] पतलुन सिंघ[9] घुसारी[10]।

बसुनायक सिंह

आप 'आमी' (सारन) के निवासी थे। पुलिस में नौकरी करके आपने पेनशन पाई थी। अपने अन्तिम दिनों में आपने कविता करना प्रारम्भ किया। आप ब्रज भाषा में भी रचना करते थे। बालकाण्ड रामायण का आपने भोजपुरी में पद्यानुवाद किया था जो हवड़ा (कलकत्ता) के किसी प्रेस से प्रकाशित हुआ था।

कवित्त

पुलिस के नोकरी करत मे डरत नाहीं,
मानों महराज के बेटा हऊँवे[11] लाट के।
पहिर पोसाक चपरास के लगाय लेलें[12],
निपट गरीबन के बोलत बाटे डाँट के॥
पैसा अउर कौड़ी खातिर गली-गली धावत फिरे,
जइसे धोबी कुकुर नाहीं घाट के न बाट के।
भने 'बसुनायक' हरामी के जे पइसा लेत,
नौकरी छूटे पर केहू पूछे नाहीं भाँट के॥

रामप्रसाद सिंह 'पुंडरीक'

आपका जन्मस्थान गोपालपुर (सैदापुर, पटना) है। आप पुराने ग्राम-गीतों के तर्ज पर आधुनिक समाज सुधार सम्बन्धी कविताएँ रचते हैं। आपका स्वर भी मधुर है। आप हिन्दी के भी कवि और लेखक हैं। आपकी रची कई छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ भोजपुरी में छपी हैं। आप मगही के भी कवि हैं। मगही बोली में भगवद्गीता का पद्यानुवाद किया है। दूर-दूर तक देशाटन करके अपनी लोक-भाषा की रचनाएँ आप गा-गाकर सुनाते हैं।

सोहर

बिनय करौं कर जोरि अरज सुनि लेहु न हे।
बहिनो! सुनि लेहु अरज हमार परन[13] करि लेहु न हे॥
कलह करब नहिं भूलि, कलह दुख-कारण हे।
बहिनो! कलह तुरत घर फोरि बिपति गुहरावत[14] हे॥
करब सबहिं सन प्रीति लहब सुख सम्पति हे।
बहिनो! मिलि-जुलि बिपति भगाइ त मिलिजुलि गाइब हे॥
कबहुँ न डोमिन चमइनि देखि घिनाइब हे।
बहिनो! सबरिहि[15] राम समाज इनहिं[16] अपनाइब[17] हे॥
कबहुँ न चिलिम[18] चढ़ाइब रोग बुलाइब हे।
बहिनो! तन-मन धन-जन नास नसा करि डारत हे॥

---

१. लेटे-लेटे। २. देखती है। ३. गवाक्ष। ४ मुसल। ५. गल-पचकर। ६. अत्यन्त क्षीण, सरकंडे की सींक। ७. द्वार पर। ८. फाड़ दिया। ९. सींग, शृंग। १०. घुसेड़ कर। ११. हैं। १२. लगा लेते हैं। १३. प्रण। १४. बुलाता है। १५. शबरी भिलनी। १६. इन्हें। १७. अपनाऊँगी। १८. चिलम चढ़ाना = तम्बाकू पीना।

रखब सबहिं कछु साफ नितहि-नित धोइब[1] हे।
बहिनो ! नितहि करब असनान नितहि प्रभु-पूजन हे॥
सबहि हुनर हम सीखि करब गृह-कारज हे।
बहिनो ! कबहु त हम घिघिआइ[2] अबर[3] मुँह जोहब हे॥
कबहु न असकत[4] लाइ बइठि दिन काटब हे।
बहिनो ! जब न रहहिं कछु काम त चरखा चलाइब हे॥
अधिक करब नहिं लाज घुँघुट अब खोलब हे।
बहिनो ! अब न रहब हम बन्द हमहुँ जग देखब हे॥
रहत हमहिं जग बन्द बहुत दिन बीतल हे।
बहिनो ! पियर[5] भइल सब अंग बुधिहु-बल[6] थाकल हे॥
पढ़ब गुनब[7] अरु घूमि सकल जग देखब हे।
बहिनो ! हम हईं सिय-सन्तान करब अब साबित[8] हे॥
जिन करि नजर खराब हमहिं पर ताकहिं[9] हे।
बहिनो ! जिन रस बचन कढ़ाइ करिहिं छुछुमापन[10] हे॥
नयन लिहब हम काढ़ि पिचुटि[11] कर फेंकब हे।
बहिनो ! खंइच लिहब हम जीभ न पँखुरी[12] कबारब[13] हे॥
खड्ग खपड़ अब लेइ दइत[14] हम नासब हे।
बहिनो ! लव-कुस सुत जनमाइ हरब भुइं[15] भार नु हे॥

बनारसीप्रसाद 'भोजपुरी'

आपका जन्म-स्थान बड़हरा (शाहाबाद) है। आप हिन्दी के पुराने गद्य-पद्य-लेखक और पत्रकार हैं। कई पत्रों का संचालन आपने किया है। आप राष्ट्रीय विचार के देशसेवक हैं। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती नन्दरानी देवी जी भी ग्राम-गीतों की रचना करती हैं। आप शाहाबाद जिला हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के उत्साही कार्यकर्त्ता हैं।

आपन परिचय

कहेलन लोग सब नाम भोजपुरीजी हऽ
हाथ हम लमहर[16] सोटवा[17] लगाईला।
करीला हुंकार सुनि पास में जे आवेलन[18]
कोढ़ि[19] कदराई[20] हम जड़ से भगाईला॥
डर ना संकोच हम तनिको[21] करीला कभी
राहन[22] के साथ पँचलतिया[23] लगाईला।
मउगो-मलारन[24] के झुंड में रखीला हम
भेड़िया[25] बनाके देस-बाहर कराईला[26]॥

---

१. धोऊँगी। २. गिड़गिड़ा कर। ३. निर्बल। ४. आलस्य, अशक्तता। ५. पीला। ६. बुद्धि का बल भी। ७. मनभ करना। ८. प्रमाणित। ९. नजर गड़ावेगा। १०. क्रूरता। ११. कुचल-मसलकर। १२. बाजू। १३. उखाड़ लूँगी। १४. दैत्य। १५. पृथ्वी। १६. बड़ा। १७. सोंटा, डंडा। १८. आते हैं। १९. खोदकर। २० कायरता। २१. थोड़ा भी। २२. बदमाश। २३. पाँच लात। २४. स्त्रैण-समुदाय। २५. भेंड़। २६. करवा देता हूँ।

साँच में न आँच कभी सुतलो[1] में आवे दीला[2]
झूठवो के हरदम दुसमन बताईला[3]।
बात उहे[4] कहिला जे ठीक मे बुझाला[5] खूब
सजन[6] महाशय के मथवा नवाईला ॥
जाली व फरेबी केहू आँख मे देखाला कहीं
पीठिया प कसि-कसि मुकवा[7] चलाईला।
समझेला अपना के गुंडवा हुलक्कड़[8] जे
सोंटवा सँभारि हम सट मे जमाईला[9] ॥
तनिको नतीजवा[10] के करीं परवाह नाहीं
आँख मूँद काम सब झट सपराईला[11]।
करेला विरोध उहे उजुबुक[12] बड़ए[13] जे
कान धऽके उठकी-बइठकी[14] कराईला ॥
फरके[15] रहिला हम लँगट[16]-लबारन से
भूलियो के तनिको ना हम अझुराइला[17]।
मनवा लगाई हम कमवाँ करीला खूब
नामवाँ कमाके खूब जस फैलाईला ॥
खाल-ऊँच[18] मारि दीला काँट कुस चुनि लीला[19]
चले के सुगम हम रहिया बनाईला।
आँख मुँदि अन्हरो निगम[20] होके चले जे से[21]
रहिया के बिपति से सभ के बँचाईला ॥
आपस में गुँइया[22] के जड़िया[23] जमल बाटे
कोड़ि-कांड़ि ओकरा के मेलवा बढ़ाईला।
जाति से गिरल बा जे नरक परल बा जे
कन्हवाँ[24] चढ़ा के हम छतिया लगाईला ॥
इहे त धरम बाटे ईहे त करम बाटे
रात-दिन सोंटा लेले दउड़ लगाईला।
जुलम के जहाँ-कहीं डिलवा[25] लउके[26] जाला
ताल ठोकि ओकरा के जलदी ढहाईला ॥
इहो नाहीं चाहीं जे लोग घबड़ाये लागे
बतिया[27] सरस बीच-बीच में बताईला।
अगिया वो पनिया[28] के बीच से चलाईं हम
धीरे-धीरे बाग में बसंत के नचाईला ॥
कहिला जे एकरा[29] से दिल के जलन जाला
रतिया में एहिसे[30] हिंडोलवा लगाईला।

---

१. नींद में भी। २. आने देता हूँ। ३. बनाता हूँ। ४. वही। ५. समझ पड़ता है। ६. सज्जन। ७. मुक्का, मुष्टि। ८. हुल्लड़बाज। ९. जमाता हूँ, प्रहार करता हूँ। १०. नतीजा, परिणाम। ११. सपराता हूँ, पूर्ण कर लेता हूँ १२. उजबक, बेवकूफ। १३. है। १४. उठाना-बैठाना। १५. अलग (फरक)। १६. नंगा। १७. उलझता हूँ। १८. ऊबड़-खाबड़। १९. लेता हूँ। २०. निश्चिन्त। २१. जिससे। २२. तिनकों को ऐंठि हुई रस्सी (हृदय की कुटिलता)। २३. जड़, मूल। २४. कन्धे पर। २५. टीला। २६. दीखता है। २७. बात। २८. आग-पानी=कठिनाई और सुगमता। २९. इससे। ३०. इसलिए।

धीरे ले जुटाईं लीला गोरिया[1] रसिकवन[2] के
प्रेम के बजरिया में रँगवा उड़ाईंला ॥
एकरे में भूलि के ना समय बितइहऽ बेसी
गेहु में बा जाल भाई कह के डराईंला ।
रमवा के बस होके बान जे बिसारि देला ।
धाइ[3] के तुरत हम सोंटवा जमाईंला ॥

सिद्धनाथ सहाय 'विनयी'

आपका जन्मस्थान 'कल्याणपुर' (शाहाबाद) है। आप रामायणी भी बहुत सुन्दर हैं। आप हिन्दी और भोजपुरी दोनों में कविता लिखते हैं। आपकी दो प्रकाशित रचनाएँ 'केवट-अनुराग' और 'द्रौपदी-रक्षा' हैं। दोनों पुस्तिकाएँ भोजपुरी और हिन्दी गद्य पद्य मिश्रित रचनाएँ हैं। केवल निषाद और द्रौपदी की वार्त्ता भोजपुरी पद्य गद्य में है। तुलसीदास की कविताओं के उद्धरण देकर उनके प्रसंगानुकूल भोजपुरी उक्तियाँ भी कही गई हैं। आपकी रचनाएँ पढ़ने पर भक्ति और करुणा जाग उठती है। हिन्दी की कविताओं से कहीं अधिक सुन्दर, सरस और प्रौढ़ आपकी भोजपुरी रचनाएँ हैं। आप अपनी पुस्तकों के स्वयं प्रकाशक हैं। आपकी पुस्तकों का प्राप्तिस्थान है—'अम्बिका-भवन', मनसा पाण्डे बाग, आरा। इन दो पुस्तकों के अतिरिक्त आपने भोजपुरी में और भी पुस्तकें लिखी हैं। यथा—'श्री कृष्णजन्म-मंगल पवारा', 'सीता जी को सुनयना का उपदेश' आदि।

छुवत[4] में डर लागे सुन्दर चरनियाँ[5]
कोमल कमल अस मूरति मोहनियाँ ॥
चरण के धुरि एक अजब जोगिनियाँ[6] ॥
काठ के ठेकान[7] कौन का होई जीवनियाँ[8] ।
बिहसी बिहँसी कहे मधुरी बचनियाँ ॥
भारी तो फिकिर एक धनुही धरनियाँ[9]
नैया ना होखे कहीं गौतम-घरनियाँ[10] ।
बारे-बारे झारे रज पद लपटनियाँ[11]
छुवे ना चरण ढारे उपरे से पनियाँ ॥
अटपट बात सुनि प्रेम रस-सनियाँ[12] ।
जानकी-लखन देखि नाथ मुसकनियाँ[13] ॥

—('केवट अनुराग' से)

वसिष्ठनारायण सिंह

आपका जन्म-स्थान 'दिघवारा' (सारन) है। आप हरिकीर्त्तन किया करते हैं। आपने कीर्तन-मण्डली बना ली है, जो स्थान-स्थान पर जाया करती है। आपकी प्रकाशित रचनाओं में एक का नाम 'संकीर्त्तन-सरोज' है।

जरा सुनीं सरकार, जिया हुलसे हमार ।
दिल लागि गइले प्रभु के भजनिया में ॥

१. सुन्दरी। २. रसिकों। ३. दौड़कर। ४. छूने में। ५. चरण। ६. जादूगरनी। ७. ठिकाना, विश्वास। ८. जीविका। ९. हे धनुषधारी। १०. गौतमी, अहल्या। ११. लिपटी हुई। १२. रस में सनी हुई। १३. मुस्कान।

माथे मकुट रसाल, काने कुण्डल बा[1] बिसाल,
सोहे मोतिया के माल गरदनिया में ॥
जामा सोहे बूटीदार ओमें[2] लागलब[3] किनार,
झक-झक झलकेला प्रभु के बदनिया[4] में ॥
कहे 'बसिष्ठ' पुकार, सुनीं अचरज हमार,
प्रभु राखि लिहीं[5] अपना सरनिया[6] में ॥१॥

भुवनेश्वरप्रसाद 'भानु'

'भानु' जी का जन्म १६११ ई० में शाहाबाद जिले के 'चन्दा अखौरी' नामक ग्राम में हुआ था। प्रारम्भ से ही कविता की ओर आपकी विशेष रुचि थी। आप हास्य रस की कविता सुन्दर लिखते हैं। हिन्दी कवि होने के अलावा आप लेखक और उपन्यासकार भी हैं। आप भोजपुरी भाषा के बड़े हिमायती हैं तथा भोजपुरी में बहुत-सी रचनाएँ भी की हैं। आजकल आप 'शाहाबाद' नामक साप्ताहिक पत्र के सम्पादक हैं।

(१)

बसन्ती हवा

जियरा में सबके हिलोरवा[7] उठावे लागल,
फूलवा खिलाके वोह प[8] भँवरा भुलावेला[9]।
रहियन[10] के दिलवा में अगिया लगावे लागल,
झोरि के वियोगिनिन के मनवा डोलावेला[11]।
हवा हऽ[12] बसन्त के कि काम के ई[13] बान हउवे[14],
जियतारे[15] कामदेव गते-से[16] बोलावेला।
बरछी के नोक अइसन लागेला करेजवा में,
जोगियन के दिलवा में बासना जगावेला।
लागते[17] वियोगिनिन के देहिया झुलसि देला,
इहे बड़ए[18] काम एकर[19] सबके सतावेला।
आवेला पहाड़ होके बिसधर ले बीस लेके,
छुवते सरीरवा के पागल बनावेला।
बिरहा से तन जेकर भीतरा से जरे खुद,
ऊपरा[20] से ओकरा के अवरू[21] जरावेला।
दिलवा में सूतल दारुन वेदनवा के,
झोरि-झोरि देहिया के बरबस उठावेला[22]।

(२)

घर के न घाट के

बानबे[23] में बैल बेचलीं, गाय बेचलीं[24] ग्यारह में,
बाईस में भइँस[25] बेचलीं, कहला से लाट[26] के।

---

१. है। २. उसमें। ३. टँगा हुआ है। ४. बदन, शरीर। ५. लीजिए। ६. शरण। ७. तरग। ८. उस पर। ९. मुग्ध करता है। १०. राहगीरों, पथिकों। ११. चंचल करता है। १२. है। १३. यह। १४. है। १५. जीते हैं। १६. धीरे से। १७. छूते ही। १८. है। १९. इसका। २०. ऊपर से। २१. और। २२. उठाता है, जाग्रत करता है। २३. ६२) रुपये। २४. बेच दिया। २५. भैंस। २६. अँगरेजी-शासन के गवर्नर (राज्यपाल)।

सूद पऽ सवा सौ ले लीं[1] दाखिल जमानत[2] कइलीं।
चीज सब बेंच देलीं, भाइयन से बाँट[3] के
साते सव में सात पाई[4] जमीन्दारी बेचि देलीं,
सीसो[5] सात पेड़ बेचलीं सैंतीस[6] में काट के।
मेम्बरो[7] ना भइलीं[8], भइल जब्ती जमानत के,
खब्ती के मारे भइलीं घर के न घाट के।!

विमला देवी 'रमा'

आपका निवास-स्थान डुमराँव (शाहाबाद) है। आप वहीं के मुन्तजिम घराने की शिक्षित महिला हैं। आप हिन्दी में भी कविता करती है और हिन्दी की लेखिका भी हैं। आपके पिता मुंशी भागवतप्रसाद आरा नगर के प्रतिष्ठित वकील, रईस और सुविख्यात संगीतज्ञ थे।

(१)

मंद मंद धीरे-धीरे पार नइया लावेला
गंगा के तरंग धार भँवर बचावेला
बिघिन[9] अनेक नासि[10] घाट पर लगावेला
आदर सहित लोकनाथ[11] के उतारेला
चरण-कमल धरि माथ के नवावेला[12]
टप-टप लोर[13] चुवे बोली नाहीं आवेला

(२)

बाँटेला[14] चरण जल अँजुरी-अँजुरिया[15]।
पीवेला[16] मुदित मन बहुरी-बहुरिया[17]
जनम के रोगी जनु पावे अमरीतिया[18]
कहा बाटे आचमनी सोने के कटोरिया
तुलसी के दल कहाँ, कहाँ बा पुजरिया[19]
नेकु[20] ना अघाय पीवे भरी-भरी थरिया[21]
सुधि ना रहल तन-मन मस्तनिया[22]
राम जस गाइ-गाइ लोटेला[23] धरनिया[24]
कबहुँ सम्हारि उठे काछेला[25] कछनिया[26]
घुमी-घुमी नाचे जैसे नाचेला नर्तनिया[27]
नाथ कुसुम गात देखि, देखी भक्त-गतिया[28]
सिया-लछुमन कहे हँसि-हँसि बतिया॥

१. लिया, कर्ज काढ़ा। २. चुनाव लड़ने के लिए जमा की जानेवाली रकम। ३. बँटवारा करके। ४. सात अँगरेजी पाई की हिस्सेदारी। ५. शीशम वृक्ष। ६. सतीस रुपये में। ७. विधान-सभा या जिला बोर्ड के सदस्य। ८. हुआ। ९. विघ्न। १० नष्ट करके। ११. राजा रामचन्द्र। १२. झुकाता है। १३. आँसू। १४. बाँटता है। १५. भर-भर अंजलि। १६. पीता है। १७. बार-बार, पुनः-पुनः। १८. अमृत। १९. पुजारी। २०. थोड़ा। २१. थाली। २२. मस्तानापन। २३. लोटता है। २४. पृथ्वी पर। २५. कमर में लपेटता है। २६. कछनी, कटि-वस्त्र। २७. नर्तक। २८. भक्त की दशा।

मनोरंजनप्रसाद सिंह

आपका जन्म १० अक्टूबर को, सन् १९०० ई० में, सूर्यपुरा (शाहाबाद) में हुआ था। आपके पिता श्रीराजेश्वरप्रसाद सदर-आला (सब जज) थे। आपका परिवार बाद को डुमराँव (शाहाबाद) जाकर बस गया। आपकी भोजपुरी रचना 'फिरंगिया' की ख्याति असहयोग-युग में बहुत हुई थी। आप पहले हिन्दू-विश्वविद्यालय (काशी) में अँगरेजी के प्रोफेसर थे। अब आप राजेन्द्र कॉलेज (छपरा) के प्रिन्सिपल हैं। आप बिहार प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के मोतीहारीवाले अधिवेशन के सभापति हो चुके हैं। आप हिन्दी के भी प्रसिद्ध कवि और विद्वान् लेखक हैं। आपकी कितनी ही भोजपुरी कविताएँ अत्यन्त सरस और भावपूर्ण हैं।

(१)

फिरंगिया

सुन्दर सुघर भूमि भारत के रहे[१] रामा, आज इहे[२] भइलऽ[३] मसान[४] रे फिरंगिया
अन्न धन जन बल बुद्धि सब नास भइल, कौनो के ना रहल निसान रे फिरंगिया
जहँवाँ थोड़े ही दिन पहिले ही होत रहे, लाखो मन गल्ला और धान रे फिरंगिया
उहें[५] आज हाय रामा! मथवा पर हाथ धरि[६], बिलखि के रोवेला किसान रे फिरंगिया
हाय दैव! हाय! हाय!! कौना पापे भइल बाटे, हमनी[७] के आज अइसन हाल रे फिरंगिया
सात सौ लाख लोग दू-दू साँझ[८] भूखे रहे, हरदम पड़ेला अकाल रे फिरंगिया
जेहु कुछ बाँचेला[९] त ओकरो[१०] के लादि-लादि, ले जाला समुन्दर के पार रे फिरंगिया
घरे लोग भूखे मरे, गेहुँआ बिदेस जाय, कइसन बाटे जग के व्यवहार रे फिरंगिया
जहँवाँ के लोग सब खात ना अघात रहें, रुपया से रहे मालामाल रे फिरंगिया
उहें आज जेने-जेने[११] अँखिया घुमाके देखु, तेने-तेने[१२] देखबे कंगाल रे फिरंगिया
बनिज-बेपार[१३] सब एकउ[१४] रहल नाहीं, सब कर होइ गइल नास रे फिरंगिया
तनि-तनि बात लागि हमनी का हाय रामा, जोहिले[१५] बिदेसिया के आस रे फिरंगिया
कपड़ो जो आवेला बिदेश से तो हमनी का, पेन्ह के रखिला निज लाज रे फिरंगिया
आज जो बिदेसवा से आवेना कपड़वा तऽ, लंगटे[१६] करब जा निवास रे फिरंगिया
हमनी से सस्ता[१७] में रुई लेके ओकरे से, कपड़ा बना-बना के बेचे रे फिरंगिया
अइसहीं अइसहीं दीन भारत के धनवाँ के, लूटि-लूटि ले जाला बिदेसे रे फिरंगिया
रुपया चालिस कोट[१८] भारत के साले-साल[१९], चल जाला दूसरा के पास रे फिरंगिया
अइसन जो हाल आउर[२०] कुछ दिन रही रामा, होइ जाइ भारत के नास रे फिरंगिया
स्वाभिमान लोगन में नामों[२१] के रहल नाहीं, ठकुरसुहाती बोले बात रे फिरंगिया
दिन रात करे ले खुसामद सहेबवा[२२] के, चाटेले बिदेसिया के लात[२३] रे फिरंगिया
जहँवाँ भइल रहे राजा परताप सिंह, और सुरतान[२४] अइसन वीर रे फिरंगिया
जिनकर टेक रहे जान चाहे चलि जाय, तबहू नवाइब[२५] ना सिर रे फिरंगिया

१ थी। २. वही। ३. हुई। ४. श्मशान। ५. वहीं। ६. माथ पर हाथ धरना (मुहावरा)=झींखना, चिन्ता की मुद्रा। ७. हमलोग। ८. सन्ध्या। ९. बचता है। १०. उसको। ११. जिधर-जिधर। १२. उधर-उधर। १३. वाणिज्य-व्यापार। १४. एक भी। १५. जोहते हैं। १६. नंगे। १७. सस्ता। १८. कोटि, करोड़। १९. प्रतिवर्ष। २०. और। २१. नाम मात्र भी। २२. साहब (अँगरेज)। २३ लात चाटना (मुहावरा)=खुशामद करना। २४. औरंगजेब के समय में सुरतान सिंह 'शिरोही' नरेश थे, जिन्होंने किसी के आगे सिर नहीं झुकाया। औरंगजेब के दरबार में वे छोटे दरवाजे से लाये गये, ताकि वे सिर झुका कर घुसेंगे, तो वही प्रणाम समझा जायगा; किन्तु उस वीर ने पहले अपना पैर घुसाया और टेढ़ा होकर अन्दर प्रवेश किया। यह इतिहास-प्रसिद्ध घटना है। राजस्थान में शिरोही एक राज्य है, जहाँ की बनी तलवार मशहूर है। २५. झुकाऊँगा।

उहँवे के लोग आज अइसन अधम भइले, चाटेले बिदेसिया के लात रे फिरंगिया
सहेबा के खुसी लागी[१] करेलन सबहीन[२], अपनो भइअवा[३] के घात रे फिरंगिया
जहँवाँ भइल रहे अरजुन, भीम, द्रोण, भीषम, करन सम सूर रे फिरंगिया
उहें आज झुंड-झुंड कायर के बास बाटे, साहस वीरत्व भइल दूर रे फिरंगिया
केकरा[४] करनिया[५] कारन हाय भइल बाटे हमनी के अइसन हवाल[६] रे फिरंगिया
धन गइल, बल गइल, बुद्धि गइल, विद्या गइल, हो गइलीं जा निपटे[७] कंगाल रे फिरंगिया
सब बिधि भइल कंगाल देस तेहू पर[८], टीकस[९] के भार तें[१०] बढ़ौले रे फिरंगिया
नून पर टिकसवा, कूली पर टीकसवा, सब पर टिकसवा लगौले रे फिरंगिया
स्वाधीनता हमनी के नामों के रहल नाहीं, अइसन कानून के बरे[११] जाल रे फिरंगिया
प्रेस ऐक्ट, आर्म्स ऐक्ट, इंडिया डिफेंस ऐक्ट, सब मिलि कइलस[१२] ई हाल रे फिरंगिया
प्रेस ऐक्ट लिखे के स्वाधीनता के छीनलस, आर्म्स ऐक्ट लेलस हथिआर रे फिरंगिया
इंडिया डिफेंस ऐक्ट रच्छक के नाम लेके, भच्छक के भइल अवतार रे फिरंगिया
हाय ! हाय ! केतना जुबक भइले भारत के, ए जाल में फँसि नजरबंद रे फिरंगिया
केतना सपूत पूत एकरे करनवा[१३] से पड़ले पुलिसवा के फंद रे फिरंगिया
अजो[१४] पंजबवा के करिके सुरतिया[१५] से फाटेला करेजवा हमार रे फिरंगिया
भारते के छाती पर भारते के बचवन के, बहल रकतवा[१६] के धार रे फिरंगिया
छोटे-छोटे लाल सब बालक मदन सब, तड़पि-तड़पि देले जान रे फिरंगिया
छटपट करि-करि बूढ़ सब मरि गइले, मरि गइले सुघर जवान रे फिरंगिया
बुढ़िया महतारी[१७] के लकुटिया[१८] छिनाइ गइल[१९], जे रहे बुढ़ापा के सहारा रे फिरंगिया
जुबती सती से प्राणपति हा बिलग भइल, रहे जे जीवन के अधार रे फिरंगिया
साधुओ के देहवा पर चूनवा के पोति-पोति, रंडि आगे लँगटा[२०] करौले रे फिरंगिया
हमनी के पसु से भी हालत खराब कइले, पेटवा के बल रेंगअवले[२१] रे फिरंगिया
हाय ! हाय ! खाय सबे रोवत बिकल होके, पीटि-पीटि आपन कपार रे फिरंगिया
जिनकर हाल देखि फाटेला करेजवा से, अँसुआ बहेला चहुँधार[२२] रे फिरंगिया
भारत बेहाल भइल लोग के ई हाल भइल, चारों ओर मचल हाय-हाय रे फिरंगिया
तेहू पर[२३] अपना कसाई अफसरवा के, देले नाहीं कवनो सजाय रे फिरंगिया
चेति जाउ चेति जाउ भैया रे फिरंगिया से, छोड़ि दे अधरम के पंथ रे फिरंगिया
छोड़ि दे कुनीतिया सुनीतिया के बांह गहु, भला तोर करी भगवन्त रे फिरंगिया
दुखिआ के आह तोर देहिआ भसम करी[२४], जरि-भूनि[२५] होइ जइबे छार रे फिरंगिया
ऐहीसे[२६] त कहतानी[२७] भैया रे फिरंगी तोहें, धरम से करु तें बिचार रे फिरंगिया
जुलुमी कानून ओ टिकसवा के रद क दे, भारत के दे दे तें स्वराज रे फिरंगिया
नाहीं तऽ ई सांचे-सांचे तोरा से कहत बानी, चौपट हो जाइ तोर राज रे फिरंगिया
तेंतिस करोड़ लोग अँसुआ बहाई ओमें[२८] बहि जाई तोर समराज[२९] रे फिरंगिया
अन्न-धन-जन-बल सकल बिलाय[३०] जाई, डूब जाई राष्ट्र के जहाज रे फिरंगिया

---

१. के लिए। २. सभी लोग। ३. भाई-बन्धु। ४. किसके। ५. करनी, करतूत। ६. हाल। ७. अत्यन्त। ८. उस पर भी। ९. कर। १०. तुम। ११. बटता है, बुनता है। १२. किया। १३. कारण। १४. आज भी। १५. स्मृति, याद। १६. रक्त। १७. माता। १८. लकुटी, लकड़ी। १९. छिन गई। २०. नंगा। २१. रेंगाया (पेट के बल चलाया)। २२. चौमुखी धारा से। २३. उस पर भी। २४. कर देगा। २५. जल-भुन कर। २६. इसी से। २७. कहते हैं। २८. उसमें। २९. साम्राज्य। ३०. लुप्त हो जायगा।

(२)

तबके जवान अब भइले पुरनिआ

अबहूँ कुहुकिएके[१] बोलेले कोइलिआ, नाचेला मगन होके मोर।
अबहूँ चमेली बेली फूले अधिरतिआ, हियरा में उठेला हिलोर॥
अबहूँ अँगनवाँ में खेलेला बलकवा, कौआ मामा चीलिहआ-चिल्होर[२]।
अबहूँ चमकिएके[३] चलेले तिरिअवा[४], ताकेले भुँइअवे[५]के ओर॥
चोरी-चोरी अबो गोरी करेली कुलेलवा[६], चोरी-चोरी आवे चितचोर।
भूलि जाला सुधबुध कामकाज लोक-लाज, करेले जवानी जब जोर॥
दुनिआ के रंग ढंग सब कुछ ऊहे[७] बाटे, ओइसने बा[८] जोर अउरी सोर।
कुछओ ना बदलल, हमहीं बदल गइलीं बदलल तोर अउरी मोर॥
तबके जवान अब भइले पुरनिआ[९], देहिआ भइल कमजोर।
याद जब आवेला पुरनका जमनवा[१०], मनवा में होखेला ममोर[११]॥
कुछ दिन अउरी धीरज धरु मनवा, जिनगी[१२]के दिन बाटे थोर।
पाकल पाकल केसिआ में लागेना करिखवा[१३], रामजी से करु ई[१४]निहोर[१५]॥

(३)

मातृभासा और राष्ट्रभासा

दोहा

जय भारत जय भारती, जय हिंदी, जय हिंद।
जय हमार भासा बिमल, जय गुरु, जय गोबिंद॥

चौपाई

ई हमार हऽ आपन बोली। सुनि केहू जनि करे ठठोली॥
जे जे भाव हृदय के भावे[१६]। ऊहे उतरि कलम पर आवे॥
कबो[१७] संसकृत, कबहूँ हिंदी। भोजपुरी माथा के बिंदी॥
भोजपुरी हमार हऽ भासा। जइसे हो जीवन के स्वांसा॥
जब हम ए दुनिआ में अइलीं। जब हमई मानुस तनु पइलीं॥
तबसे जमल[१८] रहल जे टोली। से बोले भोजपुरिआ बोली॥
हमहू ओही में[१९] तोतरइलीं[२०]। रोअलीं हँसलीं बात बनइलीं॥
खेले लगलीं घुघुआमाना[२१]। उपजल धाना[२२], पवलीं[२३]खाना॥
चंदा मामा आरे[२४] अइले। चंदा मामा पारे[२५] अइले॥
ले ले अइले सोन कटोरी। दूध भात ओकरा में[२६] घोरी[२७]॥

दोहा

बबुआ के मुँह में घुटुक[२८], गइल दूध ओ भात।
ओकरा पहिले कान में पड़ल मधुर मृदु बात॥

---

१. कुहुक कर ही। २. चील पक्षी। ३. भाव-भंगी के साथ। ४. स्त्री। ५. भूमि, पृथ्वी। ६. केलि-क्रीडा। ७. वही। ८. उसी तरह का ९. वृद्ध। १०. जमाना, युग। ११. पैंठन। १२. जिन्दगी। १३. कालिख, कलंक-कालिमा। १४. यह। १५. बिनती। १६. अच्छा लगे। १७. कभी। १८. इकट्ठी रही, जमी रही। १९. उसी में। २०. तोतली बोली बोलने लगा। २१. बच्चों को बहलाने का एक खेल। २२. धान। २३. पाया। २४. इस पार। २५. उस पार। २६. उसमें। २७. घोल दिया। २८. बच्चे के मुँह में धीरे कौर देना।

चौपाई

पढ़आ-लिखुआ[1] क रहें माफ। हम त बात कहीले साफ॥
हमरा ना केहू से बैर। ना खींचब[2] केहू के पैर॥
हम तऽ सबके करब भलाई। जेतना हमरा से बन पाई॥
हिंदी हऽ भारत के भासा। ऊहे एक राष्ट्र के आसा॥
हम ओकरो भंडार बढ़ाइब। ओहू में बोलब ओ गाइब॥
तबो न छोड़ब आपन बोली। चाहे केहू मारे गोली॥
जे मगही तिरहुतिआ भाई। उनहू से हम कहब बुझाई॥
ऊहो बोलसु आपन बोली। भरे निरंतर उनको झोली॥

दोहा

हम चाहीं सबके भला, जन-जन के कल्यान।
जनमें बने जनारदन, भगवा[3] में भगवान॥

(४)

कौआ-गीत

कौआ भोरे-भोरे[4] बोलेला से मोरे अँगना ॥टेक॥
ए कौआ के बात न सुनिहऽ ई हऽ राजा इन्द्र आइल ठगना[5] ॥ कौआ०
ए कौआ के दूरे भगावऽ ई तऽ जयंत हऽ कुटिल-मना ॥ कौआ०
चिहुँकल[6] चारों ओर गरदन घुमावेला[7] एके आँखे देखेला हजार नयना ॥ कौआ०
ना हम इंद्र, ना इंद्र के बेटा हम खग अधम उड़ीले[8] गगना ॥ कौआ०
हम तऽ खाईले[9] राजा राउरे[10] जूठन, साफ करे आईले राउरे अँगना ॥ कौआ०
हम तऽ सेईले राजा दोसरे के अंडा, जीअतीं[11] ना कोइलरि[12] हमारा बिना ॥ कौआ०
लोग कहेला हमरा जीभा[13] में अमरित[14], हम नाहीं कपटी-कुटिल-बधना ॥ कौआ०
बहूजी के कहला से अँगना में उचरीलें[15], उचरीले कब अइहें प्रिय पहुना ॥ कौआ०
हमरा के भेजले हऽ बाबा भुसुंडी काँव-काँव राम[16] बाड़े कौना अँगना ॥ कौआ०

विन्ध्यवासिनी देवी

श्रीमती विन्ध्यवासिनी देवी बिहार की लोक-संगीत गायिका हैं। इनका जन्म सन् १६१७ ई० में मुजफ्फरपुर में हुआ। बचपन से ही संगीत में इनकी अभिरुचि थी। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा मुजफ्फरपुर के चैपमैन गर्ल्स स्कूल में हुई। घर पर ही पढ़कर इन्होंने साहित्य सम्मेलन की परीक्षाएँ पास कीं। पहले आर्यकन्या-विद्यालय (पटना) में हिन्दी अध्यापिका थीं। आजकल ऑल इंडिया रेडियो (पटना) में लोकगीत गायिका हैं। इनके संगीत के रेकार्ड भारत के हर रेडियो-स्टेशन से प्रसारित हुआ करते हैं। ये भोजपुरी के अतिरिक्त हिन्दी, मगही, मैथिली में भी रचना करती हैं।

१. शिक्षितजन। २. पैर खींचना (मुहावरा)=आगे बढ़ने से रोकना। ३. लँगोटी। ४. प्रभात वेला में। ५. ठगनेवाला। ६. चौकन्ना होकर। ७. घुमाता है। ८. उड़ता हूँ। ६. खाता हूँ। १०. आपका ही। ११. जीवित। १२. कोयल। १३. जिह्वा। १४. अमृत। १५. प्रिय के शुभागमन की सूचना देता हूँ (मंगल का उच्चारण करता हूँ)। १६. कागभुसुंडी के इष्टदेव 'राम' कहाँ हैं, काँव-काँव करके यह पूछता हूँ।

(१)

बरसाती

भावे[१] ना मोहि अँगनवाँ,[२] बिनु मोहनवाँ[३]।
बादल गरजेला चमके बिजुरिया तापर बहेला पवनवाँ।
जैसे सावन में झहरत[४] बूँदिया, वइसे झरेला[५] मोर नयनवाँ।
कुबजा सवत साजन बिलमावल, जाइ बसल[६] मधुबनवाँ।
अबले[७] सखि! मोर पिया ना आयल[८] बीतल मास सवनवाँ।
'विन्ध्य' कहे जिया धड़केला[९] सजनी, कगवा[१०] बोलत बा अगनवाँ।

(२)

धनकटनी

धनकटनी[११] के बहार अगहनवाँ में।
बोझा बाँधल बाटे धान, मन गाजतऽ[१२] किसान,
देखि भरल खरिहान[१३], अगहनवाँ में॥
देखऽ गंगा के ओह[१४]पार, जेकरा[१५] कहत दिआर[१६],
जहवाँ खेतिहर होनिहार[१७] अगहनवाँ में॥
गोइंठा[१८]जोरि गोलाकार, लिटिया[१९]लट्टू के आकार।
ततले[२०] खिचड़ी मजेदार, अगहनवाँ में॥
अन्दर सूबे बिहार 'विन्ध्य' कहत पुकार।
नयका[२१] चिउरा[२२] के बहार अगहनवाँ में॥

हरीशदत्त उपाध्याय

आप आजमगढ़ शहर के निवासी हैं। आपने भोजपुरी में महाकवि कालिदास के 'रघुवंश' काव्य का स्वतंत्र अनुवाद किया है। यह बाईस सर्गों में समाप्त है। इसका चौथा तथा पाँचवाँ सर्ग 'विश्वमित्र' और 'आज' नामक पत्रों में प्रकाशित हो चुका है। यह मौलिक रचना है। आपने राष्ट्रीय आन्दोलनों पर भी कविताएँ रची हैं। आपकी भोजपुरी में आजमगढ़ी बोली का पुट है। रघुवंश से कुछ उदाहरण नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

(१)

कथा-प्रवेश (प्रथम सर्ग)

त्रेता में दिलीप एक टे[२३] रहलें त महीप भाई,
उ[२४] मना में सोचैं दिन-रात।
तीनों पना[२५] बीति गैलें, ऐलें बिरधापनवा ,
नाहीं ओनेकें[२७] ऐक्को भैले जब त सनतनवा,

१. भावे=अच्छा लगना। २. आँगन। ३. मनमोहन (प्रियतम)। ४. झड़ी लगाना। ५. आँसू गिरना। ६. बस गया। ७. अबतक। ८. आया। ९. धड़कता है। १०. काग, कौआ। ११. धान की कटाई। १२. गाजता है, प्रसन्न होता है। १३. खलिहान। १४. उस। १५. जिसको। १६. दियारा=गंगा के दोनों तटों के आस-पास की भूमि, जिस पर बाढ़ में नई मिट्टी पड़ जाती है। १७. होनहार, उत्साही। १८. उपले, गोबर के सूखे कण्डे। १९. बाटी। २०. गरमागरम। २१. नया। २२. चूड़ा (खाद्य पदार्थ)। २३. संख्यावाचक। २४. वे (दिलीप)। २५. अवस्था। २६. वृद्धावस्था। २७. उधर के, बीती अवस्थाओं के।

नाहीं समझ पावें एकर[1] का हउवे[2] करनवा,
काहे रुकल हउए मोसे[3] मोर खनदनवा,
के मोर बेलसी[4] राजपाट, के बेलसी खजनवा,
कैसे तीनो छूटी मोरा ऋनवा[5] जहनवा,
केकर नाहीं पूरन कैलीं[6], हम माँगल चहनवा[7],
कवन छोड़लीं दान-बरत[8] कवन हम नहनवाँ[9],
कवने स्रुति असमृति कै ना मनलीं कहनवा[10],
नाहीं केहू के वंश कै त हम कैलीं दहनवा[11],
प्रभु के चरन कै सदा हम कैलीं भजनवा,
नाहीं हम सतौलीं कब्बो[12] गऊ औ बभनवा,
नाहीं निरदोषी के त देहलीं जेलखनवा,
नाहीं कौनो भूलि के त आवेला धियनवा,
बिना एकठै सन्तति के त धिरिक[13]हो जियनवा[14],
मन में इहै भूप सोचै दिन-रात ॥

छूटि गयल दाना-पानी[15],छूटल अब सयनवा[16],
मारे फिकिर[17]के ओनकर[18]पियराय गएल बदनवा,
पौलीं पता रानी ओनकर जब अन्दर भवनवा,
पूछें हाथ जोड़ि सोचऽ तूँ कवने करनवा,
जब ले हउएँ गुरुजी के दुनिया में चरनवा,
कवने चिजिया[19] के तोहरे होय गयल हरनवा[20],
काहे करऽ सोच सजन तूँ, करऽ बखनवा,
चलबे तूहैं लेइके अब्बै गुरु के सरनवा,
नाहीं टरि सकत ओनकर तिल भर बरदनवा,
पूछत औ दबावत चरन होइ गइलैं बिहनवा[21],
मनमें इहैं सोचैं दिन-रात ॥
कहेले 'हरीश' बीति गइलीं ऐसे रात,
तब राजा रानी से बोलेलें बात ॥

रघुवंशनारायण सिंह

आपका जन्म-स्थान 'बबुरा' ग्राम (थाना बड़हरा, जिला शाहाबाद) है। आप काँगरेस-कार्य्यकर्त्ता और हिन्दी के भी लेखक हैं। आपके ही उद्योग से आरा नगर से 'भोजपुरी' मासिक पत्रिका निकलती है। उसके सम्पादक और संचालक भी आप ही हैं। भोजपुरी की उन्नति के लिए आप तन-मन धन से सतत सचेष्ट रहते हैं। उक्त पत्रिका आपके उत्साह से भोजपुरी-साहित्य की प्रशंसनीय सेवा कर रही है। आपकी निम्नलिखित कविता बिहार-सरकार के प्रचार विभाग द्वारा पुरस्कृत हो चुकी है—

१. इसका। २. क्या है। ३. मुझमे। ४. भोग-विलास करेगा? ५. तीन ऋण (देव-ऋण, ऋषि-ऋण, पितृ-ऋण ।) ६. पूर्ण किया। ७. अभिलाष, चाह, मनोरथ। ८. व्रत। ९. तीर्थस्नान। १०. कथन, उपदेश। ११. नाश, दहन। १२. कभी। १३. धिक्कार। १४. जीवन। १५. भोजन। १६. नींद। १७. फिक्र, चिन्ता। १८. उनका। १९. चीज, वस्तु। २०. हरण। २१. प्रभात।

एगो[1] बलका[2] रहिते गोदिया में खेलइतीं ननदी ॥ टेक ॥
देश-भगति के पाठ पढ़इतीं, देस-दसा समुझइतीं,
जे केहु देस के खातिर मरलें[3], उनकर याद दिलइतीं[4] ॥ हो खेल० ॥
होम-गाड में भरती करइतीं, परेड उनका सिखइतीं,
कान्ह[5] प लेके बनुकिया[6] चलितें, छाती देखि जुड़इतीं ॥ हो खेल० ॥
परेड कसरत से देह बनइतें, सोभा आपन बढ़इतीं,
गाँव-नगर के रछेआ[7] करितें, बीर सपूत बनइतीं ॥ हो खेल० ॥
आफत-बिपति जब देस प अइतें, आगे उनके बढ़इतीं,
मारि भगइतें देस-दुसमन के, बीर मतारी[8] कहइतीं ॥ हो खेल० ॥
गाँधी-नेहरू-बलभ भाई के, कीरति-गीत सुनइतीं,
हाथ में देके तिरंगा झंडा, बिजयी बीर बनइतीं[9] ॥ हो खेल० ॥

महादेवप्रसाद सिंह 'घनश्याम'

आप ग्राम 'नचाप' (हरदिया, शाहाबाद) के निवासी हैं। आप भोजपुरी के अच्छे कवि हैं। भोजपुरी के प्राचीन 'सती सोरठी योगी बृजाभार', 'कुँअर विजयमल्ल', 'लोरिकायन,' 'शोभानायक बनजारा'* आदि प्रबन्ध-काव्यों के अच्छे गायक तथा लेखक हैं। आपकी लिखी 'सती सोरठी योगी बृजाभार' पुस्तक ६६ भागों में है। इसका मूल्य ८) है। यह पुस्तक स्वतन्त्र रूप से लिखी गई है; परन्तु कहानी पुरानी है। कवि में कवित्व-शक्ति अच्छी है। आपको 'पवाँरा कैसेरे-हिन्द' की उपाधि भी मिली है, जो पुस्तक पर छपी है। 'कुँअर विजयमल्ल' बत्तीस भागों में समाप्त हुआ है। इसकी कीमत ३) है। आपने 'भाई-विरोध' और 'जालिम सिंह' नाटक भी लिखे हैं। इनमें भोजपुरी गद्य और पद्य दोनों का प्रयोग हुआ है। भोजपुरी के प्रसिद्ध कवि भिखारी ठाकुर की रचनाओं की तरह आपकी पुस्तकें भी बहुत लोकप्रिय हैं। भोजपुरी भाषा की आपने काफी सेवा की है। आपके नाटकों के कथानक समाज-सुधार की दृष्टि से लोकोपयोगी हैं।

(१)

सोहर

प्रथम गनेस पद बंदन चरन मनाइले[10] हो।
ललना बिघिनहरन गननायक मंगलदायक हो ॥
चढ़ि गइले पहिला महिना सो मन फरियाइल[11] हो।
ललना नाहीं भावे सुखके सेजरिया[12] सो रतिया डेरावन हो ॥
दूसरहीं चढ़ले महिनवाँ, ना अन्न नीक[13] लागेला हो।
ललना देहियाँ में आवेला घुमरिया[14] सो, आलस सतावेला हो ॥
चढ़ी गइले तीसरे महिनवाँ ना दिल कहुँ[15] लागेला हो।
ललना रही रही आवेला ओकइया[16] सो कुछ नाहीं भावेला[17] हो ॥
चउथा ही चढ़ले महिनवाँ जम्हाई आवे लागेला हो।
ललना नहीं भावे घर मे अगनवाँ सो मन घबड़ाएला हो ॥

१. एक भी। २. बालक। ३. मर गये (शहीद हो गये)। ४. दिलाती। ५. कन्धा। ६. बन्दूक। ७. रक्षा। ८. माता। ९. बनाती। * इन पुस्तकों का प्रकाशक—ठाकुर प्रसाद बुकसेलर, राजादरवाजा, बनारस। १०. मनाता या सुमिरता हूँ। ११. वमन करने की प्रवृत्ति। १२. शय्या। १३. अच्छा। १४. चक्कर, घूर्मि। १५. कहीं भी। १६. वमन। १७. अच्छा लगना।

पाँच-छव बीति गइले मासवा सो देहियाँ पहाड़ भइली हो।
ललना नाहीं तन होखेला सम्हार[1], सो दुखवा सतावेला हो॥
सातवाँ सो बितले महिनवाँ सो आठवाँ पुरन भइले[2] हो।
ललना नाहीं आवे अँखिया निनरिया[3] सो जियरा बेहाल भइले हो॥
'महादेव' यह सुख गावत, गाइ सुनावत हो।
ललना रानी दुखे भइली बेआकुल पीर ना सहल जावे हो॥

(२)

मेला-घुमनी

परमपिता परमेसर के ध्यान धरी, लिखतानी[4] सुनु चित लाय मेला-घुमनी[5]॥
आवेला सिराती[6] मेला, ददरी[7], मकर[8] आदि, करे लागे आगे से[9] सलाह मेला-घुमनी॥
महुअरि[10], ठेकुआ[11], गुलउरा[12] पकाइ लेली[13], सातू-नून[14]मरीचा-अँचार मेला-घुमनी॥
चाउर[15], पिसान[16],दाल,चिउरा[17] के मोटरी[18]से, सकल समान[19]लेइ लेली मेला-घुमनी॥
तिसी-तोरी[20] बेचीं कर पइसा[21] जुटावेली[22] मे, मेलावा में खायेके मिठाई मेला-घुमनी॥
गहना ना घरे रहे, मगनी[23] ले आवे मॉगि, करे लागे रूप के सिंगार मेला-घुमनी॥
बाहें[24]बाजू[25],जोसन,[26]बगुरिया[27], पहुँचि[28]पेन्हे, गरवा[29]में हलका[30]झुलावे मेला घुमनी॥
सारी लाल-पीली पेन्हि ओढ़ली चदरिया से, कर लिहली[31] सोरहो सिंगार मेला-घुमनी॥
काने कनफूल पेन्हें, सीकरी[32], झुमक पेन्हें, टिकुलो चमकेले लिलार[33] मेला-घुमनी॥
मेलवा में जाये खातिर घरवा में झगरने, राह में चलेली चमकत मेला-घुमनी॥
चारि जानी आगे भइलीं, चारी जानी पीछे भइलीं, डेढ़िया[34] झूमर गावे लागे मेला-घुमनी॥
मरद के कम भीड़, मउगी के ठेला-ठेली, मेलवा में मारेली नजारा[35] मेला-घुमनी॥
आँचरा में गुड़-चिउरा भसर-भसर[36] उड़े, गप-गप गटकेली[37] लीटी[38] मेला-घुमनी॥
नैहर-ससुरा के लोग से जो भेंट होखे, बीचे राहे रोदन पसारे[39] मेला-घुमनी॥
डेरा डाले जान-पहिचान कीहाँ[40] जाइकर, बैठेली होई सलतन्त[41] मेला-घुमनी॥
आगी सुलगाये लागे, चिलम चढ़ावे लागे, पुड़-पुड़ हुक्का पुड़पुड़ावे मेला घुमनी॥
लुगा[42] झूला[43] लेइकर चलेली नहाय लागी[44], कितना लड़ावे तोसे आँखी मेला-घुमनी॥
करी असनान जल चलेली चढ़ावे लागी, पण्डवा गहेले तोर बाँह मेला-घुमनी॥
जलवा चढ़ाइ जब चलली मन्दिर में से, भीड़िया में गुण्डा दरकचे मेला-घुमनी॥
चोर-बटमार तोरा पीछे-पीछे लागि गइले, तजबीज[45] करे लागे दाव[46] मेला-घुमनी॥
भीड़िया[47] में घिरि गइली नाक-कान चोंथी लेले[48], मैया-दैया करि सिर धुने मेला-घुमनी॥

१. देह का सँभार न होना (मुहावरा)=तिलमिलाना। २. पूरा हुआ। ३. नींद। ४. लिखता हूँ। ५. मेले में घूमनेवाली शौकीन स्त्री। ६. शिवरात्रि का मेला। ७. भृगुक्षेत्र (बलिया) में लगनेवाला बड़ा मेला। ८. मकर-संक्रान्ति का मेला। ९. पहले से ही। १०. महुआ, गुड़ और चावल या गेहूँ के आटे से बना पकवान। ११. आटा और गुड़-घी से बना पकवान। १२. आटा और गुड़-घी के संयोग से बना गुलगुल्ला (मीठी पुलौरी)। १३. पका लेती हैं। १४. सत्तू और नमक। १५. चावल। १६. आटा। १७. चूड़ा। १८. गठरी। १९. सामग्री। २०. सरसों। २१. पैसा। २२. संग्रह करती है। २३. दूसरे से माँगकर लाई हुई चीज। २४. बाँह में। २५. बाजूबन्द। २६. बाँह का गहना (जोशन)। २७-२८. कलाई पर पहनने के गहने। २९. गला। ३०. गले का गहना। ३१. लिया। ३२. सिर पर पहनने का एक गहना। ३३. ललाट। ३४. पारी-पारी से आगे-पीछे गाने की रीति। ३५. नजारा मारना—(मुहावरा)=आँख लड़ाना। ३६. ताबड़तोड़ खाना। ३७. लीलती है। ३८. बाटी। ३९. रोने का स्वांग करना। ४०. के यहाँ। ४१. आराम से (सलतनत)। ४२. साड़ी। ४३. कुर्ती। ४४. वास्ते। ४५-४६. दाव तजबीज करना=(मुहावरा)=घात लगाना। ४७. भीड़। ४८. नोंच लिया।

हाला-गरगद[1] सुनि लोग बटुराइ[2] गइले, सब केहु तुहे[3] धिरकारे[4] मेला-घुमनी ।।
मेलवा के फल इहे नाक-कान दोनों गइले, गहना लगल तोरा डाँड़[5] मेला-घुमनी ।।

युगलकिशोर

आपका पूरा नाम युगलकिशोर लाल है। आप आरा (शाहाबाद) के निकट एक ग्राम के निवासी हैं। आप सामयिक विषयों पर सुन्दर रचनाएँ करते हैं। आपकी कविताओं को बिहार सरकार के प्रचार-विभाग ने छपवाकर बटवाया है।

कुछ ना बुझात बा

कइसे[6] लोग कहत बा[7] कि कुछ ना बुझात बा[8] ।

× × ×

जब से सुराज आइल, आपन सब काज भइल,
सासन बिदेसी गइल राजपाट देसी भइल
आपन बेवहार[9] चलल, देसी प्रचार बढ़ल,
रोब, सूट-बूट उठल, कुर्त्ता के मान बढ़ल,
आपन सुधार होत दिन-दिन देखात बा[10] । कइसे० ।।१।।

सदियन के गइल राज हाथ में बा आइल आज,
समय कुछु लागी तब, बनी सब बिगड़ल काज,
सबके सहयोग चाहीं, बुद्धि के जोग चाहीं,
धीरज से काम लीहीं, लालच सब छोड़ि दीहीं,
बड़े-बड़े कामन के रचना अब रचात बा । कइसे० ।।२।।

कालेज-स्कूल के तादात[11] बढ़ल जात बा,
बेसिक स्कूल जगह-जगह पर खोलात बा,
सार्वजनिक शिक्षा के नेंव[12] भी दिआत बा,
गाँव में मोकदिमा के पंचाइत[13] भइल जात बा,
धीरे-धीरे कामन में उन्नति दिखात बा । कइसे० ।।३।।

अन्न उपजावे के रास्ता सोचाये लागल,
कोसी वो गडक के घाटी बन्हाये लागल,
गंगा सोनभद्र से नहर कटाये लागल,
जगह-जगह आहर वो पोखर खोदाये लागल,
अवरू उपजावे के रास्ता खोजात बा । कइसे० ।।४।।

१. हल्ला-गुल्ला। २. एकत्र होकर। ३. तुमको। ४. धिक्कार देते हैं। ५. दण्ड, जुर्माना। ६. कैसे। ७. कहते हैं। ८. मालूम पड़ता है। ९. व्यापार। १०. दीख पड़ता है। ११. तायदाद। १२. नींव। १३. ग्राम-पंचायत का संगठन।

जगे-जगे[1] तह तुड़ि[2] के कुँइआँ[3] खोदात बा,
बिजली का पंप से खेत पाटत जात बा,
पोखरा वो नदी में पंप लागे जात बा,
खेतो में सबके भी हिस्सा दिआत बा,
दुखिअन के अइसे गोहार[4] कइल जात बा। कइसे ॥५॥

मोतीचन्द सिंह

आप 'महजौली' (शाहपुरपट्टी, शाहाबाद) ग्राम के निवासी हैं। आपकी कई गीत-पुस्तकें प्रकाशित हैं।

पूर्वी

गलिया-के-गलिया[5] रामा फिरे रंग-रसिया[6], हो सँवरियो लाल[7]
कवन धनि[8] गोदाना[9] गोदाय, हो सँवरियो लाल ॥
अपनी महलिया भीतरा बोले रानी राधिका, हो सँवरियो लाल
हमू[10] धनि गोदाना गोदाय, हो सँवरियो लाल ॥
छतिया पर गोद मोरा कृष्ण हो बिहारी, हो सँवरियो लाल
नकिया[11] पर गिरिधर गोपाल, हो सँवरियो लाल ॥
हथवा में गोद रामा मुरली-मनोहर हो सँवरियो लाल
लीलरा[12] पर श्री नन्दलाल, हो सँवरियो लाल ॥
'मोतीचन्द' कर जोरि करत मिनतिया[13], हो सँवरियो लाल
दरस देखावो नन्दलाल, हो सँवरियो लाल ॥

श्यामबिहारी तिवारी 'देहाती'

आप 'बँसवरिया' (बेतिया, चम्पारन) ग्राम के रहनेवाले थे। आप हास्य-रस की कविताओं के लिए विख्यात थे। गम्भीर विषयों पर भी आपने अच्छी रचनाएँ की हैं। आपकी 'देहाती दुलकी' नाम की पुस्तिका भी प्रकाशित हो चुकी है। सामयिक, राजनीतिक तथा सामाजिक विषयों पर आपकी व्यंग्यात्मक सूक्तियाँ अनूठी हैं। आप दोहा छन्द में भी बहुत अच्छी भोजपुरी कविता करते थे।

सीखऽ

पुरुखन[14] के भुला गइलऽ, दिलेरी कहाँ से आवो ?
घोड़ा तऽ छुटिये गइल, गदहो के सवारी सीखऽ ॥
केहू-केहू अइसन[15] बा, जेकरा[16] धन-काबू[17] अधिका बा
दूनू[18] बहावे के होखे तऽ चढ़े के अटारी[19] सीखऽ ॥
एने-ओने[20] जइबऽ[21] तऽ पड़ जइबऽ फेरे में
घर में ढूके[22] के बा तऽ चीन्हे के दुआरी सीखऽ ॥

---

१ जगह-जगह। २. तह तोड़ना (मुहावरा)=पृथ्वी का स्तर तोड़ना। ३. कूप, कुँआ। ४. पुकार। ५. गली-गली। ६. रंगरसिक। ७. गीत का टेक। ८. सुन्दरी। ९. शरीर पर सुई से गोदे जानेवाले रंगीन चित्र, जो सुहाग के चिह्न माने जाते हैं। १०. हम भी। ११. नाक, नासिका। १२. ललाट। १३. विनती। १४. पूर्वजों। १५. ऐसा। १६. जिसको। १७. वैभव और बल-पौरुष १८. दोनों। १९. अटारी चढ़ना (मुहावरा)=कोठे पर जाना (वेश्यागमन)। २०. इधर-उधर। २१. जाओगे। २२. प्रवेश करना।

बबुआ 'पटना' से अइले, 'तुम-ताम[१]' में हो गइल मार
हम त कहते रहनीं कि बने के जवारी[२] सीखऽ ॥
बी० ए० त पास कइलऽ खेत बिका[३] गइल,
पहिलहीं कहनीं कि गड़े के किआरी[४] सीखऽ ॥
नोकरियो त नइखे मीलत, बोलऽ का करबऽ?
पाने[५] बेंचऽ, काटे के सुपारी सीखऽ ॥
कुछुऊ ना मीले त का[६] करबऽ, घरे रहऽ
डोरी के दाग पर चलावे के आरी[७] सीख ॥
आपन काम छोड़ के, खोजऽता लोग नोकरी
तिलाक[८]हुऽ तोहरो, आजे से लोहारी[९] सीखऽ ॥
नया बिआह भइल सासुए महतारी भइलीं[१०]।
गारी सुने के होखे तऽ रहे के ससुरारी सीख[११] ॥
ना कुछु होई तऽ नाच देखे के मिली त[१२] नू।
देकार काहे के रहबऽ चलऽ कँहारी[१३] सीखऽ ॥
अब लोग काहे ना पूछी? तोप के डर गइल
सब अएब[१४] छिपावे के होखे तऽ बनेके खदरधारी सीखऽ ॥
तू केहू[१५] के केहू[१६] हउवऽ[१७] जे केहू पूछो?
नोकरी के मन बा तऽ जोरे के नातादारी सीखऽ ॥

लक्ष्मण शुक्ल 'मादक'

आपका जन्मस्थान नगवा (सराव, देवरिया) ग्राम है। हिन्दी में भी आपने रचनाएँ की हैं। आपकी भोजपुरी रचनाएँ सरस होती हैं। सिवान (सारन) के भोजपुरी-साहित्य-सम्मेलन (सन् १९४६ ई०) में आपसे मेरी भेंट हुई थी। वहीं पर आपने निम्नलिखित रचना तत्काल रच कर मुझे दी थी—

आपन दसा

आपन हलिया[१८] सुनाईं कुँअर जी[१९], केकरा[२०] से करीं हम बयान।
अरथ-पिसचवा के पलवा[२१] में परिके मन मोर भइले मसान ॥
घरवा से चललीं त तिरिया[२२]फुलइलीं[२३],जात बाड़े सइयाँ[२४] सिवान[२५]।
कुछ धन पइहें बिदइया में सइयाँ त फगुआ के होइहें ठिकान ॥
दूनों बिटियवन[२६] के लुगवा[२७]फटल बा[२८],त हमरो उघरि गइली[२९]लाज।
तेलवा-फुलेलवा के कवनऽ चलावे[३०], रहले न घरवा अनाज ॥
छन्हिया[३१] के घरवा के खर-पात उड़ले त खँड़हर बा भितिया[३२] हमार।
सोचिया[३३] से दिनवाँ दुलम्ह[३४] होइ गइले, त रतिया भइल बा पहार ॥

---

१. शहरी बोली। २. अपने गाँव के आस-पास के ग्रामीणों से व्यवहार करने की रीति। ३. बिक गया। ४. कियारी गढ़ना (मुहावरा)=खेती करने की रीति। ५. पान ही। ६ क्या करोगे। ७. लकड़ी चीरने का औजार। ८. शपथ। ९. लोहार का काम। १०. हुई। ११. ससुराल। १२. मिलेगा ही। १३. पालकी ढोने का काम। १४. दोष। १५. किसी का। १६. कोई। १७. हो। १८. हाल। १९. पुस्तक-लेखक के प्रति सम्बोधन। २०. किससे। २१. पल्ले, वश में। २२. पत्नी। २३. प्रसन्न हुई। २४. स्वामी। २५. सारन जिले का एक नगर। २६. लड़कियाँ। २७. साड़ी। २८. फटी हुई है। २९. लाज उघरना (मुहावरा)=बेपर्द होना। ३०. कौन कहे? ३१. फूस के छप्परवाला। ३२. दीवार भी। ३३. चिन्ता, सोच। ३४. दुर्लंघ्य, सुखहीन।

कवनो उपइया[1] जो करतीं कुँअर जी, पवतीं जो रुपया पचास।
बिहँसत घरवा में हमहूँ पइठतीं[2] होरिया[3] के लिहले हुलास॥

चाँदीलाल सिंह

आप सोहरा (शाहाबाद) ग्राम के निवासी हैं। आपकी भोजपुरी कविताओं में भजन के साथ सामयिक भावों का भी समावेश है। आपकी भोजपुरी रचनाओं का संग्रह 'चाँदी का जवानी' नाम से दूधनाथ प्रेस, सलकिया, हवड़ा (कलकत्ता) से प्रकाशित है।

भजन

पिअऽ राम नाम-रस घोरी[4], रे मन इहे अरज बा मोरी॥
कौड़ी-कौड़ी माल बटोरल, कइलऽ लाख करोरी।
दया-सत्य हृदय में नइखे[5], गला कटाइल[6] तोरी॥ रे मन०॥
चीकन देह नेह ना हरि से, भाई-बाप से चोरी।
बाँका तन लंका अस जरिहन[7] कुत्ता मांस नचोरी[8]॥ रे मन०॥
समरथ बीत गइल चौथापन, लागी तीरथ में डोरी।
लालच वश में एक ना कइलऽ[9] देह भइल कमजोरी॥ रे मन०॥
बहुत बढ़वलऽ घरके खीलत[10], कयठा अँचरी मनोरी[11]।
अबसे चेत, कहेलन[12] 'चान्दी' रघुवर-सरन गहो री॥ रे मन०॥

ठाकुर विश्राम सिंह

आपका जन्म उत्तर-प्रदेश के आजमगढ़ नगर से पाँच मील की दूरी पर स्थित 'सियारामपुर' ग्राम में हुआ था। सन् १९८७ ई० में आपका देहावसान हुआ। अपनी पत्नी के देहान्त के बाद आप विक्षिप्त हो गये थे और उसी अवस्था में आपने प्रचलित बिरहा छन्द में विरह-गीत बनाये। आजमगढ़ के ठाकुर सुखराम सिंह आपके रचे 'बिरहों' को अच्छे ढंग से गाते हैं। ठाकुर सुखराम सिंह कवि-सम्मेलनों में जब आपके बिरहों को गाकर सुनाते हैं, तब जनता मुग्ध हो जाती है। आपकी कविताओं को उक्त ठाकुर साहब से सुनकर श्री बलदेव उपाध्याय (प्रो० काशी-विश्व-विद्यालय) ने सिवान (सारन) के अखिल-भारतीय भोजपुरी सम्मेलन में सभापति के पद से कहा था "विरह की ऐसी कविताएँ मुझे संस्कृत साहित्य में भी नहीं मिलीं"। आपकी भाषा विशुद्ध पश्चिमी भोजपुरी है।

(१)

नदिया किनारे एक ठे चिता धुँधुआले,[13] लुतिया[14] उड़ि-उड़ि गगनवा में जाय।
लहकि-लहकि[15] चिता लकड़ी जलावै, धधकि-धधकि नदी के सनवा[16] दिखावै।
आइ के बतास अगियन के लहरावै,[17] नदिया के पानी आपन देहिया हिलावै।
चटकि-चटकि के चिता में जरत बा सरिरिया[18] नाहीं जानी पुरुष जरे या कि जरे तिरिया[19]॥
चितवा त बइठल एक मनई[20] दुखारी अपने अरमनवन[21] के डारत बाटे जारी[22]।
कहे 'बिसराम' लखिके चितवन[23] के काम मोर मनवा ई हो जाता बेकाम।
अइसने चिता हो एक दिन हमई[24] जरवलीं[25] वही सग फूँकि दिहली आपन अरमान॥

१. उपाय। २. प्रवेश करता। ३. होली। ४. घोलकर। ५. नहीं है। ६. कट गया। ७. जलेगा। ८. नोंचेगा। ९. किया। १०. खिलकत, धन-दौलत। ११. साड़ी के आँचल में टँके हुए आभूषण। १२. कहते हैं। १३. धुँधुआती है। १४. चिनगारी। १५. प्रज्वलित होकर। १६. शान। १७. लहराती हैं। १८. शरीर। १९. स्त्री। २०. मनुष्य। २१. अरमानों (लालसाओं)। २२. जला रहा है। २३. चिताओं। २४. हम भी। २५. जला चुके हैं।

(२)

आयल बाय दिवाली जग में फइलल[1] उजियाली, मोरे मनवा में छुवले बा[2] अन्हार[3]।
जुगुर-जुगुर[4] दिया[5] बरै होति बाय अन्हरिया, मैं तो बइठल बाटीं अपनी सूनी रे कोनरिया[6]॥
अचरा के तरे[7] लेइके फूल[8] के थरियवा[9] गँइयवाँ[10] के नारी बारै[11] चलति बाटी दियवा।
चारो ओर दियवन के बाती लहराती, मोरे घर में पीटति बाय अन्हरिया अब्बो[12] छाती।
गाँव के जवान ले मिठाई आवे घर में, देखि आपन तिरिया त हरसत[13] बाटे मन में।
कहे 'बिसराम' हमके दाना हौ हराम, लखि के कुदति भीतराँ बा जी[14] हमार।
सबक त घरनी घर में दियवा जलावैं, मोर रानी बिना मोर घर हौ अन्हार॥

(३)

अइले बसन्त मँहकि[15] फइललि[16] बाय दिगन्त, भइया धीरे धीरे बहली बयारि।
फूलैलें गुलाब फुलै उजरी बेइलिया[17] अमवाँ के डरियन[18] पर बोलैली कोइलिया।
बोलैंले पपीहा मदमस्त आपन बोलिया, महकि लुटावें आप ले बउरं[19] के झोलिया[20]।
उड़ि-उड़ि भवरवाँ कलियन पै मंड़रालै हउवा[21] के संग मिलि के पात लहरालै[22]।
बढ़ि के लतवा[23] पेड़वन से लपटाली[24] उड़ि-उड़ि के खंजन अपने देसवा के जाली।
कहे 'बिसराम' कुदरति[25] भइलि शोभाधाम चिरई[26] गावत बाटी नदिया के तीर।
चलि-चलि बतास उनके[27] यदिया[28] जगावै, मोरे मनवाँ में उठति बाटी पीर॥

(४)

आइ गइले जेठ के महिनवाँ ए, भइया, लुहिया[29] त अब चलेले झकझोर।
तपत बाटैं सुरज, नाचति[30] बाय दुपहरिया, अगिया उड़ावै चलि-चलि पछुआ-बयरिया[31]।
उसरन[32] में बाढ़ै अब बवंडर[33] घुमरावत[34] देखि के दुपहरिया पंछी नाउनि[35] बाटी गावत।
सूखि गइली ताल-तलई नदिया सिकुड़ली, हरियर उसरौंही[36] घास दरियैं[37] भुकुड़ली[38]।
पेड़वन के छाँह चउवा[39] करेले पगुरिया[40] गावैं चरवहवा[41] फेरि-फेरि अपनी मउरिया[42]।
अइसने समय में खरबुज्जा हरिअइले, अउरी[43] हरा भइल बाय बोरो धान[44]।
हमरे दुसमन बनके मन हरिअइले, हमरा सूखि गइले है गरब-गियान[45]॥

बाबा रामचन्द्र गोस्वामी

आप शाहाबाद जिले के निवासी थे। आपके शिष्य बाबा रघुनन्दन गोस्वामी उक्त जिले के बलिगाँव (डा० आयर, थाना जगदीशपुर) के निवासी थे। रघुनन्दन गोस्वामी के शिष्य बाबा भिखारी गोस्वामी भी उक्त जिले के 'रघुनाथपुर' (थाना ब्रह्मपुर) के निवासी थे। ये तीनों ही भोजपुरी में कविता करते थे। इन तीनों का समय ईसा के १९वीं सदी के मध्य से २०वीं सदी के

१. फैली हुई है। २. छाया हुआ है। ३. अँधेरा। ४. जगमग। ५. दीप। ६. घर के कोने में। ७. तले, नीचे। ८. एक प्रकार का स्वच्छ धातु। ९. थाली। १०. गाँव। ११. जलाने के लिए। १२. अब भी। १३ हर्षित होती हैं। १४. हृदय। १५. सुगन्ध। १६. फैली हुई है। १७. बेला फूल। १८. डालों पर। १९. मंजरियों। २०. झोली। २१. हवा। २२. डोलते हैं। २३. लता। २४ लिपट जाती हैं। २५. प्रकृति देवी। २६. चिड़ियाँ। २७. प्रियजन के। २८. स्मृतियाँ। २९. लू की लपट। ३०. दुपहरिया नाचना (मुहावरा)=मृगतृष्णा का तरंगित होना। ३१. पश्चिमी वायु। ३२. ऊसर भूमि। ३३. वात्या-चक्र। ३४. चक्कर काटना है। ३५. कठफोर पक्षी। ३६. ऊसर में पनपी हुई। ३७. जहाँ की तहाँ (अपनी जगह पर)। ३८. मुरझा गई। ३९. चतुष्पद। ४०. पागुर, रोमन्थन। ४१. चरवाहे। ४२. मस्तक। ४३. और। ४४. एक प्रकार का मोटा धान, जो नदी के कछार में उपजता है। ४५. गर्व और ज्ञान।

प्रथम चरण तक है। इन तीनों के परिचय और रचनाएँ 'मेला घुमना' नामक पुस्तिका* में मिली हैं।

(१)

बधैया

भूप द्वारे बाजत बधाई रे, हाँ रे बधाई रे,
भये चार ललनवाँ[१] ॥ टेक ॥
राजाजी लुटावे हाँ अन धन सोनवाँ,
हाँ अन धन सोनवाँ, कोसिला लूटावे धेनु गाई[२] ॥ भये चार० ॥
झाँझ मृदंग हाँ दुन्दभी बाजे, हाँ दुन्दभी बाजे,
ढोल संख सहनाई ॥ भये चार० ॥
सब सखि हिल-मिल मंगल गावे, हाँ मंगल गावे
नयन जल भरी आई रे ॥ भये चार० ॥
'रामचन्द्र' हाँ ललन-छबि निरखे, हाँ ललन छबि निरखे,
जुग-जुग जियें चारो भाई ॥ भये चार० ॥

—(रामचन्द्र गोस्वामी)

(२)

प्रथम पिता परमेसर का ध्यान धरि, लिखतानी सुनु चित लाय मेलाघुमना[३]।
आवेला सिराती मेला, बदरी, मकर आदि करे लागे आगे से तैयारी मेलाघुमना ॥
मेलवा में जाये खातिर[४] दूसरा से ऋण लेले बाहर जैसे चलेले नवाब मेलाघुमना।
अधी[५], मखमल के तो कोट वो कमीज पहने, राह में चलले अठिलात मेलाघुमना ॥
जाइ के दूकान पर पैसा[६] के पान लेले, पैसा के बीड़ी हू तऽ लेलऽ मेलाघुमना।
बीड़िया धराई[७] जैसे मुँहवाँ में लूका[८] लाई, इंजन के धुँअवाँ उड़ावे मेलाघुमना ॥
चार जाना आगे भइले, चार जाना पीछे भइले, मेलवा में करे गुण्डबाजी मेलाघुमना।
लाजो नाहीं लागे तोरा देसवा[९] के चाल देखि, देसवा में भइले बदनाम मेलाघुमना ॥
जइसन इजत[१०] तोरा घरवा के बाड़ी सब, वोइसन इजत संसार मेलाघुमना।
जइसन हाल होला धोबिया के कुकुरा के नाहीं घर-घाट के ठिकान मेलाघुमना ॥
अइसन हाल होइ जाइ जब तोहर तब, तुहू रोइ करबऽ खयाल मेलाघुमना।
बार-बार बरजत बाड़न 'रघुनन्दन स्वामी,' उन्हकर घर बलिगाँव मेलाघुमना ॥

—(रघुनन्दन गोस्वामी)

(३)

नयकवा

सूतल रहली हम सैंया सुख-सेजिया[१२] से, सपना देखलि अजगुत[१३] रे नयकवा।
जब-जब मन परे[१४] नैना से नीर ढरे, थर-थर काँपेला करेज[१५] रे नयकवा।
बेटी अनबोलता[१६] के मँगिया जराई[१७] कोई, बालू ऐसन मुहर[१८] गिनावे रे नयकवा।

---

*प्रकाशक—बाबा भिखारी गोस्वामी, रंग कम्पनी, रघुनाथपुर (शाहाबाद)। जॉर्ज प्रिंटिंग प्रेस, कालभैरव, काशी में मुद्रित। १. शिशु, बच्चा। २. कामधेनु। ३. मेला में घूमनेवाला शौकीन पुरुष। ४. वास्ते। ५. एक प्रकार की महीन मखमल। ६. एक पैसा। ७. जलाकर। ८. उल्का। ९. समाज। १०. स्त्री। ११. वैसा ही। १२. सुख-शय्या। १३. अद्भुत। १४. मन परना (मुहावरा)=याद पड़ना। १५. कलेजा; हृदय। १६. अपने विषय में कुछ भी न कहनेवाली (बछिया)। १७. माँग जलाना (मुहावरा)=विधवा बनना। १८. अशर्फी।

मुँहवाँ में दाँत नाहीं, बरवा[१] पकल बाटे, बुढ़उ के मउरि[२] पेन्हावे रे नयकवा।
महल में बेटी रोवे, बेटा घोड़सारी[३] रोवे, बाप मुँह करिखा[४]लगावे रे नयकवा।
बेटी से कमाइ धन, पंच के खिलावे ऊहे[५], गुप्त पाप दुनिया सतावे रे नयकवा।
पंच पर गाढ़ परल, बुढ़वा तरसि मरल, नहके[६] में इज्जत गँवावे रे नयकवा।
चारों ओर देख के चण्डाल के चौकड़ि तऽ, मोरा पेट पनियाँ ना[७] पचे रे नयकवा।
ऐसन कुरीति के विवेक से सुधार ना तऽ, भरल सभा में जात[८]जाई रे नयकवा।
—(बाबा भिखारी गोस्वामी)

महेश्वरप्रसाद

आप भरौली (शाहपुरपट्टी, शाहाबाद) ग्राम के निवासी हैं। भोजपुरी कवियों पर आपने समालोचनात्मक लेख लिखे हैं। आपके कई लेख 'भिखारी ठाकुर' पर छप चुके हैं। आपकी भोजपुरी-कविताओं का संग्रह 'तिरंगा' नाम से प्रकाशित है।

झाँकी

हो अन्हड़[९] अइले ना खाली[१०]अकेला,
पानी के संगे संगे पथल[११] के ढेला।
सरग के बीचे-बीचे बिजली के खेला॥ हो अन्हड़०॥
लाल-पीयर बदरी के भइल हवाहेला[१२]।
बदरी के नीचे-नीचे बोरो[१३] बरेला[१४]॥ हो अन्हड़०॥
सरग में रंग-रंग के लागत बा मेला।
दिन भर ले[१५] रात नाहीं लउके[१६] उजेला॥ हो अन्हड़०॥

रघुनन्दनप्रसाद शुक्ल 'अटल'

आप बनारस के रहनेवाले हैं। आपका उपनाम 'अटल' है। आप हिन्दी और भोजपुरी दोनों में रचना करते हैं। आपकी एक रचना 'कजली-कौमुदी'[१७] में प्राप्त हुई है—

कजली

सावन अरर[१८] मचउलेस[१९] सोर[२०] बदरिया झूमके आई ना।
सइयाँ के कुल मरल[२१] कमाई, भयल[२२]मोहाल[२३]अधेला-पाई॥
फिकिर परल घोड़वा का खाई, परि जाई तो हिल ना पाई।
मुनिसपिलटी के मेम्बरन के चढ़ल मोटाई[२४] ना॥
कल तक रहने[२५]सुराज बघारत, अब कुर्सी पउले[२६]जिउ[२७]जारत।
बढ़-बढ़ नया कानून उचारत, हम गरीब दुखियन के मारत॥
देखउ हो, कानून तोरब, गयल अकिल बौराई ना॥

कमलाप्रसाद मिश्र 'विप्र'

श्री कमलाप्रसाद मिश्र 'विप्र' जी का जन्म-स्थान सोनबरसा (बक्सर, शाहाबाद) ग्राम है। विप्र जी मनस्वी और निर्भीक रचना करनेवाले आशु कवि हैं। आपने काशी में अध्ययन किया था।

१. बाल, केश। २. मौर, विवाह-मुकुट। ३. अश्वशाला। ४. मुँह में कालिख लगाना (मुहावरा =कलंकित होना)। ५. वही। ६. नाहक, व्यर्थ ही ७. पेट का पानी पचना (मुहावरा)=चैन पाना। ८. जाति, समाज। ९. अन्धड़, तूफान। १०. केवल। ११. पत्थर, ओले। १२. भीड़। १३. इन्द्रधनुष। १४. चमकता है। १५. तक। १६. दीख पड़ता है। १७. प्रकाशक—काशी पेपर-स्टोर्स, बुलानाला, बनारस। १८. गरज कर। १९. मचाया। २०. शोर। २१. नष्ट हुई। २२. हुआ। २३. दुर्लभ। २४. मोटाई चढ़ना (मुहावरा)=तोंद बढ़ना शरीर का आलसी होना, विवेक खोना। २५. रहे। २६. कुर्सी पाना (मुहावरा)=ओहदा पाना। २७. जी जलाना, सताना।

आप हिन्दी के भी कवि और संस्कृत के विद्वान् हैं। आपकी भोजपुरी-कविताएँ भाषा, भाव, वर्णन-शैली, कल्पना, व्यंग्य आदि की दृष्टि से बहुत अच्छी बन पड़ी हैं।

(१)

पन्द्रह अगस्त

बरबाद भइल जब लाखनि[१] घर, तबना[२] पर ई दिन आइल बा।
पन्द्रह अगस्त का अवसर पर, घर घर झंडा फहराइल बा॥

× × × ×

लाहौर[३] बेआलीस[४] संतावन[५], आजाद-हिन्द[६] के प्राण हरण।
ओह[७] अमर सहीदनि का बल पर ई स्वतन्त्रता लहराइल बा॥

× × × ×

चटगाँव केस[८], चौरा-चौरी[९], काकोरी[१०], जलियाँ[११], बारदोली—
एह सभ बलिदान का लाल खून से ई सुराज रँगाइल बा॥

× × × ×

जेल-डामिल[१३], जबर्ती[१४], बेंत, बूट[१५], फाँसी, गोली, अपमान, लूट।
बिपलव से और अहिंसा से, 'माता[१६]' के बान्ह[१७]खोलाइल बा[१८]॥

(२)

रेट

दादा! आइल नहरिया[१९] के रेट[२०]
जेठ-असाढ़ बीच आइल अदरा[२१] बरिसल मेघ गरजि पनबदरा[२२]।
खेतवा में डललीं[२३]घुर-पात खदरा[२४] दिन भरि अन्न से ना भइल भेंट,[२५]॥
दादा आइल नहरिया के रेट॥
रोपनी[२६] बाद जब चटकल[२७]बरखा[२८], भइल चोख तब नहर के चरखा[२९]।
बन्हकी[३०] धइलीं धोतिया-अगरखा[३१], चटकि[३२] गइल मोर चेट[३३]॥
दादा आइल नहरिया के रेट॥
मुअल[३४]धान तब पाटलि[३५]किआरी, तावनो[३६]पर लागलि हा चोरकारी[३७]।
खेतिया मरइली[३८], इजतिया भारी[३९], खेदले[४०] फिरत बाटे मेठ[४१]॥
दादा आइल नहरिया के रेट॥
हाकिम चाहत बा चाउर धनवाँ, अन[४२] बिनु एने[४३] नाचत परनवाँ[४४]।
हँकड़े[४५] करज[४६] पोत[४७] परोजनवाँ[४८], पिठिया में सटि गइल[४९] पेट॥
दादा आइल नहरिया के रेट॥

---

१. लाखों। २. उसके फलस्वरूप। ३. पंजाब-हत्याकांड। ४. सन् १६४२ ई० का आन्दोलन। ५. सन् १८५७ ई० का विद्रोह। ६. आजाद-हिन्द-फौज। ७. उन। ८. चटगाँव (पूर्वबंग) का क्रान्तिकारी षड्यंत्र। ९. चौरा-चौरी (गोरखपुर) का अग्निकांड। १०. काकोरी-षड्यंत्र-केस। ११. अमृतसर का जालियाँवाला बाग। १२. बारदोली (गुजरात) का किसान-सत्याग्रह। १३. कालापानी। १४. धन-माल की कुर्की। १५. देशभक्तों पर पुलिस की बूट की ठोकर। १६. भारतमाता। १७. बन्धन। १८. खोला गया है। १९. नहर। २०. सिंचाई का 'कर'। २१. आर्द्रानक्षत्र। २२. ऐसा बादल, जो नाम मात्र पानी छिड़क कर चला जाता है। २३. डाला। २४. कूड़े-कचरे की खाद। २५. अन्न से भेंट होना (मुहावरा)=भोजन नसीब होना। २६. धान के पौधे रोपने का काम। २७. वर्षा बन्द हो गई, रुक गई। २८. वर्षा। २९. चर्खा चोखा होना (मुहावरा) काम में तेजी आना (नहर-कर की वसूली का तकाजा बढ़ जाना)। ३०. बन्धक रखना। ३१. (अंगरखा) अंगा, लम्बा कुर्त्ता। ३२. खाली हो गया। ३३. अंटी, टेट—चेट चटकना (मुहावरा)=अंटी खाली होना। ३४. सूख गया। ३५. सींची गई। ३६. उस पर भी। ३७. बिना शर्त्तनामे के खेत में नहर का पानी आ जाने से लगनेवाला अधिकाधिक आर्थिक दंड। ३८. मारी गई। ३९. इज्जत भारी होना (मुहावरा)=इज्जत निबहने की आशा न रहना। ४०. खदेड़े फिरता है। ४१. नहर का चपरासी। ४२. अन्न। ४३. इधर (हमारा)। ४४. प्राण नाचना (मुहावरा)=भूख से प्राणों का अत्यन्त व्याकुल होना। ४५. गरजता है, हुंकार करता है। ४६. ऋण। ४७. मालगुजारी। ४८. विवाह, श्राद्ध आदि। ४९. पीठ में पेट सटना (मुहावरा)=क्षुधा से अतिशय कृश होना।

रामेश्वर सिंह काश्यप

आपका जन्म सन् १९२६ ई० में, १६ अगस्त को, सासाराम के नजदीक 'सेमरा' (शाहाबाद) ग्राम में हुआ था। आपने मैट्रिक की परीक्षा सन् १९४४ ई० में, मुँगेर जिला-स्कूल से पास की थी। सन् १९४८ ई० में पटना-विश्वविद्यालय से बी० ए० तथा सन् १९५० में एम्० ए० पास किया। इन तीनों परीक्षाओं में आपने प्रथम श्रेणी प्राप्त की थी।

आपका साहित्यिक जीवन सन् १९४२ ई० से आरम्भ हुआ था। आपकी प्रथम हिन्दी-रचना हिन्दी मासिक 'किशोर' (पटना) में सन् १९४० ई० में ही छपी थी। सन् १९४३ ई० से आपने साहित्य-क्षेत्र में प्रसिद्धि प्राप्त कर ली और आपकी कविताएँ तथा अन्य रचनाएँ पत्र पत्रिकाओं में लगातार छपने लगीं। आप एक विख्यात नाटककार भी हैं। आपका लिखा भोजपुरी-भाषा का नाटक 'लोहा सिंह' प्रकाशित हो चुका है और जिसकी प्रसिद्धि आकाशवाणी के द्वारा देश-व्यापी हुई है। आपका हिन्दी में लिखा किशोरोपयोगी उपन्यास 'स्वर्णरेखा,' हिन्दुस्तानी प्रेस, पटना से प्रकाशित हुआ है। आप हिन्दी के भी अच्छे नाटककार तथा अभिनेता हैं। आपके लिखे हिन्दी-नाटकों में ये मुख्य हैं—बत्तियाँ जला दो, बुलबुले, पंवर, आखिरी रात और रोबट। इनमें कई आकाशवाणी द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर अभिनीत एवं पुरस्कृत हो चुके हैं। इन नाटकों की विशेषता यह है कि ये रंगमंच के पूर्ण उपयुक्त हैं।

आप अखिलभारतीय भोजपुरी-कवि-सम्मेलन सिवान (सारन) के सभापति भी हुए थे। आपकी लिखी भोजपुरी-कविताएँ बड़ी प्रसिद्ध हैं। भोजपुरी में मुक्त छन्द का प्रयोग जिस सफलता से आपने किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। भोजपुरी में कविताओं के अलावा आपने निबन्ध, कहानी, उपन्यास आदि भी लिखे हैं। आजकल आप बी० एन्० कॉलेज (पटना) में हिन्दी के प्राध्यापक हैं।

भोर

(१)

गोरकी[1] बिटियवा[2] टिकुली[3] लगा के
पूरुब किनारे तलैया नहा के[4]
चितवन से अपना जादू चला के
ललकी[5] चुनरिया[6] के अँचरा[7] उड़ा के
तनिका[8] लजा, तब बिहँस, खिलखिला के

नूपुर बजावत किरिनियाँ[9] के निकलल,
अपना अटारी के खोललस[10] खिरिकिया[11],
फैलल फजिर[12] के अँजोर[13]।

(२)

करियकी[14] बुढ़िया के डँटलस[15], धिरवलस[16]
बुढ़िया सहम के मोटरी उठवलस[17]

१. गौर वर्ण की। २. बिटिया, लड़की। ३. ललाट पर लगाये जानेवाली बिन्दुली। ४. स्नान करके। ५. लाल रंग की। ६. सुन्दरी। ७. आँचल। ८. जरा-सा। ९. किरण। १०. खोल दी। ११. गवाक्ष, खिड़की। १२. उषःकाल। १३. प्रकाश। १४. काली। १५. डाँट-डपट किया। १६. चेतावनी दी। १७. उठाया।

तारा के गहना समेटलस[१] बेचारी
चिमगादुर[२], उरुआ[३], अन्हरिया[४] के संगे
भागल[५] ऊ[६] खँड़हर के ओर।

(३)

अस[७] उतपाती[८] ई[९] चंचल बिटियवा[१०]
भारी कुलच्छन[११] भइल ई धियवा[१२]
आफत के पुड़िया[१३], बहेंगवा के टाटी[१४]
मारे सहक[१५] के हो गइल ई माटी[१६]
चिरइन[१७] के खोंता[१८] में जा के उड़वलस[१९]
सूतल[२०] मुरुगवन[२१] के कसके[२२] डेरवलस[२३]
कुकड़ूकूँ कइलन बेचारे चिहा[२४] के,
पगहा[२५] तुड़वलन[२६] सुन के, डेरा के[२७]—
ललकी-गुलाबी बदरियन[२८] के बछरू[२९]
भगले[३०] असमनवाँ[३१] के ओर।

(४)

सूतल कमल के लागल जगावे
भँवरा के दल के रिझावे, बोलावे
चंपा चमेली के घूँघट हटावे
पतइन[३२], फुनुगियन[३३] के झुलुआ[३४] झुलावे
तलैया के दरपन में निरखेले मुखड़ा
कि केतना[३५] बानी[३६] हम गोर[३७]।

(५)

सीतल पवन के कस के लखेदलस[३८]
झाड़ी में, झुरमुट में, सगरो[३९] चहेटलस[४०]
सरसों बेचारी जवानी में मातल
डूबल सपनवा में रतिया के थाकल
ओकर[४१] पियरकी[४२] चुनरिया ऊ घिंचलस[४३]
बरजोरी[४४] लागल बहुत गुदगुदावे,
सरसों बेचारी के अँखिया से ढरकल[४५]
ओसवन[४६] के, मोती के लोर[४७]।

१. समेट लिया। २. चमगादड़ (चर्मपत्रा)। ३. उलूक। ४. अँधेरा। ५. भाग गई। ६. वह। ७. ऐसी। ८. उपद्रवी। ९. यह। १०. लड़की। ११. बेशऊर, अशुभ लक्षणवाली। १२. कन्या। १३. तेजस्विनी, आफत की पुड़िया (मुहावरा)। १४. बहेंगवा के टाटी (मुहावरा)=निरंकुश। १५ शोख। १६. मिट्टी होना=(मुहावरा) बरबाद होना। १७. चिड़िया, पक्षी। १८. घोसला। १९. उड़ाया। २०. सोये हुए। २१. मुर्गे, कुक्कुट। २२. जोर से। २३. डराया। २४. आश्चर्यचकित होकर। २५. प्रग्रह, पघा। २६. तोड़ दिया। २७. डर कर। २८. बादलों के। २९. वत्स, बच्चे। ३०. भाग चले। ३१. आकाश। ३२. पत्ते। ३३. टहनियों के अग्रभाग। ३४. झूला। ३५. कितना। ३६. हैं। ३७. गौर वर्ण की। ३८. खदेड़ा। ३९. सब जगह। ४०. पीछा किया। ४१. उसकी। ४२. पीले रंग की। ४३. खींच दी। ४४. जबरदस्ती। ४५. गिर गया। ४६. ओस, तुहिन-बिन्दु। ४७. अश्रु।

(६)

परबत के चोटी के सोना बनवलस[1]
समुन्दर के हल्फा[2] पर गोटा चढ़वलस[3]
बगियन-बगइचन[4] में हल्ला मचवलस[5]
गवँई[6], नगरिया के निंदिया नसवलस[7]
किरिनियाँ के डोरा के बीनल[8] अँचरवा,
फैले लागल चारों ओर।

(७)

छप्पर पर आइल, ओसारा[9] में चमकल
चुपके से गोरी तब अँगना में उतरल
लागल खिरिकियन से हँस-हँस के झाँके
जहँवा[10] ना ताके[11] के, ओहिजो[12] ई ताके
कोहबर[13] में सूतल बहुरिया चिहुँक के
लाजे इंगोरा[14] भइल, फिर चुपके
अपना सजनवाँ से बहियाँ छोड़ा के
ससुआ-ननदिया के अँखिया बचा के
घइला[15] कमरिया[16] पर धर के ऊ भागल
जल्दी से पनघट के ओर।

रामनाथ पाठक 'प्रणयी'

आपका जन्म शाहाबाद जिले के 'धनछूहाँ' ग्राम में सन् १६२१ ई० में हुआ था। आप संस्कृत-भाषा के साहित्याचार्य और व्याकरणाचार्य की परीक्षा में उत्तीर्ण हो चुके हैं। आप सन् १६३३ ई० से ही भोजपुरी में रचनाएँ करते हैं। आप काशी से निकलनेवाली 'भारत-श्री' और 'आरा' से प्रकाशित होनेवाली 'ग्राम-पंचायत-पत्रिका' के सम्पादक भी रह चुके हैं। आप संस्कृत और हिन्दी के भी अच्छे गद्य-पद्य-लेखक के रूप में प्रसिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त आपकी भोजपुरी-भाषा की कविता-पुस्तकें भी संग्रह के रूप में प्रकाशित हैं, जिनमें 'कोइलिया,' 'सितार', 'पुरइन के फूल' आदि हैं। आजकल आप एक सरकारी बुनियादी शिक्षण-संस्था में अध्यापक हैं।

पूस

आइल पूस महीना, अगहन लवटि गइल मुसुकात
थर-थर काँपत हाथ पैर जाड़ा-पाला के पहरा
निकल चलल घर से बनिहारिन[17] ले हँसुआ भिनसहरा[18]
धरत धान के थान[19] अँगुरिया ठिठुरि-ठिठुरि बल खात
आइल पूस महीना, अगहन लवटि गइल मुसुकात
ढोवत बोझा हिलत बाल[20] के बाज रहल पैजनियाँ
खेतन के लछिमी खेतन में उठि चलली खरिहनियाँ[21]

१. बनाया। २. लहर। ३. गोटा-किनारी चढ़ा दी। ४. बाग-बगीचे। ५. शोर मचाया। ६. छोटे गाँव। ७. बरबाद किया। ८. बुना हुआ। ६. बरामदा। १०. जिस जगह। ११. देखना। १२. वहाँ भी। १३. दुल्हा-दुलहिन का शयन-गृह। १४. अंगार। १५. घड़ा। १६. कमर। १७. खेत मजदूरिन। १८. उषः काल से पूर्व की वेला। १६. धान के पौधे के गुच्छे की जड़। २०. धान की बाल (फलियाँ)। २१. खलिहान में।

पड़ल[1] पथारी[2] पर लुगरी[3] में लरिका[4] बा छेरियात[5]
आइल पूस महीना, अगहन लवटि गइल मुसुकात
राह-बाट में निहुरि-निहुरि नित करे गरीबिन[6] बिनियाँ[7]
हाय ! पेट के आग चुरा ले भागल सुख के निनियाँ[8]
पलक गिरत उड़ियात[9] फूस दिन हिम-पहाड़ बड़ रात
आइल पूस महीना, अगहन लवटि गइल मुसकात
लहस[10] उठल जब गहुम-बूँट[11] रे, लहसल[12] मटर-मसुरिया[13]
बाज रहल तीसी-तोरी पर छवि के मीठ बँसुरिया
पहिरि खेंसारी के सारी[14] साँवर गोरिया अँठिलात[15]
आइल पूस महीना, अगहन लवटि गइल मुसुकात

चैत

आइल चैत महीना, फागुन रंग उड़ा के भागल[16]
गह-गह रात भइल कुछ रहके[17] टह-टह उगल अँजोरिया[18],
सुन-सुन के गुन-गुन भँवरा के मातल साँवर गोरिया,
कसमस चोली कसल, चुनरिया रँगल, झमकल[19] छागल[20]
आइल चैत महीना, फागुन रंग उड़ा के भागल
खिलल रात के रानी बेली, चम्पा, बिहँसल बगिया[21],
भरल फूल से झूल रहल महुआ के लाल फुनुगिया,
भिनसहरा के पहरा पी-पी रटे पपिहरा लागल
आइल चैत महीना, फागुन रंग उड़ा के भागल
घर के भीतर चिता सेज के सजा रहल बिरहिनियाँ,
आँगन में गिर परल[22] पियासे[23] आन्हर[24] भइल हरिनियाँ,
पछुआ[25] के ललकार पिछूती[26] बँसवारी[27] में जागल
आइल चैत महीना, फागुन रंग उड़ा के भागल
सिहर-सिहर रोआँ[28] रह जाता हहर-हहर के हियरा,
हाय ! लहर पर लहर उठत बा जरल जवानी-दियरा[29],
गली-गली में चैता[30] गावत लोग भइल बा पागल
आइल चैत महीना, फागुन रंग उड़ा के भागल

मुरलीधर श्रीवास्तव 'शेखर'

आप चौसा (शाहाबाद) के निवासी हैं। आजकल छपरा के राजेन्द्र कालेज में हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष हैं। आपका उपनाम 'शेखर' है। आप हिन्दी के भी कवि, निबन्धकार, आलोचक तथा वक्ता हैं। हिन्दी में आपकी कई अच्छी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आपकी भोजपुरी-कविताओं की भाषा पूर्ण परिष्कृत है।

---

१. पड़ी हुई। २. खेत में कटे हुए धान के पौधे, जो सूखने के लिए पसारे जाते हैं। ३. पुरानी गन्दी-फटी साड़ी। ४. बच्चा। ५. रोता है। ६. गरीब औरत। ७. खेत और रास्ते में गिरे धान को चुनने का काम। ८. नींद। ९. उड़ जाता है। १०. हरा-भरा होना। ११. जौ-गेहूँ-चना। १२. हरा-भरा हुआ। १३. मटर और मसुरी। १४. साड़ी। १५. इठलाती हुई। १६. भाग गया। १७. थोड़ी देर बाद। १८. चाँदनी। १९. झम्म से बजा। २०. नुपूर। २१. बाग में। २२. गिर पड़ा। २३. प्यास के मारे। २४. अन्धा। २५. पश्चिमी हवा। २६. घर के पिछवाड़े। २७. बाँसों की झाड़ी। २८. रोम। २९. दीप। ३०. चैत्र मास में गाया जानेवाला एक प्रकार का गीत।

गीत

(१)

भोर के बेरा।
छिटकलि[1] किरन, फटल पौ नभ पर खिललि अरुन के लाली,
खेलत चपल सरस सतदल पर अलिदल छटा निराली।
छित[2] के छोर छुवेला कंचन, किरन बहे मधु-धारा,
रोम-रोम तन पुलक भइल रे कोंपल छबि के भारा।
नया सिंगार साज सज आइलि आज उसा[3] सुकुमारी,
किरन तार से रचल चित्र बा मानो जरी किनारी।
भोर बिभोर करत मन आनंद गइल थाकि कवि बानी,
छबि के जाल मीन मन बाझल[4] भइल उसा रसखानी।
तार किरन के के बा[5] बजावत सुर भर के नभ-बीना,
ताल रहे करताल बजावत जल में लहर प्रबीना।
उमड़ल कवि के हृदय देखि के सुन्दर सोन[6] सवेरा,
भइल गगन से कंचन बरखा ई परभात के बेरा[7]।

(२)

हम नया दुनिया बसाइब[8]
हम नया सुर में नया जुग के नया कुछ गीत गाइब[9]

(१)

बढ़ रहल जग प्रगति-पथ पर गढ़ रहल नव रूप सुन्दर
हम उहे संदेस घर-घर कंठ निज भर के सुनाइब[10]

(२)

भेद के दीवार तोड़ब प्रीत के सम्बन्ध जोड़ब
भावना संकीर्ण छोड़ब खुद उठब, सबके उठाइब[11]

(३)

आज समता भाव जागल अब बिसमता दूर भागल
स्नेह ममता नीक लागल हम जगब[12], जगके जगाइब[13]

विश्वनाथ प्रसाद 'शैदा'

आपका जन्म-स्थान डुमराँव (शाहाबाद) है। आपको बचपन से ही लोगों ने 'शैदा' कहना शुरू किया। १५ वर्ष की अवस्था में ऐण्ट्रेंस-परीक्षा पास करके आपने सरकारी नौकरी शुरू की। आपने टेलीग्राफी सीखी, एकाउण्टी सीखी, टाइप करना सीखा। अन्त में आप आजकल डुमराँव के ट्रेनिंग-स्कूल में शिक्षक हैं। आपको पुरानी कविताएँ बहुत कण्ठस्थ हैं। आपकी भोजपुरी की रचनाए सुन्दर और सरस होती हैं। आप एक अच्छे गायक भी हैं।

१. छिटकी, बिखरी। २. छिति, पृथ्वी। ३. उषा। ४. फँस गया। ५. कौन है। ६. सोना, स्वर्ण। ७. बेला। ८. बसाऊँगा। ९. गाऊँगा। १०. सुनाऊँगा। ११. उठाऊँगा। १२. जगूँगा। १३. जगाऊँगा।

(१)

कजली

रहलीं करत दूध के कुल्ला[१], छिल के[२] खात रहीं[३] रसगुल्ला,
सखी हम त खुल्लम-खुल्ला, झूला झूलत रहीं बुनिया[४]-फुहार में,
सावन के बहार में ना। झूला झूलत रहीं०॥
हम त रहलीं टह-टह[५] गोर[६], करत रहलीं हम अँजोर[७],
मोरा अँखिया के कोर, धार काहाँ अइसन तेग बा कटार में,
चाहे तलवार में ना। झूला-झूलत रहीं०॥
हँसलीं[८] चमकल मोरा दाँत, कइलस[९] बिजुली के मात,
रहे अइसन जनात[१०], दाना काहाँ अइसन काबुली अनार में,
सुघर कतार[११] में ना। झूला-झूलत रहीं०॥
जब से आइल सवतिया[१२] मोर, सुखवा लेलसि[१३] हम से छोर,
झरे अखियाँ से लोर[१४],भइया मोर परल बा[१५] 'शैदा' माहाधार में,
सुखवा जरल भार[१६] में ना। झूला-झूलत रहीं०॥

(२)

बागे बिहने[१७] चले के सखी, जइहऽ मति भूल।
कइसन सुघर लगेला[१८], जब झरि के गिरेला,
सखी, फाँड़[१९] में बिने[२०] के मवलेसरी[२१] के फूल।
बागे बिहने चले के०॥
झुर-झुर[२२], बहेला बेयार, कइसन परेला[२३] फुहार,
सखी, घरे ना चले के मन करेला[२४] कबूल।
बागे बिहने चले के०॥

(३)

जोन्हरी[२५] भुँजावै घोनसरिया[२६] चलीं जा सखी।
जोन्हरी के लावा जइसे जुहिया के फुलवा,
भूँजत झरेले[२७] फुलझरिया। चलीं जा सखी०॥
काल्हु[२८] से ना कल मोरा तनिको परत बा,
देखलीं[२९] हाँ एको ना नजरिया। चलीं जा सखी०॥
हाली-हाली[३०]चलु ना[३१]त ननदी जे देखि लीही[३२],
बोली[३३]बोले लागी ऊ जहरिया[३४]। चलीं जा सखी०॥
झन-झन बखरी[३५] करत बा तू देखु ना,
भइल बाटे ठीक[३६]दुपहरिया[३७]। चलीं जा सखी०॥
चुनरी मइल होले सखी घोनसरिया में,
उड़ी-उड़ी गिरेला कजरिया[३८]। चलीं जा सखी०॥

---

१. दूध का कुल्ला करना (मुहावरा)=अतिसुख भोगना। २. तराश कर। ३. खाती थीं (रसगुल्ला छील कर खाना=आनन्दोपभोग में अतिशयता)। ४. बुन्दी (वर्षा)। ५. धपधप। ६. गौर वर्ण। ७. प्रकाश। ८. मैं हँसी। ९. किया। १०. जान पड़ता था। ११. पंक्ति। १२. सौत, सपत्नी। १३. लिया। १४. आँसू। १५. पड़ गया है। १६. भाड़। १७. भोर में ही। १८. लगता है। १९. अंचल। २०. चुनेंगी। २१. मौलिश्री, वकुल। २२. मन्द-मन्द। २३. पड़ता है। २४. करता है। २५. मकई और बाजरे की जाति का एक अन्न। २६. भाड़, भड़भूँजे का घर। २७. झड़ती है। २८. गत दिवस। २९. देखा है। ३०. जल्दी-जल्दी। ३१. नहीं तो। ३२. देख लेगी। ३३. बोली बोलना (मुहावरा)=ताना कसना। ३४. जहरीली। ३५. हवेली, मकान। ३६. मध्य। ३७. मध्याह्न (ग्रीष्मकालीन)। ३८. कालिख।

चुनरी में दाग कहीं सासुजी देखीहें तऽ,
झूठ कह दीहन कचहरिया[1] में। चलींजा[2] सखी०॥

(२)

किसान

भइया! दुनिया कायम बा[3] किसान से। हो भइया०
तुलसी बबा के रमायन में बाँचऽ[4], जाहिर बा सास्तर[5]-पुरान से।
भारत से पूछऽ, बेलायत[6] से पूछऽ, पूछऽ ना जर्मन[7] जापान से।
साँचे[8] किसान हवन[9], तपसी-तियागी[10], मेहनत करेलें जिव-जान से।
हो भइया! दुनिया बा कायम किसान से॥
जेठो में जेकरा के खेते में पइबऽ, जब बरमेले आगि असमान[11] से।
हो भइया०॥
झमकेला[12] भादो जब चमकी बिजुलिया, हटिहें ना तनिको[13] मचान से।
भइया, पूसो में माघो में खेते ऊ[14] सुतिहें[15], डरिहें ना सरदी-तूफान से।
हो भइया०॥
दुनिया के दाता किसाने हवन जा[16], पूछऽ ना पंडित महान से।
हो भइया०॥
गरीब किसान आज भूखे मरत बा, करजा[17]-गुलामी-लगान से।
हो भइया०॥
होई सुराज तऽ किसान सुख पइहें, असरा[18] रहे ई[19] जुगान[20] से
भारत के 'शैदा' किसान सुख पावसु बिनवत बानी[21] भगवान से।
हो भइया०॥

मूसा कलीम

आप छपरा शहर के हिन्दी, उर्दू और भोजपुरी के यशस्वी कवि हैं। आपकी कविता बड़ी सुन्दर होती है। आप अपनी भोजपुरी कविताओं को अच्छे ढंग से गाते भी हैं। बहुत प्रयत्न के बाद भी आपकी विशिष्ट रचनाएँ नहीं मिल सकीं। बिहार-राज्य के प्रचार विभाग में आई रचनाओं में से कुछ पंक्तियाँ दी जाती हैं—

गीत

दुसमन भागि गइल, देस अजाद भइल
आवऽ मिलि करीं ई काम हो
कायम राम-राज हो॥
देस खातिर जिहीं-मरीं[22], संकट से आवऽ लड़ीं
बइठी से[23] रो के रही, डूबि जइहें देश के लाज हो
कायम राम-राज हो॥
बढ़ऽ बढ़ऽ बढ़ऽ आगे, मरद ना पाछे भागे
केतनेहूँ[24] घाटा लागे, गिरे मत दऽ देसवा के ताज हो
कायम राम-राज हो॥

---

१. पति या गुरुजन के दरबार में। २. हमलोग साथ चलें। ३. है। ४. पढ़ो। ५. शास्त्र। ६. इंगलैंड। ७. जर्मनी। ८. सचमुच। ९. हैं। १०. त्यागी। ११. आकाश। १२. झमाझम पानी बरसता है। १३. थोड़ा भी। १४. वे (किसान)। १५. सोते हैं। १६. हैं। १७. कर्ज, ऋण। १८. आशा। १९. यह। २०. युगों से। २१. विनती करता हूँ। २२. जियें और मरें। २३. वह। २४. कितना भी।

शिवनन्दन कवि

आप मौजमपुर (बड़हरा, शाहाबाद) ग्राम के निवासी थे। आप राष्ट्रीय विचार के आशु-कवि थे। आपकी वर्णन शैली बहुत सुन्दर, सरल तथा जन प्रिय होती थी। आप सन् १९४२ ई० के राष्ट्रीय आन्दोलन तथा उसके पूर्व के विश्व-युद्ध के समय अपनी रचनाओं के लिए विख्यात हो गये थे। आपकी कविताओं पर सामयिक पत्र पत्रिकाओं में कई लेख निकल चुके हैं। आप 'भिखारी ठाकुर' की कोटि के कवि माने जाते हैं।

युद्ध-काल में कवि कलकत्ता-प्रवासी था। जिस समय कलकत्ता पर जापानियों ने बमबाजी की थी, उसी समय का एक वर्णन नीचे दिया जाता है—

अब ना बाँची[1] कलकाता, बिधाता सुनलऽ ॥ टेक ॥
धनि[2] जरमनी-जपान, तुरलसि[3] बृटिश के शान
हिटलर के नाम सुनि जीव घबड़ाता, बिधाता सुनलऽ ॥
सिंगापुर जीतकर, बरमा रंगून जीतकर,
आई के पहुँचल कलकाता, बिधाता सुनलऽ ॥
कलकाता में गुजारा नइखे, पइसा-कौड़ी भारा[4] नइखे,
सताइस टन के बम पटकाता[5], बिधाता सुनलऽ ॥
नगर के नर-नारी, रोवतारे पुक्का फारी[6],
छूटि गइले बँगला के हाता[7], बिधाता सुनलऽ ॥
जाति के बँगाली भाई, छोड़ नगर बाप व माई
संग में लुगाई ले पराता[8], बिधाता सुनलऽ ॥
बड़े-बड़े मरवाड़ी, छोड़िके दोकान[9] बाड़ी
अपना मुलुक[10] भागल जाता, बिधाता सुनलऽ ॥
'चटकल'[11] छोड़े कूली, आगा[12] अवरू काबुली
छोड़ि के भागेले बही-खाता, बिधाता सुनलऽ ॥
कतने हिन्दुस्तानी[13], छोड़िके भागे दरवानी,
कतनो[14] समुझावे हित-नाता[15], बिधाता सुनलऽ ॥
उड़िया वो नैपाली, छोड़िके भागे भुजाली[16],
धोबी छोड़े गदहा, डोम छोड़े काता[17], बिधाता सुनलऽ ॥
लागल बाटे इहे गम[18], कहिया ले[19] गिरी बम?
इहे गीत[20] सगरो[21] गवाता[22], बिधाता सुनलऽ ॥
टिकट कटावे बेरी[23], बाबू-बाबू करी टेरी[24],
तबहूँ[25] ना बाबू[26] के सुनाता,. बिधाता सुनलऽ
आफिस, घर अवरू बाड़ी, मोटर अवरू घोड़ा-गाड़ी
सब काला रंग में रंगाता, बिधाता सुनलऽ ॥
रोशनी हो गइल कम, शहर भर में भइल तम
चोर-डाकू करे उतपाता[27], बिधाता सुनलऽ ॥

---

१. बचेगा। २. धन्य। ३. तोड़ दिया। ४. रेल-भाड़ा। ५. पटका जाता है। ६. पुक्का फाड़ कर (रोना)। ७. सूबा, प्रान्त। ८. भागा जाता है। ९. दूकान। १०. मुल्क, देश। ११ पाट की मिल। १२. अफगानिस्तानी, जो सूद पर रुपये देने का व्यवसाय करते हैं। १३. बिहार और उत्तरप्रदेश के लोग। १४. कितना भी। १५. कुटुम्बी। १६. नेपालियों की कटारी। १७. बाँस काटने की कर्त्तरी। १८. चिन्ता। १९ कबतक। २०. चर्चा। २१. सर्वत्र। २२. गाया जाता है। २३. समय, बेला। २४. पुकार। २५. तब भी। २६. टिकट देनेवाला। २७. उत्पात।

बम गिरे धमाधम, जीतिए के[1] धरी दम[2],
खइला[3] बिनु लोग मरि जाता, बिधाता सुनलऽ ॥
कलकाता पर परल दुख, केहु के ना बाटे सुख,
'शिवनन्दन' कवि भागे में शरमाता[4], बिधाता सुनलऽ ॥

गंगाप्रसाद चौबे 'हुरदंग'

आपका जन्म स्थान सिकरिया (रघुनाथपुर, शाहाबाद) है। आप अधिकतर प्रचार-साहित्य लिखते हैं। राजनीतिक चुनाव के अवसर पर आप जन-भाषा में भोजपुरी-कविता करके प्रोपगेंडा करते हैं, जिसका असर जनता पर अच्छा पड़ता है।

बुढ़ऊ बाबा के बिआह

लालच में परी[5] बाप बुढ़ बर खोजेला[6], जेकर उमर दादा के समान हे।
करिया[7]-कलूट बर कोतह-गरदनिया[8] हो, नाक त चिपरिया[9] के साँच[10] हे ॥
मुँह चभुलावे[11] बनभाकुर[12] समान हो, ओठ तऽ भलुइआ[13] के जानु[14] हे।
मोच्छ छँटवावे बर बने चौदहवा[15] के, ताके[16] जइसे भड़कल[17] सियार हे ॥
केस के सिंगार देखि बिलाई मुसकात बाड़ी, हांड़ियोले[18] बढ़ल बा कपार हे।
चसमा लगावे दुलहा लागे भटकोंवा[19] मुँह, चले ऊँट डउकत[20] चाल हे ॥
कत बरनन करूँ ब्रह्मा उरेहे[21] रूप, बनलो जतरा बिगड़ाई[22] हे।
आज ले तऽ बरवा के हाड़ न हरदिया[23] हो, ओहू जनम[24] भइल ना बिआह हे ॥

अर्जुनकुमार सिंह 'अशान्त'

आप सारन जिले के (पुराण-प्रसिद्ध दक्षप्रजापति के गंगा-तटस्थ प्राचीन गढ़, अम्बिकास्थान) आमी ग्राम के रहनेवाले हैं। इन दिनों आप पुलिस-विभाग में हैं।

आपने खड़ीबोली एवं भोजपुरी में समान रूप से रचनाएँ की हैं। किन्तु, आपकी लोकप्रियता भोजपुरी रचनाओं के कारण ही है। आपके भोजपुरी गीत सामयिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित और आकाशवाणी-केन्द्रों से प्रसारित होते रहे हैं। बड़े-बड़े कवि-सम्मेलनों में आप सम्मानित तथा पुरस्कृत हो चुके हैं। कविवर पंत ने एक बार आपकी भोजपुरी-कविताओं के सम्बन्ध में लिखा था—"अशान्त जी ने भोजपुरी के ललित, मधुर मर्मस्पर्शी शब्दों को बाँधकर गीतों में जो चमत्कार उत्पन्न किया है, उसे सुनकर जनता मंत्रमुग्ध हुए विना नहीं रहती···।" आपकी भोजपुरी-कविताओं का संग्रह 'अमरलत्ती'* नाम से प्रकाशित हो चुका है। आप परिष्कृत भोजपुरी में 'बुद्धायन' नामक एक ललित और सरस काव्य-ग्रन्थ लिख रहे हैं।

(१)

ऋतु-गीत

कुहुकि-कुहुकि कुहुकावे[25] कोइलिया, कुहुकि-कुहुकि कुहुकावे।
पतझड़ आइल, उजड़ल बगिया मधु ऋतु में टुसिआइल[26] फुनुगिया[27]

१. जीत कर ही। २. दम धरना (मुहावरा)=चैन पाना। ३. भोजन। ४ लजाता है। ५. पड़कर। ६. खोजता है। ७. काला। ८. तंग गर्दनवाला। ९. गोबर का सूखा उपला। १०. साँचा। ११. पोपला मुँह पगुराता है। १२. बनैला जन्तु। १३. भालू। १४. जानो। १५. चौदह वर्ष का। १६. देखता है। १७. भड़का हुआ। १८. हाँड़ी से भी। १९. मकोय-फल। २०. उछकती हुई चाल। २१. सिरजा है। २२. बिगाड़ देता है। २३. हाड़ में हल्दी लगना (मुहावरा)=ब्याह होना। २४. उस (गत) जन्म में भी। * प्रकाशक—अशोक प्रेस, पटना—६। २५. घला-घुलाकर रुलाता है। २६. टूसा लगना। २७. कोमल किसलय।

इन हरियर-हरियर[१] पलइन[२] में, सुतल सनेहिया[३] जगावे कोइलिया ॥ टेक ॥
खिसिकल[४] मधु-ऋतु उठल बजरिया[५] चुवल कोंच[६], झर गइल मोंजरिया[७]
पछिया[८] झरकि[९] चले तलफे भुभुरिया[१०] देहिया में अगिया लगावे कोइलिया ॥ टेक ॥
झुलसि गइल दिन, अउँसी[११] के रतिया बरसे फुहार रिमझिम बरसतिया[१२]
करिया बदरवा के सजल करेजवा में, चमकि बिजुरिया डेरावे कोइलिया ॥ टेक ॥
उपटि[१३] गइल भरि छिछली पोखरिया, बिछली[१४] भइल किंच-किंचर[१५] डगरिया
सूनी बँसवरिया[१६] में धोबिनी[१७] चिरइयाँ घुघुआ[१८] पहरुआ जगावे कोइलिया ॥ टेक ॥
आइल शरद ऋतु उगल[१९] अँजोरिया[२०], दुधवा में लउके[२१] नहाइल नगरिया।
सिहरी गइल सखि छतिया निरखि चाँद, पुरवा झटकि[२२] सिहरावे कोइलिया ॥ टेक ॥
ठिठुरि शरद ऋतु ओढ़ले दोलइया[२३] केकुरी[२४] कुहरिया[२५] में कटेला समइया
भींगल उमिरिया[२६], जड़इया[२७]के जगरम[२८] अइसन सरदिया[२९] मुआवे[३०] कोइलिया ॥ टेक ॥
सरसो, केरइया[३१], सनइया[३२] फुलाइल झिर-झिर-झिहिर शिशिर ऋतु आइल
सलिया[३३] गुजरि गइल, तबहूँ ना हलिया[३४], पुरुब मुलुकवा से आवे कोइलिया ॥ टेक ॥

(२)

बिरहा (विधवा-विलाप)

जिये के जियत बानी[३५], चाहीं ना जिए के हम
अब बाटे जियल[३६] पहाड़।

(१)

रतिया[३७] के छलकत चाँनी[३८] के गगरिया
कि बहे अमरितवा[३९] के धार,
फजिरे[४०] के ललकी[४१] टिकुलिया[४२] में लहरल
सुतल सनेहिया[४३] हमार ॥टेक॥

(२)

हमर करमवाँ[४४] में नाहीं अमरित[४५] बाटे
नाहीं बाटे टिकुली-सिंगार
जहिया[४६] से डुबलऽ नयनवाँ के जोतिया[४७]
कि हमरो सरगवा[४८] अन्हार[४९] ॥टेक॥

(३)

सुन्नर[५०] भवनवाँ सुहगवा के रतिया
भूतवा के भइल बा बसेर[५१]
माँगवा के ललकी लकिरिया[५२] मिटाइल
रहले करमवाँ के फेर ॥ टेक ॥

१. हरे-भरे। २. पल्लवों। ३. प्रेम। ४. बीत गई। ५. बाजार उठाना (मुहावरा)=प्राकृतिक दृश्यों का उजड़ जाना। ६. महुए का फूल। ७. आम्र-मंजरी। ८. पश्चिमी हवा। ९. रूखे ढंग से। १०. तप्त धूलि। ११. ऊमस (ऊष्मा) १२. बरसात। १३. उफना गई। १४. फिसलन। १५. पंकिल। १६. बाँस की झाड़ी। १७. एक पक्षी। १८. घूग्घू, उलूक। १९. उदित हुई। २०. चाँदनी। २१. दिखाई पड़ती है। २२. झोंके से। २३. दुलाई, लिहाफ। २४. ठिठुरन से सिकुड़ कर। २५. कुहासे से भरी रात में। २६. भींगी उम्र (मुहावरा)=सरस वय। २७. शीतकाल। २८. जागरण। २९. ठंड। ३०. जान मारती है। ३१. केराव, खेसारी (कदन्न)। ३२. सनई। ३३. साल, वर्ष। ३४. हाल, समाचार। ३५. जीती हूँ। ३६. जीता या जीवित रहना। ३७. रात्रि। ३८. चाँदी की गगरी (चाँद)। ३९. अमृत। ४०. प्रातःकाल। ४१. लाल। ४२. टिकुली, (सूर्य)। ४३. प्रेम। ४४. भाग्य। ४५. अमृत। ४६. जिस दिन। ४७. ज्योति (नयनों की ज्योति=पति)। ४८. स्वर्ग (सुख-सौभाग्य)। ४९. अँधेरा। ५०. सुन्दर। ५१. बसेरा। ५२. रेखा।

बिरहा के अगिया, करेजवा के दगिया[1]
बगिया[2] के भइल बा[3] सिंगार ॥टेक॥
फुलवा के अँखिया खुलल नाहीं अबतक
नदिया के घटल जुआर[4],
मन के रँगीनियाँ[5] जोगनियाँ भइल बाटे
टूटल सँरगिया[6] के तार ॥टेक॥

(४)

बिधना[7] तोहरे हाथ बाटे फुलवरिया
कि दिने राते बहत बयार[8],
नाहीं एहि पार बानी नाहीं ओहि पार हम
फाटत करेजवा हमार ॥टेक॥

उमाकान्त वर्मा

आपका जन्म स्थान छपरा नगर है। आपकी शिक्षा काशी-विश्वविद्यालय में हुई। उसी समय हिन्दी के प्रसिद्ध कवि श्री शिवमंगल सिंह 'सुमन' और सुपरिचित आलोचक श्री त्रिलोचन शास्त्री के सम्पर्क से आपमें साहित्य-साधना की भावना जगी। आप हिन्दी और भोजपुरी में अच्छी कविता करते और गाते हैं। दोनों भाषाओं के कहानी-लेखक भी हैं। आपकी दो पुस्तकें 'मकड़ी के जाला' (भोजपुरी कहानी-संग्रह) और 'दू बिन्दू' (भोजपुरी उपन्यास) तैयार हैं। इस समय आप हाजीपुर (मुजफ्फरपुर) कॉलेज में हिन्दी के प्राध्यापक हैं।

गीत

रे छलिया संसार।
भरल हलाहल मधु के पिअलिया[9] ले आइल उपहार,
सकुचि लजाइल, उठि-उठि आइल पल-पल लहर जुआर[10]।
रे छलिया संसार ॥
जान[11] गइल जब आजु के रोवल काल्हु[12] के गावल गीत,
हार भइले यह आजु के पहले, रहले करमवाँ[13] के गीत।
मिलल सनेहिया चिनिगिया[14] लगावे भइल जिनिगिया[15] के भार।
रे छलिया संसार ॥

बरमेश्वर ओझा 'विकल'

आप हिन्दी और भोजपुरी दोनों में कविता लिखते हैं। आप वंशवर (ब्रह्मपुर, शाहाबाद) ग्राम के निवासी हैं। आप कुँवर सिंह की जीवनी भोजपुरी में लिख रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार करने में आपने मेरी सहायता की है।

१. दाग (फफोला)। २. बाग। ३. हुआ है। ४. ज्वार। ५. लालसाएँ। ६. सारंगी (हृदय-तंत्री) ७. ब्रह्मा। ८. हवा। ९. प्याली। १० ज्वार-भाटा। ११. जान गया। १२. कल, गत दिवस। १३. भाग्य। १४. चिनगारी। १५. जिन्दगी।

ई[१] कइसन[२] जुग आइल बा ?
छवले बीया[३] कारी बदरिया, सूरुज जोति लुकाइल बा[४]।
ई कइसन जुग आइल बा ?

(१)

बइठल सोना के ढेरी पर, ऐगो[५] आपन हुकुम चलावत।
ऐगो भीख माँगि के घर-घर, कसहूँ[६] आपन समय कटावत ॥
बाप और बेटा के अब तक, नाते[७] ना फरिआइल[८] बा।
ई कइसन जुग आइल बा ?

(२)

लूटि पाटिके भारत काटत, जहवाँ पावत जे[९] जेकरा[१०] के।
आपन अब तऽ राज भइल बा, इहवाँ[११] पूछत के[१२] केकरा[१३] के ॥
अपने भाई के खूनवा से, सभ कर हाथ रंगाइल बा।
ई कइसन जुग आइल बा ?

(३)

करिया[१४] एक बजार चलल बा, करिया चोर घुमत जवना[१५] में।
हिरदय में का ओकरा[१६] बड़ुए, दया धरम तनिको[१७] सपना में ॥
सभकर पपवा के गठरी में, टँगरी[१८] अब अझुराइल बा[१९]।
ई कइसन जुग आइल बा ?

गोस्वामी चन्द्रेश्वर भारती

आपका घर कोड़ारी (दरौंदा, सारन) है। आप अधिकतर प्रचार-गीत ही लिखते हैं। नये-नये तर्जों में ठेठ भोजपुरी के गीत सामयिक विषयों पर आप बहुत अच्छा लिखते हैं। आप गायकों की टोली बनाकर, ढोलक, झाल और हरमोनियम के साथ गा-गाकर अपनी रची पुस्तकें बेचते हैं। गाने का नया आकर्षक तर्ज और भाव प्रकाश का नया ढंग होने से लोग चाव से गाना सुनते और आपकी पुस्तकें खरीदते हैं। आपकी एक किताब 'रामजी पर नोटिस*' मुझे मिली है।

(१)

पानी बिना सूख गइल देस भरके धान, ई का कइलीं भगवान !
करजा काढ़ के खेती कइलीं, मर-मर रोपलीं[२०] धान।
खेत के पैदा दहल[२१] सूखल, रोवता किसान ॥ ई का० ॥
कहीं गइल दह[२२], कहीं घामा[२३] से बेकाम।
ओहु से[२४] जे बाँचल बा, बलेक[२५] लेहले टान[२६] ॥ ई का० ॥

१. यह। २. कैसा। ३. छाई हुई है। ४. छिपी हुई है। ५. कोई एक। ६. किसी तरह। ७. नाता-रिश्ता ही। ८. स्पष्ट हुआ अथवा सुलझा है। ९. जो कोई। १०. जिस किसी को। ११. इस देश में। १२. कौन। १३. किसको। १४. काला। १५. जिसमें। १६. उसके। १७. जरा भी। १८. टाँग, पैर। १९. उलझी हुई है। * प्रकाशक—बाबू ठाकुरप्रसाद गुप्त, बम्बई प्रेस, राजादरवाजा, बनारस। २०. रोपा। २१. बह गया। २२. बह। २३. सूखा, अकाल। २४. उससे भी। २५. चोरबाजारी। २६. खींच लिया।

(२)

हम राज-किसान[1] बनइतीं हो।
धनी-गरीब-अमीर सभी के एके[2] राह चलइतीं हो।
हक-भर[3] भोजन सबके दीतीं,[4] दुखी न कहवइतीं हो।
जेकरा घर में नइखे[5] भोजन, चाउर[6] से भरवइतीं हो॥
जेकरा बाटे टुटही[7] मड़इया, खपड़ा से बनवइतीं हो।
कोटा[8] के जो बात जे होइत, आपन नीति चलइतीं हो॥
बलेक-लीडर[9] के बाँधि पकड़ि के, फाँसी पर लटकइतीं हो।
बइमानों के जब धर पइतीं, कारीख मुँह में लगइतीं[10] हो॥
गदहा पर बइठाइ उन्हें फिर चूना से टीकवइतीं[11] हो।
बाल वृद्ध बीआह अंत कर, जोड़ा ब्याह[12] रचइतीं हो॥
उनही से अब भारत में फिर अरजुन-भीम बोलइतीं हो।
खादर[13] के जोगाड़[14] जो करतीं थोरहीं में उपजइतीं हो॥
गउमाता[15] के चरनेवाली परती ना जोतवइतीं हो।
छुआछूत के भूत भगइतीं, सरिता-प्रेम बहइतीं हो॥
हिन्दू-मुसलिम भाई के हम, एके मंत्र पढ़इतीं हो।
बाँग[16] अधिक खेत में बोइतीं, चरखा बहुत बनइतीं हो॥
भारत में बीधान बना के, घर घर सूत कतइतीं हो।
अमर शहीदों के नामी[17] ले, सुमिरन में लिखवइतीं हो॥
सूली पर हँस चढ़े बहादुर, उनके सुची[18] बनइतीं हो।
मातृ-भूमि के बलिबेदी पर, 'चन्द्रेश्वर' सीस चढ़इतीं हो॥
जब-जब जनम लीतीं[19] भारत में, बलिबेदी पर जइतीं हो॥

सूर्यपाल सिंह

आप चातर, (बबुरा, बड़हरा, शाहाबाद) के रहनेवाले हैं। आपकी भाषा हिन्दी मिश्रित भोजपुरी है। आपके द्वारा रचित तीन पुस्तिकाएँ प्रकाशित हैं, जिनके नाम हैं—आजादी का तूफान; निर्गुण भजन पंचरत्न और लम्पट लुटेरा*। आपके शिष्य जवाहर हलुवाई छपरा जिले के हैं। वे भी भोजपुरी के कवि हैं।

पूर्वी

भारत आजाद भइले, हुलसेला[20] मनवाँ, मे झगडा सोहे ना।
बिजय देवी के समनवाँ[21] से झगडा सोहे ना॥
झंडा तिरंगा, बीच में चक्कर निसनवाँ[22], उड़ावल गइले ना।
दिल्ली किला के उपरवा, से उड़ावल॰॥

---

१ किसान-राज्य। २. एक ही। ३. परिश्रम के अनुसार कमाई के योग्य। ४. देता। ५. नहीं है। ६. चावल। ७. टूटी-फूटी। ८. हिस्सा। ९. चोरबाजारी में ज्यादा नफाखोरी करनेवाला। १०. लगा देता। ११. टीका लगवा देता। १२. समान वय के युवक-युवती का ब्याह। १३. खाद। १४. व्यवस्था। १५. गोमाता। १६. बिनौला, कपास। १७. नामावली। १८. तालिका। १९. लेता। *प्रथम दो पुस्तकों का प्रकाशक है—राममोहन पुस्तकालय, तेलिनीपाड़ा हुगली (कलकत्ता)। प्रकाशक—रामनारायण त्रिवेदी, दूधनाथ प्रेस, सलकिया, हवड़ा (कलकत्ता)। २०. उल्लसित होता है। २१. सामने। २२. चिह्न।

उनइस सो सैंतालिस रहले, शुक्रवार दिनवाँ, से जयहिंद ना।
भइले चारो ओर सोरवा[1], से जय० ॥
जुग-जुग जियसु[2] बाबा गाँधी, जवाहर से, बन्धन तोड़ले ना।
माता कष्ट के हटवले, से बन्धन तोड़ले ना ॥

पाण्डेय कपिलदेवनारायण सिंह

आपका जन्म-स्थान शीतलपुर (बरेजा, सारन) है। अपने साहित्यिक परिवार से ही आपको साहित्य-सेवा की प्रेरणा मिली। आप हिन्दी और भोजपुरी दोनों के कवि तथा लेखक हैं। अभिनय-कला में भी आपकी रुचि है। ऋग्वेद के बहुत से सूक्तों, संस्कृत के श्लोकों और अँगरेजी की कविताओं का आपने हिन्दी और भोजपुरी में पद्यबद्ध अनुवाद किया है। आपके पूज्य पितामह स्वर्गीय श्रीदामोदर सहाय सिंह 'कविकिंकर' द्विवेदी-युग के लब्धप्रतिष्ठ कवि थे। आपके पूज्य पिता पाण्डेय जगन्नाथप्रसाद सिंह हिन्दी के पुराने माने जाने लेखक हैं। आजकल आप बिहार-सरकार के अनुवाद-विभाग में हैं।

जिनगी के अधार

जियरा में उठेला दरदिया[3], नयेनवाँ से नीर ढरे हो।
अँखिया में रतिया बीतवनी[4], सनेह के जोगवनी[5]।
से मन के भोरवनी[6] नु हो ॥
आहे सखिया,
पियवा बड़ा रे निरमोहिया, ना जीया के कलेस हरे हो।
छितरल[7] धरती के कोरवा[8] से अँखिया के लोरवा[9]।
जे ओस बनी भोरवा[10] नु हो ॥
आहे सखिया,
छतिया के सुनगल[11] अगिया किरिनियाँ के रूप धरे हो।
झनवेला हीया के सितार, मधुर झनकार।
दरदिया के भार नु हो ॥
आहे सखिया,
जिनगी के इहे बा अधार जे जिनगी में जान भरे हो।
जियरा में उठेला दरदिया नयेनवाँ से नीर ढरे हो ॥

इन्द्र-सूक्त के अनुवाद

यो जात एव प्रथमो मनस्वा,
न्देवो देवान्क्रतुना पर्यभूषत्।
यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेतां,
नृम्णस्य मह्ना स जनास इन्द्रः* ॥१॥
जनमे लेत आदमी, सब में तुरते जे अगुआ हो गइल
अपना बूता[12] से देवन के भी अपना कब्जा[13] में कइल,

---

१. शोर। २. जीवित रहें। ३. दर्द। ४. बिताया। ५. सँजोया। ६. भुलावा दिया। ७. बिखरा हुआ। ८ कोर, किनारा। ९. आँसू। १०. प्रातः काल। ११ सुलगी हुई। * ऋग्वेद, म० २, सू० १२, मन्त्र १। १२. बल। १३. अधिकार।

जेकरा साँसे भर लेला[1] से, सरग ओ धरती अलगा भइल,
जे बलवाला बहुत बड़ा बा[2], उहे[3] इन्द्र भगवान ए लोगे[4] ॥१॥

य: पृथिवीं व्यथमानामदृंहद्
य: पर्वतान्प्रकुपिताँ अरम्णात् ।
यो अन्तरिक्षं विममे वरीयो
यो द्यामस्तभ्नात् स जनास इन्द्रः ॥२॥*

बहत पसीजल धरती के थक्का[5] पा ठोस बना दीहल जे,
उड़त चलत परबत टीलहा[6] के एक जगह बइठा दीहल[7] जे,
आसमान जे बड़हन[8] कइल, आसमान के नाप लीहल[9] जे,
जे आधार सरग के दीहल, उहे इन्द्र भगवान, ए लोगे ॥२॥

भूपनारायण शर्मा 'व्यास'

आप रायपुर (मानपुर, दिघवारा, सारन) ग्राम के निवासी हैं। आप कथावाचक हैं। आप मण्डली बनाकर कथा कहा करते हैं। आप भोजपुरी में सुन्दर रचना करते हैं। आपकी अबतक छह रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। जिनमें अन्य कवियों की भी रचनाएँ हैं।

प्रकाशित पुस्तकें—(१) राम-जन्म बधैया, (२) मिथिला बहार संकीर्त्तन, (३) श्री सीताराम विवाह-संकीर्त्तन, (४) सीता-बिदाई, (५) कीर्त्तन-मंजुमाला और (६) श्री गौरीशङ्कर-विवाह संकीर्त्तन। इनमें प्रथम चार का प्रकाशक—भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, बनारस है।

कीर्त्तन

तो[10] पर वारी[11] सँवलिया ए दुलहा ॥ टेक ॥
सिर पर चीरा[12], कमर पट पीला, ओढ़े गुलाबी चदरिया।
गले बीचे हीरा, चबावे मुख बीरा[13] बिहँसत करे कहरिया[14] ॥
छैल, छबीला, रँगीला, नोकीला[15] पहिरे जामा[16] केसरिया।
भौंहे कमान तानि नयन-बान मारे, भरिके काजर[17] जहरिया[18] ॥
मिथिला की डोमिन सलोनी सुकुमारी, तोहरे सरहज[19] वो सरिया[20]
सुध-बुध हार भई प्रेम-मतवाली, पड़ते ही बाँके नजरिया।
हम तोहरो पिछुवा[21] नहीं छोड़बो जैहों साथे अवध नगरिया ॥
सरपत[22] के कुटिया बनाई हम रहबो, तोहरो महल पिछुवरिया[23]।
सरयू सरित तीरे-तीरे बहारब[24], साँझ-सबेरे-दुपहरिया।
ताही ठौर मिलब नहाये जब जैबऽ[25], प्रान जीवन धनुधरिया[26]।
तोरा लागि माँगब दूकाने-दूकाने कौड़ी बीच बजरिया[27]।
नेह लगा और कतहीं न जाइब, अइसे बितइहों उमरिया[28] ॥

१. लेने। २. है। ३. वही। ४. ऐ मनुष्यो। * ऋग्वेद, मं० २, सूक्त १२, मंत्र २। ५. जम कर थोक हो जाना। ६. स्तूप, ऊँचा टीला। ७. दिया। ८. बड़ा, विस्तृत। ९. लिया। १०. तुम पर। ११. निछावर हुई। १२. पगड़ी। १३. पान का बीड़ा। १४. कहर=आफत, प्रलय। १५. नफीश, सुन्दर। १६. घाँवरा। १७. काजल। १८. विष। १९. साले की स्त्री। २०. साली, पत्नि की छोटी बहन। २१. पीछा। २२. सरकंडा। २३. पिछवाड़ा, मकान के पीछे। २४. झाड़ू से बहारूँगा। २५. जाओगे। २६. धनुर्धर भगवान् राम। २७. बाजार। २८. उम्र।

सिपाही सिंह 'पागल'

आप सारन जिले के बैकुण्ठपुर थाने के निवासी हैं। सन् १९४४ ई० में छपरा के 'राजेन्द्र-कॉलेज' से आपने बी० ए० पास किया था। सन् १९५१ ई० में आपने पटना के ट्रेनिंग-कॉलेज से 'डिप्० इन्-एड्०' की परीक्षा विशेषता के साथ पास की। काशी के साप्ताहिक 'समाज' में आपके भोजपुरी-सम्बन्धी कई लेख प्रकाशित हुए थे। आपने अँगरेजी के कवि 'शेली', 'वड्सवर्थ' आदि की कविताओं का अनुवाद भोजपुरी में किया है।

जिनगी के गीत

सीखऽ भाई जिनगी[1] में हँसे-मुसुकाए के,
इचिको[2] ना करऽ पीर तीर के खिअलवा[3]
सिहरऽ ना सनमुख देख मुसकिलवा
नदी-नाला परबत फाने[4] के हियाव[5] राखऽ
हारऽ ना हिया में, सीखऽ मस्ती में गावे के॥
सीखऽ भाई० ॥
आँधी बहे, पानी पड़े पथर[6] से थुरइहऽ[7]
तबहूँ[8] ना जिनगी से मुँह बिजकइहऽ[9]
सातो समुन्दर चाहे बड़का पहाड़ मिले
तबहूँ ना पीछा मुहें डेग[10] घुसकइहऽ[11]
जहर पी के सीखऽ नीलकण्ठ कहलावे के।
सीखऽ भाई० ॥

शालिग्राम गुप्त 'राही'

आपका घर 'दरोहटिया' (परसा, सारन) गाँव में है। आपका जन्म-काल सन् १९२६ ई० है। आपका पेशा वर्त्तमान-समस्या-सम्बन्धी गीत, भजन आदि भोजपुरी में बनाना और छोटी छोटी पुस्तिकाओं में छपवा कर ट्रेन पर गा-गाकर बेचना है। आप की रची हुई दो पुस्तिकाएँ मुझे देखने को मिलीं—'झगरू पुराण' उर्फ 'टीमल बतकही' तथा 'देहात के हलचल'। पहली पुस्तिका मोहन प्रेस (छपरा) में सन् १९५१ ई० में छपी है और दूसरी पुस्तिका कृषि प्रेस (छपरा) में सन् १९५१ ई० में छपी है। पहली पुस्तिका में वोट-सम्बन्धी झगरू-टीमल-वार्त्ता दोहा और अन्य छन्दों में है। वार्त्ता समाजवाद के पक्ष में है। दूसरी पुस्तिका आपके आठ गीतों का संग्रह है।

(१)

इयाद रख

अन्हार[12] ना छिपा सकल, अँजोर[13] होके का भइल[14]
जो थरथरी बनल रहल, तऽ घाम होके का भइल॥
हजार डींग हाँकले स्वराज हो गइल मगर।
मरल गरीब भूख से, इ राज होके का भइल॥

---

१. जिन्दगी। २. थोड़ा भी। ३. खयाल, विचार। ४. फाँद जाने के लिए। ५. हिम्मत, साहस। ६. पत्थर, ओला। ७. बुरी तरह कुचला जाना। ८. तब भी। ९. बिचकाना। १०. डग, पग। ११. खिसकाना। १२. अँधेरा। १३. उजेला, प्रकाश। १४. हुआ।

(२)

अइसन[१] परल[२] अकाल बाप रे !
अबकी[३] लोग जरूरे मरी, चाहे कोटि धरीछन[४] करी !
घट गइलक[५] एकबाल बाप रे ! अइसन० ॥
जाति-पाँति के बाँध न[६] टूटल, सबे लोग सब काम में जूटल[७] ।
पण्डित भइल कलाल[८] बाप रे ! अइसन० ॥
सेर-भर[९] के खुद्दी[१०] फटकल[११], देख के हमर दिमागे चटकल[१२]।
कइलक[१३] कउन हलाल[१४] बाप रे ! अइसन० ॥
दूध-दही घीव अमृत[१५] भइल, पाँचो मेवा पताले गइल[१६] ।
उपजल टी० बी० काल बाप रे ! अइसन० ॥
घर-दुआर सब दहिए[१७] गइल, तीन साल से फसल न भइल ।
हम सब भइलीं बेहाल बाप रे ! अइसन० ॥
बाहर से गल्ला ना आई, तब हमर्नी[१८] का[१९] खायब भाई ।
इहे अजब सवाल बाप रे ! अइसन० ॥

रामवचन लाल

आपका जन्म विक्रम-संवत् १९७७ में भाद्र-पूर्णिमा को हुआ था। आप शाहाबाद जिले के बगाढ़ी गाँव के निवासी हैं। आप सन् १९४३ ई० में इलाहाबाद-बोर्ड से आई० ए० की परीक्षा पास कर माष्टरी करने लगे थे। सन् १९५२ ई० में आपने काशी विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा पास की है। आप एक होनहार भोजपुरी कवि हैं। आपकी भोजपुरी की मुख्य रचनाओं में 'कुणाल', 'गीतांजलि', 'दिली दोस्त' (शेक्सपीयर के मर्चेंण्ट आफ वेनिस के आधार पर) तथा 'रामराज' हैं।

राज-वाटिका-बरनन

रहे गह-गह[२०], मँह-मँह[२१] फुलवरिया, मधुरे-मधुर डोले मधुई बयरिया[२२] ।
रंगे रंगे फर[२३] फूल बिरिछ[२४]-बँवरिया[२५], रस ले भँवरवा भरेला गुँजरिया[२६] ॥
बन मन भारै, कहीं कुहुँके कोइलिया, हियरा में साले ले पपिहरा के बोलिया ।
बिहरें सगरवा[२७] में रँगलि मछरिया, छूटेला फुहारा रंग-रंग झरझरिया ॥
पतवा[२८] में तोतवा[२९] लुकाके[३०] कहीं कतरेला[३१], रसे-रसे[३२], रस लेइ-लेइ[३३] ।
जोड़िया मयनवां[३४] के डढ़िया बइसि[३५] भले, हियरा हुलास कहि देइ ॥

नथुनी लाल

आप मोरंगा (बेगूसराय, मुँगेर) गाँव के रहनेवाले हैं। आपकी विशेषता यह है कि मुँगेर की अंगिका (छीका छीकी) भाषा के बोलनेवाले होकर भी आपने भोजपुरी में रचना की है आपकी रचनाएँ समाज-सुधार की होती हैं। आपकी एक पुस्तिका है 'ताड़ीबेचनी', जो दूधनाथ प्रेस

१. ऐसा। २ पड़ा। ३. इस बार। ४. उपाय। ५. घट गया। ६. बंधन। ७. जुट गये, लग गये। ८ मद्यविक्रेता। ९. एक रुपये का एक सेर। १०. चावल के कण। ११. सूप से फटका हुआ (चुन)। १२. उड़ गया। १३. किया। १४. वध, जिबह। १५. अमृतवत्, दुर्लभ। १६. दुम हो गया। १७. बह गये। १८. हमलोग। १९. क्या। २०. हरी-भरी। २१. सुगंधमय। २२. बयार, वायु। २३. फल। २४. वृक्ष। २५. वल्लरी। २६. गुंजार। २७. सरोवर। २८. पत्ता। २९. तोता। ३०. छिपकर। ३१. कुतरता है। ३२. धीरे-धीरे। ३३. ले-लेकर। ३४. मैना पक्षी। ३५. बैठ कर।

(सलकिया, हवड़ा) से प्रकाशित है। दूसरी पुस्तिका 'आजाद भारत की पिस्तौल' हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, १६२/१, हरिसन रोड, कलकत्ता से छपी है। पहली पुस्तक की रचनाएँ भोजपुरी-लोक साहित्य की हैं। दूसरी में राष्ट्रीय गीत नये-नये तर्जों में हैं।

धुन पूर्वी

तोहर[1] बयान सब लोग से कहत बानी, कनवाँ लगाइ तनी सुनऽ ताड़ीबेचनी[2] ॥
गाल गुलेनार, डाँड़[3] सिंकिया[4] समान बाटे, जोबना बा काशी के अनार ताड़ीबेचनी।
नित तू सबुनवाँ लगावेलू[5] बदनवाँ में, पोखरा[6] में करऽ असनान ताड़ीबेचनी ॥
नित तू सबेरे-शाम साबुन से असनान कर, तेलवा लगावे बासदार[7] ताड़ीबेचनी।
चिरनी[8] लगाई कर, माथा के बँधाई लेले, सेन्दुरा से भरेले लिलार ताड़ीबेचनी ॥
सड़िया रंगीन पेन्हे, चोली लवलीनवा[9] से टिकुली के अजब बहार ताड़ीबेचनी।
चन्द्र के समान मुँह, गाल मलपुआ[10] जइसे, रोरी बुन्द[11] करेली लिलार ताड़ीबेचनी ॥
काड़ा[12]-छाड़ा[13]-झबिया[14], पहुँची, हाथ-बालिया[15] से हँसुली पहिरे सवासेर ताड़ीबेचनी।
सोलहो सिंगार करि, करे अभरन[16] प्यारी, बइसेली ताड़ी के दूकान ताड़ीबेचनी ॥

वसन्तकुमार

आपका जन्म-काल विक्रम संवत् १९८६ है। आपका जन्म-स्थान खजुहट्टी (सारन) गाँव है। आपका घरेलू नाम अयोध्याप्रसाद सिंह है और साहित्य-क्षेत्र में वसंतकुमार। छात्रावस्था में आप 'रामचरित-मानस' का नियमित पाठ करते थे। हिन्दी-संसार के प्रसिद्ध साहित्यसेवी श्री राहुल सांकृत्यायन की प्रेरणा से आप भोजपुरी-कविता की ओर प्रवृत्त हुए। आपने भोजपुरी की अनेक कविताएँ लिखीं, जिनमें अधिकांश रेडियो में प्रसारित हो चुकी हैं।

बदरवा

[धरती ग्रीष्म में गर्म लोहे-सी तप रही है। खेतों की फसल चिलचिलाती धूप में झुलस पड़ी है। ठीक इसी समय ग्रीष्म की हाँफती हुई एक नीरव दुपहरी में एक किसान सुदूर परितप्त आकाश में बादल के एक सूखे टुकड़े को देखकर, उसे सम्बोधित करके आशा-भरे लय में गा पड़ता है—]

छितिज से फुदुकत[17] आउ रे बदरवा[18], भरु[19] पनियाँ से मोर खेत
दया नहीं लागे तोके भइया बदरवा, खेतवा भइल मोर रेत।
सँपवा समान लप-लप करि लुकिया[20] चलत, चँवरवा[21] उदास
खेत के फसलिया झुलसी मुरझइली, आगे के न बाटे किछु आस
इनर[22] बाबा के घर-घर होत गीत, पर बाबा नाहीं डरल बुझास[23]
जाऊ तनी[24] उहाँ के[25] मनाई देऊ भइया, चढ़ि के पवन उनचास
झमकत, बरसत, हँसत-खेलत करू धरती के सरस-सचेत
खेतवा भइल मोर रेत।
दिगमिग[26] करि उठे खेतवा भदइया, देखिकर जिया हुलसाय[27]
हरियर पतिया में सिमटि मकइया कस-मस करि अँखिआय[28]

१. तुम्हारा। २. ताड़ी बेचनेवाली। ३. कमर। ४. सींक-सी पतली। ५. लगाती है। ६. तालाब। ७. खुशबूदार, सुगन्धित। ८. घास की कड़ी छड़ों को एक साथ बाँध कर बनाया गया मुट्ठा, जो उलझे और गंदे बालों को सुलझाने तथा साफ करने के काम में आता है। ९. मनोमोहक, आकर्षक। १०. मालपूआ। ११. रोली की बिन्दी। १२. पैर का कड़ा। १३. पैर में पहनने के पतले कड़े। १४. प्याली के आकार का घुँघरूदार गहना। १५. हाथ का कंगन। १६. आभरण, अलंकार। १७ फुदकते हुए, आनन्द-मग्न हो उड़ते हुए। १८. बादल। १९. भरो। २०. ग्रीष्म की लू। २१. नीची सतह के खेतों का मैदान। २२. इन्द्र भगवान्। २३. मालूम पड़ते हैं। २४. जरा। २५. उनको। २६. जगमग। २७. उल्लसित। २८. अंकुर देना।

पछेया[१], झहरि चले, मिटे पुरवइया धानवाँ उमँकि[२] लहराय
रबिया[३] के समय भी भूलु नाहीं भइया, चक-मक फसल फुलाय
गहुँआ का गोदिया में लिपटि केरउवा[४] हँसे, नाहीं तोहरा समेत
खेतवा भइल मोर रेत।
चिरई[५] समान फुदुकत कहु भइया, सरपट जात कित ओर
तुहूँ त[६] हिमाचल के सेज पर बिहरत हमनी के दुरकत[७] लोर[८],
जदी ना तूँ अइबऽ अकाल पड़ि जइहें, मचि जइहें भूखवा के शोर
अन[९] बिनु मोर देस भइल तबाह भइया, तिकवत[१०] तहरे[११] ही ओर
सोना-चाँनी बरसहु दाता रे बदरवा, खुसहाल होय मोर देस
खेतवा भइल मोर रेत।
नाचु तुहूँ उमड़ि-घुमड़ि के अकसिया[१२] बिजुरी के ले मुसुकान
चँवर डोलावे तोके शीतल बेयरिया, मिट जाय आन्हीं[१३] वो तूफान
छिड़कु[१४] सुरस-धार रिम-झिम-रिमझिम, छाइ जासु सकल जहान
बिरहा के तान छेड़ि 'रोपनी[१५] में लागे सब तुहूँ गाउ गरजन-गान
दुरक[१६] पड़ऽ तू सब ओर रे बदरवा, मनवाँ के करु ना सकेत[१७]
खेतवा भइल मोर रेत।

हरेन्द्रदेव नारायण

आप भोजपुरी के स्वनामधन्य सुकवि स्वर्गीय श्रीरघुवीरनारायण जी के सुपुत्र हैं। आपका जन्म सारन जिले के 'नया गाँव' नामक ग्राम में, सन् १६१७ ई० में हुआ था। आपने सन् १६३७ ई० में बी० ए० पास किया था। आप हिन्दी के एक प्रतिभाशाली कवि और आलोचक हैं। सन् १६३३ ई० में आपकी पहली कविता 'बाँसुरी' पटना से प्रकाशित साप्ताहिक 'बिजली' में छपी थी और उस समय उसकी काफी प्रसिद्धि हुई थी। तबसे आप निरन्तर हिन्दी साहित्य की सेवा करते आ रहे हैं। आपकी पत्नी श्रीमती प्रकाशवती नारायण भी हिन्दी की कवयित्री और कहानी लेखिका हैं। आपने सन् १६५७ ई० में पहले-पहल भोजपुरी में 'कुँवरसिंह' नामक महाकाव्य लिखा है, जो आरा नगर के एक प्रकाशक द्वारा प्रकाशित किया गया है। उसी के द्वितीय सर्ग का एक अंश यहाँ उद्धृत है—

बैठकखाना कुँवरसिंह के, बाहर खूब जमल बा[१८],
झालर लागल बा[१९] नफीस, चंदोवा एक टँगल बा।
दियाधार[२०] के दीपन से, मृदु-मन्द जोत आवत बा,
एक गुनी बैठल बा, सारंगी पर कुछ गावत बा॥
अइलन[२१] बाबू 'कुँवरसिंह', सहसा भीतर से बाहर,
कोलाहल कुछ भइल बिपिन में, बाहर आइल नाहर।
हड्डी ठोस, पेसानी[२२] दमकत, पुष्ट वृषभ-कंधा बा,
अस्सी के बा उमर भइल, का कहे बूढ़? अन्धा बा॥

---

१. पश्चिमी वायु। २. उमंग से भर कर। ३. चैती फसल (गेहूँ, जौ, चना आदि)। ४. केराव, खेसारी (एक प्रकार की चैती फसल)। ५. चिड़िया। ६. तुम तो। ७. दुलकता है, बहता है। ८. आशु। ६. अन्न। १०. देखता है। ११. तुम्हारी। १२. आकाश। १३. आँधी। १४. छिड़क दो। १५ धान के पौधे रोपने का कार्य। १६. दुलक पड़ो। १७. संकीर्ण, छोटा। १८. जमा हुआ है। १६ लगा हुआ है। २० दीबट (दीपाधार)। २१ आये। २२. ललाट।

सिंह चलन[1], रवि जलत नयन, जुग सुगठित चंड भुजा बा,
अइसन डोलेला जइसे, डोलेला विजय-पताका।
नवजुग के हम दूत कहीं, या जय के याकि विभा के।
केन्द्र-बिन्दु मानुस-सपना के, साहस, सत्य, प्रभा के!!
छोटन रागन[2] के समाज में, महाराग आवेला,
फूलन के ढेरन में जइसे, कहीं आग आवेला।
जिनगी[3] के अँधियाली में, या पुन्न[4] भाग आवेला,
कोलाहल मय स्वार्थ बीच जइसे बिराग आवेला॥
वइसे[5] अइलन कुँवरसिंह जी, जय जय, जय जय गूँजल,
ब्राह्मन-कुल वो बन्दीजन के, चिरमंगल लय गूँजल।
जइसे अइला से प्रभात के, चिड़िया-कुल चहकेला,
भोरहरी[6] के हवा चले तो कमल फूल मँहकेला॥
जिनकर हड्डी में सिमटल[7] होखे, जोती[8] के सागर,
जिनकर मांसपेसियन[9] में, सूतल हो अमित प्रभाकर।
जिनकर चमकत नयन-पुत्तली, में सूरज चन्दा हो,
बंक भौंह में सब कुभाल[10] के, जहाँ मरन-फंदा हो॥
जे हो महासिन्धु साहस के, जहाँ गिरे सब धारा,
जे आसीम गौरव हो, जेकरा[11] में ना कहीं किनारा।
अइसन माँझी जे आंधी में नौका खोल चलेला,
तलहत्थी में भाग मले[12], ओकरा के वृद्ध कहेला॥
जय हो सत्य, सील के पुतला, जय साहस के सागर,
जय जागृति के अद्‌भुत कारन, नरकुल-वंस-उजागर।
छाती, जइसे अटल हिमालय, करुणा नव निरझरनी,
ऊ बा सब के आसा-माया, असरन-मंगल-करिनी॥
आज दुआरी[13] पर आकर के, राउर पग चूमे के,
किरन खड़ा बा, वोही[14] मद में जुग-जुग तक झूमे के।
दिसा-ओट से भग्य पुकारत बा, नवजुग आवत बा,
ये रतिया में अमर जागरन-गीत नियति गावति बा॥
मानुस जीवन के तरनी के, जय हो वीर खेवैया[15],
दमकी राउर प्रान-दामिनी, आइल उहे[16] समैया[17]॥

दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह

आप दिलीपपुर (शाहाबाद) के निवासी हैं। आपके पिता का नाम श्री विश्वनाथप्रसाद सिंह था। आपका जन्म विक्रम-संवत् १६५३ में, मार्गशीर्ष कृष्ण-एकादशी, सोमवार को हुआ था। आपने सन् १६२१ ई० में मैट्रिक की परीक्षा पास की। आपके पितामह श्रीनर्मदेश्वर प्रसाद सिंह 'ईश' हिन्दी के प्रसिद्ध कवि और विद्वान् लेखक थे। सन् १६२२ ई० से आपने हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र में प्रवेश किया।

१. गति, चाल। २. राग-रागिनियां। ३. जिन्दगी। ४. पुण्य। ५. उसी तरह। ६. भोर की वेला। ७. सिमटा हुआ। ८. ज्योति। ९. मांस-पेशियाँ। १०. अभागा। ११. जिसके। १२. मसलता है। १३. द्वार। १४. उसी। १५. खेनेवाला। १६. वही। १७ समय।

तबसे आप बराबर हिन्दी की सेवा करते आ रहे हैं। हिन्दी में आपकी १० पुस्तकें प्रकाशित और २० पुस्तकें अप्रकाशित हैं। भोजपुरी-लोक-साहित्य-सम्बन्धी अनेक लेख समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। हिन्दी की प्रकाशित पुस्तकों में 'भोजपुरी लोकगीत में करुणरस' हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (प्रयाग) से प्रकाशित है। यह पुस्तक सन् १९४४ ई० में ही प्रकाशित हुई थी। अप्रकाशित पुस्तकों में भोजपुरी-सम्बन्धी पाँच पुस्तकें मुख्य हैं—(१) भोजपुरी-लोकगीत में शान्त-रस, (२) भोजपुरी-लोकगीत में शृंगार और वीर-रस, (३) भोजपुरी-निबन्ध-संग्रह, (४) कुँवरसिंह नाटक और (५) गुनावन। इन पाँच के अतिरिक्त यह प्रस्तुत पुस्तक (भोजपुरी के कवि और काव्य) आपकी उल्लेखनीय कृति है।

(१)

सोहर

अइली भदउवा[1] केरी[2] राति, सघन घन घेरि रहे।
बाबू चढ़लीं रयनि[3] अधिराति, फिरंगी-दल[4] काँपि रहे॥
नभवा से गिरे झरि-झरि धार, तुपक[5] रन गोली झरे।
बाबू के घोड़ा करे काटि[6], कटक-गोरा काटि रहे॥
टपाटप बाजे ओके[7] टाप, छपा-छप मूड़ी[8] गिरे।
तब घेरले फिरंगिया एकाह[9], अजब बाबू युद्ध करे॥
दँतवा से धइले[10] चट लगाम, दुनो हाथे वार करे।
पयँतरा प दउड़े[11] लागे घोड़, झनाझन्न खड्‌ग चले॥
बीबीगंज[12] भइले घमसान, धमाधम तोप चले।
होखली[13] संगीनवा के मारि, दुनो दलवा जूमि[14] लड़े॥
गिरले आयर[15] अरराय, छाती मूका[16] मारि कहे।
बाबू गजब फेंके तरुआरि, बाघे अस टूटि परे॥
धन[17] ऊ मतरिया[18] जे लाल, सिलौधा[19] जनु जनम दई।
अब जइहें[20] फिरंगिया के राज, बचवलो से नाहीं बचे॥
—(भोजपुरी नाटक 'कुँवरसिंह' का एक गीत)

(२)

बिरह-निबेदन

कइसे करीं गुनावन[21] प्रीतम, सोचत गुनत[22] बइठल बानी[23]।
एही गुनावन में नू तूहूँ[24], रहि-रहि मनमें भासत जालऽ ॥१॥
भादो रैन अन्हरिया[25] जइसे, गरजि केहू चमकत जाला।
हिय के अन्धाकूप में साजन[26], ओइसे तूहूँ झलकत जालऽ[27] ॥२॥
सूल भीतरे सालत जाला, बिरहा[28] ऊपर दागत जाला[29]
पिया-प्रेम मन माँतल जाला, दूर तबो[30] तू भागते जालऽ ॥३॥

१. भाद्र मास। २. की। ३. रात। ४. अँगरेजी-सेना। ५. बन्दूक। ६. काट करना (मुहावरा)=कलाबाजी दिखाना। ७. उसका। ८. सिर। ९. अकेले। १०. पकड़ ली। ११. दौड़ना। १२. शाहाबाद जिले का एक गाँव, जहाँ गोरी सेना से कुँवरसिंह की ऐतिहासिक लड़ाई हुई थी। १३. होती है। १४. जुटकर १५. अँगरेजी-सेना का नायक 'विन्सेन्स कर्नल आयर'। १६. मुष्टि। १७. धन्य। १८. माता। १९. चट्टान, शहतीर। २० जायगा। २१. चिन्तन। २२. चिन्तन करते हुए। २३ बैठा हुआ हूँ। २४. तुम भी। २५. अंधकार। २६. स्वजन, प्रिय। २७. जाते हो। २८. वियोग। २९. दागता जाता है। ३०. तब भी।

मन में गुनावन नित्त करीला, पिया तु परम कठोर बुझालऽ[1]।
पसिजि-पसिजि के पाहन भी नू बहि-बहि के हिलकोर[2] में जाला ॥४॥
पर प्रीतम, तू जरा ना दरवऽ लखि के हाल हमार ना तरसऽ।
सावन-भादो आँखि के सरवल[3], तोहरा लेखे रिमझिम बरिसल ॥५॥
सूल हिया में चुभावत जालऽ, बिरह से तन के जारत जालऽ।
पागल अस[4] मन मातल कहके, निरमोही अस हटते जालऽ ॥६॥
भादो के अन्हरिया देखलीं, कातिक के अँजोरिया तकलीं[5]।
राति-राति भर ले सेज तड़पलीं, तब हूँ पिया तू, भागते जालऽ ॥७॥
होयतीं जल के हमू मछरिया, बसितीं[6] जा जँह पिया नहइते[7]।
चुपुके चरनन चूमि अघइतीं[8], चिर संचित मन साध पुजइतीं[9] ॥८॥
बनि पइतीं[10] जो बन के कोइलिया, करितीं बास बिंदावन बिचवा।
स्याम रचइते[11] रासि उहाँ जब, कुहुकि-कुहुकि हिय बिथा सुनइतीं ॥१०॥
—('गुनावन' से)

(३)

बिरहानुभूति

लउकता[12] पहाड़ मानों सूतल हो इआदिया[13]।
आन्हर[14] अजगर अस दिसो[15] गुमसुम बिआ[16]।
धुँआ में सनाइल[17] रबि थोरिके[18] उपरवा।
डूबत आवे नीचे जइसे मन के सपनवा ॥
गते-गते[19] सिखरा[20] पर सूरज जी उतरली।
मलिन मुखवे ताकि मोके[21] नीचे डेरा डललीं ॥
तनी-सा ललाई अब्बो[22] लउकतिया[23] ओहिजिया[24]।
जनु कवनो बिरही के काटल हो करेजिया ॥
करिया[25] ओढ़नियाँ ओढ़ि साँझि चलि अइली।
बकुलन के पाँत ओके[26] गजरा पेन्हवली ॥
कोइली एने[27] कुहुके पपीहा ओने[28] पीहके।
हियरा में धक सेनी[29] सूतल केहू जगली ॥
नभवा में सनकि[30] हवा बदरी उड़वली।
मनवा के सुख जनु ओके सँग बहवली[31] ॥
ललकी[32] लुगरिया फेनु[33] पछिम में डसवली[34]।
बिरहिन के प्रान काढ़ि ओहपर[35] सुतउली ॥

१. मालूम पड़ते हो। २. लहर, तरंग। ३. आँसू का गिरना (अश्रु स्रवन)। ४. पैसा। ५. ताकता (देखता) रहा। ६. निवास करता। ७. स्नान करते। ८. तृप्त होता। ९. पूरा करता। १०. बन पाता। ११. रचा करते, लीला करते। १२. दीख पड़ता है। १३. याद, स्मृति। १४. अन्धा। १५. दिशाएँ भी। १६. है। १७. सना हुआ। १८. थोड़ा-सा। १९. धीरे-धीरे। २०. शिखर। २१. मेरा। २२. अब भी। २३. दीख पड़ती है। २४. वहाँ पर। २५. काली। २६. उसको (रात को)। २७. इधर। २८. उधर। २९. से। ३०. पागल होकर। ३१. बहा दिया। ३२. लाल रंग की। ३३. फिर। ३४. बिछा दी। ३५. उस पर।

कविनामानुक्रमणी

नामानुक्रमणी

ष

स

पद्यानुक्रमणी

अ

झ

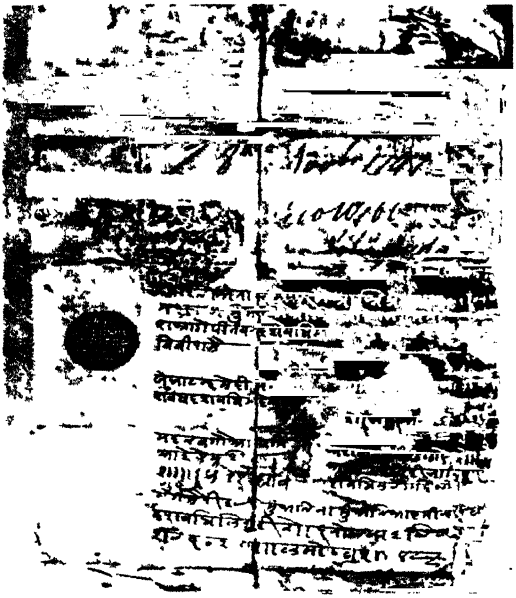
ट

ड

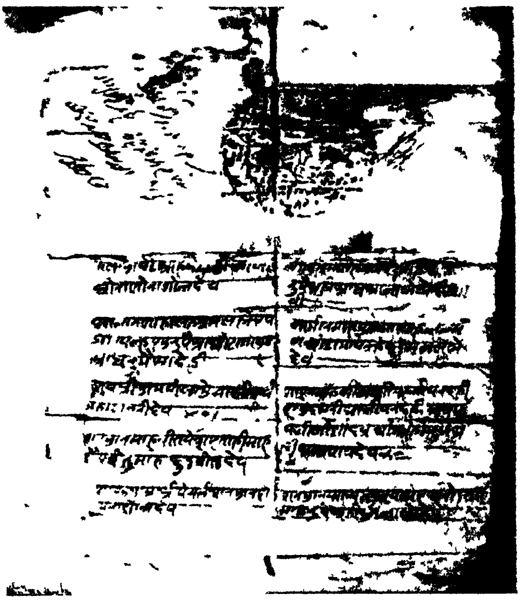
फ

ब

म



चित्र नं० १



चित्र नं० २

चित्र नं० १ की प्रतिलिपि

8th Nov. 1797

G. w. webb.
A. 19 India.

(शिरोरेखा के साथ कैथी मिश्रित नागरी अक्षर है ।)

स्वस्ति श्री राजकुमार भैया श्री प्रताप मल लि० महाराज कुमार भैया श्रीनारायण मल के............ (आसीस) आगे पितम्बर दसवधिक नेग मै दिहल है से (.........) विवीस कैं—

जे भाटन्ह के दीले ताकर दसवध दसवधि के देव—

नान्ह जाति परजा (.........)
पी आदा का विआह में (.........)
कोइ से दुइ आना ले (.........) दीहे
)=

महतव गौंआ का विआहे एक सुका ।) असवार जे जस लाएक हो (खे) अमनैक से ते तेही भाँति से दसवधिक नेग दी लो (ग)

नेग कै दीहल है कुअतिना कुअति आदमिन्ह होवे
दसवधि लिहें दीहे (.....................)
सन १०२७ साल मो० (.................)

चित्र नं० २ की प्रतिलिपि

(ऊपर में उर्दू लिपि में कुछ अंश)

हस्व हुकुम अठारह माह १७४८
सद् तारीख व सद हाकिम
....
ता० ६ जनवरी १८६०
महाफिज

(१) राजा का वोआह वेटा का भइला घोरा जोरा सोन देव

(२) देश माह जाहा ले इ अमल वडा गावन्ह एक रुपैआ छोटा गावन्ह आध रुपैआ देही

(३) (........) शवधी का कवीला के चालीस वीगहा का तरी देव ४०)

(४) शरकार माह वोत वेकाए ताही माह सैए वीतु, माह दुइ वीत देव

(५) दसइ फगुआ श्रीपंचमी सरकार से वषरा शोन देव—

(१) नगदी सीपाह के जे दो ताह का ह... रुपैअही आध आना लेके दीआइवी ।

(२) जागीर माह वडा गावन्ह पाच मन छोटा गावन्ह दुइ मन ले जे देव

(३) शायर माह जीनीशी वहती वरदही एक दमरी घानी वरदही आध पाव जीनीश दव वीकी हो रुपैअही आध पाव देव)=

(४) सरकार माह वधुआ वधाए अरोह ताह माह रुपैअही आना ले जे देव

चित्र नं० ३ की प्रतिलिपि

स्वस्तिश्री रिपुराज दैत्य नारायणेत्यादि विविध विरुदावली विराजमानोन्नत महाराजाधिराज राजा श्री अमर सिंह देव देवानां सदासमर विजईना जोग्य सिकदार वो० वाजे वोहदार वो चौधुरी वो कानुगो केमाजा वो अखौरी राजमल के अज प्रगनै और माह वैस्म भैआ अमर सिंघ वो सभ भाइन्ह समेत के महलुल दिहल है।

मौजे १७४

असल	दाखीलो
१०४	७०

तपैसहसराव मौजे

४०

असल	दाखीली
२५	१५

मौजे पवट पजरैआ १ मौजे पवट रसालू १ मौजे पवट सागर १

मौजे पवट कीनु १ मौ० टीकरिआ १ मौजेसरआ अर खुर्द १

मौजे सिकन्दर पुर करैमानपुर २ मो० बघहा ३ मौजेचक भाउ १

अ०—दा० १ अश १ दा० २

मौजे सेवरिआ भान्हपुर १ मौ० श्रीराम पुर गोपाल १ मौ० गोपाल पुर १

मौजे चादी अजौरो ४ मौजे शरआ अरक पु १ मौ० सहसराव खास ५

अश दा० १ ४ अश दा० १ ४

मौजे घीरोखां डी १ मौजे मधुबनी २ मौशराइ जगनाथ ३

अश दा० १ १ अश दा० १ २

मौजे भोपति पुर १ मौजे घोर डहरी १ मौजे मरवटिआ १

मौजे मोहन पुर १ मौजे मङ्गली खुर्द १ मौजे मङ्गली बुज १

मौजे मीसवलीआ २

अ १ दा० २

तपैवाघो पाकरी मौजे

४३

असल	दाघीली
२३	२०

मौजे बाघी पापुरीखाश १ मौजे उदैभान पुर १ मौजे जादौपुर १

मौजे रमक रई ४ मौजे गैघटा १ मौ० धरमपुरा १

अ० १ दा० ३

मौ० मझौली ३ मोहनपुर ३ दरिआपुर २

अ० दा० १ २ अ० दा० १ २ अ० दा० १ १

ततरिआपुकु २ मौजे बेरा १ मौ० अगर संडा १

अ० १ दा० १

मौजे मडरा खुर्द १ मौ० मुराडी ५ मौजे खजु रीआ २

आ० १ दा० ४ अ०१ दा० १

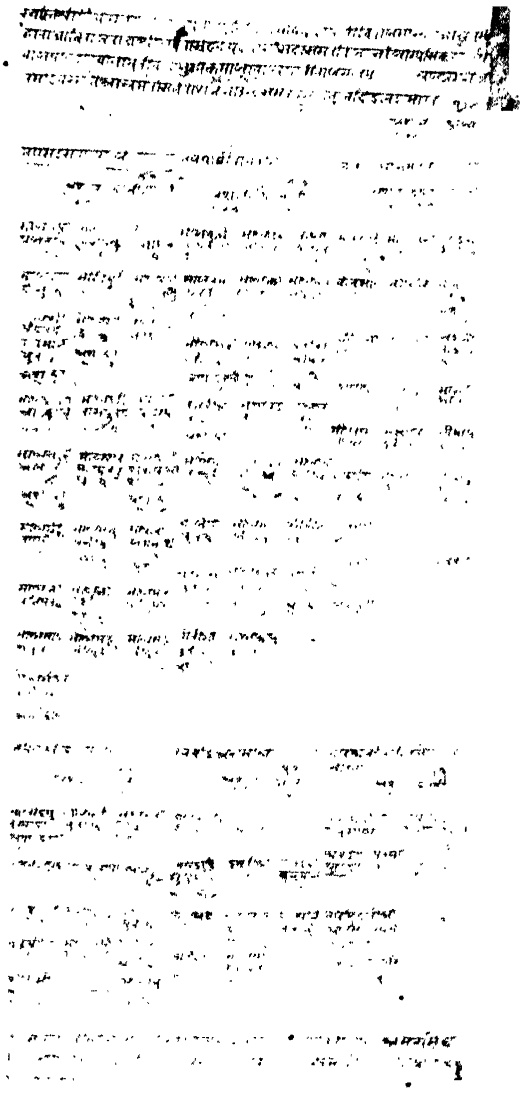
वाजिदपुर १ मौजे गाजीपुर १ शीगीताला १

नरायनपुर २ मौजे हवतपुर ४ धमारी २

अ० दा० १ १ अ० दा० १ ३ अ० दा० १ १

गीरिधरपुर २ मुरतआपुर १

अश १ दा० १



चित्र नं० ३

तपै कल्यान मौजे

४०

असल दाखीली

२६ १५

मौजे गुंडी मौ० इटइना इटइना मनीआ
खास ६ कस्तुरी १ १
अ० १ दा० ८

वेलघाट भोपतिपुर वेला होरील २
१ १ २
अ० १ दा० १

पटिगुनाएर जोगवलिआ जहागीरपाई
१ १ ३
अ० १ दा० २

हाजीपुर रतनपुर सोनदिया
१ २ १
अ० १ दा० १

घाघरी मौजे चोपहा वीरनपुरा
२ १ २
आ० १ दा० १ अ० १ दा० १

बभनवली दलपतिपुर पवगादुलम
१ १ १

घुटवलिया शत्रलपुर
१ १

तपै वाजीदपुर मौजे

२२

असल दाखीली

१५ ७

वाजीदपुर मौजे मनपुरा मौजे नारायन
खास २ १ पुर २
अस १ दा० १ अश १ दा०१

मौजे जवहर मौ० वाराकान्ह खानपुर
१ २ १
अ० १ दा० १

महथवलिआ मनसुपुर दौलतिपुर
१ १ १

तुकुम्ही मौ० हरासमरपुर गगवली
१ १ २
अ० १ द० १

सरीसिआ कवजा मौजे श्रीमंतपुर
२ २ २
अश दा० अ० दा० अ० दा०
१ १ १ १ १ १

तपै वहिअरा मौजे

१७

अशल दाखिली

११ ६

मौजे बालेहारी मौ० शार्दीपुर गाजीपुर
१ १ १

लवहर कुकउका कुवरिआ अरहदा
५ १ धुधुआल १
अश १ दा० ४

मौजे जमीरा मौजे शेरपुर दलपतिपुर
१ २ १

अरंदा मौजे वोखारापुर
२ १
अ० १ दा० १

तपै अरहंगपुर वोगएरह मौजे

११

अशल दाखीली

४ ७

तपैअरहंग तपै गीधाअल
पुर मौजे २ मौजे गनिपुर ३
अरहंगपुर खास मुरजा
१ १
अश १ दा० १

तपैकुहरीआ अजमौजेपपुरी
५ मौजे ६
अशल दाखी०
१ ५

एक सै चौहतरी मौजे असली मौजे एक सै चारि दाखिली शतरी भैया अमर सिह के भाइन्ह समेत महलुल दीहल है अमल कराइबि। ता० १६ सुदी भादो (लौअलि ?) सन १०६५ शाल मोकाम बहादुरपुर।

चित्र नं० ४ की प्रतिलिपि

नकल सनद सुजान सिंह प्रदत्त

श्री राम १

स्वोशित श्री महाराज कुमार श्री वा० सुजान सिंह जी उद्योग पुरी (कृ...) वो बाजे बोहदार वो चौधुरी व कानूनगो के (म) आ आगे (शा...) ने बीहीआ माह व हरम (बहरम) दसौंधी राम प्रसाद के दरवोजइ जमीन दीहल भ ।। (सन) ११९० साल श्र० धरो शै—

चित्र नं० ५ की प्रतिलिपि

मोताविक हुकुम आज के कागज हाजा वंधु दसौंधी को वापस दिया गया। ता० २६-२-८८।

(दस्तखत उर्दू शिकश्त में है)

राम प्रसाद दसवधी के पाच बीगहा खेत दीहल वाग लावैके

चित्र नं० ६ की प्रतिलिपि

उदवन्त सा०

लीः वसीअत श्री महराज उदवन्त सींह जी के रीआसत जगदीशपुर जीः शाहाबाद। आगे हमरा पाछील राजन्ह के खानदानी दस्तुर होव के रेआसत मे सब खनदानन के हक हिसा हमेसा कायम मानल जाई और रेआसत इजेमाल रही और खनदान के वडा लड़ीका बड़ा शाए के इजमाल रेआसत के गद्दी नसीन भइल करी उ सबकर भारन पोसन मोताविक खनदानी इजत मर्जादा के कइल करी। जब जगदीशपुर रेआसत भोजपुर मे अलग भइल तब एह रिवाज यहां भी कायम भइल एह वास्ते वसीअत लिख देल की हमार बाद चार लड़ीका बाबु गजराज सिंह, वावु उमराव सिंह, वावु रनवहादुर सिंह वो वावु दीगा सिंह जे वा से एही रीवाज के पावन्दी कइल करी ताकी ऐका कायम रहे रेआसत बनल रहें।

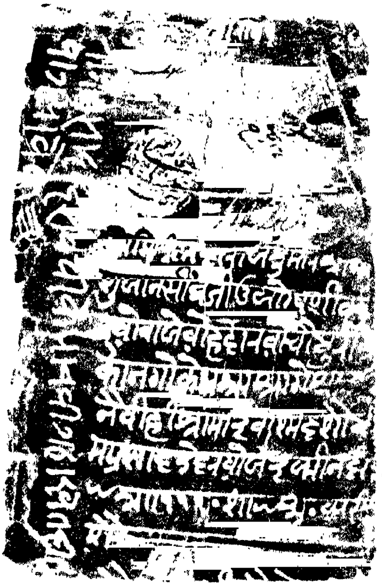
वदस्तुर साविक हम वसीअत कइल ता: २८ माह जेठ ११३७ साल

(नीचे मुहर है, जिस पर ११३३ साल लिखा है।)

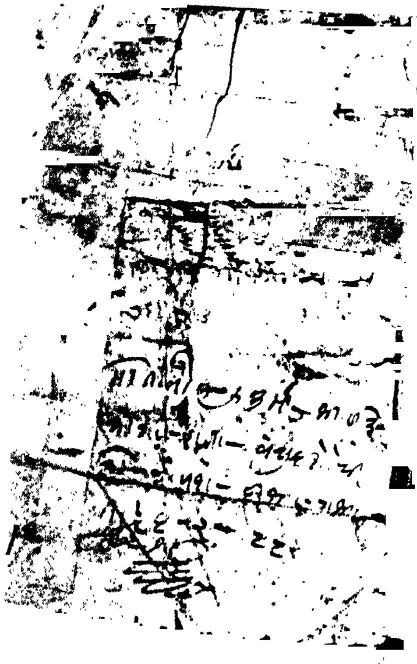
चित्र नं० ७ की प्रतिलिपि

श्री वावु कुंअर सिंह

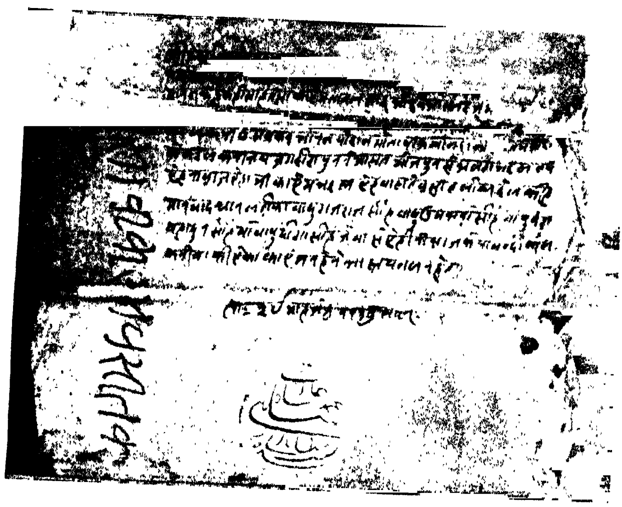
सौसती श्रीः चौ० ववुआ नरवदेश्वर प्रसाद सिंह के लीः श्री महाराज कुमार वावु कुअर सींह के आसीस। आगे राउर खानदान आज तक इजमाल रेआसत के राख के अपना परवरीस के बोझ रेआसत पर छोड़ले राखल। रेआसत भी हमेशा रवा सब के एह वेहवार के कहा और आइन्दा भी अइसने वेहवार राखी जेह से ऐका कायम रहे। अंगरेजन के खिलाफ वीवीगंज के लड़ाई में राउर वावुजी साहेव हमार जान वचावे में खेत अइलीं। रउरा भी तीन अंगरेजन के मार के हमार जान वचौली। एह से हम रउरा से उगरीन ना हो सकीं। ए हसे इजमाल रेआसत में जे हमार हिसा



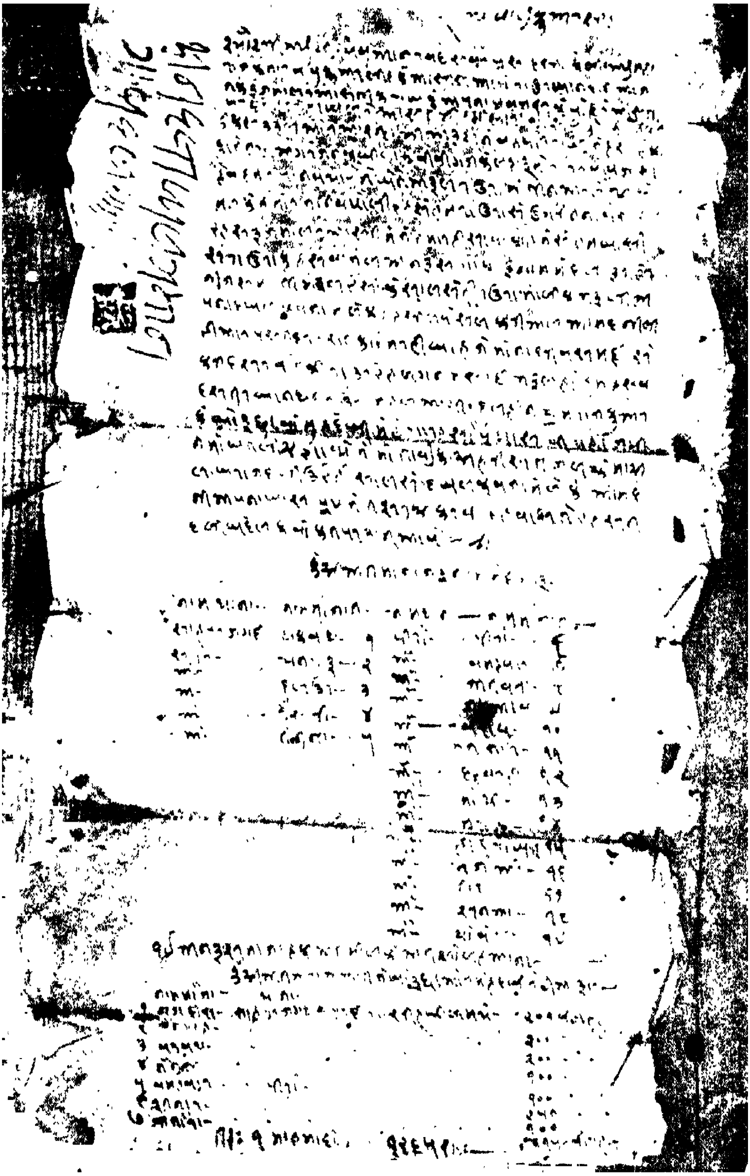
चित्र नं० ४



चित्र नं० ५



चित्र नं० ६



चित्र नं० ७

वा वोह में से हम खुशी से रउरा के हसब जैल ओनइस गांव इनाम में देंली। इ राउर नीज समपती भइल एसो के साल से ही रउरा मालिक भइलीं। अपना दखल कवजा में लेके तहसील वसुल करीं और आमदनी लींही और पुस्त दरपुस्त कायम रहीं खास जे मोनासिव समझीं से करीं। दुसर वात की राउर एह लगन में शादी भइल हा। हम हसव दस्तुर खनदान रउरा महल श्री ची० दुलहीन धर्मराज कुंअर के खोइछा वो मुहदेखी में एगारह सौ पचास विगहा जमीन......मोताबीक हरसित जेल के........देलीं कि एही साल से दखल कबजा में लेके आमदनी अपना खास खरचा में तसरुक करब। एह वास्ते एह सनद लिख देल के वक्त पर काम आवे।

कैफियत मौजा जे इनाम में दिआइल—

नाम थाना	नाम मौजात		नाम थाना	नाम मौजात	
साहपुर जगदीशपुर	चकवल	१	पीरो	पीरो	६
”	धनगांई	२	”	वम्हवार	७
”	दुलउर	३	”	जीतौरा	८
”	कसरी	४	”	जमुआंव	९
”	तेनुनी	५	”	वरांव	१०
			”	रतनार	११
			”	छुबरही	१२

नाम थाना	नाम मौजात	
पीरो	मोथी	१३
”	भसेही	१४
”	होटपोखर	१५
”	रजेआ	१६
”	तार	१७
”	सनेआ	१८
”	चौवेपुर	१९

१९. अनइस मौजा हकीअत मीलकीअत सोलह आना कैफीअत ऐराजीआत जे खोइंछा और मुंहदेखी में दिआइल।

	नाम मौजा	थाना		
१-	जगदीशपुर	साहपुर जगदीशपुर	२००	बिगहा
२.	धनगाई		२००	”
३.	चकवल		२००	”
४.	तेनुनी		१००	
५.	वम्हवार	पीरो	१००	
६.	रतनार		२५०	
७.	जीतौरा—		१००	
	ता० १ माह भादो १२६५ शाल		११५०	बिगहा

चित्र नं० ८ की प्रतिलिपि

बाबु कुंअर सिंह

सौसती श्री चौः शुभकरन सीघ के लीः श्री माहाराज कुमार श्री..............जी के प्रनाम। आगे रउरा जे मालगुजारी तालुके सिकहटा वगैह देहात जरभरना प्रगने पीअरो के सोरह सव तीन रुपैया ऐक आना रोल साहेव कलठर के दाखिल करीला वो सन् वारह सव बावन साल ले मालगुजारी रउरा जरभरना के देहात के हजुर मे साहेब कलकठर के दाखिल भइल अब परगना पीअरो बइलत बाकी मालगुजारी देहात मौतअलु के हमारे वीलकुल नीलाम प्र बाटे। एह वासते लिखत हइ कि सोरह सब तीन रुपैआ छव आना पांच पाई साठे वान्ह वाह करात मालगुजारी सन वारह सव तीरपन साल के बावत देहात जरभरना के हजूर मे साहव कलकठर के देना बाटे से रउरा सोन्ह सव तीन रुपैआ छव आना पांच पाई साढे बारह करात सिआहा अपना तरफ से कलकटरी में कराई दिही वो अरज अपना पास राखी की लीलाम से रहाइ होए। आगे प्र सन वन्ह सव तीरपन साल में मोजरा लेब। अगन (अंकन) १६०३।≈ ५१२।। जे सन वान्ह सव तीरपन में देना बाटे से बान्ह सव वावन साल मे देत वान आगे रउरा एकर कवनो पेच जो परी तेकर जवावदेही हमरा तअलुक रउरा से सरोकार नाही। रुपैआ बेला सुदी हम अदाए करे इ चिठी वजाऐ दसतावेज के अपने पास राखव।

ताः १६ माह जेठ १२५२ साल

लिख जानव चीठी .
माफीक मोजरा होय

(निम्नलिखित दो सनदों के चित्र नहीं हैं।)

होरील सिंह *

११३६ साल

स्वस्ति श्री रिपुराव दैत्य नारायणइत्यादि विविध वीरुदावली विराजमान मानोन्नति श्री महाराजाधिराव राजा श्री ....जीव् देव देवानां सदा‌‌मर विजयीनां आगे ....पांडे प्रयाग के उपरोहित पाछिल रजन्ह के उपरोहित हउ अही से हमहूँ आपन उपरोहित कैल जेकेउ प्रयाग माह आवे से सुवस पांडे को माने उज्जैन ता० १३ माह (............) ११३६ साल मोकाम दावा घुस.........समैनाम वैसाख सुदी तिरोदसी रोज वुध.........जिला प्रगनै भोजपुर गोतर सबनक मूल उजैन जाति पावार—

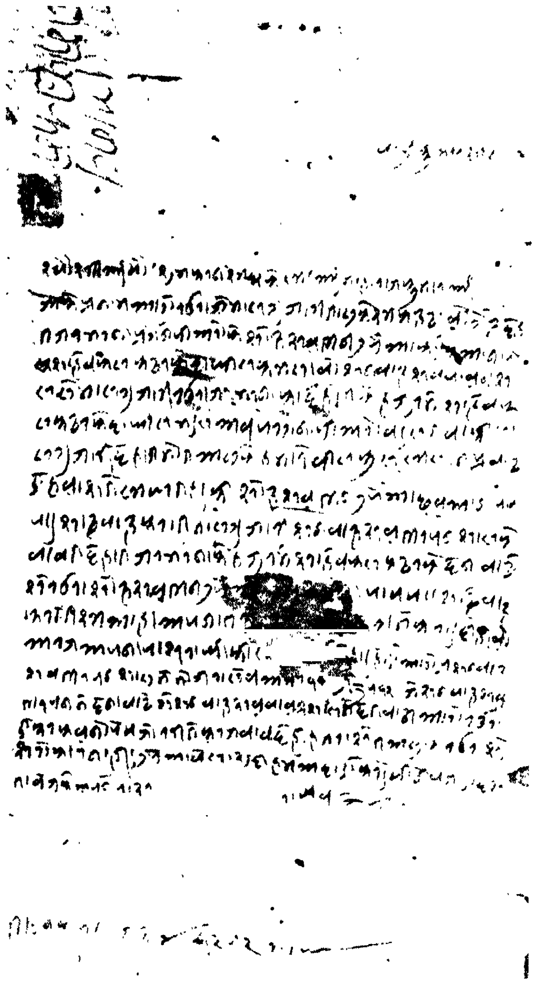
सुव ( ) के पाछीला रजन्ह के उपरोहित हव अही ते से हमहू कैल आपन उपरोहित।

† सही माधो प्रसाद पांडे वल्द वनवारी पांडे पोता जगन्नाथ पांडे हमलोग सुवंस पांडे वा शंकर पांडे के वंशज हैं यह लिखा हुआ पुरानी बही में से उतर कर नकल किया गया है मोकाम दारागंज नम्बर मकान ६६८ पो० दारागंज प्रयागराज त्रिवेणी पर हमारा पंखा के झंडा पुराना है वाः।

---

* होरिलशाह या सिंह भोजपुर के प्रमार राजाओं के पूर्वज थे। देखिए—भूमिका के पृ० ६-१०। —लेखक

† उपर्युक्त सनद का यह प्रमाणपत्र प्रयाग के पण्डा जी का है।—लेखक



चित्र नं० ८

स्वस्ति श्री रिपु..

राजा श्री अमरसिंह* देव देत्रानां सदा समर..............जोग्य शिकदार वो वाजे वोहदार चौधुरी वो..............के मघाश्रयि[1] पितम्बर दसौंधी[2] के नेग के दीहल ....(जे) देव—

जे दीहल से. सभ..............ते दीहल............

रीवाज

विआह व.ो बेटा का	जेभाटन्ह के दिली	अमनैक[3] का विआह
मैला घोरा जोरा	ताकर दसवध	होखे..........तवन
शोन देव—	दशौधि के देव—	जस लाएक तस देइ—
नान्ह जाति परजा	महतो............	....
वो पिआदा सौ दुइ	का विआह होए	....
आना.	तो एक सुका वीत	....
ऽ=	=।	
एकर मह सारी शीर	(..........) वहरिअर	
मह वड गांव पाच मन	धपाक ऽ= वरदही ।=	
छोट गांव दुइ मन	जे केइ आवै से	....
देइ साल साल देव—	एकर ही दुइ वीत देव—	....

..............................१०४७ साल-फसली

* अमर सिंह सन् १०४७ फसली में भोजपुर के राजा थे। आप प्रसिद्ध कवि प्रबल शाह के बड़े भाई थे। आप जगदीशपुर, दलीपपुर, डुमरांव और बक्सर के उज्जैन-राज वंशों के पूर्वज थे। आपके वंशजों की चर्चा मेरी भूमिका के पृ० ६-१० में देखिए। —लेखक

१. मध्यमश्रेणी का आश्रित जिसकी वृत्ति नेग के सिवा और कुछ नहीं है।

२. भाट (भाट का दसौंधी से दर्जा ऊँचा होता है; क्योंकि भाट के नेग का दशमांश दसौंधी को मिलता है।)

३. दशांश।